301

उच्चतर माध्यमिक पाठ्यक्रम

हिंदी

1

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
(शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत एक स्वायत्त संस्थान)
ए-24-25, सेक्टर-62, नोएडा-201309 (उ.प्र.)
Website: www.nios.ac.in, Toll Free No. 18001809393

पाठ-लेखक	
अरुण होता	सुधीर प्रताप सिंह
अनिल कुमार राय	नीलकंठ कुमार
अरुण कुमार मिश्र	प्रेम कुमार तिवारी
सुनीता जोशी	शिक्षा
किरण गुप्ता	अंशुमान ऋषि
अजय बिसारिया	सत्य प्रकाश सिंह
हरीश नवल	पुष्पलता श्रीवास्तव
सुरेश पंत	आशा शर्मा
मोनिका काद्यान	बालकृष्ण राय

Printed on 60 GSM NIOS Water Mark Paper

© राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

मई, 2023 (..... **प्रतियाँ**)

Published by the सचिव, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, ए-24-25, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर-62
नोएडा-201309 (उ.प्र.)

नोएडा-201309 and Printed at M/s ....

सलाहकार-समिति

अध्यक्ष
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, (उत्तर प्रदेश)-201309

निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, (उत्तर प्रदेश)-201309

पाठ्यक्रम-समिति

श्री बल्देव भाई शर्मा (समिति अध्यक्ष)
कुलपति, कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता
एवं जनसंचार विश्वविद्यालय

प्रो. गुलाम मोईनुद्दीन खान
प्राचार्य, बी.जे.बी. आटोनोमस कॉलेज,
भुवनेश्वर, ओड़िशा

प्रो. योगेन्द्र प्रताप सिंह
केंद्रीय वि.वि., इलाहाबाद, उ.प्र.

डॉ. ललित बिहारी गोस्वामी
पूर्व प्राचार्य, डी.ए.वी. महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. बालकृष्ण राय
उप निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उ. प्र.

प्रो. सत्यकाम
उप-कुलपति
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. लाल चंद राम
एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली

डॉ. अनिल कुमार राय
प्रोफेसर, श्यामलाल कॉलेज (सांध्य)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. कैलाश गोयल
महर्षि वाल्मीकि कॉलेज ऑफ
एजुकेशन, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. शशि प्रकाश चौधरी
पूर्व प्राचार्य, राजकीय महाविद्यालय, पीड़ावा,
झालावाड़, राजस्थान

प्रो. उषा शर्मा
प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी.,
नई दिल्ली

प्रो. सुधीर प्रताप सिंह
प्रोफ़ेसर, सेंटर फॉर इंडियन लैंग्वेजेज़,
जे.एन.यू. नई दिल्ली

डॉ. सत्य प्रकाश सिंह
सहायक प्रोफ़ेसर, राजधानी कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संपादक-मंडल

डॉ. शशि प्रकाश चौधरी
पूर्व प्राचार्य, राजकीय महाविद्यालय, पीड़ावा,
झालावाड़, राजस्थान

डॉ. नीलकंठ कुमार
सहायक प्रोफ़ेसर (हिंदी विभाग),
एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली

डॉ. बालकृष्ण राय
उप निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उ. प्र.

प्रो. गुलाम मोईनुद्दीन खान
प्राचार्य, बी.जे.बी. आटोनोमस कॉलेज,
भुवनेश्वर, ओड़िशा

डॉ. प्रेम कुमार तिवारी
एसोसिएट प्रोफ़ेसर, दयाल सिंह कॉलेज
लोधी रोड, नई दिल्ली

डॉ. वेद प्रकाश
प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

डॉ. अंशुमान ऋषि
प्राध्यापक, कुलाची हंसराज मॉडल स्कूल
अशोक विहार, नई दिल्ली

पाठ-लेखक

डॉ. अरुण होता
प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, पश्चिम बंगाल
राज्य विश्वविद्यालय, कोलकाता

डॉ. सुधीर प्रताप सिंह
प्रोफ़ेसर, सेंटर फॉर इंडियन
लैंग्वेजेज़, जे.एन.यू. नई दिल्ली

डॉ. अनिल कुमार राय
प्रोफ़ेसर, श्यामलाल कॉलेज (सांध्य),
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. नीलकंठ कुमार
सहायक प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली

डॉ. अरुण कुमार मिश्र
सहायक प्रोफ़ेसर, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, नई दिल्ली

डॉ. प्रेम कुमार तिवारी
एसोसिएट प्रोफ़ेसर,
दयाल सिंह कॉलेज नई दिल्ली

डॉ. सुनीता जोशी
पूर्व प्राध्यापक, केंद्रीय विद्‌यालय
पश्चिम विहार, नई दिल्ली

डॉ. शिक्षा
पूर्व पी.जी.टी.
क्वींस मैरी स्कूल दिल्ली

श्रीमती किरण गुप्ता
पूर्व पी.जी.टी., केंद्रीय विद्यालय,
नई दिल्ली

डॉ. अंशुमान ऋषि
प्राध्यापक, कुलाची हंसराज
मॉडल स्कूल, अशोक विहार,
नई दिल्ली

श्री अजय बिसारिया
एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग,
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय,
अलीगढ़

डॉ. सत्य प्रकाश सिंह
सहायक प्रोफेसर,
दिल्ली विश्वविद्‌यालय, दिल्ली

डॉ. हरीश नवल
रीडर (सेवानिवृत्त) हिंदी विभाग,
हिंदू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली

डॉ. पुष्पलता श्रीवास्तव
रीडर (सेवानिवृत्त)
शिक्षक शिक्षा विभाग, जामिया
मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

डॉ. सुरेश पंत
वरिष्ठ अध्यापक (सेवानिवृत्त)
राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
नई दिल्ली

डॉ. आशा शर्मा
पी.जी.टी.,
सेंट जेवियर स्कूल, दिल्ली

डॉ. मोनिका काद्‌यान
शैक्षिक अधिकारी (हिंदी)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उ. प्र.

डॉ. बालकृष्ण राय
उप निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उ. प्र.

पाठ्‌यक्रम समन्वयकर्ता

डॉ. बालकृष्ण राय
उप निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उ. प्र.

रेखा चित्रांकन

श्री नवल किशोर
ग्राफिक आर्टिस्ट

डी.टी.पी. कार्य

शिवम् ग्राफिक्स
दिल्ली

आपके साथ दो शब्द

प्रिय शिक्षार्थी,

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के उच्चतर माध्यमिक स्तर पर हिंदी के पाठ्यक्रम में आपका हार्दिक स्वागत है। हमें आशा है कि आप मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के माध्यम से अध्ययन करना पसंद करेंगे। आप जानते हैं कि हिंदी साहित्य की एक विशाल परंपरा रही है और दसवीं कक्षा तक आपने अनेक रचनाएँ भी पढ़ी होंगी और अपेक्षित भाषा-दक्षता भी हासिल की होगी।

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर यह पाठ्यक्रम तैयार किया गया है जिसका उद्देश्य एक ओर साहित्यिक रचनाओं से परिचित कराते हुए संवेदना, भावना एवं कल्पना का विकास करना है तथा दूसरी ओर भाषा के विभिन्न पक्षों से परिचित कराते हुए भाषा-कौशल का परिष्कार करना है। इसी उद्देश्य से इस पाठ्यक्रम में अनेक विशेषताएँ समाविष्ट की गई हैं। कुछ इस प्रकार हैं:-

(क) साहित्य की सभी प्रमुख विधाओं का समावेशन; जैसे- कविता, कहानी, संस्मरण, रेखाचित्र, ललित निबंध, एकांकी, डायरी आदि।

(ख) लेखन-कौशल के विकास के लिए अनेक पाठों का निर्माण; जैसे- कार्यालयी पत्राचार, अनुच्छेद, फीचर व रिपोर्टिंग, मंच संचालन, जनसंचार, हिंदी और प्रौद्योगिकी इत्यादि।

(ग) पाठों की विस्तृत समीक्षा और मूल्यों का समावेशन।

(घ) सीखने के प्रतिफल तथा चित्र-प्रस्तुति आदि का समावेश।

(ङ) मूल्यांकन के लिए पाठगत प्रश्न तथा पाठांत प्रश्नों का निर्माण।

(च) बातचीत की शैली तथा अनेक उदाहरणों के माध्यम से ज्ञान का विस्तार।

(छ) राष्ट्रीय शिक्षा नीति के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं का समावेशन।

अतएव पूरे पाठ्यक्रम के अध्ययन के पश्चात आपकी साहित्यिक समझ विकसित होगी तथा भाषा दक्षता में अभिवृद्धि होगी और रचनात्मक क्षमता भी बढ़ेगी।

यह भी ध्यान रखने योग्य बात है कि हिंदी के पाठ ऑडियो-वीडियो रूप में भी उपलब्ध होंगे। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा स्थापित 'स्वयं' प्लेटफॉर्म के अंतर्गत 'मूक्स' (मैसिव ओपन ऑन लाइन कोर्स) पर पूरी सामग्री तथा ऑडियो-वीडियो कार्यक्रम आपको मिलेंगे। साथ ही ई-विद्या चैनल पर कार्यक्रमों का सजीव प्रसारण भी किया जाता है।

हम आशा करते हैं कि हिंदी का यह पाठ्यक्रम आपको रुचिकर और ज्ञानवर्धक लगेगा। आपके बहुमूल्य सुझाव महत्वपूर्ण होंगे।

शुभकामनाओं सहित।

पाठ्यक्रम-समन्वयक

अपने पाठ कैसे पढ़ें !

बधाई! आपने स्व-शिक्षार्थी बनने की चुनौती स्वीकार की है। एनआईओएस हर कदम पर आपके साथ है। आपकी पाठ्य-सामग्री हिंदी क्षेत्र के विशेषज्ञों की समिति ने तैयार की है। इसे विशेष रूप से आपकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए निर्मित किया गया है। आप स्वतंत्र रूप से स्वयं पढ़ सकें, इसके लिए इसे एक प्रारूप में ढाला गया है। निम्नलिखित संकेत आपको सामग्री का सर्वोत्तम उपयोग करने का तरीका बताएँगे। दिए गए पाठों को कैसे पढ़ना है, आइए जानें-

पाठ का शीर्षक : इसे पढ़ते ही आप अनुमान लगा सकते है कि पाठ में क्या दिया जा रहा है। इसे पढ़िए।

भूमिका : यह भाग आपको पूर्व जानकारी से जोड़ेगा और दी गई पाठ की सामग्री से परिचित कराएगा। इसे ध्यानपूर्वक पढ़िए। साथ ही यह विषय की पृष्ठभूमि देगा तथा आपको पाठ पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करेगा।

उद्देश्य : प्रस्तुत पाठ को पढ़ने के बाद आप इस पाठ के उद्देश्यों को प्राप्त करने में समर्थ हो जाएँगे। इन्हें याद कर लीजिए और जाँच लीजिए कि आपने उद्देश्यों को प्राप्त कर लिया।

बोध-प्रश्न : कुछ पाठों में आपकी आरंभिक पढ़ाई की जाँच-परख के लिए कुछ वस्तुनिष्ठ प्रश्न दिए गए हैं। इन्हें हल करने से आप अपनी जाँच करके आगे बढ़ सकते हैं।

क्रियाकलाप : पाठ में स्थान-स्थान पर कुछ क्रियाकलाप दिए जा रहे हैं, जिन्हें आप सरलता से कर पाएँगे। ये आपको बेहतर ढंग से पाठ के बिंदु समझने में मदद करेंगे तथा विषय के और निकट लाएँगे। आप उन्हें स्वयं करने का प्रयत्न करें अथवा घर में बड़ों से या साथियों से चर्चा करें। ये क्रियाकलाप आपमें जीवन-कौशल विकसित करेंगे तथा व्याकरण का अभ्यास भी कराएँगे।

मूल पाठ : पाठ की संपूर्ण सामग्री को कई अंशों में विभाजित किया गया है। आप एक-एक कर इन्हें पढ़ें और समझते चलें। मूल पाठ को सही ढंग से समझने के लिए कठिन शब्दों के अर्थ भी दिए जा रहे हैं। ये वाचन के समय आपकी सहायता करेंगे। इन्हें याद कर लें, मूल पाठ को ध्यानपूर्वक पढ़ें और जहाँ ज़रूरत समझें, पन्ने के हाशिए में दिए गए स्थान पर टिप्पणियाँ भी लिखते चलें।

आइए समझें: इसके अंतर्गत पाठ को विस्तार से समझाया गया है। कहीं कविता को खंडों में विभाजित करके, तो कहीं गद्य को तत्वों के आधार पर। इसका उद्देश्य आपको सरल भाषा में पाठ समझाना तथा भाषा-कौशल बढ़ाना है।

प्रत्येक पाठ में किसी संकल्पना के बाद उदाहरण देकर विषय को स्पष्ट किया गया है। ये उदाहरण आपको संकल्पनाएँ समझने में मददगार सिद्ध होंगे। उन्हें रुचि के साथ पढ़िए।

पाठगत प्रश्न : इसमें एक शब्द अथवा एक वाक्य में पूछे गए प्रश्न हैं तथा कुछ वस्तुनिष्ठ प्रश्न हैं। ये प्रश्न पढ़ी हुई इकाई पर आधारित हैं, इनका उत्तर आपको देते चलना है। इसी से आपकी प्रगति की जाँच होगी। ये सवाल हल करते समय आप हाथ में पेंसिल रखिए और जल्दी-जल्दी सवालों के समाधान ढूँढते चलिए और अपने उत्तरों की जाँच पाठ के अंत में दी गई उत्तरमाला से कीजिए। उत्तर ठीक न होने पर इकाई को पुन: पढ़िए।

आपने क्या सीखा/चित्र-प्रस्तुति : यह पूरे पाठ का संक्षिप्त रूप है। इन मुख्य बिंदुओं को याद कीजिए। यदि आप अपने अनुभव की मिलती-जुलती कुछ नई बातें जोड़ना चाहते हैं, तो उन्हें भी वहीं बढ़ा सकते हैं। साथ ही यथास्थान चित्र-प्रस्तुति भी दी गई है ताकि आप आसानी से पाठ को समझ सकें।

सीखने के प्रतिफल : पाठ पढ़ने के बाद आप क्या-क्या सीख गए हैं, उन्हें भी रेखांकित किया गया है।

योग्यता-विस्तार : प्रत्येक पाठ का यह अंश उन विद्यार्थियों के लिए है, जो पाठ से संबंधित अधिक ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं। उनके लिए हम कुछ अन्य जानकारियाँ और स्रोत बताते हैं; जैसे– संबंधित पाठ किसने लिखा, क्यों लिखा, और उस लेखक या कवि ने क्या-क्या लिखा आदि। इसके अंतर्गत दी गई जानकारी का परीक्षा में मूल्यांकन नहीं होगा। कहीं-कहीं इसे बॉक्स में दिया गया है।

पाठांत प्रश्न : पाठ के अंत में लघु उत्तरीय तथा दीर्घ उत्तरीय प्रश्न दिए गए हैं। इन्हें आप अलग पन्नों पर लिखकर अभ्यास कीजिए। यदि आप चाहें तो अध्ययन-केंद्र पर अपने शिक्षक या किसी अन्य व्यक्ति को दिखा सकते हैं और उनसे सुझाव ले सकते हैं।

उत्तरमाला : इनके माध्यम से आप बोध-प्रश्नों तथा पाठगत प्रश्नों के उत्तर का मिलान कर सकते हैं।

उच्चतर माध्यमिक स्तर
(हिंदी)
पाठ्य सामग्री : एक दृष्टि

पाठ 1. निर्गुण भक्तिकाव्य : कबीर और जायसी पाठ

पाठ 2. सगुण भक्तिकाव्य : तुलसीदास, सूरदास और मीराँबाई

पाठ 3. रीतिकाव्य : बिहारी और पद्माकर

पाठ 4. छायावादी काव्य : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और जयशंकर प्रसाद

पाठ 5. उत्तर छायावादी कविता : दिनकर और बच्चन

पाठ 6. नयी कविता : अज्ञेय और भवानीप्रसाद मिश्र

पाठ 7. साठोत्तरी कविता : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और दुष्यंत कुमार

पाठ 8. समकालीन कविता (आज की कविता) : राजेश जोशी तथा नरेश सक्सेना

पाठ 9. चीफ़ की दावत : भीष्म साहनी

पाठ 10. पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ : हरिशंकर परसाई

पाठ 11. दो कलाकार : मन्नू भंडारी

पाठ 12. जिजीविषा की विजय : कैलाश चंद्र भाटिया

पाठ 13. सुभद्रा कुमारी चौहान : महादेवी वर्मा

पाठ 14. कुटज : आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

पाठ 15. ठेस : फणीश्वरनाथ 'रेणु'

पाठ 16. रीढ़ की हड्डी : जगदीशचन्द्र माथुर

पाठ 17. अंडमान डायरी : श्रीकांत वर्मा

पाठ 18. यक्ष-प्रश्न : चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

पाठ 19. लेखन-कौशल : अनुच्छेद लेखन, फीचर तथा रिपोर्टिंग

पाठ 20. कार्यालयी पत्राचार

पाठ 21. टिप्पण और प्रारूपण

पाठ 22. सभा एवं मंच संचालन और उद्घोषणा

पाठ 23. हिंदी के विविध प्रयुक्ति-क्षेत्र

पाठ 24. हिंदी और जनसंचार-माध्यम

पाठ 25. हिंदी और प्रौद्योगिकी

विषय-सूची

क्र.सं.	पाठ का नाम	पृष्ठ सं.
पाठ 1.	निर्गुण भक्तिकाव्य : कबीर और जायसी	1-10
पाठ 2.	सगुण भक्तिकाव्य : तुलसीदास, सूरदास और मीराँबाई	11-32
पाठ 3.	रीतिकाव्य : बिहारी और पद्माकर	33-46
पाठ 4.	छायावादी काव्य : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और जयशंकर प्रसाद	47-66
पाठ 5.	उत्तर छायावादी कविता : दिनकर और बच्चन	67-82
पाठ 6.	नयी कविता : अज्ञेय और भवानीप्रसाद मिश्र	83-102
पाठ 7.	साठोत्तरी कविता : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और दुष्यंत कुमार	103-119
पाठ 8.	समकालीन कविता (आज की कविता) : राजेश जोशी तथा नरेश सक्सेना	120-141
पाठ 9.	चीफ़ की दावत : भीष्म साहनी	142-160
पाठ 10.	पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ : हरिशंकर परसाई	161-177
पाठ 11.	दो कलाकार : मन्नू भंडारी	178-201
पाठ 12.	जिजीविषा की विजय : कैलाश चंद्र भाटिया	202-221
पाठ 13.	सुभद्रा कुमारी चौहान : महादेवी वर्मा	222-243
पाठ 14.	कुटज : आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी	244-269
पाठ 15.	ठेस : फणीश्वरनाथ 'रेणु'	270-289

टिप्पणी : यह पाठ्यक्रम दो भागों में विभाजित है :-

I. शिक्षक अंकित मूल्यांकन कार्य(टीएमए) के लिए पाठ

II. सार्वजनिक परीक्षा के लिए पाठ

भाग (II) का निम्नांकित रूप में पुन: विभाजन किया गया है:-

(क) वस्तुनिष्ठ प्रकार के प्रश्नों के लिए पाठ

(ख) विषयनिष्ठ प्रकार के प्रश्नों के लिए पाठ

विभिन्न भागों से संबंधित विवरण अगले पृष्ठ पर दिया गया है:-

हिंदी (301)

पाठ्यक्रम का वर्गीकरण

कुल पाठ : 25	I शिक्षक अंकित मूल्यांकन पत्र (पाठ्यक्रम का 40%)	II सार्वजनिक परीक्षा (पाठ्यक्रम का 60%)	
		क वस्तुनिष्ठ (50%)	ख विषयनिष्ठ (50%)
	09 पाठ	08 पाठ	08 पाठ
	पाठ-1: निर्गुण भक्तिकाव्य : कबीर और जायसी पाठ-4: छायावादी काव्य : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और जयशंकर प्रसाद पाठ-6: नयी कविता : अज्ञेय और भवानीप्रसाद मिश्र पाठ-11: दो कलाकार : मन्नू भंडारी पाठ-12: जिजीविषा की विजय : कैलाश चंद्र भाटिया पाठ-14: कुटज : आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी पाठ-18: यक्ष-प्रश्न : चक्रवर्ती राजगोपालाचारी पाठ-19: लेखन-कौशल : अनुच्छेद लेखन, फीचर तथा रिपोर्टिंग पाठ-22: सभा एवं मंच संचालन और उद्घोषणा	पाठ-2: सगुण भक्तिकाव्य : तुलसीदास, सूरदास और मीराँबाई पाठ-5: उत्तर छायावादी कविता : दिनकर और बच्चन पाठ-7: साठोत्तरी कविता : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और दुष्यंत कुमार पाठ-13: सुभद्रा कुमारी चौहान : महादेवी वर्मा पाठ-16: रीढ़ की हड्डी : जगदीशचन्द्र माथुर पाठ-17: अंडमान डायरी : श्रीकांत वर्मा पाठ-20: कार्यालयी पत्राचार पाठ-25: हिंदी और प्रौद्योगिकी	पाठ-3: रीतिकाव्य : बिहारी और पद्माकर पाठ-8: समकालीन कविता (आज की कविता) : राजेश जोशी तथा नरेश सक्सेना पाठ-9: चीफ़ की दावत : भीष्म साहनी पाठ-10: पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ : हरिशंकर परसाई पाठ-15: ठेस : फणीश्वरनाथ 'रेणु' पाठ-21: टिप्पण और प्रारूपण पाठ-23: हिंदी के विविध प्रयुक्ति-क्षेत्र पाठ-24: हिंदी और जनसंचार-माध्यम

1

निर्गुण भक्तिकाव्य
(कबीर और जायसी)

हिंदी साहित्य की एक सुदीर्घ परंपरा रही है। यह एक रोमांचकारी और सुखद यात्रा के समान है। दसवीं कक्षा में आप विभिन्न कालों की रचनाओं को पढ़ चुके हैं। यह याद रखना ज़रूरी है कि हिंदी साहित्य को चार भागों में बाँटा गया है- आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल।

इस पाठ में हम भक्तिकाल के अंतर्गत निर्गुण भक्ति काव्य-परंपरा के दो प्रमुख कवियों के बारे में पढ़ेंगे और चर्चा करेंगे। अगले पाठ में दूसरी शाखा-सगुण काव्य-परंपरा को केंद्र में रखा जाएगा।

निर्गुण भक्ति-काव्य-परंपरा के अंतर्गत ज्ञान पर बल देने वाले कवियों को ज्ञानाश्रयी शाखा में रखा गया है, जिनमें कबीर प्रमुख हैं। दूसरी ओर प्रेम पर बल देनेवाले कवियों को प्रेमाश्रयी शाखा के अंतर्गत शामिल किया गया है, जिनमें जायसी प्रमुख हैं। इन्हीं दोनों कवियों की रचनाएँ हम इस पाठ में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप

- कबीर के काव्य में अभिव्यक्त गुरु की महिमा का उल्लेख कर सकेंगे;
- कबीर की भक्ति-भावना पर टिप्पणी लिख सकेंगे;
- जायसी के मानवीय प्रेम को ईश्वरीय प्रेम के रूप में व्याख्यायित कर सकेंगे;
- कबीर और जायसी के काव्य के भाव-सौंदर्य एवं शिल्प-सौंदर्य की सराहना कर सकेंगे।

(क) कबीर

1.1 मूल पाठ

(i) सतगुरु की महिमा अनँत, अनँत किया उपगार।
लोचन अनँत उघाड़िया, अनँत दिखावणहार।।

चित्र 1.1

(ii) लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।।

1.2 आइए समझें

आइए इन दोहों को विस्तार से समझते हैं।

दोहा– (i) सतगुर की महिमा अनँत, अनँत किया उपगार।
लोचन अनँत उघाड़िया, अनंत दिखावणहार।

प्रसंग : कबीर ने गुरु-महिमा के प्रसंग में अनेक साखियाँ भी कही हैं, जिनमें गुरु को ज्ञान का स्रोत और ईश्वर के समान या कभी-कभी ईश्वर से पहले माना गया है। इन साखियों में गुरु को ज्ञान का स्रोत कहा गया है। वह ईश्वर के स्वरूप का ज्ञान कराने वाला है।

व्याख्या : कबीर कहते हैं कि सतगुरु की महिमा का वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह अनंत है, उसकी कोई सीमा नहीं है। गुरु ने मुझ पर असीम उपकार किया है। उन्होंने मुझे अज्ञान के अंधेरे से निकालकर ज्ञान का मार्ग दिखाया है। गुरु ने मेरे ज्ञान-चक्षु खोल दिए हैं और मुझे परमात्मा के सच्चे स्वरूप का दर्शन कराया है।

सामान्य रूप से हमारी आँखें एक सीमा के बाद नहीं देख पाती हैं, किंतु गुरु के सानिध्य में आने के बाद हमारी दृष्टि व्यापक हो जाती है। हम सही मार्ग पर चल पड़ते हैं। इसीलिए गुरु के उपकार असीम हैं, जो कि हमारे जीवन को संतुलित और व्यवस्थित बनाते हैं।

कबीर ने गुरु को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया है और उन्हें अनंत ज्ञान का भंडार माना है। गुरु को सांसारिक बंधनों से मुक्त करनेवाला स्वीकार करते हुए कहा–

'गुरु गोविंद दोऊ खड़े काके लागू पाँय।
बलिहारी गुरु आपने गोविंद दियो बताय।।'

कबीर ने गुरु-महिमा की प्राचीन परंपरा को आगे बढ़ाया तथा गुरु के उपकार को स्वीकार किया। यह सच है कि गुरु ही अपने अनमोल ज्ञान से हमारे जीवन को सँवारते हैं, हमें जीवन जीने की कला सिखाते हैं, जीवन को नई दृष्टि देकर माया-मोह के जंजाल से मुक्त करते हैं और ईश्वर की परम आनंदमयी भक्ति की ओर प्रेरित भी करते हैं।

आज गुरु-शिष्य संबंधों पर नए ढंग से विचार-विमर्श की आवश्यकता है। गुरु को उच्च स्थान पर प्रतिष्ठापित करके ही हम

चित्र 1.2 : गुरु से आशीर्वाद लेते हुए

शब्दार्थ

अनँत – असीमित/जिसका अंत न हो

उपगार – उपकार

लोचन – आँख

उघाड़िया – खोल दिया

सतगुर की महिमा अनँत, अनँत किया उपगार।
लोचन अनँत उघाड़िया, अनंत दिखावणहार।

शिक्षा के विस्तार, ज्ञान के प्रसार और एक नई ऊर्जावान पीढ़ी का निर्माण करने में सफल होंगे। इसीलिए कबीर का संदेश हमारे लिए आज भी प्रासंगिक और उपयोगी है।

टिप्पणियाँ :

1. कबीर का मत है कि गुरु से ही ईश्वर के स्वरूप का ज्ञान होता है। इसलिए गुरु ईश्वर के समान श्रेष्ठ है। हम सभी माया-मोह में फँसे हैं, इसलिए परम सत्ता का अहसास नहीं हो पाता। उसके लिए दिव्य दृष्टि की आवश्यकता है।
2. तुलसीदास ने भी गुरु-महिमा के संदर्भ में लिखा है–

   'गुरु बिन भवनिधि तरै न कोई। जो बिरंचि संकर सम होई।।'

अर्थात् कोई शिव और ब्रह्मा जैसा सर्वज्ञ और महाज्ञानी ही क्यों न हो, बिना गुरु के उसकी मुक्ति संभव नहीं है।

3. 'अनँत' शब्द के कई बार प्रयोग में विशेष प्रकार की सार्थकता है। अनंत ईश्वर को देखने के लिए अनंत लोचनों या व्यापक दृष्टि की आवश्यकता है। गुरु का ज्ञान ऐसी ही दृष्टि प्रदान करता है। अत: गुरु का उपकार भी अनंत है और महिमा या महत्व भी।

दोहा– (ii) लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।।

शब्दार्थ :

लाली-रंगा हुआ, लाल-प्रभु, जित-जिधर, देखन-देखने।

आइए, अब कबीर के इस दूसरे दोहे को समझते हैं।

प्रसंग : कबीर निर्गुण भक्तिधारा के प्रमुख कवि हैं। वे ब्रह्म या ईश्वर के निर्गुण और निराकार रूप का दर्शन सर्वत्र करते हैं। इस पद में कबीर ब्रह्म की अनुभूति करते हैं और प्रत्येक कण में इस अनुभूति या प्रेम को ही देखते हैं। यहाँ ईश्वर के प्रति अनन्य प्रेम की अभिव्यक्ति भी की गई है।

लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।।

व्याख्या : कबीर ने इस दोहे में ईश्वर के प्रति अपनी अनुभूति की मार्मिक अभिव्यक्ति की है। वे कहते हैं कि यह सारी भक्ति, यह सारा संसार, यह सारा ज्ञान; मेरे ईश्वर का अर्थात् मेरे लाल का ही है, जिसे मैं महसूस करता हूँ। मैं जिधर भी देखता हूँ, उधर मेरे लाल या ईश्वरीय अनुभूति का ही रूप दिखाई देता है। मुझे संसार के हर एक कण में, हर जीव में मेरे लाल की ही सत्ता अर्थात् रूप का प्रकाश दिखाई देता है। सभी प्राणियों में मुझे अपने ईश्वर के ही दर्शन होते हैं। स्वयं मुझमें भी हमेशा अनंत के प्रति प्रेम का वास दिखाई देता है।

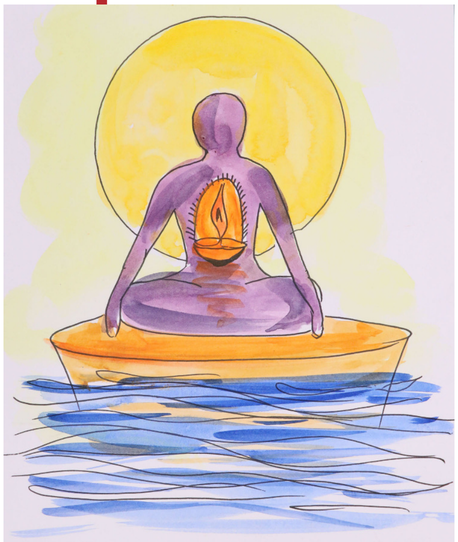
चित्र 1.3

कबीर की भक्ति में पूर्ण समर्पण और शरणागति का भाव है। उनकी आत्मा में भक्ति का ऐसा अंकुर प्रस्फुटित हुआ कि ईश्वर के अलावा संसार में सब कुछ सारहीन प्रतीत होने लगा। ईश्वर के प्रेम में वे हमेशा अभिभूत रहते थे अर्थात् डूबे रहते थे। इस दोहे में 'लाल' और 'लाली' शब्द का प्रयोग प्रतीकात्मक है। लाल रंग प्रेम और जीवंतता का प्रतीक है। कबीर ने 'लाल' शब्द का प्रयोग निर्गुण-निराकार ईश्वर और 'लाली' शब्द का प्रयोग उसकी सत्ता या उसके होने के प्रकाश के रूप में किया है। इस दोहे के अंत में कबीर ने निर्गुण एवं निराकार ईश्वर की सत्ता में अपने को विलीन कर दिया है। इस प्रकार लाल की लाली में स्वयं को भी रँग लिया है। 'लाल' शब्द में प्रेम की पराकाष्ठा है। कबीर के एक अन्य दोहे में यही भाव इस तरह कहा गया है–

'तूँ तूँ करता तूँ भया, मुझमें रही न हूँ।
वारी फेरी बलि गई, जित देखौं तित तूँ।।'

टिप्पणियाँ :

1. कबीर में दास्य-भाव की भक्ति दिखाई देती है। वे ईश्वर को स्वामी मानते हैं।
2. प्रतीकात्मक पर सरल भाषा में भक्ति का संदेश दिया है। कबीर के विचार आत्मा में उतर जाते हैं।
3. कबीर को वाणी का डिक्टेटर माना गया है। उनकी भाषा में अनेक भाषाओं का मेल है। लोकभाषा का सौंदर्य और भावों की गहराई है। उनकी भाषा को 'सधुक्कड़ी' नाम दिया गया है।
4. कबीर के दोहों को 'साखी' भी कहा जाता है। 'साखी' छंद नहीं है। 'साखी' शब्द संस्कृत के 'साक्षी' का तद्भव रूप है। 'साक्षी' का अर्थ होता है- गवाह। साक्षी वह है जिसने स्वयं अपनी आँखों से सत्य को देखा हो। अत: साक्षी का अर्थ हुआ- आँखों से देखे हुए का वर्णन। कबीर ने साखियों में वर्णित तथ्यों का स्वयं साक्षात्कार किया है। यह ज्ञान सुनी-सुनाई बातें या केवल पोथियों में उपलब्ध ज्ञान नहीं है।
5. अनुप्रास अलंकार।
6. जिस प्रकार पहली साखी में 'अनँत' शब्द का सार्थक एवं सुंदर प्रयोग हुआ है, उसी प्रकार इस दूसरी साखी में भी 'लाली' शब्द का प्रयोग है।

पाठगत प्रश्न 1.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. कबीर किस काल के कवि थे?

   (क) आदिकाल (ख) भक्तिकाल

   (ग) रीतिकाल (घ) आधुनिक काल

2. कबीर की भक्ति किस प्रकार की थी?

   (क) सख्य (ख) शृंगार

   (ग) दास्य (घ) करुण

3. कबीर की भाषा को क्या नाम दिया गया?

   (क) सधुक्कड़ी (ख) अवधी

   (ग) ब्रजभाषा (घ) हिंदी

क्रियाकलाप 1.1

गुरु-शिष्य के संबंध में आपके क्या विचार हैं? इसे कहानी, कविता या अन्य किसी रचनात्मक रूप में प्रस्तुत करें।

टिप्पणी

(ख) मलिक मुहम्मद जायसी

आपने कबीर के दोहे पढ़ लिए हैं। आइए, अब हम महाकवि जायसी के काव्य का एक अंश पढ़ते हैं। जायसी ने चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की प्रेमकथा को आधार बनाकर 'पद्मावत' नामक महाकाव्य की रचना की थी। इस पाठ में हम इसी प्रेम के स्वरूप को जानेंगे।

चित्र 1.4

1.3 मूल पाठ

कै अस्तुति जब बहुत मनावा। सबद अकूत मँडप महँ आवा।1।
मानुष पेम भएउ बैकुंठी। नाहिं त काह, छार भरि मूठी।2।
पेमहिं माहँ बिरह-रस रसा। मैन के घर मधु अमृत बसा।3।
निसत धाइ जौं मरै त काहा। सत जौं करै बैठि तेहि लाहा।4।
एक बार जौं मन देइ सेवा। सेवहि फल प्रसन्न होइ देवा।5।
सुनि कै सबद मँडप झनकारा। बैठा आइ पुरुब के बारा।6।
पिंड चढ़ाइ छार जेति आँटी। माटी भएउ अंत जो माटी।7।
माटी मोल न किछु लहै, औ माटी सब मोल।
दिस्टि जौं माटी सौं करै, माटी होइ अमोल।

शब्दार्थ

अकूत–दिव्य, अलौकिक
बैकुंठी–दिव्यलोक का अधिकारी
छार–राख
मूँठी–मुट्ठी
मैन–मोम
अम्रित–अमृत
निसत–असत्य, सत्यहीन
लाहा–लाभ
परसन–प्रसन्न
बारा–द्वार
पिंड–शरीर
आँटी–लगाना, समाना

1.4 आइए समझें

आइए, अब जायसी के काव्य के इस अंश को समझते हैं।

प्रसंग : प्रस्तुत काव्यांश जायसी के महाकाव्य 'पद्मावत' के 'मंडपगमन-खंड' से लिया गया है। सिंहल द्वीप के राजा की पुत्री पद्मावती के अलौकिक रूप का वर्णन सुनकर चित्तौड़ के राजा रत्नसेन इस सीमा तक मुग्ध हो गए कि जोगी का वेश बनाकर पद्मावती के दर्शन के लिए अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए सिंहलद्वीप पहुँच गए। वहाँ पद्मावती के दर्शन के लिए आकुल राजा ने शिव से प्रार्थना की है। इस चौपाई में इसी का वर्णन किया गया है।

व्याख्या : मनुष्य अपने नि:स्वार्थ एवं दिव्य प्रेम के कारण दिव्यता प्राप्त कर लेता है, अन्यथा उसका शरीर तो इतना नश्वर और क्षणभंगुर है कि वह मुट्ठी भर राख के बराबर हो जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य के हृदय में स्थित प्रेम ने ही उसे देवताओं के समान महानता प्रदान की है, अन्यथा मर कर मनुष्य-शरीर को राख का ढेर होने में कुछ भी समय नहीं लगता। शिक्षार्थियों, यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि प्रेम में सब कुछ आनंददायक नहीं होता, इसमें संयोग का सुख है तो वियोग का अथाह कष्ट भी है; जैसे-मधुमक्खी के छत्ते में शहदरूपी अमृत है, तो डंक लगने का कष्ट भी है। अमृत-प्राप्ति के लिए अनेक कठिनाइयों का सामना करना ही पड़ता है।

आप भी यह बात समझते होंगे कि सत्यहीन व्यक्ति रात-दिन मेहनत करके अंत में मृत्यु को प्राप्त होता है, परंतु सत्य का आचरण करने वाले व्यक्ति को बैठे-बिठाए ही लाभ मिल जाता है। कहने का तात्पर्य है कि मिथ्या आचरण करने वाले को अंत में हार मिलती है और सच्चे व्यक्ति को अंत में सुख-ही-सुख मिलता है। यदि मनुष्य सच्चे मन से सेवा करता है, तो देवता प्रसन्न हो जाते हैं। शिक्षार्थियो, इसीलिए हमारी संस्कृति में सेवा का इतना महत्व है। 'पद्मावत' की इन पंक्तियों में आप देखते हैं कि इस प्रकार की वाणी मंडप में झंकृत होने लगी। यह ध्वनि मंदिर में गूँजने लगी। दिव्य वाणी को सुनकर राजा रत्नसेन श्रद्धा एवं प्रेम से भर उठे और पूर्व दिशा के द्वार पर आकर बैठ गए। प्रेम के प्रति उनका विश्वास और दृढ़ हो उठा। उन्होंने अपने शरीर पर भस्म लगा ली और सोचा कि हमारा शरीर मिट्टी है और इसे अंत में मिट्टी में ही मिल जाना है। अतः मैं अपने शरीर पर भस्म लगाकर यह सिद्ध कर दूँ कि यह तो मिट्टी ही है और अंत में मिट्टी में ही मिलकर इसे मिट्टी ही हो जाना है।

यूँ तो संसार में मिट्टी को तुच्छ और हेय समझा जाता है, परन्तु दुनिया की जितनी भी मूल्यवान वस्तुएँ हैं, वे सब मिट्टी ही हैं। जो व्यक्ति इस शरीर को मिट्टी मान लेता है, उसकी मिट्टी अनमोल हो जाती है। शिक्षाथियो, यहाँ कवि सूफ़ी दर्शन की एक विशेषता की ओर संकेत कर रहा है कि जो मनुष्य शरीर की नश्वरता और मृत्यु की अटलता को समझ लेता है, उसके लिए जीवन अत्यंत सुखद बन जाता है। वह शरीर को ईश्वर-प्राप्ति का माध्यम बना लेता है। वह प्रेम की श्रेष्ठता को समझकर उसे प्राप्त करने का निरंतर प्रयास करता है। आपने भी यह अनुभव किया होगा कि भावनाओं का जीवन में कितना महत्व है।

1.5 भाव-सौंदर्य

कबीरदास ने बड़ी ही भावुकता से सतगुरु के महत्व को वर्णित किया है। वे गुरु-महिमा की अनंतता का उल्लेख इसलिए करते हैं कि गुरु ने शिष्य की ज्ञान की अनंत दृष्टि का विस्तार कर दिया और उसे इस योग्य बना दिया कि वह अनंत सत्ता को इस ज्ञान के माध्यम से पा सके। दूसरी साखी में कबीर चारों तरफ उस अनंत की ललिमा का विस्तार देखते हैं और स्वयं के भीतर भी उसका साक्षात्कार करते हैं।

जायसी ने अपने काव्य में सूफ़ी दर्शन को बहुत ही मार्मिक रूप में व्यक्त किया है। वे शरीर की नश्वरता और मृत्यु की अटलता का उल्लेख करते हुए, शरीर को ईश्वर-प्राप्ति का माध्यम बनाने पर ज़ोर देते हैं। वे मानते हैं कि प्रेम के महत्व को पहचानकर ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है।

1.6 शिल्प-सौंदर्य

आपने समझा कि कबीर ने 'अनँत' शब्द का कितना सार्थक प्रयोग कियाा है। इस शब्द का संबंध ईश्वर, दृष्टि और गुरु द्वारा किए गए उपकार से है। इसी प्रकार 'लाली' शब्द का भी प्रयोग है। कबीर की भाषा आम जनता की भाषा है, इसीलिए बहुत प्रभावशाली है।

जायसी में कवित्व-शक्ति और भाषा का सामर्थ्य अद्‌भुत है। जायसी ने पद्मावत में अलंकारों

का अत्यंत स्वाभाविक एवं कुशल प्रयोग किया है। 'पदमावत' में आप भाषा की मार्मिक अभिव्यक्ति भी देख सकते हैं। उदाहरण के रूप में यह पंक्ति देखिए–

मानुष पेम भएउ बैकुंठी। नाहिं त काह, छार एक मूँठि।।

यहाँ प्रेमरहित मनुष्य-जीवन को और इस संसार को भी राख के समान माना गया है।

इस उक्ति को कवि ने एक लोक प्रचलित कहावत द्वारा चरितार्थ किया है। आम भाषा में कहते हैं कि मनुष्य का शरीर मुट्ठीभर राख के समान है। यह उपमा अलंकार का भी एक उदाहरण है।

कवि ने मनुष्य जीवन में आने वाले विरह-आनंद की तुलना अमृत और मधु से की है। देखिए–

पेमहि माहँ बिरह– रस रसा। मैन के घर मधु अमृत बसा।

'माँटी' शब्द के प्रयोग में कवि ने यमक की शोभा को बढ़ा दिया है।

जायसी ने अवधी भाषा का प्रयोग भी अत्यंत कुशलता से किया है। सामान्य शब्दों के प्रयोग करके भी कवि ने उनके अर्थ को महत्वपूर्ण बना दिया; जैसे-

मानुस पेम भयउ 'बैकुंठी'

यहाँ 'बैकुंठी' शब्द के प्रयोग से पूरी पंक्ति के अर्थ को विशिष्ट और अलौकिक स्वरूप से जोड़ दिया गया है। यहाँ 'बैकुंठी' कहने से मानवीय प्रेम के अलौकिक स्वरूप की अनुभूति हुई है।

कवि ने इन चौपाइयों में खूबी के साथ मानव जीवन की क्षणभंगुरता एवं नश्वरता का भी उल्लेख किया है। सूफी काव्य में सांसारिक प्रतीकों के माध्यम से आध्यात्मिक भावों को उजागर किया गया है।

पाठगत प्रश्न 1.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. राजा रत्नसेन ने देवताओं की स्तुति किसकी प्राप्ति के लिए की–

   (क) धन (ख) राज्य

   (ग) पद्मावती (घ) शिव

2. 'पद्मावत' के काव्यांश में सर्वाधिक महत्व दिया गया है–

   (क) मिट्टी को (ख) बैकुण्ठ को

   (ग) प्रेम को (घ) अमरता को

3. 'पद्मावत' महाकाव्य की भाषा है–

   (क) ब्रजभाषा (ख) अवधी

   (ग) भोजपुरी (घ) सधुक्कड़ी

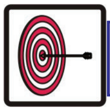

1.7 आपने क्या सीखा (चित्रात्मक प्रस्तुति)

निर्गुण काव्य

कबीर

भाव-पक्ष :

- गुरु की महिमा
- गुरु-ज्ञान का स्रोत
- ब्रह्म (ईश्वर) की सर्वव्यापकता
- अनन्य प्रेम एवं पूर्ण समर्पण

शिल्प-पक्ष :

- भाषा की समावेशिता
- दोहा छंद
- साखी
- अनुप्रास अलंकार
- शब्दों का सार्थक प्रयोग

जायसी

भाव-पक्ष :

- अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति
- सांसारिक जीवन की क्षणभंगुरता
- प्रेम का महत्व

शिल्प-पक्ष :

- अवधी भाषा
- दोहा-चौपाई छंद
- मसनवी शैली

1.8 सीखने के प्रतिफल

- सभी प्रकार की विविधताओं (धर्म, जाति, लिंग, क्षेत्र एवं भाषा-संबंधी) के प्रति सकारात्मक एवं विवेकपूर्ण समझ लिखकर, बोलकर एवं विचार-विमर्श के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं।
- हिंदी भाषा एवं साहित्य की परंपरा की समझ लिखकर, बोलकर एवं विचार-विमर्श के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं।
- परिवेश से हिंदी के साथ-साथ अन्य भाषाओं को भी सीखते हैं एवं भारतीय भाषाओं के आपसी संबंधों को भी समझते हैं।
- विभिन्न साहित्यिक विधाओं को पढ़ते हुए उनके सौंदर्य पक्ष एवं व्याकरणिक संरचनाओं पर चर्चा करते हैं।

1.9 योग्यता-विस्तार

कबीरदास

निर्गुण भक्ति-शाखा के कवियों में 'कबीरदास' का नाम प्रमुख है। इनकी जन्मतिथि तथा माता-पिता आदि के बारे में अनेक मत हैं। इनके गुरु के बारे में भी अलग-अलग मान्यताएँ हैं। कबीर को रामानंद का शिष्य माना जाता है, किंतु उन पर हठयोगियों तथा सूफ़ी मुसलमान फकीरों का भी प्रभाव था।

कबीर की साधना-पद्धति में कई पद्धतियों का मेल दिखाई देता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार, ''उन्होंने ब्रह्मवाद के साथ सूफियों के भावात्मक रहस्यवाद, हठयोगियों के साधनात्मक रहस्यवाद तथा वैष्णवों के अहिंसावाद का मेल करके अपना पंथ खड़ा किया।''

'कबीर' की बानियों का संग्रह 'बीजक' के नाम से प्रसिद्ध है। इसके तीन भाग हैं- 'साखी', 'सबद' और 'रमैनी'।

मलिक मुहम्मद जायसी (1492–1542)

मलिक मुहम्मद जायसी अमेठी (उत्तर प्रदेश) के समीप जायस के रहनेवाले थे, इसीलिए उनका नाम जायसी पड़ा। ये प्रसिद्ध सूफ़ी फकीर शेख मोहिदी (मुहीउद्दीन) के शिष्य थे। अमेठी के राजघराने में इनका बहुत सम्मान था। जीवन के अंतिम दिनों में जायसी अमेठी से दो मील दूर एक जंगल में रहा करते थे। वहीं इनकी मृत्यु हुई।

जायसी की प्रसिद्धि का मुख्य आधार इनका प्रबंधकाव्य 'पद्मावत' है। 'पद्मावत' में प्रेमगाथा की परंपरा पूर्ण प्रौढ़ता से मिलती हैं। इसमें इतिहास और कल्पना का अद्भुत संगम है। इस प्रबंध-काव्य में सिंहल देश की राजकुमारी पद्मावती और चित्तौड़ के राजा रत्नसेन के अलौकिक प्रेम की कथा है, जो लोककथा पर आधारित है। जायसी ने दोनों की प्रेम-कथा को इस प्रकार गूँथा है कि उसमें ईश्वरीय सत्ता का आभास होता है। प्रेम का यह लोकधर्मी स्वरूप मानवमात्र के लिए प्रेरणादायी है।

'पद्मावत' में कवि ने फ़ारसी की मसनवी शैली का प्रयोग किया है। संपूर्ण काव्य खंडों या अध्यायों में विभाजित है। जायसी ने इसमें दोहा-चौपाई शैली का प्रयोग किया है। इसकी भाषा ठेठ अवधी है।

जायसी ने अलंकारों का बहुत सुंदर प्रयोग किया है। लोक-संस्कृति उनके काव्य का मुख्य आधार है। 'पद्मावत' के अतिरिक्त जायसी की प्रमुख कृतियाँ हैं- 'अखरावट' और 'आखिरी कलाम'। 'आखिरी कलाम' में जायसी ने कयामत के दिन का चित्रण प्रस्तुत किया है। 'अखरावट' में वर्णमाला के एक-एक अक्षर को लेकर सिद्धांत संबंधी तत्वों से भरी चौपाइयाँ कही गई हैं।

1.9 पाठांत प्रश्न

1. 'लोचन अनँत उघाड़िया, अनँत दिखावणहार' से 'कबीर' का क्या आशय है? स्पष्ट कीजिए।
2. 'लाली मेरे लाल की' में 'लाली' और 'लाल' से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट कीजिए।
3. कबीर की भाषा पर टिप्पणी कीजिए।
4. आज के समय में प्रेम के महत्व पर एक टिप्पणी लिखिए।
5. माटी मोल न किछु लहै औ माटी सब मोल।

   दिस्टि जौं माटी-सौं करै माटी होइ अमोल।।

   यहाँ कवि ने 'माटी' शब्द का प्रयोग किन-किन अर्थों में किया है?
6. 'पद्मावत' का काव्यांश हमें क्या प्रेरणा देता है?

1.10 उत्तरमाला

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

1.1 1. (ख) 2. (ग) 3. (क)

1.2 1. (ग) 2. (ग) 3. (ख)

2

सगुण भक्तिकाव्य
(तुलसीदास, सूरदास और मीराँबाई)

सगुण का अर्थ है- गुण सहित। यहाँ पर गुण का अर्थ है-रूप और उससे जुड़ी प्रवृत्तियाँ। ईश्वर के रूप, आकार और गुणों में विश्वास करके उनका बखान करने वाली भक्ति सगुणभक्ति कहलाती है। इस भक्ति में अवतार और लीला का बहुत महत्व है। इसीलिए सगुण भक्ति के काव्य में ईश्वर के साकार रूप की लीलाओं का गायन हुआ है। प्रसिद्ध कथन है कि, 'भक्ति द्राविड़ ऊपजी, लाए रामानंद' अर्थात् भक्ति का उद्भव दक्षिण भारत में हुआ और इसे उत्तर भारत में रामानंद लेकर आए। रामानंद ने राम को विष्णु का अवतार मानकर उनकी उपासना आरंभ की। इसी प्रकार वल्लाभाचार्य ने कृष्ण को विष्णु का अवतार मानकर उनकी उपासना आरंभ की। इस तरह से रामभक्ति और कृष्णभक्ति की दो धाराएँ चल पड़ीं। तुलसीदास रामभक्ति धारा के और सूरदास कृष्णभक्ति धारा के प्रतिनिधि कवि हैं। कृष्णभक्ति धारा में मीराँ का नाम भी महत्वपूर्ण है। वे सूरदास की तरह निर्गुण भक्ति की विरोधी नहीं हैं। उनके काव्य पर निर्गुण-सगुण-दोनों साधनाओं का प्रभाव है। उन पर नाथमत का भी प्रभाव दिखाई पड़ता है।

इस पाठ में हम तुलसीदास, सूरदास और मीराँ के पदों को पढ़कर समझेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- राम और भरत के आपसी संबंधों का वर्णन कर सकेंगे;
- भरत के चरित्र की विशेषताओं पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- सूरदास के वात्सल्य-भाव का अपने शब्दों में उल्लेख कर सकेंगे;
- मीराँ की कृष्ण के प्रति प्रेमभाव की साहसपूर्ण अभिव्यक्ति का उल्लेख कर सकेंगे;
- तुलसी, सूर और मीराँ के पदों के भाव-सौंदर्य एवं शिल्प-सौंदर्य का वर्णन कर सकेंगे।

(क) तुलसीदास

2.1 मूल पाठ

'रामायण' की कहानी से आप अवश्य परिचित होंगे। राम भारतीय संस्कृति के केंद्रबिंदु हैं। महाकवि तुलसीदास ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'रामचरितमानस' में भगवान राम को भारतीय जनमानस में स्थापित करने का महान कार्य किया है।

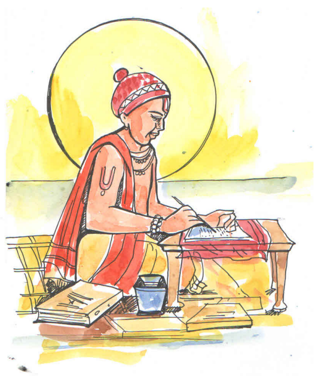

चित्र 2.1 : तुलसीदास

अवधी भाषा और चौपाई-दोहा छंद में लिखे गए 'रामचरितमानस' में राम के जीवन की कथा है जिसका लोकप्रिय रूप आपने 'रामलीला' में अवश्य देखा होगा। रामलीला में भाग लेने वाले पात्र समाज के प्रत्येक वर्ग से आते हैं। 'रामचरितमानस' एक प्रबंधकाव्य है जिसे उदात्त मानवीय संबंधों का महाकाव्य भी कहा जा सकता है। आज इस पाठ में हम राम और भरत के एक महत्वपूर्ण प्रसंग के माध्यम से भाइयों के आदर्श संबंध और प्रेम के विषय में पढ़ेंगे। 'रामचरितमानस' के 'अयोध्याकांड' का यह प्रसंग मार्मिक है। आइए, इस संदर्भ में यह काव्यांश पढ़ें-

भरत का भ्रातृप्रेम

('रामचरितमानस' से उद्धृत)

सुनि मुनि बचन राम रुख पाई। गुरु साहिब अनुकूल अघाई।
लखि अपनें सिर सबु छरु भारू। कहि न सकहिं कछु करहिं बिचारू।
पुलकि सरीर सभाँ भए ठाढ़े। नीरज नयन नेह जल बाढ़े।
कहब मोर मुनिनाथ निबाहा। एहि तें अधिक कहौं मैं काहा।।
मैं जानउँ निज नाथ सुभाऊ। अपराधिहु पर कोह न काऊ।
मो पर कृपा सनेहु बिसेषी। खेलत खुनिस न कबहूँ देखी।।
सिसुपन तें परिहरेउँ न संगू। कबहुँ न कीन्ह मोर मन भंगू।
मैं प्रभु कृपा रीति जियँ जोही। हारेहुँ खेल जितावहिं मोही।।

दो0 महूँ सनेह सकोच बस, सनमुख कही न बैन।
दरसन तृपित न आजु लगि, पेम पिआसे नैन।।

बिधि न सकेउ सहि मोर दुलारा। नीच बीचु जननी मिस पारा।
यहउ कहत मोहि आजु न सोभा। अपनीं समुझि साधु सुचि को भा।।
मातु मंदि मैं साधु सुचाली। उर अस आनत कोटि कुचाली।
फरइ कि कोदव बालि सुसाली। मुकता प्रसव कि संबुक काली।।
सपनेहुँ दोस कलेसु न काहू। मोर अभाग उदधि अवगाहू।

शब्दार्थ

अनुकूल अघाई	-	पूर्णत: अपने पक्ष में
नीरज नयन	-	कमल जैसे नेत्र
पुलकि	-	रोमांचित होकर
मुनिनाथ	-	वशिष्ठ
कहब मोर	-	मुझे जो कहना था
निबाहा	-	निभा दिया, मेरी ओर से कह दिया
कोह	-	क्रोध
सनेहू	-	स्नेह
बिसेषी	-	विशेष
खुनिस	-	रंजिश, अप्रसन्नता
परिहरेऊँ न	-	नहीं छोड़ा
जियँ जोही	-	हृदय में देखा है
महूँ	-	मैंने भी
कही न बैन	-	बात नहीं कही
तृपित	-	तृप्त
बिधि	-	विधाता
जननी मिस	-	माँ के बहाने
बीचु पारा	-	अंतर पैदा कर दिया
सुचाली	-	सदाचारी
कुचाली	-	दुराचारी
को भा	-	कौन हुआ
फरइ	-	फलती है
कोदव	-	कोदो (एक प्रकार का मोटा अनाज)
सुसाली	-	एक प्रकार का शालि नामक धान,
संबुक	-	घोंघा
मुकता	-	मोती
काहू	-	किसी को भी
उदधि	-	सागर
अवगाहू	-	अथाह

बिनु समुझें निज अघ परिपाकू। जारिउँ जायँ जननि कहि काकू।।
हृदयँ हेरि हारेउँ सब ओरा। एकहि भाँति भलेहिं भल मोरा।
गुरु गोसाइँ साहिब सिय रामू। लागत मोहि नीक परिनामू।।

दो0 साधु सभाँ गुर प्रभु निकट, कहउँ सुथल सतिभाउ।
प्रेम प्रपंचु कि झूठ फुर जानहिं मुनि रघुराउ।।

बोध प्रश्न 2.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. 'कृपा की रीति' किस विकल्प से प्रकट हो रही है –
   (क) नीरज नयन नेह जल बाढ़े
   (ख) खेलत खुनिस न कबहूँ देखी
   (ग) हारेहुँ खेल जितावहिं मोही
   (घ) लागत मोहि नीक परिनामू
2. भरत सबसे अधिक दोषी मानते हैं–
   (क) भाग्य को
   (ख) गुरु वशिष्ठ को
   (ग) कैकेयी को
   (घ) दशरथ को

2.2 आइए समझें

अंश-1

आइए, 'भरत का भ्रातृप्रेम' के प्रथम अंश को पढ़कर समझें।

प्रसंग : आप यह तो जानते ही हैं कि सीता और लक्ष्मण सहित राम के वन चले जाने पर अयोध्यावासी बड़े दुखी हुए थे। राम के छोटे भाई भरत को सबसे अधिक दुख हुआ था। बता सकते हैं क्यों ? कैकेयी ने राजा दशरथ से राम के लिए वनवास और भरत के लिए राज्याभिषेक का वरदान माँगा था। भरत के लिए यह बात अकल्पनीय थी। राजगद्दी पर तो बड़े भाई का अधिकार होता है, किंतु यहाँ उन्हें वनवास दे दिया गया। भरत अपने को इसका दोषी मानते हैं। इसलिए भरत अपने कुल-गुरु वशिष्ठ और राजपरिवार सहित

टिप्पणी

शब्दार्थ

अघ	–	पाप
परिपाकू	–	फल, परिणाम
काकू	–	व्यंग्य
नीक	–	अच्छा
हेरि	–	देखकर
परिनामू	–	परिणाम
सति भाऊ	–	सच्चे मन से
प्रपंचु	–	कपट

प्रथम अंश

सुनि मुनि बचन राम रुख पाई।
गुरु साहिब अनुकूल अघाई।
लखि अपनें सिर सबु छरु भारू।
कहि न सकहिं कछु करहिं बिचारू।
पुलकि सरीर सभाँ भए ठाढ़े।
नीरज नयन नेह जल बाढ़े।
कहब मोर मुनिनाथ निबाहा।
एहि तें अधिक कहौं मैं काहा।।
मैं जानउँ निज नाथ सुभाऊ। अपराधिहु पर कोह न काऊ।
मो पर कृपा सनेहु बिसेषी।
खेलत खुनिस न कबहूँ देखी।।
सिसुपन तें परिहरेउँ न संगू।
कबहुँ न कीन्ह मोर मन भंगू।
मैं प्रभु कृपा रीति जियँ जोही। हारेहुँ खेल जितावहिं मोही।।
महूँ सनेह सकोच बस,
सनमुख कही न बैन।
दरसन तृपित न आजु लगि,
पेम पिआसे नैन।

अयोध्या के नागरिकों को साथ लेकर राम को लौटाने के लिए वन की ओर चल पड़े। तुलसी ने रामचरितमानस के अयोध्याकांड में उसी अवसर का वर्णन किया है।

व्याख्या : चित्रकूट में राम ने भरत के स्वभाव की बड़ी प्रशंसा की। उनका रुख देखकर वशिष्ठ ने भरत को संकेत दिया कि वे अपने ह्रदय की बात राम के समक्ष रखें।

चित्र 2.2 : राम भरत मिलन

यही तो भरत चाहते थे। वे ऐसे अवसर की प्रतीक्षा में ही थे कि कब गुरु वशिष्ठ और राम दोनों अनुकूल हों। अवसर प्राप्त होने पर उनके शरीर में सिहरन हुई। वे सभा के समक्ष बोलने के लिए खड़े तो हुए पर बोलने से पूर्व उनकी आँखों से प्रेम के आँसू बह चले। फिर बोले– मुझे जो कहना था वह तो मुनियों में श्रेष्ठ गुरु वशिष्ठ ने स्वयं कह ही दिया है, मैं उससे अधिक क्या कहूँ? मैं अपने भाई राम के स्वभाव से बचपन से ही परिचित हूँ। मैंने उन्हें कभी भी अपराधी पर क्रोध करते नहीं देखा। और मुझ पर तो उनकी विशेष कृपा रही है। बचपन में आपस में खेलते समय भी मैंने उन्हें कभी अप्रसन्न नहीं देखा। मेरे बड़े भाई की मुझ पर सदैव इतनी अधिक कृपा रही है कि यदि मैं कभी खेल हार जाता तो भी वे मुझे जिता ही देते थे। मैंने तो बचपन से ही कभी उनका साथ नहीं छोड़ा और सदा यह पाया कि उन्होंने मेरा मन कभी नहीं दुखाया। यह राम का बड़प्पन है कि वे कभी किसी का मन नहीं तोड़ते।

क्या आप बता सकते हैं कि भरत के इस कथन के पीछे क्या अभिप्राय हो सकता है? यहाँ दो अभिप्राय प्रतीत होते हैं। एक तो यह कि वे स्पष्ट कह रहे हैं कि मैंने बचपन से ही राम का साथ कभी नहीं छोड़ा। अब इतनी दीर्घ अवधि के लिए उनका वियोग मैं कैसे सह सकता हूँ। दूसरा संकेत और भी महत्त्वपूर्ण है। वह है – *'कबहुँ न कीन्ह मोर मन भंगू'* अर्थात् राम ने कभी भी भरत का दिल नहीं दुखाया। अतः आज भी उन्हें विश्वास है कि राम उनका मन नहीं तोड़ेंगे और उनके आग्रह पर वापस अयोध्या लौट चलेंगे।

किसी पर कृपा करने की राम की रीति भी भरत को ज्ञात है। उन्होंने उस रीति पर मनन किया है और पाया है कि वे तो हारे हुए को भी जिता देते हैं।

भरत कहते हैं कि मैंने प्रेम और संकोच के कारण उनके सामने कभी मुख नहीं खोला। शिष्टाचार की परंपरा रही है कि बड़ों के सामने उद्दंडता का व्यवहार नहीं किया जाता। बड़ों के सामने मुख खोलना उनका अनादर है, जो भरत ने कभी नहीं किया। वे तो बस राम का दर्शन ही करते रहे, किंतु दर्शनों से भी आज तक तृप्त नहीं हुए। उनकी आँखें सदा राम के प्रेम की प्यासी ही बनी रहीं।

पाठगत प्रश्न 2.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. भरत ने अपने अनुकूल पाया–

   (क) कैकेयी और राम को (ख) गुरु वशिष्ठ और राम को

   (ग) गुरु वशिष्ठ और कैकेयी को (घ) अयोध्यावासियों और राम को

2. किसके नेत्र नीरज रूपी कहे गए हैं–

   (क) राम के (ख) वशिष्ठ के

   (ग) कैकेयी के (घ) भरत के

3. भारत ने राम के समक्ष मुँह क्यों नहीं खोला–

   (क) प्रेम और संकोचवश (ख) क्रोध और नाराजगीवश

   (ग) प्रेम और अपराधबोधवश (घ) प्रेम और अपमानवश

अंश - 2

अब अगले अंश को पुनः पढ़िए।

बिधि न सकेउ सहि मोर दुलारा।
नीच बीचु जननी मिस पारा।
यहउ कहत मोहि आजु न सोभा।
अपनी समुझि साधु सुचि को भा।।
मातु मंदि मैं साधु सुचाली।
उर अस आनत कोटि कुचाली।
फरइ कि कोदव बालि सुसाली। मुकता
प्रसव कि संबुक काली।।
सपनेहुँ दोस कलेसु न काहू।
मोर अभाग उदधि अवगाहू।
बिनु समुझें निज अघ परिपाकू।
जारिउँ जायँज़ननि कहि काकू।।
हृदयँ हेरि हारेउँ सब ओरा।
एकहि भाँति भलेहिं भल मोरा।
गुरु गोसाइँ साहिब सिय रामू।
लागत मोहि नीक परिनामू।।
साधु सभाँ गुर प्रभु निकट, कहउँ
सुथल सतिभाउ।
प्रेम प्रपंचु कि झूठ फुर जानहिं
मुनि रघुराउ।।

प्रसंग : यह भरत के शब्दों में राम के भ्रातृ-स्नेह की स्मृति थी, जो उन्हें बार-बार याद आ रही थी। पर भरत के मन को बीच की घटनाओं की पीड़ा भी साल रही थी। उन्हें बार-बार अपनी माँ कैकेयी की करनी भी याद आ रही थी और वे आत्मग्लानि से भर जाते थे। तुलसी ने भरत की इसी मनोदशा का वर्णन किया है।

व्याख्या : भरत का कथन अभी चल रहा है। उन्होंने राम की प्रीति का स्मरण किया, और उन्हें लगा कि विधाता उनके और राम के बीच गहरे प्रेम भाव को सहन नहीं कर सका। इसलिए उसने राम और भरत के स्नेह के बीच माता कैकेयी को उपस्थित कर मानो एक रुकावट डाल दी। भरत यह कह तो गए पर तुरंत ही उन्हें लगा कि यह कथन उन्हें शोभा नहीं देता। उन्हें ऐसा क्यों लगा होगा ? एक तो यही कि पुत्र होने के कारण माँ की निंदा करना उचित नहीं है, पर स्थिति ऐसी ही आ पड़ी है। दूसरा कारण यह भी है कि कोई अपने आपको सुजान कैसे कह सकता है। आशय यह है कि कोई यह न समझे कि भरत स्वयं को पवित्र और सज्जन मान रहे हैं। अपने मानने भर से कुछ नहीं होता, हाँ ! लोग मानें तब बात और है।

भरत कहते हैं – यह सोचना कि माँ बुरी है और मैं सदाचारी और सज्जन हूँ, ठीक नहीं है। ऐसा भाव मन में आना करोड़ों दुराचारों जैसा है। 'कोटि कुचाली' पर ध्यान दीजिए। माँ को बुरा मानने का असद् विचार वस्तुतः करोड़ों असद् विचारों जैसा बुरा है। अब आप शंका कर सकते हैं कि कैकेयी ने राम को वनवास दिलाया था, इसका समाधान भरत कैसे करेंगे। भरत के पास इसके दो कारण हैं – पहला है कैकेयी के स्वभाव की विशेषता। भरत उदाहरण देकर पूछ रहे हैं– भला कोदो के पौधे से शालिधान की बालें कैसे आएँगी। इसे दूसरी कहावत से भी कह सकते हैं– बबूल के पेड़ पर आम कैसे लगेंगे। अर्थ यह भी है कि जब माँ में ही दोष है तो मैं निर्दोष कैसे हो सकता हूँ।

भरत स्पष्ट करते हैं कि स्वप्न में भी किसी को दोष देना ठीक नहीं। किसी का रत्तीभर भी दोष नहीं है, दोष तो बस भरत के भाग्य का है। वे कहते हैं कि मेरा दुर्भाग्य अथाह सागर है। उसकी कोई सीमा नहीं। कैकेई के द्वारा राम को बनवास का वरदान माँगना मेरे ही दुर्भाग्य सागर की एक लहर है। भरत को इतने से ही संतोष नहीं होता। अपने को कोसते हुए वे आगे कहते हैं– मैंने अपने पापों का परिणाम जाने बिना ही माँ को भला-बुरा कह कर उसके मन को चोट पहुँचाई। अब मैं अपने हृदय में अपनी भलाई के उपाय ढूँढ-ढूँढ कर हार गया हूँ। कोई उपाय सूझता ही नहीं। अब तो यही कहा जा सकता है कि समर्थ गुरु निकट बैठे हैं और भाई राम तथा भाभी सीता मेरे स्वामी हैं। मुझे विश्वास है कि इस सुयोग को देखकर जो भी परिणाम होगा, वह अच्छा ही होगा।

उसी बात का और विस्तार करते हुए भरत कहते हैं कि यहाँ पर सज्जनों की सभा बैठी है, गुरु वशिष्ठ और स्वामी राम निकट बैठे हैं, यह स्थान चित्रकूट भी पवित्र तीर्थस्थल है और मैं जो कह रहा हूँ उसके पीछे भी सात्विक भाव है। मुनिवर वशिष्ठ जी और राम यह भली-भाँति जानते हैं कि मेरी बातें प्रेम से भरी हैं या छल से, झूठी हैं या सच्ची।

टिप्पणी

आइए, तुलसीदास के काव्यांश की कुछ खास बातों को भी देखें :

1. बड़ी विनम्र शैली में वाक् चातुरी (बोलने की समझदारी) की झलक देखिए–

"मैं जानउँ निज नाथ सुभाऊ, अपराधिहु पर कोह न काऊ।।
मों पर कृपा सनेहु बिसेखी ...."

मैं राम के स्वभाव को जानता हूँ, यह कहने के लिए भरत उन्हें निज नाथ (मेरे स्वामी) कहते हैं। भाई-भाई के बीच भी बड़े भाई को स्वामी मानने का भाव है और स्वामी के स्वभाव में स्वामित्ववाला बड़प्पन या अहंकार नहीं है। अपराधी पर भी क्रोध न करना उनका स्वभाव है। यहाँ 'अपराधी' शब्द को तुलसी जानबूझ कर लाए हैं। संकेत यह है कि भरत से (उसकी माँ से) जो हुआ है वह अपराध से कम नहीं, पर राम का स्वभाव है कि अपराधी पर क्रोध न करना। इस जानकारी से ही भरत निश्चिंत नहीं कर देते, वे यह भी कहते हैं कि मुझ पर राम की विशेष कृपा रही है, अतः वे बिल्कुल क्रोध नहीं करेंगे और मुझे क्षमा कर देंगे।

2. 'रामचरितमानस' में भरत अपनी माँ को तब बहुत बुरा-भला कहते हैं, जब उन्हें ननिहाल से लौटकर अयोध्या की घटनाओं की सूचना मिलती है। वह क्रोध और आवेश तात्कालिक था। वे माँ पर बरस पड़े थे और इस प्रकार वे माँ के प्रति दुर्व्यवहार के दोषी हो गए थे। तुलसी उन्हें इस आक्षेप से मुक्त कराना चाहते हैं, इसलिए यहाँ भरत से कहलाते हैं –

   सपनेहुँ दोस कलेसु न काहू। मोर अभाग उदधि अवगाहू।
   बिनु समुझें निज अघ परिपाकू। जारिउँ जायँ जननि कहि काकू।।

3. अंतिम दोहे में भी बड़ा अर्थ-गांभीर्य है। भरत यह आश्वासन देना चाहते हैं कि उनकी बातों में छल-कपट नहीं है, वे सत्य बोल रहे हैं। प्रमाणस्वरूप स्पष्ट करना चाहते हैं कि वैसे ही सामान्य स्थितियों में भी छल या झूठ संभव नहीं फिर यहाँ तो ऐसी पाँच स्थितियाँ हैं, जिनमें झूठ बोलने का प्रश्न ही नहीं उठता, जैसे –

   1. सज्जनों की सभा
   2. कुल-गुरु वशिष्ठ की निकटता
   3. स्वामी राम और सीता का सान्निध्य
   4. चित्रकूट जैसा पावन तीर्थ
   5. भरत के मन का सात्विक भाव

   ऐसे वातावरण में सामान्यत: कोई भी झूठ नहीं बोल सकता। अत: भरत जो कह रहे हैं, उस पर अविश्वास का कोई कारण ही नहीं।

4. तुलसीदास का 'रामचरितमानस' रामकथा के माध्यम से आदर्श व्यवहार और आचरण की सीख भी देता है। इस अंश में एक ओर भाइयों के परस्पर-प्रेम की और दूसरी ओर गुरुजनों का सम्मान करने की सीख है, जो आज के संदर्भों में भी उपयुक्त और प्रासंगिक है।

पाठगत प्रश्न 2.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. भरत के अनुसार कौन-सी विशेषता राम के स्वभाव की है?
   (क) वे अपराधी पर क्रोध नहीं करते हैं।
   (ख) खेलते समय जीते हुए को भी हरा देते हैं।
   (ग) वे भरत का दिल दुखाते हैं।
   (घ) वे लक्ष्मण से अधिक प्रेम करते हैं।
2. भारत को किसका दुलार प्राप्त हुआ–
   (क) दुर्भाग्य का (ख) विधाता का

टिप्पणी

(ग) राम का (घ) वशिष्ठ का

3. पठित काव्यांश की विशेषता नहीं है-

(क) ब्रजभाषा (ख) अर्थगांभीर्य

(ग) उदाहरण का उपयोग (घ) आत्मग्लानि

2.4 भाव-सौंदर्य

आप आरंभ में पढ़ चुके हैं कि 'रामचरितमानस' मानवीय एवं पारिवारिक संबंधों का महाकाव्य है। आपने जो काव्यांश पढ़ा उसमें सभी भावों का मूल आधार भाई-भाई का प्रेम है। भारतवासी भरत जैसे भाई को आदर्श मानकर उनका उदाहरण क्यों देते हैं, यह आप समझ गए होंगे। भरत राज्य को त्याग देने योग्य मानते हैं। राम का स्नेह उनके लिए सबसे बड़ी थाती है। वे तरह-तरह से बड़े भाई राम के स्नेह और उदारता की प्रशंसा करते हैं। अपने बिछोह का कारण माँ को नहीं मानते, स्वयं को ही और भाग्य को मानते हैं। काव्यांश में इन बातों की प्रस्तुति बहुत ही सरस एवं भावपूर्ण ढंग से की गई है। गुरु वशिष्ठ, राम, भरत, कैकेयी–सभी की चरित्रगत विशेषताएँ प्रभावी ढंग से व्यक्त हुई हैं।

2.5 शिल्प-सौंदर्य

तुलसी की काव्य-कला की बानगी आप देख चुके हैं। भाव और शिल्प क्षेत्रों में वे बेजोड़ हैं। आइए यहाँ काव्य-शिल्प की दृष्टि से एक बार अवलोकन करें।

1. **अलंकारों का सहज प्रयोग :** तुलसी की कविता में भाव-वर्णन के साथ-साथ अलंकार स्वाभाविक रूप में पिरोए गए हैं, थोपे नहीं गए जैसे-

(क) 'नीरज नयन नेह जल बाढ़े' - भरत के नीरज रूपी नेत्रों में स्नेह का जल बढ़ गया- रूपक और अनुप्रास का सहज सौंदर्य।

(ख) पग-पग पर **अनुप्रास** के सहज प्रयोग में भी तुलसी सिद्धहस्त हैं; जैसे-

- *सुनि **मुनिवचन राम रुख पाई***
- *पुलकि **सरीर सभाँ** भए ठाढ़े*
- ***खेलत खुनिस** न कबहूँ देखी।*

(ग) उदाहरण/दृष्टांत - *फरई कि कोदव बालि सुसाली।*
मुकता प्रसव कि संबुक काली।।

(घ) रूपक - मोर अभाग उदधि अवगाहू।

2. **नाद-सौंदर्य** - मधुर वर्णों के प्रयोग से कविता में नादात्मकता भी तुलसी की कविता का प्रमुख गुण है। जैसे :

- *सुनि मुनि वचन राम रुख पाई*

- *मातु मंदि मैं साधु सुचाली*
- *जारिउँ जायँ जननि कहि काकू*

3. **साभिप्राय प्रयोग** – तुलसी अनेक शब्दों में से सर्वाधिक उपयुक्त शब्द का जानबूझ कर चयन करते हैं। इससे कविता में अर्थगांभीर्य भी आ गया है; जैसे–

   साधु सभाँ गुरु प्रभु निकट, कहउँ सुथल सति भाउ।
   प्रेम प्रपंचु कि झूठ फुर जानहिं मुनि रघुराउ।।

   उपर्युक्त दोहे में 'झूठ' न बोलने के लिए पाँच बहुत ही सबल कारण एक दोहे में पिरोए गए हैं।

4. **प्रांजल अवधी** – तुलसीदास ने मानस की रचना अवधी भाषा में की है, किंतु उनकी अवधी बहुत मधुर प्रांजल शब्दावली से युक्त है।

5. **दोहा-चौपाई छंद** – दोहा और चौपाई तुलसी के प्रिय छंद हैं। इनसे कथा-प्रवाह में सहायता मिलती है और पाठक/श्रोता रस-विभोर हो जाता है।

चौपाई के बारे में संक्षेप में नीचे दिया जा रहा है। आइए, इसे समझें।

चौपाई

चौपाई एक प्रकार का मात्रिक छंद है। इसमें दो चरण होते हैं। दोनों चरणों की मात्राएँ बराबर (16-16) होती हैं। इसलिए इसे मात्रिक समछंद भी कहते हैं।

इस छंद के अंत में दो गुरु वर्णों का प्रयोग आवश्यक होता है।

I I I ISI IS I I SS
पुलकि सरीर सभाँ भए ठाढ़े। = 16 मात्राएँ अंत में दो गुरु
S I I I I I S I I I S S
नीरज नयन नेह जल बाढ़े।। = 16 मात्राएँ अंत में दो गुरु

चौपाई छंद के प्रयोग के लिए तुलसीदास का प्रबंधकाव्य 'रामचरितमानस' और जायसी का 'पद्मावत' बहुत प्रसिद्ध हैं।

पाठगत प्रश्न 2.3

1. 'नीरज नयन नेह जल बाढ़े' कथन में कौन-से अलंकार हैं ?
   (क) उपमा और अनुप्रास (ग) रूपक और अनुप्रास
   (ख) उत्प्रेक्षा और अनुप्रास (घ) अनुप्रास और अनुप्रास
2. 'रामचरितमानस' में सबसे अधिक किस छंद का प्रयोग किया गया है ?
   (क) सवैया (ग) चौपाई
   (ख) कवित्त (घ) घनाक्षरी

टिप्पणी

(ख) सूरदास

हिंदी साहित्य में कृष्णभक्ति काव्य का विशेष महत्व है। हिंदी कवियों ने विभिन्न रूपों में कृष्ण की मनोरम लीलाओं का वर्णन किया है। उनमें सूरदास का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। प्रसिद्ध आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल की एक प्रसिद्ध उक्ति है कि, "सूर वात्सल्य एवं शृंगार का कोना-कोना झाँक आए हैं।" वास्तव में सूर ने बालकृष्ण के रूप-सौंदर्य एवं बाल लीलाओं का विस्तृत और सूक्ष्म चित्र प्रस्तुत करते हुए उनके लोकरंजनकारी रूप की अद्भुत छवि दिखाई है। यहाँ एक पद हम पढ़ेंगे जिसमें बालक कृष्ण के सौंदर्य को चित्रित किया गया है।

2.6 मूल पाठ

पद

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलत रेनु तन-मंडित, मुख दधि लेप किये।
चारु कपोल, लोल लोचन, गोरोचन-तिलक दिये।
लट-लटकनि मनु मत्त मधुप-गन मादक मधुहिं पिए।।
कठुला-कंठ वज्र केहरि-नख राजत रुचिर हिए।
धन्य सूर एकौ पल इहिं सुख, का सत कल्प जिए।।

चित्र 2.3 : सूरदास

शब्दार्थ

सोभित - शोभा
नवनीत - मक्खन
रेनु - धूल
मंडित - युक्त
चारु - सुंदर
कपोल - गाल
लोल - चंचल
लोचन - आँख
गोरोचन - पीले रंग का एक सुगंधित रसायन जो गाय के पित्त से निकलता है
मधुप - भौंरे
कठुला - बच्चों के गले में पहनाए जानेवाली माला
वज्र - कठोर
केहरि - सिंह
नख - नाखून
राजत - सुशोभित
रुचिर - सुंदर

बोध प्रश्न 2.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. प्रस्तुत पद में कौन-सा रस है-

   (क) वात्सल्य (ख) शृंगार

   (ग) वीर (घ) भक्ति

2. भौंरों के समूह से किसकी तुलना की गई है-

   (क) कपोल (ख) मुख

   (ग) केश (घ) लोचन

2.7 आइए समझें

आइए, सूरदास के पद को पढ़कर समझें।

प्रसंग : सूरदास ने इस पद में घुटनों के बल चलते बालकृष्ण के अनुपम सौंदर्य का मार्मिक एवं चित्रात्मक वर्णन किया है। सूर के इस बाल-वर्णन में स्वाभाविकता, सरलता और मनोरमता का अद्‌भुत संयोग है।

व्याख्या : सूरदासजी कहते हैं कि श्रीकृष्ण अभी बहुत छोटे हैं और नंद-यशोदा के घर के आंगन में घुटनों के बल ही चल पाते हैं। एक दिन उन्होंने ताजा निकला माखन एक हाथ में लिया और लीला करने लगे। श्रीकृष्ण के छोटे से एक हाथ में ताजा माखन शोभायमान है और वह इस माखन को लेकर घुटनों के बल चल रहे हैं। उनका शरीर धूल में लिपटा हुआ है और यह धूल भी उनके सौंदर्य को बढ़ा रही है। उनके मुँह पर दही लिपटा है मानो मुख पर दही लेप कर लिया हो। उनके गाल सुंदर तथा नेत्र चंचल हैं। ललाट पर गोरोचन, तिलक के रूप में प्रयुक्त होनेवाला एक सुगंधित पदार्थ, का तिलक लगा है। कृष्ण के बाल घुँघराले हैं। जब वे घुटनों के बल माखन लिए हुए चलते हैं तब घुँघराले बालों की लटें उनके कपोलों पर झूलने लगती हैं, जिससे ऐसा प्रतीत होता है मानो भ्रमर मधुर रस का पान करके मतवाले हो गए हैं। उनके गले में पड़े कठुले व सिंहनख से उनका सौंदर्य और अधिक बढ़ गया है। सूरदास कहते हैं कि श्रीकृष्ण के इस बाल रूप के दर्शन यदि एक पल के लिए भी हो जाए तो जीवन सार्थक हो जाए। अन्यथा सौ कल्पों या युगों तक भी जीवन निरर्थक ही है अर्थात् इस रूप-सौंदर्य के दर्शन के बिना अनंतकाल तक जिया गया जीवन भी बेकार है।

चित्र 2.4 : बालकृष्ण

जब सूरदास श्रीकृष्ण के बाल रूप का बिंबात्मक चित्रण प्रारंभ करते हैं तो एक से बढ़कर एक मनोहर चित्र अंकित होते जाते हैं। इस पद में कवि ने श्रीकृष्ण का गतिशील बिंबात्मक चित्र खींचा है।

इस पद में बालक का रूप है और उसकी सुंदर चेष्टाएँ भी हैं। आप ध्यान दें तो पाएँगे कि सूरदास ने बालक कृष्ण के घुटनों के बल चलने के साथ-साथ मक्खन, धूल तथा दही से सुशोभित उनके मुख तथा शरीर, माथे के तिलक, सुंदर लटों, गले में पड़ी सिंह के नाखून की माला आदि का सुंदर विवरण दिया है।

2.7 भाव-सौंदर्य

सूर वात्सल्य रस के सम्राट हैं। वे वात्सल्य के प्रत्येक अनुभव को उकेरते चलते हैं। अपने से छोटे या बच्चे के प्रति स्नेह-भाव की अभिव्यक्ति वात्सल्य है। वात्सल्य हमारे सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग रहा है। बालसुलभ लीलाएँ मन को आह्लादित करती हैं।

टिप्पणी

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलत रेनु तन-मंडित, मुख दधि लेप किये।
चारु कपोल, लोल लोचन,
गोरोचन-तिलक दिये।
लट-लटकनि मनु मत्त मधुप-गन
मादक मधुहिं पिए।।
कठुला-कंठ वज्र केहरि-नख राजत रुचिर हिए।
धन्य सूर एकौ पल इहिं सुख, का सत कल्प जिए।।

यहाँ आलंबन भाव श्रीकृष्ण हैं, उद्दीपन भाव श्रीकृष्ण की लीलाएँ एवं वातावरण है। आश्रय माता-पिता कवि या पाठक श्रोता हैं। अतः यहाँ वात्सल्य रस माना गया है।

2.8 शिल्प-सौंदर्य

कवि ने अनुप्रास और उत्प्रेक्षा अलंकारों की अनुपम छटा बिखेरी है। 'कपोल लोल लोचन', 'मंडित मुख', 'मनु मत्त मधुप' में अनुप्रास और 'लट लटकनि मनु.... मधुहिं पिए' में उत्प्रेक्षा अलंकार है। लगभग प्रत्येक पंक्ति में नाद-सौंदर्य भी है। ब्रजभाषा का सौंदर्य अनुपम है।

पाठगत प्रश्न 2.4

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. ''लट लटकनि मनु मत्त मधुप गन मादक मधुहिं पिए'' में कौन-से अलंकार हैं-

   (क) रूपक और उत्प्रेक्षा (ख) अनुप्रास और उत्प्रेक्षा

   (ग) अनुप्रास और रूपक (घ) उपमा और रूपक

2. प्रस्तुत पद की भाषा है-

   (क) ब्रज (ख) अवधी

   (ग) भोजपुरी (घ) मैथिली

3. प्रस्तुत पद की विशेषता नहीं है-

   (क) चित्रात्मकता (ख) गतिशीलता

   (ग) शृंगारिकता (घ) स्वाभाविकता

क्रियाकलाप 2.1

आपने अपने घर में या आसपास किसी बच्चे की आकर्षक हरकतों व चेष्टाओं को ध्यान से देखा होगा। ऐसे ही किसी बच्चे की चेष्टाओं का पचास शब्दों में चित्रात्मक वर्णन कीजिए।

(ग) मीराँबाई

मीराँबाई के काव्य को पढ़कर यह अनुभव होता है कि वे श्री कृष्ण की अनन्य भक्त थीं। वे कृष्णभक्ति के विभिन्न संप्रदायों में से किसी में भी विधिवत दीक्षित नहीं थीं। उनकी भक्ति 'माधुर्य भाव' की भक्ति कही जाती है। माधुर्य भाव की भक्ति के अंतर्गत भक्त और भगवान में प्रेम का संबंध होता है। मीराँबाई श्री कृष्ण के प्रेम में डूबी हुई थीं। कृष्ण को वे प्रायः गिरधर, साँवरा या प्रीतम के नाम से पुकारती हैं। मीराँ के समूचे काव्य में इस प्रेम की अभिव्यक्ति अनेक प्रकार से हुई है। प्रेम में मिलन और

चित्र 2.5 : मीराबाई

विरह, दोनों ही पक्षों की सुंदर अभिव्यक्ति उनके काव्य में मिलती है। यह अभिव्यक्ति अत्यंत सीधे-सादे और सरल रूप में हुई है; जिसमें प्रेम, विश्वास और समर्पण की भावना विद्यमान है।

क्रियाकलाप 2.2

1. आपने मीराँ का कोई-न-कोई पद अवश्य ही पढ़ा अथवा सुना होगा। अपने पदों में मीराँ ने कृष्ण के अनेक नामों का प्रयोग किया है, ये नाम हैं –

   गिरधर, गोविंद, साँवरा (श्याम), हरि, कृष्ण। इनके अतिरिक्त भी आपने कृष्ण के नाम पढ़े या सुने होंगे। उन्हें लिखिए –

   ....

   ....

   ....

2. जिससे आप प्रेम करते हैं,

   (क) उसके संग अधिक-से-अधिक रहना चाहते हैं।

   (ख) उसकी पसंद-नापसंद का विशेष ध्यान रखते हैं।

   ऐसी और अनेक बातें हो सकती हैं, उन्हें यहाँ लिखिए –

   (ग) ....

   (घ) ....

   (ङ) ....

आइए, हम 'मीराँबाई की पदावली' से उद्धृत उनके एक पद का आनंद लें :

2.9 मूल पाठ

पद

माई री म्हां लियाँ गोविन्दाँ मोल ।।टेक।।
थे कह्यां छाणे म्हां कां चोड्डे, लियाँ बजन्ता ढोल।
थे कह्यां मुंहोधो म्हां कह्यां सस्तो, लिया री तराजां तोल।

शब्दार्थ

माई री	– ब्रज तथा राजस्थानी का एक सामान्य संबोधन (यहाँ हे सखी!)
म्हां	– मैं (ने)
थे	– तुम
कह्यां	– कहती हो
छाणे	– छिपकर
म्हां कां	– मैं कहती हूँ
चोड्डे	– चौड़े में अर्थात् खुले-आम
बजंता ढोल	– ढोल बजाकर, खुलेआम

टिप्पणी

शब्दार्थ

मुंहाधो	- महँगा
सस्तो	- सस्ता
तराजां तोल	- तराजू में तोलकर
तण	- तन
वारां	- वारती हूँ, न्योछावर करती हूँ
जीव	- जीवन
अमोलक	- अमूल्य
मोल	- कीमत, दाम, मूल्य
मीराँ कूं	- मीरा को
दरसण>दरसन	- दर्शन
दीज्याँ	- दीजिए
पूरब जनम	- पूर्व जन्म अर्थात् पिछला जन्म
कोल>कौल	- वचन

तण वारां म्हां जीवण वारां, वारां अमोलक मोल।
मीराँ कूं प्रभु दरसण दीज्याँ, पूरब जनम को कोल।।

आइए पद को एक बार फिर ध्यान से पढ़ लें।

प्रसंग

प्रस्तुत पद में मीराँ ने कृष्ण के साथ अपने प्रेम-संबंध की घोषणा अत्यंत साहस और दृढ़ता से की है। संभवत: राजवंश और लोक-जीवन से मिलने वाली लांछना इस पद की भूमिका में है। यद्यपि यहाँ उसका बहुत स्पष्ट उल्लेख नहीं है, पर अन्यत्र ऐसा उल्लेख मिलता है। इस पद में इस साहसपूर्ण स्वीकृति के साथ-साथ कृष्ण से पूर्व जन्म के संबंध का भी संकेत है।

व्याख्या

मीराँ कहती हैं कि हे सखी ! मैंने तो श्रीकृष्ण को मोल ले लिया है अर्थात् मैंने कृष्ण के साथ अपने संबंध का मूल्य भी चुकता किया है। तुम कहती हो कि मैं उनसे यह

संबंध छिपाकर रखती हूँ और मैं कहती हूँ कि मैंने खुले में ढोल बजा कर श्रीकृष्ण को मोल लिया है अर्थात् उन्हें खुले आम अपना लिया है। आशय है कि मुझे कृष्ण के प्रति अपने प्रेम को गुप्त रखने की आवश्यकता नहीं है। मुझे उनसे प्रेम है और मैं सार्वजनिक तौर पर इस प्रेम की घोषणा करती हूँ। मीराँ आगे कहती हैं कि हे सखी, तुम कहती हो कि यह सौदा मँहगा है पर मेरा मानना है कि यह बहुत सस्ता है; क्योंकि मैंने यह सौदा तराजू पर तौलकर किया है अर्थात् मैंने पूर्ण रूप से सोच-विचार कर, जाँच-परख कर ही ऐसा किया है और इसका जो मूल्य मैंने चुकाया है (लोक अपवाद, कुल-संबंधियों से मिलने वाली भर्त्सना और लांछना आदि) वह तुम्हारी दृष्टि में अधिक हो सकता है, पर मेरी दृष्टि में श्रीकृष्ण को पाने के लाभ की तुलना में अपयश बहुत कम है। मैंने तो उन पर अपना तन-मन और जीवन सभी कुछ न्योछावर कर दिया है अर्थात् मैं अपने इस अमूल्य सौदे यानी श्रीकृष्ण से प्रेम-संबंध पर स्वयं न्योछावर हूँ। दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि मैंने अपना सब कुछ, जो अमूल्य था, कीमत के रूप में श्रीकृष्ण पर न्योछावर कर दिया। इसके बाद मीराँ पूर्व जन्म में दिए गए वचन का स्मरण कराते हुए श्रीकृष्ण से दर्शन देने की प्रार्थना करती हैं।

चित्र 2.6 : कृष्ण और मीरा

टिप्पणी

1. आइए इस पद की पहली पंक्ति *'माई री म्हा लियां गोविन्दाँ मोल'*, पर विचार करें। इसका एक अर्थ यह भी लगाया जाता है – कि हे सखी! मैंने श्रीकृष्ण को मोल ले लिया है और अब उन पर मेरा पूर्ण अधिकार है। किंतु यह अर्थ ग्रहण करने पर आगे की पंक्तियों से भाव का सामंजस्य नहीं बैठता। हालाँकि प्रेम में पूर्ण अधिकार के भाव की अभिव्यक्ति भी साहित्य में मिलती है, उदाहरण के लिए कबीर का यह दोहा देखें–

   नैनां अन्तरि आव तूँ, ज्यूँ हौं नैन झँपेउँ।
   ना हौं देखौं और कूँ, ना तुझ देखन देउँ।।

   ब्रजभाषा में 'मैं' के लिए 'हौं' का प्रयोग होता है, 'देखौं' मतलब है देखूँगा तथा 'देउँ', का अर्थ है 'दूँगा'। मीराँ के इस पद में यह भाव नहीं है। मीराँ के अन्य पदों में भी प्राय: यह भाव नहीं मिलता जैसा कि आपने देखा होगा, वे यह अधिकार अपने प्रियतम को ही देती हैं।

2. आपने ध्यान दिया होगा कि प्रस्तुत पद की अंतिम पंक्ति में दर्शन की अभिलाषा है। भक्ति और प्रेम में यह अभिलाषा निरंतर बनी रहती है। समूचे भक्ति साहित्य में ऐसी बहुत-सी उक्तियाँ मिलती हैं।

3. इसी पंक्ति में मीराँ ने श्रीकृष्ण को पूर्व जन्म में दिए गए वचन का स्मरण कराया है। पूर्व जन्म के साथ का ज़िक्र मीराँ के अनेक पदों में मिलता है। यहाँ मीराँ ने इस जन्म में दर्शन देने के श्रीकृष्ण के वचन की याद दिलाई है।

4. अगर आप इस पद की पहली तीन पंक्तियों को ध्यान से पढ़ेंगे तो आपके समक्ष यह स्पष्ट हो जाएगा कि इनमें लोक-प्रचलित मुहावरों का अत्यंत सुंदर प्रयोग किया गया है, ये मुहावरे हैं – मोल लेना, ढोल बजा कर लेना, तराजू में तोल कर लेना।

पाठगत प्रश्न 2.5

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. प्रस्तुत पद किसे संबोधित हैं–

   (क) राणा को (ख) माँ को

   (ग) स्वयं को (घ) सखी को

2. प्रस्तुत पद में किसे मोल लेने की बात कही गई है–

   (क) कृष्ण को (ख) जीवन को

   (ग) दर्शन को (घ) पूर्व जन्म को

3. मीराँ श्रीकृष्ण पर अपना तन और जीवन न्योछावर करती हैं, क्योंकि–

   (क) वे सखी को चिढ़ाना चाहती हैं।

(ख) वे कृष्ण को वचन दे चुकी हैं।

(ग) उन्होंने कृष्ण को मोल ले लिया है।

(घ) उनका मन समाज से त्रस्त है।

4. मीराँ श्रीकृष्ण से दर्शन देने के लिए कहती हैं, क्योंकि-

(क) अब जैसे कृष्ण चाहते हैं, वे वैसे ही रहती हैं।

(ख) अब वे कृष्ण को मोल ले चुकी हैं।

(ग) वे मंदिर में उनके दर्शन नहीं कर पातीं।

(घ) कृष्ण ने पिछले जन्म में उन्हें दर्शन देने का वचन दिया था।

5. प्रस्तुत पद की एक विशेषता नहीं है-

(क) दृढ़ता

(ख) मुहावरों का प्रयोग

(ग) प्रेम को छिपाना

(घ) माधुर्य भाव

2.10 भाव-सौंदर्य

आपने मीराँबाई के पद को पढ़ा, समझा और उसका आनंद लिया। इस पद में मीराँ ने श्रीकृष्ण के प्रति अपने अनन्य प्रेम और भक्ति का सुंदर निरूपण किया है। प्रियतम श्रीकृष्ण की बाँकी छवि उनके मन-मस्तिष्क में गहरे पैठ गई है – इतने गहरे कि वे अपने अस्तित्व के बोध को भी खो बैठी हैं। वे प्रेम की इस अनुभूति को इस प्रकार से सँजोए रखना चाहती हैं कि पूर्ण रूप से स्वयं को इस प्रेम के प्रति समर्पित कर देती हैं। चाहे लोक-अपवाद मिले या परिवार और राजसत्ता की ओर से यातनाएँ – वे अपने प्रेम की शक्ति से सबको परास्त कर देती हैं, किसी की चिंता नहीं करतीं। उनके इस पद में गहरा आत्मविश्वास और दृढ़ता है। व्यक्तिगत जीवन-अनुभवों से प्राप्त अनुभूति की तीव्रता उनके काव्य का निजी वैशिष्ट्य है, जो मध्यकालीन साहित्य में कम देखने को मिलता है। यद्यपि संत-काव्य में अनुभूति की गहनता मिलती है पर वह कहीं-कहीं है, जबकि मीराँ के समूचे काव्य में अनुभूति की तीव्रता और सघनता पाई जाती है।

भक्तिकाव्य में मीराँ एक अलग व्यक्तित्व की स्वामिनी हैं। उनके काव्य का अधययन करने वाले, उन्हें कभी संतकाव्य की परंपरा में रखते हैं, कभी महाप्रभु वल्लभाचार्य की पुष्टिमार्गी परंपरा में। मीराँ में कभी चैतन्य महाप्रभु की माधुर्य भाव की भक्ति की परंपरा दिखाई देती है, तो कभी सूफी काव्य-परंपरा से भाव-साम्य भी देखा जा सकता है, पर सत्य यह है कि मीराँ इन सभी परंपराओं से अलग अपनी छाप छोड़ती है। पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी में वैयक्तिक अनुभूतियों की ऐसी अभिव्यंजना वास्तव में अनूठी है। यह परंपरा आगे अधिक ठोस रूप में घनानंद तथा छायावाद के कवियों में ही मिलती है। इस रूप में मीराँ के काव्य को प्रवृत्ति स्थापक (Trend Setter) भी माना जा सकता है।

2.11 शिल्प-सौंदर्य

काव्य-रूप की दृष्टि से मीराँ का काव्य गीतिकाव्य के अंतर्गत आता है। अनुभूति की तीव्रता और सघनता प्रायः गीतिकाव्य में ही व्यक्त होती है। गीतिकाव्य के आवश्यक तत्त्व हैं – भावानुभूति, वैयक्तिकता, संगीतात्मकता, संक्षिप्तता तथा शैली की कोमलता।

पहले दो तत्त्व वे तत्त्व हैं जो गीत या गाने से गीतिकाव्य को अलग करते हैं। मीराँ के काव्य का अध्ययन करने पर पता चलता है कि मीराँ ने संभवतः संगीत और नृत्य की भी शिक्षा पायी थी। पदावली में संगृहीत उनके पद लगभग सत्तर भिन्न रागों में निबद्ध हैं। उन्हें 'पीलू राग' अत्यंत प्रिय है। यद्यपि कृष्ण भक्तिकाव्य में प्रायः राग निबद्ध रचनाएँ मिलती हैं, पर मीराँ के काव्य में राग-रागनियों का विशेष महत्त्व है। आत्मानुभूति की प्रमुखता के कारण संक्षिप्तता उनके यहाँ सायास नहीं लाई जाती है, न ही वे किसी तरह खींच-खाँच कर आवश्यक पंक्तियाँ जुटाती हैं। उनका पद चार पंक्तियों में भी सिमट जाता हैं, तो कभी-कभी भावानुकूल विस्तार भी ग्रहण कर लेता है। उनकी शैली तो कोमल है ही। इस प्रकार वे गीतिकाव्य की सभी आवश्यकताओं का सुंदर निर्वाह करती हैं।

मीराँ ने न तो रस, अलंकार, वक्रोक्ति, ध्वनि बिंब, प्रतीक, अप्रस्तुत योजना, अन्योक्ति आदि का चमत्कार प्रस्तुत किया है और न ही वे भाव तथा विचारगत शब्दावली के जाल में उलझती हैं। वे तो अत्यंत सहज ढंग से साधारण भाषा में अपने हृदय की बात रखती हैं। उनका शिल्पगत सौंदर्य उनकी भावानुभूति की तीव्रता से ही अपना आकार ग्रहण करता है। तथापि आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने मीराँ पदावली में पंद्रह प्रकार के छंदों तथा रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा उदाहरण, विभावना, स्वभावोक्ति, अर्थांतरन्यास, श्लेष, वीप्सा आदि अलंकारों को रेखांकित किया है।

मीराँ की भाषा मूलतः ब्रजभाषा है, जिसमें राजस्थानी तथा गुजराती के शब्दों की प्रचुरता भी है। खड़ी बोली के पूर्व रूप को भी मीराँ के काव्य में यत्र-तत्र देखा जा सकता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं –

खड़ी बोली

1. *पिव मेरा मैं पीव की*
2. *जोगी मत जा, मत जा, मत जा*
3. *ऐसे वर का क्या करूँ जो जनमे और मर जाय।*
4. *हँस कर निकट बुलावे*
5. *देश विदेश संदेश न पहुँचे।*
6. *सुरत की कछनी काछूँगी।*

राजस्थानी – *'मेरी उणकी प्रीति पुराणी उण बिन पल न रहाऊँ।'*

ब्रजभाषा – *'पंक्तियाँ मैं कैसे लिखूँ लिख्यो री न जाए।'*

पाठगत प्रश्न 2.6

1. मीराँ की काव्य रचना किस संप्रदाय से जुड़ी हुई थी-

   (क) ज्ञानमार्गी साधना

   (ख) सूफ़ी काव्यधारा

   (ग) वल्लभाचार्य का पुष्टि मार्ग

   (घ) उपर्युक्त में किसी से नहीं।

2. मीराँ की भाषा में अभाव है –

   (क) चित्रात्मकता का

   (ख) नाद सौंदर्य का

   (ग) क्लिष्टता का

   (घ) बिंब का।

2.12 आपने क्या सीखा

सगुण भक्ति काव्य

तुलसीदास

भाव-सौंदर्य

- भाई-भाई के प्रेम का आदर्श
- राम का छोटों का प्रति स्नेह
- भरत की चरित्रगत विशेषताएँ

शिल्प-सौंदर्य

- रूपक, उपमा और अनुप्रास
- नाद-सौंदर्य
- शब्दों का सार्थक प्रयोग
- अवधी भाषा, दोहा-चौपाई छंद

सूरदास

भाव-सौंदर्य

- बालकृष्ण का चित्रात्मक वर्णन
- वात्सल्य रस

शिल्प-सौंदर्य

- उत्प्रेक्षा एवं अनुप्रास अलंकार
- ब्रजभाषा

मीराँबाई

- **भाव-सौंदर्य**
- कृष्ण के प्रति अनन्य प्रेमभाव, माधुर्य भाव
- आत्मविश्वास एवं दृढ़ता
- अनुभूति की तीव्रता एवं सघनता

शिल्प-सौंदर्य

- गीतिकाव्य
- राग-रागनियाँ
- भाषा की सहजता
- राजस्थानी, गुजराती के शब्दों से युक्त ब्रजभाषा

2.13 सीखने के प्रतिफल

- सभी प्रकार की विविधताओं (धर्म, जाति, लिंग, क्षेत्र एवं भाषा-संबंधी) के प्रति सकारात्मक एवं विवेकपूर्ण समझ लिखकर, बोलकर एवं विचार-विमर्श के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं।
- हिंदी भाषा एवं साहित्य की परंपरा की समझ लिखकर, बोलकर एवं विचार-विमर्श के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं।

- परिवेश से हिंदी के साथ-साथ अन्य भाषाओं को भी सीखते हैं एवं भारतीय भाषाओं के आपसी संबंधों को भी समझते हैं।
- विभिन्न साहित्यिक विधाओं को पढ़ते हुए उनके सौंदर्य पक्ष एवं व्याकरणिक संरचनाओं पर चर्चा करते हैं।

2.14 योग्यता-विस्तार

तुलसीदास

तुलसीदास भक्तिकाल की सगुण काव्यधारा के राम-भक्त कवि हैं। उनका जन्म संवत् 1589 (1532 ई.) में उत्तर प्रदेश के सोरों नामक स्थान में हुआ। कहा जाता है कि उनका प्रारंभिक जीवन बड़ी कठिनाइयों में बीता। बाबा नरहरिदास के वे शिष्य थे और उन्हीं से रामकथा में दीक्षित हुए।

तुलसीदास के लिखे हुए छोटे-बड़े बारह ग्रंथों का उल्लेख आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने किया है। इनमें प्रमुख हैं - दोहावली, कवितावली, गीतावली, रामचरितमानस और विनयपत्रिका। सभी रचनाओं में भावों की विविधता तुलसी की सबसे बड़ी विशेषता है। उन्होंने रामकथा के विविध प्रसंगों के माध्यम से पारिवारिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन के आदर्शों को जनता के सामने रखा। तुलसी की भक्ति-भावना सीधी और सरल है। राम उनके आदर्श हैं और मर्यादा पुरुष हैं। 'रामचरितमानस' में तुलसी ने राम और शिव दोनों को एक-दूसरे का भक्त दिखाकर वैष्णवों और शैवों में समन्वय करने का प्रयास किया। रामकथा को लेकर संस्कृत और हिंदी में अनेक रचनाएँ हैं, परंतु भरत का जो रूप तुलसी ने दिखाया है, वह 'रघुवंश' या 'वाल्मीकि रामायण' में भी नहीं है।

भावों की विविधता के साथ-साथ तुलसी की शैली में भी विविधता है। सूरदास की पद्ध -शैली, चारणों की छप्पय, कवित्त, सवैया पद्धति, दोहा-नीतिकाव्यों की भक्ति-पद्धति और प्रेमाख्यानों की दोहा-चौपाई पद्धति आदि का सफल प्रयोग तुलसी ने किया है। तुलसी ने अपने समय की दोनों साहित्यिक भाषाओं- अवधी और ब्रज का प्रयोग किया। मानस के अतिरिक्त अधिकांश रचनाओं की भाषा ब्रज है, जिस पर तुलसी का अद्भुत अधिकार है।

सूरदास

हिंदी साहित्य में सगुण भक्ति के अंतर्गत कृष्ण भक्तिधारा के श्रेष्ठ कवि सूरदास हैं। उनका जन्मकाल 1478 ई. में दिल्ली के पास माना जाता है। उनके जन्मांध होने या बाद में अंधत्व प्राप्त करने के विषय में अनेक मत हैं। सूरदास वल्लभाचार्यजी के शिष्य थे और पुष्टिमार्गीय परंपरा के कवि थे। उनका निधन 1583 ई. में माना जाता है।

उनकी अनेक रचनाओं का उल्लेख मिलता है परंतु 'सूरसागर' और 'साहित्यलहरी' उनकी श्रेष्ठ कृतियाँ हैं। सूर-काव्य का मुख्य विषय कृष्णभक्ति है। उन्होंने श्रीकृष्ण की

वाल्यावस्था और युवावस्था की अनेक लीलाओं का वर्णन किया है। उनकी रचनाओं की विशेषता को प्रकट करते हुए लिखा गया है कि, 'सूर वात्सल्य और श्रृंगार का कोना-कोना झाँक आए हैं।'

विषयवस्तु की दृष्टि से सूर के संपूर्ण काव्य को छह भागों में विभक्त किया जा सकता हैं- (क) विनय के पद (ख) बालक कृष्ण से संबंधित मनोवैज्ञानिक पद (ग) कृष्ण की रूप माधुरी संबंधी पद (घ) श्रीकृष्ण और राधा के रति-भाग संबंधी पद (द) मुरली संबंधी पद और (च) वियोग- श्रृंगार संबंधी भ्रमरगीत वाले पद।

सूरदास को ब्रजभाषा का महान कवि माना जाता है। उन्होंने विभिन्न शैलियों में रचनाएँ लिखीं।

मीराँबाई

मीराँ के काव्य का अध्ययन करते समय हमने देखा कि मीराँ ने अपने पदों में निजी जीवनानुभवों की अभिव्यक्ति की है किंतु यह विचित्र संयोग है कि न तो मीराँ के काव्य से उनके जन्म, जीवन-काल और माता, पिता, पति आदि के विषय में कोई प्रामाणिक जानकारी मिलती है और न ही किसी अन्य स्रोत से। उपलब्ध जानकारियों के अनुसार पंद्रहवीं या सोलहवीं शती में जन्मी मीराँ का मायका मेड़ता में था तथा ससुराल मेवाड़ के प्रसिद्ध राजवंश में। ऐसा कहा जाता है कि बचपन में ही माता ने श्री गिरधर की मूर्ति को उनका पति बता दिया था, तभी से मीराँ श्रीकृष्ण को अपना पति मानने लगीं और उनके विवाह के बाद भी यह क्रम चलता रहा। मीराँ निर्भीक, साहसी और दृढ़ विचारों वाली थीं। स्वयं द्वारा चुने गए मार्ग और विचारों की सत्यता के प्रति आश्वस्त मीराँ समस्त विघ्न और बाधाओं का डटकर सामना करती थीं। उन्हें जीवन में कभी भी हताशा या निराशा नहीं हुई।

यद्यपि मीराँ द्वारा रचित कई काव्य-कृतियों का उल्लेख किया जाता है, पर उनके जीवन-वृत्त की भाँति मीराँबाई की पदावली में संगृहीत पदों के अतिरिक्त अन्य रचनाएँ उपलब्ध नहीं हैं। यूँ मीराँ की पदावली का संपादन कई लोगों ने किया है, पर आचार्य परशुराम चतुर्वेदी द्वारा संपादित 'मीराँबाई की पदावली' सर्वाधिक प्रामाणिक संग्रह है। इसकी भूमिका में आचार्य जी ने मीराँ के जीवन तथा उनके काव्य पर भी विस्तार से विचार प्रस्तुत किए हैं। इसके अतिरिक्त नरोत्तम स्वामी की पुस्तक 'मीराँ मंदाकिनी' भी उल्लेखनीय है। मीराँबाई के जीवन और उनके काव्य पर विचार तथा विश्लेषण की दृष्टि से बंगीय हिंदी परिषद् द्वारा प्रकाशित 'मीराँ स्मृति ग्रंथ' का भी विशेष महत्त्व है। मीराँ के काव्य की उत्कृष्टता इसी बात से स्पष्ट हो जाती है कि उनके पद हिंदी भाषी प्रदेशों के अतिरिक्त गुजरात, बंगाल तथा उड़ीसा आदि प्रांतों में भी अत्यंत श्रद्धा के साथ गाए जाते हैं।

2.15 पाठांत प्रश्न

1. 'बिधि न सकेउ सहि मोर दुलारा'- भरत द्वारा यह कहने का क्या कारण है?

2. "राम और भरत का प्रेम अद्वितीय है-" पद के आधार पर उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए।

3. माँ के प्रति भरत का आक्रोश क्यों था स्पष्ट कीजिए?

4. पठित पद के आधार पर तुलसी के काव्य-सौंदर्य की दो विशेषताएँ सोदाहरण लिखिए।

5. निम्नलिखित पंक्तियों में निहित प्रमुख अलंकारों का उल्लेख कीजिए :

   (क) नीरज नयन नेह जल बाढ़े

   (ख) मातु मंदि मैं साधु सुचाली। उर अस आनत कोटि कुचाली।।
   फरइ कि कोदव बालि सुसाली। मुकुता प्रसव कि संबुक काली।।

6. निम्नलिखित काव्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए :

   (क) पुलकि सरीर सभाँ भए ठाढ़े। नीरज नयन नेह जल बाढ़े।
   कहब मोर मुनिनाथ निबाहा। एहि तें अधिक कहौं मैं काहा।।

7. कृष्ण के बाल रूप का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

8. सूरदास के पठित पद के काव्य-सौंदर्य पर टिप्पणी लिखिए।

9. मीराँ के पद में कृष्ण-प्रेम की अभिव्यक्ति किस रूप में हुई है प्रस्तुत कीजिए?

10. मीराँ के पद में उनके व्यक्तित्व की किन्हीं दो विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

11. मीराँ की भाषा की दो विशेषताएँ उदाहरण सहित लिखिए।

12. निम्नलिखित पद की संप्रसंग व्याख्या कीजिए-

    माई री म्हां लियां गोविन्दाँ मोल ।।टेक।।
    थे कह्यां छाणे म्हां कां चोड्डे, लिया बजन्ता ढोल।
    थे कह्यां मुंहोघो म्हां कह्यां सस्तो, लिया री तराजां तोल।
    तण वारां म्हां जीवण वांरां, वारां अमोलक मोल।
    मीराँ कूं प्रभु दरसण दीज्याँ, पूरब जणम को कोल।।

2.16 उत्तरमाला

बोध-प्रश्न 2.1

1. (ग) 2. (क)

पाठगत प्रश्न के उत्तर

2.1 1. (ख) 2. (घ) 3. (क)

2.2 1. (क) 2. (ग) 3. (क)

2.3 1. (ग) 2. (ग)

बोध-प्रश्न 2.2

1. (क) 2. (ग)

पाठगत प्रश्न के उत्तर

2.4 1. (ख) 2. (क) 3. (ग)

पाठगत प्रश्न के उत्तर

2.5 1. (घ) 2. (क) 3. (ग) 4. (घ) 5. (ग)

2.6 1. (ग) 2. (ग)

3

रीतिकाव्य
(बिहारी और पद्माकर)

हिंदी साहित्य में भक्तिकाल के बाद रीतिकाल आता है। रीतिकाल में भक्ति और नीति की धारा तो बनी रही, प्रकृति-चित्रण भी हुआ। साथ ही उसकी कुछ और भी विशेषताएँ थीं; जैसे–श्रृंगार-वर्णन की अतिशयता और भाव तथा भाषा का विलक्षण प्रस्तुतीकरण। इस काल की काव्य भाषा ब्रज है और दोहा, सवैया और कवित्त इस काल के प्रमुख छंद हैं। रीतिकाल की अनेक धाराओं से जुड़े कई प्रमुख कवि हैं। बिहारी और पद्माकर भी इन प्रमुख कवियों में शामिल हैं। इन्हें क्रमशः 'रीतिसिद्ध' और 'रीतिबद्ध' कवि भी कहा गया है। इन कवियों में रीतिकाल की अनेक प्रमुख प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है। बिहारी ने अपने अद्भुत भाषा-सामर्थ्य के कारण अपने दोहों में गहरी अर्थ-संभावनाएँ भर दी हैं। इसी गुण के कारण बिहारी के दोहों को 'गागर में सागर', कहा गया है। वसंत और होली के समय को श्रृंगार से जोड़ देने में पद्माकर की ख्याति है।

आइए, इस पाठ में हम बिहारी और पद्माकर के कुछ छंदों के माध्यम से रीतिकाल की उपर्युक्त प्रवृत्तियों को देखें।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप

- भक्ति में निहित अंतरंगता के भाव का उल्लेख कर सकेंगे;
- धन के नशे को बुराई मानकर उस पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- उदाहरण देते हुए प्रकृति-चित्रण के सौंदर्य को स्पष्ट कर सकेंगे;
- कविता में आए फाग के दृश्य के सौंदर्य का उल्लेख कर सकेंगे;
- बिहारी और पद्माकर के काव्य के भाव-सौंदर्य और शिल्प-सौंदर्य पर टिप्पणी कर सकेंगे।

टिप्पणी

(क) बिहारी

3.1 मूल पाठ

1. कब को टेरत दीन रट, होत न स्याम सहाय।
तुमहूँ लागी जगत-गुरु, जगन्नाथ-जगवाय।।

चित्र 3.1 : बिहारी

2. कनक कनक तैं सौगुनी, मादकता अधिकाय।
वा खाएँ बौरात है, या पाएँ बौराय।।

3. बतरस लालच लाल की, मुरली धरी लुकाय।
सौंह करैं, भौंहनु हँसै, दैन कहै नटि जाय।।

4. कहलाने एकत बसत, अहि, मयूर, मृग, बाघ।
जगत तपोवन सौ कियौ, दीरघ-दाघ, निदाघ।।

शब्दार्थ

टेरत - आवाज़ देना, पुकारना
रट - बार-बार दुहराना, विनती करना
सहाय - सहायता करने वाले, उबारने वाले
तुमहूँ - तुमको भी
जगन्नाथ - जगत के नाथ भगवान
जगवाय - जग की बाय, दुनिया की हवा
कनक - 1. सोना (धन) 2. धतूरा (एक मादक फल)
बौरात है - बौराना (मदहोश होना)
बतरस - बात सुनने (करने) का आनंद
लाल - ललन, नायक (श्रीकृष्ण)
मुरली - बाँसुरी
धरी - रख दी
लुकाय - छिपाकर
सौंह करैं - सौगंध लेती है
भौंहनु - भौंहों में
दैन कहै - देने के लिए कहना
नटि जाय - मुकर जाती है
कहलाने - गर्मी से बैचेन होकर
एकत - एक साथ
बसत - बसते हैं, रहते हैं
अहि - साँप
मयूर - मोर
मृग - हिरन
बाघ - शेर
तपोवन - तपस्या करने योग्य स्थान
सौ - सो, जैसा
कियौ - कर दिया
दीरघ - दीर्घ, लंबा, गहरा
दाघ - ताप
निदाघ - गरमी, ग्रीष्म ऋतु

बोध प्रश्न 3.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. बिहारी के दोहे में श्रीकृष्ण के लिए संबोधन नहीं है-

   (क) दीन (ख) स्याम

   (ग) जगत-गुरु (घ) जगन्नाथ

2. 'कनक-कनक तैं सौगुनी ....' दोहे का संबंध है-

   (क) प्रकृति-चित्रण से (ख) भक्ति से

   (ग) नीति से (घ) शृंगार से

3. कृष्ण से बातें करने का आनंद पाने के लिए गोपी क्या करती है-

   (क) मुरली को छिपा देती है (ख) कसम खाती है

   (ग) भौहों में हँसती है (घ) मुरली दे देती है

4. 'कहलाने एकत बसत...........' दोहे में किस ऋतु का प्रभाव चित्रित है-

   (क) वसंत (ख) ग्रीष्म

   (ग) वर्षा (घ) हेमंत

3.2 आइए समझें

आपने भक्तिकालीन कविता पढ़ी है। भक्त भगवान को तरह-तरह से याद करता है। कभी वह उसकी लीलाओं का गान करता है, तो कभी आर्त स्वर में पुकारता है; कभी वह उसका सहचर (मित्र) हो जाता है, तो कभी उसे पति या प्रेमी भाव से याद करता है। भक्ति का एक सोपान वह भी है, जब भक्त भगवान से लगभग बराबरी के स्तर पर बात करने लगता है, उसे उलाहना देने लगता है। यह स्तर अंतरंगता के भाव का है।

ऐसी ही अंतरंग भाव की भक्ति को कवि ने पहले दोहे में दर्शाया है। एक बार इस दोहे को फिर से पढ़िए।

दोहा-(1)

कब को टेरत दीन रट, होत न स्याम सहाय।
तुमहूँ लागी जगत-गुरु, जगन्नाथ-जगवाय।।

प्रसंग : प्रस्तुत दोहा रीतिकाल के प्रतिनिधि कवि बिहारी के सुप्रसिद्ध काव्य-ग्रंथ 'बिहारी सतसई' से लिया गया है।

टिप्पणी

कब को टेरत दीन रट,
होत न स्याम सहाय।
तुमहूँ लागी जगत-गुरु,
जगन्नाथ-जगवाय।।

व्याख्या : कवि कहता है कि मैं कब से तुम्हें दीन स्वर में पुकार रहा हूँ अर्थात् कितने लंबे समय से अपने दुखों का निवारण करने के लिए तुम्हारा स्मरण कर रहा हूँ, पर हे श्रीकृष्ण! तुम मेरी सहायता नहीं करते, मेरे दुखों को दूर नहीं करते। हे सारी दुनिया के गुरु! हे जगत के स्वामी! लगता है कि तुम्हें भी इस संसार की हवा लग गई है। जैसे इस दुनिया में सब लोग अपने आप में मस्त रहते हैं, कोई किसी के दुख में हाथ नहीं बँटाता और अपनी प्रशंसा और प्रभुता का आनंद लेता रहता है, ऐसा ही तुम भी कर रहे हो।

टिप्पणी

1. इस दोहे में 'तुमहूँ' और 'जगत-गुरु' संबोधनों तथा 'सांसारिक हवा लगने' के उलाहने से भक्ति के अंतरंग भाव की पुष्टि होती है।
2. आपने, संभवतः 'बाय आना' या 'हवा लगना' जैसे प्रयोग सुने होंगे। किसी के व्यवहार में अचानक असामान्य परिवर्तन आने पर यह कहा जाता है। 'नए ज़माने की हवा लगना' भी इसी अर्थ में प्रयोग होता है यानी जब किसी व्यक्ति के आचरण में किसी प्रकार का आकस्मिक परिवर्तन होता है, तब इस मुहावरे का प्रयोग होता है। प्रस्तुत दोहे में इस मुहावरे का सुंदर काव्यात्मक प्रयोग हुआ है।
3. आप जानते हैं कि जहाँ एक वर्ण की निरंतर आवृत्ति होती है, वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है। इस दोहे में 'स्याम सहाय' और 'जगत-गुरु', 'जगन्नाथ-जगवाय' में क्रमशः 'स' और 'ज' वर्णों की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार है।

क्रियाकलाप 3.1

आप जानते हैं कि नशा बुरा होता है। शराब, अफ़ीम, चरस, गाँजा आदि मादक द्रव्यों के सेवन से तो आदमी को नशा होता ही है, पर धन, शक्ति और सत्ता भी व्यक्ति को मदमस्त कर देते हैं। आपने अपने आस-पास ऐसे लोग अवश्य देखे होंगे। धन के नशे में चूर किसी व्यक्ति के आचरण पर कुछ पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

दोहा-(2)

कनक कनक तैं सौगुनी, मादकता अधिकाय।
वा खाएँ बौरात है, या पाएँ बौराय।।

आइए, अब बिहारी के अगले दोहे को समझते हैं-

प्रसंग : प्रस्तुत दोहे में कवि ने अचानक धन प्राप्त होने वाले व्यक्ति के नशे का वर्णन किया है। कवि का कहना है कि यह नशा मादक पदार्थों के सेवन से होने वाले नशे से सौ गुना अधिक बुरा होता है।

टिप्पणी

कनक कनक तैं सौगुनी,
मादकता अधिकाय।
वा खाएँ बौरात है,
या पाएँ बौराय।।

व्याख्या : इस दोहे में 'कनक' शब्द पर ध्यान दें, जिसका प्रयोग दो बार किया गया है। आप जानते हैं कि 'कनक' का अर्थ होता है- सोना। पहले 'सोना' शब्द का प्रयोग मात्र एक धातु के लिए ही नहीं किया जाता था, बल्कि वह धन-दौलत के पर्याय के रूप में भी होता था। आप जानते ही होंगे कि पुराने समय में सोने की मुद्रा का चलन था। आगे चलकर अन्य प्रकार (कागज़ आदि) की मुद्रा के चलन के बाद भी सोने का महत्व धन-संपत्ति के रूप में बना रहा। सोने के अतिरिक्त 'कनक' शब्द का एक और अर्थ है धतूरा। धतूरा एक प्रकार का फल होता है, जिसे खाने से नशा हो जाता है।

दोहे में आए एक और शब्द 'बौरात' या 'बौराय' पर ध्यान दीजिए। 'बौराना' का अर्थ होता है-मस्तिष्क की वह अवस्था जिसमें आदमी बहकी-बहकी बातें करता है यानी उसका व्यवहार सामान्य नहीं रहता। नशे की तरंग में उसकी सहजता नष्ट हो जाती है और सोचने-विचारने की शक्ति समाप्त हो जाती है। इसी को मदहोश या मदमस्त होना भी कहते हैं। सामान्य व्यवहार में 'बौराना' शब्द का प्रयोग 'पगलाना' या 'पागल होना' के अर्थ में भी किया जाता है।

प्रस्तुत दोहे में कवि का मानना है कि सोने में धतूरे से सौगुना अधिक नशा होता है, क्योंकि धतूरे के तो खाने से आदमी मदहोश होता है जबकि सोना मिल जाने पर उसकी स्थिति इससे भी बुरी हो जाती है। धन की मादकता इसलिए अधिक है कि उसका प्राप्त होना ही सिर चढ़कर बोलने लगता है, जबकि मादक द्रव्य तो सेवन करने पर ही (और वह भी थोड़े समय के लिए) आदमी का सिर घुमाते हैं। अत: धन का नशा अन्य किसी भी प्रकार के नशे से अधिक मादक और ख़तरनाक होता है। मादक पदार्थों का नशा उन्हें सेवन करने के कुछ समय बाद उतर जाता है, किंतु सोने (धन) का नशा बना ही रहता है और जीवन की अन्य गतिविधियों पर उसका चढ़ा हुआ रंग तरह-तरह से दिखाई देता है।

टिप्पणी

1. प्रस्तुत दोहे में मनुष्य के व्यवहार पर धन के कुप्रभाव को बहुत अच्छे ढंग से व्यक्त किया गया है। साथ ही, यह नीतिगत संकेत भी है कि धन-दौलत, सुख-संपत्ति पाने पर मनुष्य को अपने व्यवहार को नियंत्रित रखने की अधिक आवश्यकता होती है।

2. कवि ने 'कनक' शब्द का प्रयोग दोनों बार भिन्न अर्थों ('सोना' और 'धतूरा') में किया है। आप समझ ही गए होंगे कि यहाँ 'यमक' अलंकार का सौंदर्य है।

पाठगत प्रश्न 3.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. 'कब को टेरत दीन रट' दोहे में उलाहना देने के कारण कौन-सा भाव व्यक्त हुआ है-

   (क) दैन्य　　　　(ख) अंतरंगता

   (ग) दास्य　　　　(घ) साहचर्य

टिप्पणी

2. 'जगत-गुरु, जगन्नाथ-जगवाय' में कौन-सा अलंकार है-

(क) उपमा (ख) रूपक

(ग) अनुप्रास (घ) यमक

3. 'कनक-कनक तैं.....' में कौन-सा अलंकार है?

(क) यमक (ख) श्लेष

(ग) उपमा (घ) उत्प्रेक्षा

4. 'कनक-कनक तैं सौगुनी.....' दोहे में किसका प्रभाव सौ गुना अधिक कहा गया है-

(क) धन का (ख) धतूरे का

(ग) नशे का (घ) पागलपन का

दोहा-(3)

बतरस लालच लाल की, मुरली धरी लुकाय।
सौंह करैं, भौंहनु हँसै, दैन कहै नटि जाय।।

प्रसंग : यहाँ कृष्ण और राधा के प्रेम का सुंदर निरूपण है।

व्याख्या : गोपियों को कृष्ण से बात करना अच्छा लगता है, कोई एक उनकी बाँसुरी को छिपा देती है, कृष्ण उसे कसम देते हैं तो वह भौंहों में मुस्कुराती है, वापस देने की बात कहकर फिर मुकर जाती है। स्पष्ट है कि कोई गोपी अपने आप को कृष्ण से बात करने के लोभ को रोक नहीं पाती। कृष्ण उससे बातें करें, इसके लिए उनकी बांसुरी कहीं छिपा देती है। कृष्ण द्वारा बाँसुरी माँगने पर भौंहों में हँसती है। वह बाँसुरी वापस नहीं करती, क्योंकि जितनी देर बाँसुरी उसके पास रहेगी, उतनी ही देर उससे बातें करने के लिए विवश होंगे।

बतरस लालच लाल की,
मुरली धरी लुकाय।
सौंह करैं, भौंहनु हँसै,
दैन कहै, नटि जाय।।

आप बिहारी के दो दोहों की व्याख्या पढ़ चुके हैं। यह दोहा सरल भाषा में सरल भाव वाला है। संकेत आपको मिल ही गए, तो फिर क्या देर... उठाइए कागज़-कलम और लिख डालिए इसकी सुंदर-सी भावपूर्ण व्याख्या।

दोहा-(4)

कहलाने एकत बसत, अहि, मयूर, मृग, बाघ।
जगत तपोवन सौ कियौ, दीरघ-दाघ, निदाघ।।

अब ज़रा बिहारी के प्रकृति-चित्रण वाले दोहे को शब्दार्थ सहित पढ़िए। ज़रा गौर कीजिए 'कहलाने' शब्द पर। 'कहलाने' शब्द का अर्थ 'कहलाने भर के लिए' नहीं है। यहाँ 'कहलाने' का अर्थ है-व्याकुल होकर। 'कहलाना' क्रिया-शब्द का ब्रजभाषा में इसी अर्थ में प्रयोग होता है।

तपोवन की विशेषता क्या होती है, जानते हैं न! पढ़ा ही होगा ऋषियों-मुनियों के संदर्भ में इस शब्द को। जी हाँ, वही होता था तपोवन, जहाँ ये लोग तपस्या करते थे और जहाँ किसी भी किस्म की हिंसा वर्जित होती थी। कभी-कभी दुख, पीड़ा या संकट एक-दूसरे के विरोधियों को भी एक कर देते हैं। अर्थात् जगत में तपोवन की-सी स्थिति उत्पन्न कर देते हैं। इस दोहे में ऐसी ही स्थिति का बयान है।

चित्र 3.2 : मृग, बाघ आदि

कहलाने एकत बसत
    अहि, मयूर, मृग, बाघ।
जगत तपोवन सौ कियौ,
    दीरघ-दाघ, निदाघ।।

आपने पढ़ ही लिया होगा कि 'दाघ' का अर्थ होता है 'ताप' और निदाघ का 'गरमी'। अब 'दीरघ' यानी 'दीर्घ' पर विचार कीजिए। 'दीर्घ' का अर्थ है - लंबा, विस्तृत, गहरा, भारी . .....। अब आप इन शब्दों में से उपयुक्त शब्द का चुनाव कीजिए या मिलते-जुलते अर्थ वाले किसी और ऐसे शब्द को चुनिए जो ताप के विशेषण के तौर पर प्रयोग किया जा सके।

अगर आप मूलपाठ से शब्दार्थ जान चुके हैं और इन संकेतों को भी पढ़ चुके हैं, तो इस दोहे की व्याख्या करने में कोई मुश्किल नहीं आएगी। उठाइए कागज़-कलम और शुरू हो जाइए। पहले प्रसंग लिखिए और फिर उसकी व्याख्या लिख दीजिए।

पाठगत प्रश्न 3.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. गोपी कृष्ण से बाँसुरी देने की बात कहकर मुकर जाती है, क्योंकि-
   (क) वह चाहती है कि कृष्ण उससे बातें करें
   (ख) वह नहीं चाहती कि कृष्ण उससे बातें करें
   (ग) उसे बाँसुरी मिलती नहीं
   (घ) उसे बाँसुरी की ज़रूरत है
2. कवि ने ग्रीष्म में जगत को तपोवन-सा कहा है, क्योंकि इसमें-
   (क) एक-दूसरे के शत्रु भी साथ-साथ रहते हैं
   (ख) चारों ओर सन्नाटा हो जाता है
   (ग) सभी लोग व्याकुल होने लगते हैं
   (घ) तप के लिए जगत उपयुक्त हो जाता है

3. 'दीरघ-दाघ निदाघ' में अलंकार है-

(क) श्लेष (ख) उपमा

(ग) यमक (घ) अनुप्रास

3.3 भाव और शिल्प-सौंदर्य

आपने बिहारी के कुछ दोहों को पढ़ा और समझा। आपने अनुभव किया होगा कि कविवर बिहारी ने नितांत अनौपचारिक ढंग से लगभग मित्र-भाव से कृष्ण का स्मरण किया है। रीतिसिद्‌ध बिहारी रीतिकाल के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। रीतिकाव्य की प्रमुख प्रवृत्ति श्रृंगार-वर्णन है।श्रृंगार के संयोग पक्ष की प्रस्तुति मन को छू लेने वाली है। इसके लिए बिहारी ने नायक-नायिका की अनेक दैनिक गतिविधियों को आधार बनाया है। भक्ति और श्रृंगार के अतिरिक्त बिहारी ने नीति-काव्य भी लिखा है, पर प्रकृति-चित्रण के जितने सुंदर दोहे उन्होंने लिखे हैं, अन्यत्र दुर्लभ हैं। यद्यपि रीतिकाल में प्रकृति के बहुत सुंदर चित्र मिलते हैं, पर वे प्राय: कवित्त, सवैया जैसे छंदों में हैं। वहाँ वर्णन के लिए दोहे की तुलना में अधिक शब्द और पंक्तियाँ होती हैं। बिहारी ने प्रकृति के कोमल, रुचिकर रूपों के साथ-साथ प्रचंड रूप का भी वर्णन किया है। कवि बिहारी जीवन के विविध अनुभवों से संपन्न थे और आयुर्वेद, ज्योतिष, राजनीति आदि अनेक शास्त्रों के ज्ञाता थे। इसीलिए उन्हें बहुज्ञ कवि कहा जाता है। उनके अनेक दोहों में इस ज्ञान की छाप मिलती है।

बिहारी ने काव्य-रचना दोहा छंद में की है। उनकी भाषा ब्रज है। प्राय: सारा रीतिकालीन काव्य ब्रजभाषा में ही रचा गया है। अपने माधुर्य के कारण ब्रजभाषा श्रृंगार और प्रकृति-चित्रण के लिए उपयुक्त भी है। बिहारी के भाषा-प्रयोग में बहुत व्यापकता है। संस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दों से लेकर आम बोलचाल के शब्दों तक का प्रयोग उन्होंने किया है। लोक में प्रचलित मुहावरों का अत्यंत सटीक प्रयोग उनकी काव्य-भाषा की विशेषता है। सबसे अधिक सराहनीय है, उनकी भाषा की लाक्षणिकता यानी सामान्य से लगने वाले वर्णन में निहित अर्थ-चारुत्व और अनेक अर्थों की संभावना।

यह तो आप पढ़ ही चुके हैं कि कवि बिहारी ने अनुप्रास, यमक और श्लेष अलंकारों का सुंदर प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने उत्प्रेक्षा, रूपक, वक्रोक्ति, पुनरुक्ति, संदेह, भ्रांतिमान, वीप्सा, दृष्टांत आदि अलंकारों का प्रभावी उपयोग किया है। अत: भाषा की आलंकारिकता उनके काव्य की प्रमुख विशेषताओं में शामिल है।

(ख) पद्‌माकर

3.4 मूल पाठ

आपने बिहारी के दोहों को पढ़ और समझ लिया है। आइए, पद्‌माकर के एक कवित्त को पढ़ें और उसके बाद समझें-

चित्र 3.3 : पद्‌माकर

एकै संग धाए नँदलाल औ गुलाल दोऊ,
दृगनि गए जु भरि आनंद मढ़ै नहीं।

धोय-धोय हारी, 'पद्माकर' तिहारी सौंह,
        अब तौ उपाय एक चित्त मैं चढ़ै नहीं।
कैसी करौं, कहाँ जाऊँ, कासे कहूँ, कौन सुनै,
        कोऊ तो निकासो, जासै दरद बढ़ै नहीं।
एरी मेरी बीर! जैसे-तैसे इन आँखिन तैं।
        कढ़िगो अबीर, पै अहीर तो कढ़ै नहीं।

बोध प्रश्न 3.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. पद्माकर की गोपी किसे धो-धोकर हार गई-
   (क) दर्द को   (ख) चित्त को
   (ग) कृष्ण की छवि को   (घ) कृष्ण को
2. 'वीर!' संबोधन किसके लिए प्रयुक्त हुआ है-
   (क) कृष्ण   (ख) सखी
   (ग) चित्त   (घ) पद्माकर

3.5 आइए समझें

प्रसंग : प्रस्तुत कवित्त में पद्माकर ने फाग (होली) का बड़ा हृदयस्पर्शी चित्र अंकित किया है। एक गोपिका कृष्ण के साथ गुलाल से फाग खेलने का बड़ा सजीव वर्णन अपनी प्रिय सखी से करती है।

व्याख्या : उत्साह-उमंग का त्योहार वसंत से जुड़ा है जिसे आप भी खूब जानते हैं। उसे कहते हैं होली। इसी का दूसरा नाम है-फाग। वैसे फाग उन लोकगीतों को भी कहते हैं, जो होली में गाए जाते हैं। आइए देखें पद्माकर फाग का चित्रण किस प्रकार कर रहे हैं। पहले संपूर्ण कवित्त को एक-दो बार पढ़कर स्वयं समझने का प्रयास कीजिए।

चित्र 3.4 : होली का दृश्य गोपियाँ (आँखों में अबीर चला जाता है।)

टिप्पणी

शब्दार्थ

धाए - दौड़े
दोऊ - दोनों
दृगनि - आँखों में
जु - जो
मढ़ै नहीं - अपनी जगह से हटता नहीं,
तिहारी - तुम्हारी,
सौंह - कसम
कासे - किससे
निकासो - निकालो
कोऊ - कोई
जासै - जिससे
एरी - अरी
बीर - बहन जैसी सखी
कढ़िगो - निकल गया
पै - परंतु
कढ़ै नहीं - निकलता नहीं

एकै संग धाए नँदलाल औ गुलाल दोऊ, दृगनि गए जु भरि आनंद मढ़ै नहीं।

धोय-धोय हारी, 'पद्माकर' तिहारी सौंह, अब तौ उपाय एक चित्त मैं चढ़ै नहीं।

कैसी करौं, कहाँ जाऊँ, कासे कहूँ, कौन सुनै, कोऊ तो निकासो, जासै दरद बढ़ै नहीं।

एरी मेरी बीर! जैसे-तैसे इन आँखिन तैं। कढ़िगो अबीर, पै अहीर तो कढ़ै नहीं।

कवि की कल्पना को कुछ गहराई से समझें। पूरा कवित्त एक गोपिका का कथन है। उसकी परेशानी क्या है? इसे समझने के लिए होली के एक रिवाज़ को याद कीजिए– अबीर-गुलाल हवा में उड़ाना-उछालना। यह उड़ता गुलाल गोपिका की आँख में ही चला गया है। उसके साथ नंदलाल भी आँख में बस गए हैं। सोचिए समस्या क्या है? केवल गुलाल आँखों में पड़ जाए तो उसे निकालने का क्या उपाय हो सकता था? गोपी आँखें धो-धोकर हार गई है, उसे सफलता नहीं मिल पा रही-ऐसा क्यों? उसे क्या छटपटाहट है? कासे कहूँ? कौन सुने? में क्या व्यथा छिपी है? क्या गोपी की बात विश्वसनीय लगती है?

नंदलाल के आँखों में बस जाने का दर्द दूर करने के लिए वह क्या नहीं समझ पा रही है? अबीर तो जैसे-तैसे निकल गया, पर अहीर नहीं। पर अहीर कौन है? कल्पना कीजिए। क्या गोपी सचमुच श्रीकृष्ण को आँखों से दूर करना चाहती है?

पूरी कविता में कवि की व्यंजना पर ध्यान दीजिए। यहाँ कृष्ण के प्रति उमड़े प्रेम को आँखों में अबीर पड़ने की स्थिति से वर्णित किया है, पर जितनी सरलता से अबीर धुल जाता है उतनी सरलता से कृष्ण-प्रेम नहीं धुल सकता। न गोपी ऐसा चाहती ही है, वह तो अपनी सहेली की सौगंध खाकर उसे आश्वासन दिलाना चाहती है कि वह कृष्ण को निकाल नहीं पा रही है और न उसे इसका कोई उपाय सूझ रहा है।

आप स्वयं इसकी विस्तार से व्याख्या अपने अनुभवों के आधार पर अलग कागज़ पर लिखिए।

कवित्त से अनुप्रास, यमक अलंकार के उदाहरण छाँटिए। उन पंक्तियों को चुनिए जिसमें गोपिका की अधीरता, अकुलाहट और विवशता चित्रित हुई है। इस बात पर भी ध्यान दीजिए कि इसमें किस प्रकार की भाषा का प्रयोग किया गया है।

पाठगत प्रश्न 3.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. गोपिका की ओर एक-साथ कौन-कौन दौड़े-

   (क) ग्वाल-बाल और गुलाल (ख) नंदलाल और ग्वाल-बाल

   (ग) गुलाल और नंदलाल (घ) अहीर युवक और अबीर

2. कौन-से दो शब्द पर्याय के रूप में प्रयुक्त हुए हैं-

   (क) 'नंदलाल' और 'अहीर' (ग) 'नंदलाल' और 'बीर'

   (ख) 'अहीर' और 'अबीर' (घ) 'अहीर' और 'बीर'

3. 'तिहारी सौंह' कहकर गोपिका प्रकट करना चाहती है-

   (क) व्यंग्य (ख) क्रोध

   (ग) सरलता (घ) विश्वसनीयता

3.6 भाव और शिल्प-सौंदर्य

आपने पद्माकर के एक छंद का अध्ययन किया। इस छंद में फाग के अवसर पर प्रेम के प्रभाव की मार्मिकता का सुंदर चित्रण है।

कवि पद्माकर रीतिबद्ध काव्यधारा के प्रतिभा संपन्न कवि थे। उनमें शृंगार रस की अभिव्यक्ति की अद्भुत प्रतिभा रही है। इसी कारण कवि पद्माकर रीतिकाल के श्रेष्ठ कवि कहे जाते हैं।

पद्माकर के काव्य में लाक्षणिकता और मधुरता भी अभिव्यक्त हुई है। वे अनुप्रासों की तो झड़ी ही लगा देते हैं, जिससे अद्भुत चमत्कार पैदा हो जाता है।

पद्माकर रीतिकाल के अंतिम श्रेष्ठ कवि हैं। रस निरूपक आचार्य कवि के रूप में उन्हें बहुत ख्याति मिली। सजीव मूर्तविधान करने वाली कल्पना द्वारा उन्होंने प्रेम और सौंदर्य के मार्मिक चित्र प्रस्तुत किए हैं। वे उत्कृष्ट प्रतिभासंपन्न कवि हैं।

पद्माकर के काव्य की सर्वोपरि विशेषता है- दृश्य और शब्द-योजना के द्वारा प्रकृति का चित्रण करते हुए ऋतु-वर्णन और कल्पना की उल्लासमयी उड़ान। आनंद और उल्लास में जगमगाते चित्र प्रस्तुत करने में उनकी शब्द-संयोजना अनुपम है।

आइए, अब दोनों कवियों बिहारी और पद्माकर की विशेषताओं को इस प्रकार आत्मसात करें-

3.7 आपने क्या सीखा

1. बिहारी रीतिकाल के सर्वाधिक प्रसिद्ध और प्रतिनिधि कवि हैं। उन्होंने शृंगार, भक्ति, नीति और प्रकृति-चित्रण से संबंधित सुंदर दोहों की रचना की है।
2. शृंगार का चित्रण करते समय बिहारी ने नायक-नायिका की दैनिक गतिविधियों को चुना है।
3. बिहारी के भक्तिपरक दोहे भक्तिकालीन काव्य से अलग हटकर हैं। उन्होंने सख्य-भाव से, अंतरंगता के साथ कृष्ण का स्मरण किया है।
4. बिहारी ने प्रकृति के कोमल और रुचिकर रूपों के साथ-साथ उसके प्रचंड रूपों का भी सुंदर वर्णन किया है।
5. बिहारी के काव्य में तत्सम शब्दों से लेकर ठेठ ग्रामीण शब्दों तक का प्रयोग हुआ है। लोक में प्रचलित मुहावरों का काव्यात्मक प्रयोग करने में बिहारी दक्ष हैं।
6. बिहारी के दोहों में अनेक अर्थों तथा अर्थ-छवियों की संभावना रहती है, जिसके कारण उन्हें 'गागर में सागर' भरने वाला कवि कहा जाता है।
7. आलंकारिकता बिहारी की भाषा की प्रमुख विशेषता है। उन्होंने अपने काव्य में अनेक अलंकारों का सुंदर प्रयोग किया है।

8. बिहारी ने अपनी रचनाओं में लाक्षणिक भाषा का प्रयोग किया है, अर्थात् उनके सामान्य से दीखने वाले शब्द-प्रयोग और उक्तियाँ अपने में विशिष्ट अर्थ-संकेतों को व्यक्त करने का सामर्थ्य रखती हैं।

9. पद्माकर रीतिकाल के अंतिम समर्थ कवि हैं और उनके काव्य में शृंगार के साथ ही ऋतुओं तथा त्योहारों का उल्लास व्यक्त हुआ है।

10. पद्माकर की भाषा में रीतिकालीन काव्य-भाषा और शिल्प की समस्त सरसता, सुगढ़ता, कोमलता और आलंकारिकता मिलती है। ब्रजभाषा का प्रौढ़ साहित्यिक रूप पद्माकर के काव्य में बड़े स्वाभाविक रूप में विद्यमान है।

11. उनके रूपचित्र भी रंगीन और आकर्षण हैं। फाग के जो नयनाभिराम, सहृदयता भरे दृश्य-चित्र कवि ने अंकित किए हैं, उनमें भाव-प्रवणता और दृश्यविधायिनी-क्षमता का पूरा परिचय मिलता है।

3.8 चित्रात्मक प्रस्तुति

रीतिकाल

बिहारी

भावगत विशेषताएँ

भक्ति में अंतरंगता

नीति के माध्यम से बुराइयों से उबरना

शृंगार का संयोग पक्ष

प्रकृति का प्रचंड रूप

शिल्पगत विशेषताएँ

- गागर में सागर
- ब्रजभाषा
- दोहा छंद
- अनुप्रास एवं यमक अलंकार
- लाक्षणिकता
- मुहावरों का प्रयोग

पद्माकर

भावगत विशेषताएँ

ऋतु एवं त्योहार के माध्यम से प्रेम-शृंगार

प्रेम में विवशता

शिल्पगत विशेषताएँ

- ब्रजभाषा
- कवित्त छंद
- अनुप्रास अलंकार
- लाक्षणिकता

3.9 सीखने के प्रतिफल

(i) भक्ति, नीति, शृंगार और प्रकृति-चित्रण की प्रवृत्तियों को समझते हैं और उनके विषय में अपने मित्रों से चर्चा करते हुए वर्णन करते हैं।

(ii) भाषा के नए रूपों; जैसे- अलंकार एवं लक्षणा शब्द शक्ति का उपयोग करना सीखते हैं और अपने लेखन में प्रयोग करते हैं।

3.10 योग्यता विस्तार

बिहारीलाल

कविवर बिहारीलाल रीतिकाल के सुप्रसिद्ध और चर्चित कवि हैं। उनकी विशेषता रही है कि वे शृंगार, भक्ति, नीति और प्रकृति संबंधी गहरी बातों से लेकर लोक-व्यवहार संबंधी ज्ञान रखते हैं। कवि बिहारी ने 'बिहारी सतसई' की रचना की है, जिसमें लगभग सात सौ दोहे हैं। इसका प्रथम दोहा है : *'मेरी भव बाधा हरो राधा नागरि सोई'। यह* दोहा उन्होंने मंगलाचरण के रूप में लिखा है। बिहारी राधावल्लभ संप्रदाय के अनुयायी थे, अत: उन्होंने इसमें राधा को अधिक महत्त्व दिया है और उनसे सांसारिक बाधाओं के निवारण की प्रार्थना करते हुए अपनी काव्य-रचना को निर्विघ्न समाप्त कर पाने के वरदान का निवेदन किया है।

पद्माकर

महाकवि **पद्माकर** रीतिकाल के श्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। उनका जन्म संवत् 1810 में जिला बाँदा में हुआ था। उन्होंने अपनी प्रतिभा के कारण अनेक राजदरबारों में प्रतिष्ठा प्राप्त की। पद्माकर ने बाँदा के हिम्मत बहादुर सिंह के दरबार में रहकर 'हिम्मत बहादुर विरुदावलि' की रचना की। सतारा नरेश रघुनाथ राव, जयपुर नरेश सवाई जयसिंह और राज प्रताप सिंह तथा ग्वालियर नरेश दौलतराव सिंधिया के दरबार में आपने सम्मानपूर्वक आश्रय प्राप्त किया।

पद्माकर की प्रमुख रचनाएँ हैं- 'हिम्मत बहादुर विरुदावलि', 'जगतविनोद', 'पद्माभरण', 'रामरसायन' 'गंगालहरी' आदि।

माना जाता है कि कवि पद्माकर जीवन के अंतिम समय में कुष्ठ रोग से पीड़ित हो गए थे और गंगातट पर गंगाजल का निरंतर सेवन करने के उपरांत वे स्वस्थ होते चले गए। अत: उन्होंने गंगा की स्तुति में 'गंगालहरी' नामक ग्रंथ की रचना की। अंतत: उन्होंने कानपुर में गंगातट पर ही निवास-स्थान बना लिया और 80 वर्ष की आयु में उनका देहांत हुआ।

3.11 पाठांत प्रश्न

1. कवि ने क्यों कहा है कि ईश्वर को दुनिया की हवा लग गई है?

2. 'मादक पदार्थों से सौ गुना नशा धन का होता है'- उदाहरण देकर कथन की पुष्टि कीजिए।

3. निम्नलिखित दोहे की सप्रसंग व्याख्या कीजिए :

    कहलाने एकत बसत, अहि, मयूर, मृग, बाघ।
    जगत तपोवन सौ कियौ, दीरघ-दाघ, निदाघ।।

4. पद्माकर के कवित्त में गोपी अपनी किस विवशता का वर्णन कर रही है?

5. पद्माकर के कवित्त में 'अहीर' और 'अबीर' की तुलना किस प्रकार की गई है?

6. बिहारी के पठित दोहों के भाव-सौंदर्य पर टिप्पणी लिखिए।

7. पठित दोहों के आधार पर बिहारी की भाषागत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

8. पद्माकर के कवित्त के भाव-सौंदर्य का उल्लेख कीजिए।

9. पद्माकर के कवित्त की भाषा पर टिप्पणी लिखिए।

3.12 उत्तरमाला

बोध-प्रश्न 3.1

1. (क), 2. (ग), 3. (क), 4. (ख)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

3.1 1. (ख) 2. (ग), 3. (क), 4. (क)

3.2 1. (क) 2. (क), 3. (घ)

3.3 1. (ग) 2. (क), 3. (घ)

बोध-प्रश्न 3.2

1. (ग) 2. (ख)

4

छायावादी काव्य
(निराला और जयशंकर प्रसाद)

हिंदी में लगभग 1918 से 1936 तक के बीच के काव्य की मुख्यधारा को 'छायावाद' के नाम से जाना जाता है। 'छायावाद' शब्द का प्रयोग सबसे पहले कवि मुकुटधर पांडेय ने अपने एक आलेख में किया था जिसका शीर्षक था– 'हिंदी में छायावाद'। अनेक विद्वानों ने छायावाद को स्वच्छंदतावाद भी कहा है। हिंदी की छायावादी काव्यधारा मुख्य रूप से रीतिकाल की घोरश्रृंगारिकता एवं द्विवेदीयुगीन काव्य की सपाट उपदेशात्मक एवं वर्णनात्मक प्रवृत्ति के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया के रूप में आई। यह कविता अंग्रेजी के 'रोमांटिक' एवं बांग्ला के स्वच्छंदतावादी काव्य से भी काफी हद तक प्रभावित हुई थी। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि पूरा छायावादी काव्य भारत के स्वाधीनता आंदोलन और मुख्य रूप से गाँधी-युग में लिखा गया है। यही कारण है कि छायावादी कविता में एक ओर जहाँ व्यक्ति-स्वातंत्र्य की चेतना है तो दूसरी ओर राष्ट्र स्वातंत्र्य की। इसके अतिरिक्त छायावाद प्रेम, सौंदर्य, प्रकृति-संवेदना, राष्ट्रीय जागरण एवं मानवतावाद का काव्य है। जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और महादेवी वर्मा छायावाद के चार स्तंभ हैं।

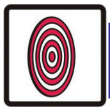

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- श्रमिकों की कठिन जीवन-परिस्थितियों पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- समाज में फैली विषमता का विवेचन कर सकेंगे;
- निराला की कविता के भाव-सौंदर्य का वर्णन कर सकेंगे;
- निराला की कविता की भाषा-शैली और शिल्प-सौंदर्य पर टिप्पणी कर सकेंगे;

- पराधीन भारत में देशवासियों के भीतर उठ रही स्वतंत्रता की आकांक्षाओं की पहचान कर प्रस्तुत कर सकेंगे;
- प्रसाद की कविता की भावगत विशेषताओं पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- प्रसाद की कविता के शिल्प-सौंदर्य पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- प्रसाद की प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना का वर्णन कर सकेंगे।

(क) सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

हिंदी साहित्य में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का महत्वपूर्ण स्थान है। निराला जिस युग में कविता लिख रहे थे, उस युग में भारतीय समाज अनेक प्रकार के सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों से गुज़र रहा था। आर्थिक असमानता के कारण होने वाले शोषण को देखकर निराला बहुत बेचैन होते थे। उनकी अनेक रचनाओं में यह बेचैनी और पीड़ा झलकती है। 'वह तोड़ती पत्थर' कविता में एक श्रमिक स्त्री के संघर्ष का चित्रण किया गया है। कवि उस श्रमिक स्त्री के प्रति संवेदनशील हैं और हमें भी ऐसी स्थितियों के प्रति संवेदनशील बनाते हैं। इस कविता को समानुभूति से उपजी कविता भी कहा जा सकता है।

चित्र 4.1 : निराला

4.1 मूल पाठ

चित्र 4.2 : पत्थर तोड़ती महिला

वह तोड़ती पत्थर

वह तोड़ती पत्थर;
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर –
वह तोड़ती पत्थर।

कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार;
श्याम तन, भर बँधा यौवन,
नत नयन, प्रिय-कर्म रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार-बार प्रहार –
सामने तरु-मालिका अट्टालिका, प्राकार।

चढ़ रही थी धूप;
गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाता रूप;
उठी झुलसाती हुई लू,

रुई ज्यों जलती हुई भू,
गर्द चिनगीं छा गयीं,
प्रायः हुई दुपहर -
वह तोड़ती पत्थर।

देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार;
देखकर कोई नहीं,
देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोयी नहीं,
सजा सहज सितार,
सुनी मैंने वह नहीं जो सुनी थी झंकार
एक क्षण के बाद वह काँपी सुघर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा -
'मैं तोड़ती पत्थर!'

बोध प्रश्न 4.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. श्रमिक स्त्री को क्या प्रिय है-

   (क) गुरु हथौड़ा   (ख) मन

   (ग) कर्म   (घ) प्रहार

2. कविता में किस प्रकार के मौसम का वर्णन है-

   (क) ग्रीष्म का   (ख) शिशिर का

   (ग) वर्षा का   (घ) वसंत का

3. पत्थर तोड़ने वाली जहाँ बैठी थी, उसके सामने किसका दृश्य है-

   (क) अट्टालिकाओं का   (ख) जलती हुई धरती

   (ग) छायादार पेड़ का   (घ) इलाहाबाद के पथ का

4.2 आइए समझें

अंश-1

वह तोड़ती पत्थर ...... अट्टालिका, प्राकार।

प्रसंग

कविता पढ़कर आप पहले जान चुके हैं कि यह एक श्रमिक नारी पर लिखी गई है, जो सड़क

टिप्पणी

शब्दार्थ

नत-नयन	- झुकी आँखें
गुरु	- भारी
तरुमालिका	- पेड़ों की पक्तियाँ
अट्टालिका	- ऊँचे भवन
प्राकार	- परकोटा, प्राचीन
दिवा	- दिन
लू	- तेज गर्म हवा
भू	- पृथ्वी, ज़मीन
गर्द-चिनगीं	- चिंगारी जैसे धूल के कण
छिन्नतार	- तारों की झनकार
सुघर	- सुडौल देहवाली
सीकर	- पसीने की बूँदें

के किनारे पत्थर तोड़ रही है। कवि ने उसे इलाहाबाद की किसी सड़क पर काम करते देखा है। उसी का चित्र उन्होंने यहाँ खींचा है।

व्याख्या

इलाहाबाद की किसी सड़क पर काम में लगी एक श्रमिक महिला को देखकर निराला जी ने लिखा है कि वह जिस पेड़ के नीचे बैठी काम में लगी है, वह कोई छायादार पेड़ नहीं है, जो उसे गरमी की प्रखरता से, उसकी तेज़ी से बचा सके। पर उसे इस स्थिति से कोई शिकायत नहीं है, वह तो इस स्थिति को स्वीकार कर रही है। सोचिए क्यों ? क्योंकि वह जानती है कि जब कठिन श्रम करना है तो अनुकूल परिस्थितियों की कल्पना ही व्यर्थ है।

कवि की दृष्टि पहले श्रमिक महिला के शारीरिक रूप-सौंदर्य की ओर जाती है। उसका शरीर साँवला है। यह साँवलापन श्रम का प्रतीक है। साथ ही हमारे देश में रहनेवाले अभावग्रस्त, शोषित आमजन की ओर संकेत करता है। वस्तुत:, धूप में काम करने वाले श्रमिकों का रंग धूप में साँवला पड़ ही जाता है। वह युवती है उसका अपने यौवन पर नियंत्रण है। गंभीर है, उच्छृंखल नहीं है। उसकी आँखें झुकी हैं। उसका मन भी काम पर पूर्ण तन्मयता से लगा है। कर्म उसे प्रिय है। हाथ में भारी हथौड़ा लेकर वह बार-बार पत्थरों पर चोट कर रही है। उन्हें तोड़ रही है।

इसके बाद कवि परिवेश की परस्पर-विरोधी स्थिति का चित्रण कर रहा है। वह कहता है जहाँ एक ओर वह मज़दूरनी गरमी में छायाहीन वृक्ष के नीचे काम कर रही है – वहीं उसके एकदम सामने के परिवेश से संपन्नता और सुख-सुविधा झलक रही है। वहाँ सुंदर सजावटी वृक्षों की पंक्तियाँ हैं, विशाल ऊँचे भवन हैं और उनके चारों ओर सुंदर दीवारें हैं। कविता की इन पंक्तियों में यह संकेत स्पष्ट है कि वह संभ्रांत नागरिकों की बस्ती है। वे लोग सुख-सुविधाओं के बीच अट्टालिकाओं में परकोटों से घिरे बैठे हैं और आस-पास की परिस्थितियों से बेखबर अपने आप में सिमटे हुए हैं, जबकि उन भवनों का निर्माण करने वालों को मौसम की मार से बचने की सुविधा तक नहीं है।

टिप्पणी

अंश-1

वह तोड़ती पत्थर;
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर-
वह तोड़ती पत्थर।
कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई
स्वीकार,
श्याम तन, भर बँधा यौवन,
नत नयन, प्रिय-कर्म-रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार-बार प्रहार –
सामने तरु-मालिका, अट्टालिका,
प्राकार।

टिप्पणी

1. उपर्युक्त पंक्तियों में कविता का सामान्य अर्थ बताया गया है। आप जानते हैं कि 'निराला' सिद्ध कवि हैं। वे शब्दों और वर्ण्यवस्तु का चयन विशेष आशय से करते हैं; जैसे- इन्हीं पंक्तियों में देखिए : *''कोई न छायादार/पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार; श्याम तन, भर बँधा यौवन/नत नयन, प्रिय-कर्म-रत मन''*।

2. आप जानते हैं कि हम सर्वनाम का प्रयोग तब करते हैं जब पहले संज्ञा का प्रयोग कर चुके होते हैं। यहाँ कवि ने कविता का प्रारंभ 'वह' सर्वनाम से किया है, पूरी कविता में 'वह' के लिए कोई नाम भी नहीं है। बता सकते हैं ऐसा क्यों है ? कवि यदि चाहता तो मज़दूरनी के लिए कोई नाम भी दे सकता था। पर नाम न देकर वह व्यक्त करना चाहता है कि यह बात किसी एक श्रमिक विशेष पर नहीं, श्रमिक सामान्य पर अर्थात् सभी श्रमिकों पर लागू होती है। किसी भी सड़क के किनारे पत्थर तोड़ने वाली मजदूरनी की कठिनाई और कार्य परिस्थितियाँ एक-सी हैं। इस प्रकार नाम महत्वपूर्ण नहीं, महत्वपूर्ण है उसका काम-अर्थात् 'पत्थर तोड़ना'। कवि प्रारंभ के वाक्य में ही कहता है – 'वह तोड़ती पत्थर'

3. यहाँ व्यक्ति का नाम न देने वाला कवि सड़क की पहचान के लिए नाम देता है – *'देखा मैंने उसे इलाहाबाद के पथ पर'* यहाँ आप पूछ सकते हैं कि नाम न देने से क्या अर्थ अधिक व्यापक नहीं होता ? यहाँ 'पथ पर' के साथ इलाहाबाद नाम देकर उसने इस घटना को सच्चा और प्रामाणिक बताना चाहा है। जैसे कहना चाहता हो 'यह एक सच्ची घटना' है और वह इस घटना का साक्षी है। सभी कुछ उसके सामने हुआ है। यह इलाहाबाद की देखी हुई घटना है।

4. अगले कथन में 'स्वीकार' के प्रयोग पर ध्यान दीजिए। जहाँ बैठकर वह काम कर रही है, वह जगह छायादार नहीं है। पर उसे यह स्थिति स्वीकार है। यहाँ कवि का आशय है कि मज़दूर जिन परिस्थितियों में काम कर रहे हैं, वे उनके अनुकूल नहीं हैं, प्रतिकूल हैं। पर वे इन प्रतिकूल परिस्थितियों के होते हुए भी कोई बखेड़ा खड़ा नहीं कर रहे हैं, बल्कि उन्हें स्वीकार कर काम करते रहते हैं।

5. अगली दो पंक्तियाँ देखिए :

   श्याम तन, भर बँधा यौवन,
   नत नयन, प्रिय-कर्म-रत मन,

   'साँवले रंग का शरीर, बँधे परिपुष्ट अंगों से झलकता यौवन' कथन से स्पष्ट है कि वह श्रमिक महिला सुंदर है। पर उसकी आँखों में कोई श्रृंगार या उच्छृंखलता का भाव नहीं है। आँखें झुकी हैं, जो उसके शील स्वभाव को व्यंजित कर रही हैं। युवती के प्रसंग में कवि प्रायः उसके प्रिय का उल्लेख करते हैं, जिस पर उसका मन हो। यहाँ भी कवि उसके प्रिय का उल्लेख करता है, पर यह प्रिय कोई व्यक्ति नहीं, वह है कर्म- पत्थर तोड़ने का काम, उसी पर उसका मन है, उसी पर उसकी आँखें। इसलिए कहा है – *'नत नयन, प्रिय-कर्म-रत मन।'*

6. अब इन तीन पंक्तियों को पढ़िए :

   'गुरु हथौड़ा हाथ

करती बार-बार प्रहार

सामने तरु-मालिका अट्टालिका, प्राकार।

इसका अर्थ आप पीछे पढ़ चुके हैं। देखना यह है कि इस प्रसंग में कवि उसके सामने तरुमालिका, अट्टालिका और प्राकार का उल्लेख क्यों कर रहा है? निराला ने इस पंक्ति के द्वारा परिवेश की विडंबना को साकार किया है। एक ओर भीषण गरमी में सड़क पर पत्थर तोड़ती औरत और दूसरी ओर सुंदर सजावटी वृक्षों की पंक्तियों से सजे परकोटों से घिरे बड़े-बड़े महल। कवि का उद्देश्य परिवेश के विरोध और विडंबना को साकार करना ही नहीं है, वह कहता है '*गुरु हथौड़ा हाथ, करती बार-बार प्रहार*'। वह हाथ में भारी हथौड़ा लेकर बार-बार प्रहार कर रही है, पत्थरों पर ही नहीं, बल्कि सामने उन तरुमालिका, अट्टालिका और प्राकारों की सुविधाओं का भोग करने वाले, वहाँ रहने वाले उन सभी लोगों पर और साथ ही साथ उस व्यवस्था पर भी जहाँ शोषित मज़दूर प्रतिकूल परिस्थितियों में काम करते हैं और शोषक उनसे बेखबर होकर सुख-सुविधाओं में जीते हैं।

पाठगत प्रश्न 4.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. कवि ने मज़दूरनी के लिए 'वह' सर्वनाम का प्रयोग किया है, क्योंकि-

   (क) उसका कोई नाम नहीं है।

   (ख) कवि उसका नाम नहीं जानता।

   (ग) वह किसी भी श्रमिक की बात हो सकती है।

   (घ) महिला के लिए 'वह' कहना ही उचित है।

2. पठित पंक्तियों में चित्रण नहीं किया गया है -

   (क) श्रमिक के कठोर श्रम का।

   (ख) काम करने की प्रतिकूल परिस्थितियों का।

   (ग) शोषक और शोषित की जीवन-शैली के अंतर का।

   (घ) युवती के उच्छृंखल शारीरिक सौंदर्य का।

अंश - 2

चढ़ रही थी धूप ..... वह तोड़ती पत्थर।

आइए, अगली आठ पंक्तियाँ पढ़ कर देखें -

व्याख्या : आप जान गए हैं कि इलाहाबाद की किसी सड़क पर तपती दोपहरी में पत्थर तोड़ती महिला के श्रम का चित्रण कवि इस कविता में कर रहा है। इन पंक्तियों में कवि कार्य की कठिनतर परिस्थितियों का चित्रण कर रहा है। दोपहर में धूप बढ़ने लगी है। गर्मियों के दिन हैं और तमतमाता सूर्य अपनी प्रचंड गरमी से सबको व्याकुल कर रहा है। यहाँ तमतमाता रूप प्रत्यक्ष में तो दिन का है पर इसे मजदूरनी के तमतमाए चेहरे से भी जोड़ा गया है। ज़रा सोचिए, गरमी के दिनों में क्या हाल होता है। गरम लू के थपेड़े तो मानो मनुष्य को झुलसा देते हैं। कवि कहता है कि इस समय धरती ऐसे तप रही है जैसे रूई अंदर ही अंदर धीरे-धीरे सुलगती जाती है। चारों ओर धूल का गुबार-सा छा गया है। गर्द का एक-एक कण चिंगारी-सा जलने लगा है। अब तो दोपहर हो आई है। दोपहर में गरमी अपने चरम पर होती है। ऐसे में भी वह मज़दूरनी सिर नीचा किए पत्थर तोड़ने के कार्य में लगी हुई है।

टिप्पणी

अंश-2
चढ़ रही थी धूप;
गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाता रूप;
उठी झुलसाती हुई लू,
रूई ज्यों जलती हुई भू,
गर्द चिनगीं छा गयीं,
प्रायः हुई दुपहर-
वह तोड़ती पत्थर।

टिप्पणी

1. इन पंक्तियों में 'निराला' के शब्दचयन पर ध्यान दीजिए। इस प्रसंग को वह *'चढ़ रही थी धूप'* कथन से प्रारंभ करते हैं। धूप का धीरे-धीरे चढ़ना, अंततः उसका दोपहर तक पहुँचना है – *'प्रायः हुई दुपहर'* यहाँ 'प्रायः' का प्रयोग देखिए, दीन-श्रमिकों के पास समय मापने के कोई निश्चित उपकरण नहीं होते। धीरे-धीरे चढ़ती-बढ़ती धूप जब इतनी बढ़ जाए कि धरती जलने लगे, धूप के थपेड़े असह्य हो जाएँ। गर्द-गुबार उड़ने लगे तो उन्हें लगता है कि लगभग मध्याह्न हो गया।

2. *'रुई ज्यों जलती हुई भू'* में उपमा बड़ी बेजोड़ है। रूई में लगी आग की लपटें दिखती नहीं हैं। वह धीरे-धीरे भीतर-ही-भीतर सुलगती है। धरती का भी यही हाल है। शुरू में ऐसा लगता है कि रूई में कोई आग नहीं है और न ही लपटें उठती दिखती हैं, पर गरमी की अधिकता से पता चलता है कि आग लगी हुई है।

3. ऐसा ही प्रयोग है – *'गर्द चिनगीं'*। दोपहर इतनी गरम हो जाती है कि धूल का एक-एक कण आग की चिंगारी-सा जान पड़ता है। ऐसी चिंगारियों की गर्द पूरे आसमान में छा गई है। इस प्रकार पूरे अवतरण में गरमी की प्रचंडता को अनेक प्रकार से साकार किया गया है।

पाठगत प्रश्न 4.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. 'दिवा का तमतमाता रूप' कथन से आशय है :

   (क) दिया जगमगा रहा था।

   (ख) मजदूर क्रोध से तमतमा रहे थे।

(ग) दिन जगमगा रहा था।

(घ) सूर्य मानो आग बरसा रहा था।

2. 'रुई ज्यों जलती हुई भू' का आशय है :

(क) धरती पर आग लगी थी।

(ख) रुई धीरे-धीरे जल रही थी।

(ग) असहनीय गरमी पड़ रही थी।

(घ) धरती धीरे-धीरे सुलग रही थी।

अंश-3
देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार;
देखकर कोई नहीं,
देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोयी नहीं,
सजा सहज सितार,
सुनी मैंने वह नहीं जो सुनी थी झंकार
एक क्षण के बाद वह काँपी सुघर
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा-
'मैं तोड़ती पत्थर!'

अंश - 3

देखते देखा मुझे ..... 'मैं 'तोड़ती पत्थर!'

अब कविता की शेष पंक्तियाँ पुनः पढ़ लीजिए।

व्याख्या : कवि मजदूरनी को दोपहर की भीषण गरमी में काम करते हुए देख रहा था। अब मज़दूरनी ने भी देखा कि कोई उसे देख रहा है। उसे देखते हुए देखकर, उसने सामने की अट्टालिका को देखा और देखने में उसका काम करने का क्रम थोड़ा-सा विचलित हुआ। पर उसके मन में दीनता या ईर्ष्या जैसी कोई भावना नहीं उपजी। उसने कवि को ऐसी दृष्टि से देखा जिसने शोषण को सहा है, पर रोकर अपनी दीनता कभी प्रकट नहीं की। कवि को लगता है कि सितार को बजाने पर भी जो झंकार मैंने कभी नहीं सुनी थी, ऐसी झंकार मुझे उस मज़दूरनी के श्रम और उसकी स्वाभिमानी दृष्टि से सुनाई पड़ी। पलभर उसका हाथ रुक जाने पर वह सुडौल युवती काँपी, उसके माथे से पसीने की कुछ बूँदें टपक पड़ीं। इसके बाद वह पुनः काम में लग गई। उसके पुनः काम प्रारंभ करने के अंदाज़ से कवि को लगा मानो वह कह रही हो कि वह पत्थर तोड़ती है। यहाँ 'मैं तोड़ती पत्थर' का व्यंग्यार्थ यह भी है कि मैं पत्थर जैसी हृदयहीन सामाजिक व्यवस्था को तोड़ना चाहती हूँ।

टिप्पणी

1. इस पूरे प्रसंग की विशेषताओं पर आपने गौर किया होगा। इसमें बिना संवादों के भी संवादात्मकता है। केवल आँखों से ही भावों और विचारों को अभिव्यक्त किया जा रहा है। पहले कवि मज़दूरनी को देखता है, मज़दूरनी कवि को देखती है और उसके बाद उस भवन की ओर देखती है। पुनः वह कवि की ओर स्वाभिमान और अपराजेयता के भाव से देखती है। इस प्रकार, देखने का मौन ही मुखरित हुआ है। वीणा की झंकार की कल्पना भी कवि ही कर रहा है। मज़दूरनी का टूटा हृदय ही 'छिन्नतार' है। अंत में मज़दूरनी का मौन संवाद ही मुखरित हुआ है, कवि को लगता है, जैसे वह कह रही हो - *'मैं तोड़ती पत्थर'!*

टिप्पणी

2. कविता के प्रारंभ में कथन था – 'वह तोड़ती पत्थर', समाप्ति में है – 'मैं तोड़ती पत्थर' क्या इन दोनों प्रयोगों का कोई रहस्य है? हाँ, है। प्रारंभ में 'वह' सर्वनाम सामान्य मज़दूर वर्ग के लिए है और कथन कवि का है। पर अंत में 'वह' 'मैं' में बदल गया है। जो मज़दूर सामान्य का नहीं 'विशेष' का द्योतक है, ऐसे मज़दूर का जिसे सामाजिक विषमताओं का बोध है और अपने कर्त्तव्य तथा लक्ष्य का ज्ञान है। पत्थर पर हथौड़ा चलाते हुए मजदूरनी कहती है – *'मैं तोड़ती पत्थर'* अर्थात् 'मैं प्रत्यक्ष में तो सड़क के किनारे पड़े पत्थर तोड़ रही हूँ।' पर 'मैं' परोक्ष रूप से संवेदनशील समाज की विषमताओं को सह रहे अपने हृदय रूपी पत्थर को भी तोड़ रही हूँ और इस हृदयहीन पत्थर दिल सामाजिक व्यवस्था को भी तोड़ सकती हूँ।

3. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता हमें परिश्रम करनेवाले लोगों के प्रति संवेदनशील बनाती है। यह समानुभूति से उपजी कविता है। क्यों है? आइए जानते हैं। किसी विशेष दृश्य को देखकर उससे प्रभावित होना या उसमें डूब जाना आपके साथ भी हुआ होगा। कभी-कभी ऐसा भी हुआ होगा कि किसी का दुख, यातना या कठिन संघर्ष आपको अपना दुख, यातना या कठिन संघर्ष लगा होगा। जब कभी ऐसा होता है तो वह समानुभूति कहलाता है। इस कविता में भी श्रमिक स्त्री का संघर्ष, उसकी अभावग्रस्तता कवि का अपना संघर्ष या अभावग्रस्तता बन गया है। कवि को श्रमिक स्त्री सुंदर, गंभीर लगती है तथा स्वाभिमानी भी। साथ ही कवि उसके संघर्ष से इतना प्रभावित होता है कि पत्थरों पर पड़ी चोट को शोषक-व्यवस्था पर पड़ने वाली चोट के रूप में भी देखता है। आप भी जब ऐसे लोगों को देखते होंगे तो उनके शोषण के कारणों पर ज़रूर विचार करते होंगे और मन में यह भाव आता होगा कि समाज से शोषण समाप्त हो।

पाठगत प्रश्न 4.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्न का उत्तर दीजिए :

1. 'देखा मुझे उस दृष्टि से जो मार खा रोई नहीं' कथन से मजदूरनी के स्वभाव की कौन-सी विशेषता अभिव्यक्त हो रही है –

   (क) दीनता — (ख) सहिष्णुता

   (ग) स्वाभिमान — (घ) पराधीनता

2. मज़दूर स्त्री के कर्म में विघ्न उत्पन्न हुआ–

   (क) गर्मी के कारण — (ख) पसीने के कारण

   (ग) काँपने के कारण — (घ) कवि द्वारा अपने को देखे जाने के कारण

4.3 भाव-सौंदर्य

'वह तोड़ती पत्थर' कविता भाव-सौंदर्य की दृष्टि से बहुत संपन्न है। सड़क पर पत्थर तोड़ती मज़दूरनी का वर्णन करते हुए कवि सरल शब्दों से परिवेश का निर्माण करता है। वह छायाहीन पेड़ तले बैठी है। उसकी पृष्ठभूमि साधारण श्रमिक परिवार की है, किंतु शील और सच्चरित्रता जैसे चारित्रिक गुणों को दिखाना भी कवि नहीं भूला है। मज़दूर और संपन्न दोनों प्रकार के लोगों का चित्रण करते हुए कवि ने परस्पर-विरोधी चित्र खींचे हैं। एक ओर कठिनतम परिस्थितियों में काम करते श्रमिक वर्ग का चित्र है तो दूसरी ओर सुख-सुविधा संपन्न भवनों में रहने वाले लोगों का। कवि की समानुभूति श्रमिक वर्ग के साथ है। वह श्रमिक-वर्ग के हाथों हृदयहीन व्यवस्था को ध्वस्त होते देखने की कामना रखता है।

4.4 शिल्प-सौंदर्य

'वह तोड़ती पत्थर' प्रगतिवादी रचना है। शिल्प-सौंदर्य की दृष्टि से यह रचना अद्भुत है। सर्वप्रथम तो कविता के छंद पर ध्यान दीजिए। परंपरागत छंदों में मात्रा और वर्ण का निश्चित विधान होता है, पर निराला की अनेक कविताओं में ऐसा बंधन नहीं है। इसे 'मुक्त छंद' कहते हैं। कविता को छंद के बंधन से मुक्त करने में निराला का बड़ा योगदान है। 'वह तोड़ती पत्थर' में तुकांतता है। तुक पंक्तियों के अंत में ही नहीं भीतर भी है, पर उसका बंधन नहीं है, पंक्तियाँ छोटी-बड़ी हैं, पर उनमें प्रवाह है, जैसे -

1. *श्याम तन, भर बँधा यौवन,*
   नत नयन प्रिय-कर्म-रत-मन

   गुरु हथौड़ा हाथ,
   करती बार-बार प्रहार

2. *चढ़ रही है धूप;*
   गर्मियों के दिन
   दिवा का तमतमाता रूप;

कवि शब्दों के द्वारा पाठक के सामने एक चित्र-सा खींच देता है; जैसे -

कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार;
श्याम तन, भर बँधा यौवन,
नत नयन, प्रिय-कर्म-रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार-बार प्रहार
सामने तरुमालिका, अट्टालिका, प्राकार।

शब्द-प्रयोग में भी कवि ने बड़ी कुशलता का परिचय दिया है। 'श्याम तन, भर बँधा यौवन', कम शब्दों से अधिक गूढ़ अर्थ का संकेत करना निराला की विशेषता है। जैसे- *'देखा मुझे उस दृष्टि से जो मार खा रोई नहीं', 'मैं तोड़ती पत्थर',* 'आदि ऐसे ही प्रयोग हैं। निराला जिस युग में कविता कर रहे थे, उसमें प्रायः संस्कृतनिष्ठ शब्दावली के प्रयोग का चलन-सा हो गया था। प्रसाद, पंत, महादेवी आदि की भाषा तत्समप्रधान है, पर निराला का भाषा पर ऐसा अधिकार है कि वे संस्कृतनिष्ठ और सरल हिंदी के शब्दों का प्रयोग आवश्यकतानुसार कर लेते हैं। 'वह तोड़ती पत्थर' कविता की भाषा बड़ी ही सरल और बोलचाल की है। परंतु इसमें भी कवि समाज की सुख-सुविधाएँ भोगने वालों की बात करते समय तत्सम शब्दावली का प्रयोग करता है - तरुमालिका, अट्टालिका, प्राकार।

पाठगत प्रश्न 4.4

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. कवि की समानुभूति किसके साथ है-

   (क) व्यवस्था के (ख) शोषित के

   (ग) शोषक के (घ) परिस्थितियों के

2. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता में नहीं है-

   (क) छंद का बंधन (ख) प्रवाह

   (ग) गूढ़ार्थ (घ) सरल भाषा

(ख) जयशंकर प्रसाद

जयशंकर प्रसाद छायावादी युग के श्रेष्ठ कवि हैं। इनकी कविताओं में वैयक्तिक अनुभूति, संस्कृति और राष्ट्र-प्रेम की अभिव्यक्ति प्रभावशाली ढंग से हुई है। इसलिए हिंदी कविता के इस युग को 'नवजागरण' का युग कहा जाता है। इनके 'चंद्रगुप्त' नाटक की गिनती हिंदी के श्रेष्ठतम नाटकों में होती है। जिस गीत 'हिमाद्रि तुंगशृंग से'... को आप पढ़ने जा रहे हैं, वह इसी नाटक के चौथे अंक से लिया गया एक प्रयाण गीत है। युद्ध में विजय प्राप्त करने

चित्र 4.3 : जयशंकर प्रसाद

के लिए उत्साह के भाव का होना आवश्यक होता है। उत्साह की अभिव्यक्ति अथवा उत्साह बढ़ाने के लिए गाया जानेवाला सामूहिक गीत 'प्रयाण' अथवा 'प्रस्थान गीत' कहा जाता है। आइए, इस गीत को समझते हैं।

4.5 मूल पाठ

हिमाद्रि तुंग शृंग से
प्रबुद्ध शुद्ध भारती–
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला,
स्वतंत्रता पुकारती–
''अमर्त्य वीरपुत्र हो, दृढ़-प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है - बढ़े चलो बढ़े चलो।।''

असंख्य कीर्तिरश्मियाँ
विकीर्ण दिव्यदाह-सी।
सपूत मातृभूमि के–
रुको न शूर साहसी!
अराति सैन्य सिंधु में– सुवाडवाग्नि से जलो,
प्रवीर हो जयी बनो– बढ़े चलो बढ़े चलो।

बोध प्रश्न 4.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. प्रस्तुत पंक्तियों में पुकारने वाला कौन है–

   (क) हिमालय　　(ख) स्वतंत्रता

   (ग) भारती　　(घ) वीरपुत्र

2. प्रस्तुत पंक्तियों में 'अमर' कहा गया है–

   (क) वीरपुत्रों को　　(ख) वीरों को

   (ग) दृढ़ता को　　(घ) भारती को

4.6 आइए समझें

अंश-1

हिमाद्रि तुंग श्रृंग .... बढ़े चलो।

प्रसंग–'चंद्रगुप्त' नाटक में यवनों से देश की रक्षा के लिए संग्राम छिड़ा हुआ है। भारतीयों में कर्त्तव्य की प्रेरणा जगाने के लिए नाटक की नायिका अलका इस गीत को समूह में गाती है। इस गीत का एक प्रसंग और है। जयशंकर प्रसाद ने इसकी रचना देश को अंग्रेजी शासन से मुक्त कराने की कामना से की थी।

व्याख्या– नाटक की पात्र अलका के माध्यम से कवि का कथन है कि हिमालय पर्वत की ऊँची चोटी से ज्ञान एवं सत्यता की देवी माँ भारती स्वतंत्रता की पुकार कर रही हैं। आप जानते हैं कि हिमालय पर्वत प्राचीन काल से ही भारत के रक्षक के रूप में देखा जाता रहा है। इसलिए यहाँ पर हिमालय की ऊँची चोटी से भारती का पुकारना सार्थक है। गीत में आगे कहा गया है कि भारतमाता स्वयं अपने प्रकाश पुंज से प्रकाशित हैं, उनमें एक विशेष आभा है। वे आह्वान कर रही हैं– हे भारतवासियो! तुम अमर वीरों की संतान हो। अत: तुम कभी पराजित नहीं हो सकते। तुम्हारा इतिहास वीरता का इतिहास रहा है। तुम आज अपनी मातृभूमि को स्वतंत्र कराने का दृढ़ संकल्प लो। यह निश्चय कर लो कि इसके लिए तुम अथक संघर्ष करते रहोगे। यही तुम्हारा परम कर्त्तव्य है। मनुष्य के लिए कर्त्तव्य का मार्ग ही सर्वश्रेष्ठ मार्ग होता है। अत: संघर्ष के इस पावन मार्ग पर तुम अपने कदम निरंतर बढ़ाते चलो। आप समझ गए होंगे कि गीत में मातृभूमि का मानवीकरण किया गया है। वह देश के वीरों का स्वतंत्रता के लिए आह्वान कर रही है और अमर वीरों की संतान कहकर उनका उत्साह बढ़ा रही है।

टिप्पणी

(i) 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग' अर्थात् भारतमाता हिमालय की ऊँची चोटी से स्वतंत्रता की पुकार कर रही है। यह कल्पना बड़ी सार्थक है, क्योंकि यहाँ से समूचा देश उनकी पुकार सुन सकता है। जब यह गीत रचा गया तब भारतभूमि का रक्षक हिमालय भी परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था।

(ii) माँ भारती ज्ञान और बुद्धि की देवी हैं। वे भारतवासियों में भी इन गुणों को प्रदान करती है और उनके भीतर कर्त्तव्य का बोध कराती है।

(iii) आज के संदर्भ में भी इस गीत का अर्थ किया जा सकता है। वर्तमान युग में भी देश अनेक प्रकार की समस्याओं से घिरा हुआ है। भारतीयों का यह कर्त्तव्य है कि वे देश की पुकार को सुनें और अनेक समस्याओं से देश को मुक्त कराने का प्रयास करें।

टिप्पणी

शब्दार्थ

हिमाद्रि – हिमालय पर्वत
तुंग श्रृंग – ऊँची चोटी
प्रबुद्ध – जागृत, ज्ञानी
शुद्ध – पवित्र, स्वच्छ
भारती – भारतमाता, माँ सरस्वती
स्वयंप्रभा - अपने ही प्रकाश से प्रकाशित
समुज्ज्वला- विशेष प्रकार से आलोकित
अमर्त्य- दिव्य, अनश्वर
दृढ़ प्रतिज्ञ- प्रतिज्ञा से न टलने वाला, दृढ़ निश्चयी
प्रशस्त-श्रेष्ठ, उत्तम, पुण्य पंथ-पावन मार्ग
असंख्य-अनगिनत
कीर्ति रश्मियाँ–प्रसिद्धि अथवा ख्याति की किरणें
विकीर्ण–फैली हुई
दिव्य दाह-सी-अलौकिक ज्वाला अथवा मशाल के समान
शूर-श्रेष्ठ योद्धा
अराति-शत्रु
सिंधु-सेना रूपी समुद्र
सुवाडवाग्नि- समुद्र की आग
प्रवीर- वीर, योद्धा
जयी-विजयी

(iv) गीत में दृढ़ प्रतिज्ञ होने की बात की गई है। दृढ़ प्रतिज्ञा अर्थात् दृढ़तापूर्वक निश्चय करना सफलता का पहला चरण है। संघर्ष चाहे कितना भी कठिन हो परंतु दृढ़ प्रतिज्ञा से विजय प्राप्त की जा सकती है।

(v) गीत में तत्सम शब्दों के प्रयोग से सहज सौंदर्य की वृद्धि हुई है; जैसे- हिमाद्रि, तुंग श्रृंग, स्वयंप्रभा, समुज्ज्वला आदि।

(vi) जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखित नाटक 'चंद्रगुप्त' के चतुर्थ अंक में यवनों को देश से निष्कासित करने के लिए सभी देशवासी तत्पर हैं। अलका तक्षशिला की राजकुमारी है। वह राष्ट्रप्रेम और राष्ट्रसेवा की साक्षात् मूर्ति है। 'चंद्रगुप्त' की अलका उस भारतीय नारी का प्रतीक है जो अपनी मातृभूमि को बचाने के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर सकती है। देशभक्ति से प्रेरित भारतीयों का एक समूह आगे बढ़ रहा है। इस समूह का नेतृत्व अलका कर रही है। जनसमूह में कर्त्तव्य-निष्ठा का भाव भरने के लिए वह इस गीत को गाती है और उसके साथ सभी मिलकर गाते हैं।

पाठगत प्रश्न 4.5

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. "बढ़े चलो, बढ़े चलो" का आह्वान किसके प्रति किया गया है।

   (क) देशवासियों के (ख) वीरों के

   (ग) अमर व्यक्तियों के (घ) प्रबुद्ध जनों के

2. 'प्रबुद्ध शुद्ध' कौन है-

   (क) स्वतंत्रता (ख) भारती

   (ग) वीरपुत्र (घ) पुण्य पंथ

अंश-2

असंख्य कीर्तिरश्मियाँ
विकीर्ण दिव्यदाह-सी।
सपूत मातृभूमि के–
रुको न शूर साहसी!
अराति सैन्य सिंधु में–
सुबाड़वाग्नि से जलो,
प्रवीर हो जयी बनो– बढ़े चलो
बढ़े चलो।।

अंश-2 असंख्य कीर्ति.......... बढ़े चलो।

आइए, कविता के दूसरे अंश को एक बार फिर से पढ़ लें।

व्याख्या–माँ भारती देशवासियों से स्वतंत्रता की पुकार करती हैं–हे भारतवासियो! सूर्य की चमकती किरणों की तरह तुम्हारी ख्याति सभी दिशाओं में फैल रही है। तुम्हारी प्रसिद्धि की ये किरणें एक दिव्य ज्वाला (मशाल) बनकर तुम्हारा पथ प्रकाशित कर रही हैं। तुम अपनी

मातृभूमि के सच्चे सपूत हो, अत: इस स्वतंत्रता-संघर्ष में तुम्हें रुकना नहीं है। हे भारतवासियो! तुम वीर और साहसी योद्धा हो, अत: अपने कर्त्तव्य-मार्ग पर डटे रहना तुम्हारा उद्देश्य है। शत्रुओं की विशाल सेना समुद्र की तरह अथाह है। इसे उसी प्रकार पराजित करना होगा, जिस प्रकार समुद्र के भीतर की आग उसकी असीम जलराशि के भीतर रहने वाले असंख्य जीवों को जलाकर सुखा देती है। हे देशवासियो! तुम शूरवीर हो। सच्चा शूरवीर वही होता है जो मातृभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति के लिए तत्पर रहता है। इसी निष्ठा से कर्त्तव्य पथ पर तुम अपने कदम बढ़ाते चलो। तुम्हें विजय अवश्य प्राप्त होगी।

देश की स्वाधीनता के लिए हमारे पूर्वजों को एक लंबा संघर्ष करना पड़ा था। इसे प्राप्त करने के लिए असंख्य भारतीयों ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी थी। स्वाधीनता हमारे लिए बहुमूल्य है। इसलिए इसकी एकता और अखंडता को अक्षुण्ण बनाए रखना हम सभी भारतवासियों का प्रथम कर्त्तव्य है। हमारा देश आज राजनीतिक रूप से तो स्वतंत्र है किंतु सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से अभी भी हम पूरी तरह स्वतंत्र नहीं हैं। भूख, गरीबी, बेरोजगारी, हिंसा, भेदभाव आदि अनेक समस्याओं ने हमारे देश को आज भी जकड़ रखा है। गाँधीजी जिस स्वतंत्रता का स्वप्न देख रहे थे उसमें राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों की स्वतंत्रता समाहित थी। हम सभी भारतवासियों का दायित्व है कि पूर्ण स्वतंत्रता के उनके स्वप्नों को साकार करें।

टिप्पणी

(क) यह गीत एक सर्वकालिक प्रयाण गीत है। यह नाटक मौर्यकालीन भारत के लिए जितना प्रासंगिक है उतना ही स्वतंत्रता-आंदोलन के दौर में भी था और आज भी है।

(ख) 'असंख्य कीर्ति रश्मियाँ' के द्वारा कवि ने भारतीय वीरों के गौरवशाली इतिहास की ओर संकेत किया है।

(ग) कवि ने इस गीत के माध्यम से संकेत किया है कि मातृभूमि का सच्चा सपूत वही है जो इसकी रक्षा करता है तथा इसके मान-सम्मान के लिए अपने प्राणों को भी अर्पित कर देने में पीछे नहीं हटता है।

(घ) गीत की भाषा और शब्द-चयन छायावादी भाषा-संस्कारों से प्रभावित है। यहाँ तत्सम शब्दावली का प्रयोग भावों के अनुकूल हुआ है।

पाठगत प्रश्न 4.6

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

(1) शत्रुओं की विशाल सेना की तुलना की गई है–

(क) बड़वाग्नि से (ख) कीर्ति-रश्मियों से

(ग) समुद्र से (घ) दिलदाह से

(2) यह गीत जयशंकर प्रसाद की किस रचना से लिया गया है?

(क) ध्रुवस्वामिनी (ख) विशाखदत्त

(ग) स्कंदगुप्त (घ) चंद्रगुप्त

4.7 भाव तथा शिल्प-सौंदर्य

आपने पूरा पाठ पढ़ा। पढ़ते समय आपको यह अनुभव हुआ होगा कि देश के स्वाधीनता-आंदोलन को सफल बनाने के लिए साहित्यकार किस प्रकार राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत कविताएँ लिख रहे थे। इस तरह के प्रयाण गीतों के माध्यम से कवियों द्वारा जनमानस में एक नई चेतना का संचार किया गया।

भाव-सौंदर्य

यह कविता जयशंकर प्रसाद के उदात्त राष्ट्रप्रेम का एक उदाहरण है। इस कविता के माध्यम से व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के लिए स्वतंत्रता के महत्त्व को स्पष्ट किया गया है। यह हिंदी नवजागरण की प्रतिनिधि रचनाओं में से एक है। कविता की पंक्तियों से यह स्पष्ट है कि स्वतंत्रता का अपना ही एक प्रकाश होता है जिससे समाज और देश को एक नई ऊर्जा सही दिशा प्राप्त होती है। उस युग में भारतीयों के लिए पराधीनता से बड़ा कोई दु:ख नहीं था। कवि प्रसाद ने समूचे देश को पराधीनता से उबरने का संदेश देने का प्रयत्न किया है।

शिल्प-सौंदर्य

कविता में तत्सम शब्दावली का प्रयोग है यह छायावादी काव्यभाषा की सबसे बड़ी विशेषता थी। भाषा तत्सम प्रधान होते हुए भी भावों को पूरी सहजता के साथ व्यक्त करने में सफल हुई है। कविता की भाषा ओजगुण से युक्त है। योद्धाओं और जनमानस में उत्साह बढ़ाने के लिए इस प्रकार की भाषा का प्रयोग आवश्यक होता है। 'प्रशस्थ पुण्य-पंथ है' में 'प' वर्ण

की आवृत्ति के कारण अनुप्रास अलंकार का सौंदर्य है। जहाँ उपमेय की उपमान से समानता के आधार पर तुलना की जाती है, वहाँ उपमा अलंकार होता है। इस प्रकार 'विकीर्ण दिव्य दाह-सी' एवं 'सुबाड़वाग्नि से जलो' में उपमा अलंकार का सुंदर प्रयोग हुआ है। जहाँ गुणों की समानता के आधार पर उपमेय में उपमान का आरोप किया जाता है, अर्थात् दोनों में अभिन्नता दिखायी जाती है, वहाँ रूपक अलंकार होता है। शत्रुओं की सेना में समुद्र का आरोप होने के कारण 'अराति सैन्य-सिंधु, में रूपक अलंकार का सौंदर्य है। संगीतात्मकता और चित्रात्मकता जयशंकर प्रसाद की काव्यभाषा की विशेषता है। संगीत की दृष्टि से भी यह गीत एक श्रेष्ठ गीत है और दृश्य-विधान की दृष्टि से भी इसकी रचना सामूहिक गायन के लिए की गई है।

4.8 आपने क्या सीखा : चित्रात्मक प्रस्तुति

छायावादी काव्य

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

भाव-सौंदर्य

श्रमिक स्त्री के माध्यम से शोषितों का चित्रण

समानुभूति की अभिव्यक्ति

शिल्प-सौंदर्य

मुक्त छंद

सरल बोलचाल की भाषा

कहीं-कहीं तत्सम शब्द

जयशंकर प्रसाद

भाव-सौंदर्य

'चंद्रगुप्त' नाटक से लिया गया प्रयाण गीत

स्वतंत्रता की प्रेरणा

गौरवशाली इतिहास का उल्लेख

शिल्प-सौंदर्य

मातृभूमि की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य

छायावादी भाषा

4.9 सीखने के प्रतिफल

- पाठ्य-सामग्री में शामिल रचनाओं के साथ ही इतर रचनाओं-कविता, कहानी, एकांकी और समाचारपत्र पढ़ते हैं।
- विभिन्न साहित्यिक विधाओं को पढ़ते हुए उनके सौंदर्य पक्ष एवं व्याकरणिक संरचनाओं पर चर्चा करते हैं।

- हिंदी भाषा एवं साहित्य की परंपरा की समझ लिखकर, बोलकर एवं विचार-विमर्श के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं।
- भाषायी अभिव्यक्ति के विभिन्न माध्यमों से राष्ट्र के प्रति लगाव को अभिव्यक्त करते हैं।

4.10 योग्यता विस्तार

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

श्री सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म सन् 1899 में तत्कालीन बंगाल के मेदिनीपुर जिले के एक छोटे राज्य में हुआ था, जिसका नाम था – महिषादल। उनकी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। कुछ ही वर्षों के वैवाहिक जीवन के बाद उनकी पत्नी का निधन हो गया। परिवार में और भी अनेक संकट आए। कविता लिखने की उनकी शैली नई थी और संपादक प्रारंभ में उनकी कविता छापते नहीं थे। अत: उनके जीवन में आर्थिक अभाव भी बने रहे। अपने संघर्षपूर्ण जीवन के अनुभवों के कारण निराला ऐसे लोगों के दु:ख को अपना बना लेते हैं जो शोषित एवं अभावग्रस्त हैं। निराला संस्कृत, बांग्ला और अंग्रेज़ी भाषा के ज्ञाता थे तथा संगीत और दर्शन में भी उनकी रुचि थी। वे रूढ़ियों के विरोधी थे। उन्होंने हिंदी कविता को नया जीवन और नया मार्ग दिया। 'परिमल', 'अनामिका', 'तुलसीदास', 'नये पत्ते, 'राम की शक्ति पूजा', 'गीतिका' आदि उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। सन् 1961 में उनका निधन हो गया।

जयशंकर प्रसाद

छायावादी कविता के विकास में जयशंकर प्रसाद का विशिष्ट योगदान है। उनका जन्म 1889 ई. में काशी के एक संपन्न वैश्य परिवार में हुआ था। इनके पूर्वज 'सुंघनी साहु' के नाम से पूरे नगर में प्रसिद्ध थे। जयशंकर प्रसाद ने सातवीं कक्षा तक विद्यालय जाकर औपचारिक शिक्षा प्राप्त की थी। इसके बाद संस्कृत, हिंदी, उर्दू, अंग्रेज़ी आदि अनेक भाषाओं का ज्ञान उन्होंने घर पर रहकर ही प्राप्त किया। कवि प्रसाद आरंभ में ब्रजभाषा में ही कविताएँ लिखते थे। ब्रजभाषा में इन्होंने 'कलाधर' उपनाम से कविताएँ लिखीं। बाद में उन्होंने महावीर प्रसाद द्विवेदी से प्रेरित होकर खड़ी बोली में लिखना आरंभ किया। जयशंकर प्रसाद की शुरुआती दौर की रचनाओं का संकलन 'चित्राधार' है। उन्होंने 1914 ई. में 'महाराणा का महत्त्व' शीर्षक खंडकाव्य की रचना की थी। इससे पहले 1913 ई. में 'करुणालय' का प्रकाशन हो चुका था। जयशंकर प्रसाद का पहला छायावादी काव्यग्रंथ 'झरना' 1918 ई. में प्रकाशित हुआ। आगे चलकर छायावाद का विकास 'आँसू' (1925), 'लहर' (1933) और 'कामायनी' (1935) में देखने को मिला।

काव्य-रचनाओं के अतिरिक्त प्रसाद की ख्याति का आधार उनके ऐतिहासिक नाटक हैं। इन नाटकों में उनकी राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना प्रमुखता से व्यक्त हुई है। 'चंद्रगुप्त' नाटक देशप्रेम

की दृष्टि से उत्कृष्ट नाटक है। इस नाटक में दो बड़े मोर्चों पर भारतीयों के संघर्ष का वर्णन हुआ है। एक, विदेशी आक्रमणकारियों के विरुद्ध और दूसरा, विदेशी सत्ता के विरुद्ध। जयशंकर प्रसाद एक श्रेष्ठ कथाकार भी थे। उनका निधन 1937 ई. में हुआ।

4.11 पाठांत प्रश्न

1. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता का केंद्रीय भाव क्या है ?
2. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता के आधार पर शोषक और शोषित के जीवन का अंतर स्पष्ट कीजिए।
3. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता के आधार पर ग्रीष्म ऋतु की भीषणता का वर्णन कीजिए।
4. आपने भी अनेक श्रमिकों को काम करते देखा होगा। किसी श्रमिक को मेहनत करते हुए देखकर आप कैसा महसूस करते हैं? उल्लेख कीजिए।
5. सप्रसंग व्याख्या स्पष्ट कीजिए :

   (क) श्याम तन, भर बँधा यौवन,
   नत नयन प्रिय-कर्म-रत मन,

   गुरु हथौड़ा हाथ,
   करती बार-बार प्रहार,
   सामने तरु-मालिका, अट्टालिका, प्राकार।

6. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता के शिल्प-सौंदर्य पर टिप्पणी लिखिए।
7. प्रसाद की कविता में 'स्वयंप्रभा' एवं 'समुज्ज्वला' किसे कहा गया है?
8. 'असंख्य कीर्ति रश्मियाँ विकीर्ण दिव्य दाह-सी' का आशय स्पष्ट कीजिए।
9. 'प्रयाण गीत' किसे कहा जाता है?
10. वर्तमान समय में राष्ट्र के प्रति आपका क्या कर्त्तव्य है? अपने देश की सेवा आप किस प्रकार से कर सकते हैं?
11. यह कविता आज के संदर्भ में आपको किस प्रकार की प्रेरणा देती है? अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।
12. 'हिमाद्रि तुंग शृंग से' कविता की भाषा की दो विशेषताएँ लिखिए।

4.12 उत्तरमाला

बोध प्रश्नों के उत्तर 4.1

1. (ग)

2. (क)

3. (क)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

4.1 1. (ग) 2. (घ)

4.2 1. (घ) 2. (ग)

4.3 1. (ग) 2. (घ)

4.4 1. (ख) 2. (क)

4.5 1. (क) 2. (ख)

4.6 (1) ग (2) घ

बोध प्रश्नों के उत्तर 4.2

1. (ख)

2. (क)

5

उत्तर छायावादी कविता
(दिनकर और बच्चन)

हिंदी कविता में छायावाद के बाद की काव्यधाराएँ 'उत्तर छायावाद' और 'प्रगतिवाद' के नाम से प्रसिद्ध हैं। इनका आरंभ 1936 ई. के आस-पास छायावाद के अंत की घोषणा के साथ हुआ। उत्तर छायावादी युग की कविता में छायावाद की प्रवृत्तियों के साथ-साथ कुछ नवीन प्रवृत्तियाँ भी जुड़ गईं। इस युग की कविता में व्यक्तिगत अनुभूतियों के साथ ही मस्ती की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है। संकीर्णता का विरोध, नश्वरता की अनुभूति और तटस्थता का भाव भी इसमें मिलता है।

इस युग के एक प्रतिनिधि कवि बच्चन हैं। इनकी कविता की भाषा सहज, सरल और शैली गीतात्मक है। बच्चन आदि के समानांतर ऐसे प्रगतिवादी कवि भी लिख रहे थे जिनमें समाजवादी विचारधारा के प्रति गहरा आकर्षण था। आपने हिंदी की माध्यमिक पाठ्यपुस्तक में दो प्रगतिवादी कवियों– केदारनाथ अग्रवाल और नागार्जुन की कविताएँ पढ़ी हैं। इन कविताओं की प्रवृत्तियों से आप परिचित हो चुके हैं। प्रगतिवादी कविता समाज में शोषण का विरोध करती है, शोषित में शक्ति देखती है, सामाजिक-आर्थिक विषमता पर व्यंग्य करती है, प्रेम और सौंदर्य को सामाजिक मूल्यों से जोड़कर देखती है। श्रमिक वर्ग के प्रति गहरी संवेदनशीलता और समाज के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण इस कविता की प्रमुख विशेषता है। आइए, इस पाठ में हम उत्तर छायावाद के प्रमुख कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' और हरिवंश राय 'बच्चन' की कविताएँ पढ़ें और समझें।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- कविता में निहित दर्शन और विचारों की सराहना कर उन्हें प्रस्तुत कर सकेंगे;
- जीवन में समझौता करने की स्थितियों के गुण-दोष का उल्लेख कर सकेंगे;

- जीवन के उद्देश्य पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- भूत और भविष्य की चिंता से परे वर्तमान का महत्व स्पष्ट कर सकेंगे;
- कविता में प्रयुक्त लाक्षणिक प्रयोगों और प्रतीकों को स्पष्ट कर सकेंगे;
- कवि की ओजपूर्ण और दार्शनिक भाषा पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- पठित कविताओं के भाव एवं शिल्प-सौंदर्य का उल्लेख कर सकेंगे।

(क) रामधारी सिंह 'दिनकर'

5.1 मूल पाठ

चित्र 5.1 : रामधारी सिंह दिनकर

परशुराम के उपदेश

अब आप इस कविता को तीन-चार बार ओजपूर्ण स्वर में पढ़ जाइए-

(i)

वैराग्य छोड़ बाँहों की विभा सँभालो,
चट्टानों की छाती से दूध निकालो।
है रुकी जहाँ भी धार, शिलाएँ तोड़ो,
पीयूष चंद्रमाओं को पकड़ निचोड़ो।

चढ़ तुंग शैल-शिखरों पर सोम पियो रे!
योगियों नहीं, विजयी के सदृश जियो रे!

(ii)

स्वातंत्र्य जाति की लगन, व्यक्ति की धुन है,
बाहरी वस्तु यह नहीं, भीतरी गुण है।
नत हुए बिना जो अशनि-घात सहती है,
स्वाधीन जगत में वही जाति रहती है।

वीरत्व छोड़ पर का मत चरण गहो रे!
जो पड़े आन, खुद ही सब आग सहो रे!

(iii)

आँधियाँ नहीं जिसमें उमंग भरती हैं,
छातियाँ जहाँ संगीनों से डरती हैं,
शोणित के बदले जहाँ अश्रु बहता है,
वह देश कभी स्वाधीन नहीं रहता है।

पकड़ो अयाल, अन्धड़ पर उछल चढ़ो रे!
किरिचों पर अपने तन का चाम मढ़ो रे!

शब्दार्थ

विभा - चमक, कांति
पीयूष - अमृत, दूध
तुंग - ऊँचा
शैल-शिखर - पर्वत की चोटी
सोम - अमृत
अशनि-घात - वज्र के समान कठोर चोट
संगीन - नुकीला हथियार जो बंदूक के आगे लगाया जाता है।
शोणित - खून
अयाल - सिंह की गर्दन के बाल
किरिच - छोटी बरछी, पेट में घोंपी जाने वाली तलवार या कटार
चाम - चमड़ी, त्वचा, खाल

बोध प्रश्न 5.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. कवि ने किसके समान जीने के लिए कहा है–

   (क) वैरागियों के (ख) योगियों के

   (ग) विजयी के (घ) चट्टानों के

2. जाति की लगन और व्यक्ति की धुन किसे कहा गया है–

   (क) स्वातंत्र्य को (ख) भीतरी गुणों को

   (ग) वीरत्व को (घ) ओज को

3. कवि के अनुसार स्वाधीनता के लिए किसे बहा देना उचित है–

   (क) आँधियों को (ख) अश्रुओं को

   (ग) उमंग को (घ) ख़ून को

5.2 आइए समझें

अंश-1

प्रसंग : भारत पर चीन के आक्रमण के पश्चात् कवि ने देशवासियों को संबोधित करते हुए इस कविता की रचना की है। विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से कवि देशवासियों में उमंग और उत्साह भरते हुए वीरता का भाव जगाना चाहता है तथा देशवासियों से उद्यम और पराक्रम की अपेक्षा करते हुए वैराग्य छोड़ने की बात करता है।

व्याख्या : आप कविता के इस प्रथम अंश को ओजपूर्ण स्वर में पढ़कर इसकी व्याख्या पर ध्यान दीजिए–

वैराग्य छोड़ बाँहों की विभा सँभालो,
चट्टानों की छाती से दूध निकालो।
है रुकी जहाँ भी धार, शिलाएँ तोड़ो,
पीयूष चंद्रमाओं को पकड़ निचोड़ो।
चढ़ तुंग शैल-शिखरों पर सोम पियो रे!
योगियों नहीं, विजयी के सदृश जियो रे!

कवि का विचार है कि हमें समयानुसार आचरण करना चाहिए। वैराग्य धारण करना प्रत्येक परिस्थिति में ठीक नहीं है। इसलिए वह देशवासियों से कहता है– तुम वैराग्य छोड़ो, अपनी भुजाओं की शक्ति को पहचानो अर्थात् संसार के प्रति उदासीनता का मार्ग छोड़कर सकर्मक बनो। अपनी शक्ति के अनुरूप तलवार और बंदूक उठाओ और कठिन परिस्थितियों में भी अपना मार्ग खोजो। दुर्गम सीमाओं को पार करो और अपना लक्ष्य प्राप्त करो। ऐ देशवासियो!, योगी नहीं, वरन विजयी के समान जीना सीखो। 'विजयी के सदृश जियो रे!' पंक्ति में कवि देशवासियों को कर्मठ बनाना चाहता है। वह चाहता है कि देशवासी जीवन-संग्राम में अपने कर्त्तव्य पथ पर सदा विजयी बनें। इस पंक्ति में उपमा अलंकार का सौंदर्य भी दिखाई देता है।

योगी योग-ध्यान में लीन सांसारिक मोह से दूर चुप बैठा होता है, जबकि वीर विजय की लालसा में कर्त्तव्य-पथ पर चलता हुआ, विजय पताका फहरा कर ही दम लेता है।

कवि यहाँ कहना चाहता है कि संघर्ष की ज़रूरत के समय योगियों से देश का उद्धार नहीं होगा, वीरों से ही देश की रक्षा होगी। दोनों की विशेषताएँ इस प्रकार हैं-

योगी	**विजयी (कर्मवीर)**
योग, ध्यान में लीन	दृढ़निश्चयी
निर्मोही	निर्भीक
असांसारिक	वीर
निष्क्रिय	उत्साही
उदासीन	परिश्रमी

लेकिन कवि का तात्पर्य यह नहीं है कि हमेशा लड़ाई-झगड़े करते रहो। अहिंसा को त्यागने पर कवि का बल इसलिए है कि जब शत्रु हमारे ऊपर आक्रमण कर दे, तब भी अहिंसा के दर्शन पर अड़े रहना उचित नहीं होता। कभी-कभी देश की सुरक्षा, राष्ट्र की सुरक्षा के लिए हिंसा आवश्यक बन जाती है।

टिप्पणी

(क) 'बाँहों की विभा' से तात्पर्य है- भुजाओं की शक्ति। कवि यहाँ कहना चाहता है कि प्रत्येक देशवासी अपनी शक्तियों को पहचान कर उनका उपयोग करे।

(ख) 'चट्टानों की छाती से दूध निकालने' का अर्थ है-कठिन और दुर्गम परिस्थितियों में भी अपना लक्ष्य प्राप्त कर लेना।

(ग) 'पीयूष चंद्रमाओं को पकड़ निचोड़ो'– ऐसा माना जाता है कि शरद पूर्णिमा के दिन चंद्रमा से अमृत-वर्षा होती है। यहाँ कवि का तात्पर्य है कि चंद्रमा में जो अमृत-तत्त्व है, उसे पाने की चेष्टा करो अर्थात् ऊँचे से ऊँचा लक्ष्य बनाकर उसका बहुमूल्य तत्त्व पाने की कोशिश करो।

(घ) 'चढ़ तुंग शैल-शिखरों पर सोम पियो रे।'-जिस प्रकार कोई पर्वतारोही सबसे ऊँची चोटी पर चढ़कर अपनी विजय की पताका लहरा देता है और ऊँचाई का आनंद प्राप्त करता है, वैसे ही सभी बाधाओं को पार करके विजय का अमृतपान करो।

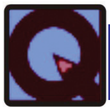

पाठगत प्रश्न 5.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. असंभव लगने वाले उद्देश्य को कैसे संभव बनाया जा सकता है–

(क) तपस्या करके (ख) शिलाएँ तोड़कर

(ग) भुजाओं के बल से (घ) सोच का पान करके

2. 'है रुकी जहाँ भी धार' प्रतीक है :

(क) पानी की धारा का

(ख) मार्ग में आने वाली बाधाओं का

(ग) नदी की धार के बीच में आई चट्टान का

(घ) रास्ते में पड़ने वाले तालाब का

टिप्पणी

अंश-2

प्रसंग : इस अंश में कवि स्वतंत्रता को मानव-जीवन के लिए अनिवार्य मानता है और कहता है कि उद्‌यमी लोग ही स्वतंत्रता की रक्षा कर सकते हैं। हम जानते हैं कि संसार में प्रत्येक प्राणी स्वतंत्र रहना चाहता है।

स्वातंत्र्य जाति की लगन, व्यक्ति की धुन है,
बाहरी वस्तु यह नहीं, भीतरी गुण है।
नत हुए बिना जो अशनि-घात सहती है,
स्वाधीन जगत में वही जाति रहती है।
वीरत्व छोड़ पर का मत चरण गहो रे!
जो पड़े आन, खुद ही सब आग सहो रे!

व्याख्या : जब पक्षी भी स्वतंत्र रहना चाहता है तो भला हम मानव स्वतंत्र क्यों नहीं रहना चाहेंगे? मनुष्य जब गुलाम होता है या उनकी स्वतंत्रता पर संकट मंडराता है, तो वह स्वतंत्र होने या स्वतंत्रता को बचाने के लिए क्या नहीं करता! भारतवासियों ने आज़ादी पाने के लिए अँग्रेज़ों से संघर्ष किया। आज़ाद होने के बाद भी इस देश पर संकट आया तो जागरूक लोगों ने स्वतंत्रता की चेतना का प्रचार किया। इसी भाव को कवि ने इन पंक्तियों में व्यक्त करते हुए कहा है-सभी मानव स्वतंत्र रहना चाहते हैं। यह मनुष्य जाति की लगन और प्रत्येक व्यक्ति की धुन या इच्छा है। उनकी सीखी हुई आदत नहीं, बल्कि मौलिक प्रवृत्ति है। संसार में वही राष्ट्र स्वतंत्र रह पाता है, जिसमें स्वाभिमान है, जो स्वतंत्रता के लिए बिना झुके मुसीबतों की चोट सह लेता है।

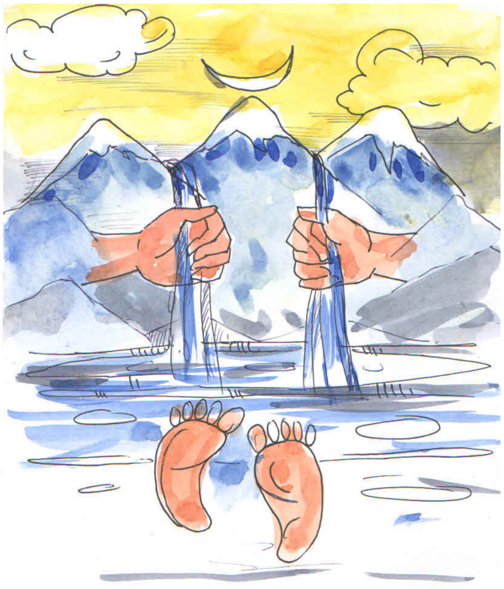

चित्र 5.2 : आजादी का संघर्ष

कवि आगे कहता है कि, ऐ देशवासियो! तुम वीरता छोड़कर दूसरों का पैर मत पकड़ो अर्थात् किसी की दासता मत स्वीकारो। आग से गुजरते हुए या कठिनाइयाँ सहते हुए अपनी आन बचाए रखो।

टिप्पणी

(क) 'अशनि-घात सहना'–कठोर से कठोर चोट सहना।

(ख) 'चरण गहना'–किसी के भरोसे रहना, दयनीय बन जाना।

(ग) 'आग सहना'–अग्नि से गुजरना या कठिनतम परिस्थितियों में से सफलपूर्वक निकलना।

अंश – 3

आँधियाँ नहीं जिसमें उमंग भरती हैं,
छातियाँ जहाँ संगीनों से डरती हैं
शोणित के बदले जहाँ अश्रु बहता है,
वह देश कभी स्वाधीन नहीं रहता है।
पकड़ो अयाल, अन्धड़ पर उछल चढ़ो रे!
किरिचों पर अपने तन का चाम मढ़ो रे!

अब आप इस पाठ के तीसरे अंश की ओर ध्यान दीजिए।

प्रसंग : इस अंश में कवि देशवासियों में उत्साह जगाते हुए कहता है कि देश को स्वाधीन रखने के लिए जोखिम एवं संघर्ष आवश्यक है।

व्याख्या : कवि कहता है कि वह देश जहाँ के लोगों में कठिनाइयों के आने पर उत्साह न जागे, जहाँ छातियाँ संगीनों के वारों से डर जाएँ, जहाँ के नागरिक खून बहाने के बदले आँसू बहाएँ, वह देश कभी स्वतंत्र नहीं रह सकता।

आगे कवि आह्वान करता कि शेर के अयाल (गर्दन के बाल) पकड़ने का साहस रखो, आँधियों पर सवारी करने का हौसला दिखाओ और किरिचों (घोंपने वाली तलवार या कटार) को अपनी खाल से मढ़ने की निर्भीकता का प्रदर्शन करो। अर्थ हुआ कि साहस, हौसला, चुस्ती-फुर्ती दिखाने के साथ-साथ अपने शरीर का बलिदान करने वाली निर्भीकता ही वीरत्व की पहचान है। जिस देश में ऐसे वीर होंगे, वही देश स्वाधीन रह सकता है।

आशय है कि ऐ देशवासियो! तुम शत्रु की गर्दन पकड़कर शत्रुसेना पर टूट पड़ो। इस क्रम में तुम भी क्षत-विक्षत हो सकते हो, मगर इसकी बिल्कुल भी परवाह न करो।

स्वाधीन रहने की कीमत मृत्यु भी हो तो उसका वरण करो।

टिप्पणी

(क) कवि ने 'आँधियों' का प्रयोग शत्रु सेना के लिए किया है। एक विशाल सेना जो आँधी की भाँति आगे बढ़ी चली आ रही हो। एक वीर उनको देखकर युद्ध के लिए उमंग से भर उठता है। यहाँ 'अन्धड़' शत्रु रूपी आँधी का प्रतीक है।

(ख) 'अयाल' सिंह की गर्दन के बालों को कहते हैं। जो शक्तिवान होता है वह सिंह के बालों को पकड़कर उसकी पीठ पर बैठ जाता है और सवारी करता है। कवि वीरों का आह्वान करता है कि तुम सिंह रूपी ताकतवर शत्रु को देखकर डरो मत, उस पर चढ़ बैठो।

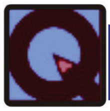

पाठगत प्रश्न 5.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. स्वतंत्र रहना मनुष्य का कौन-सा गुण है-

   (क) भीतरी (ग) अर्जित

   (ख) बाहरी (घ) क्षणिक

2. वीरों में उमंग तब उठती है जब वे-

   (क) शत्रु को आँधी के समान आता देखते हैं।

   (ख) शत्रु-सेना को भागते देखते हैं।

   (ग) रक्त की बजाए आँसू बहाते हैं।

   (घ) दुश्मन को पराजित होता देखते हैं।

5.3 भाव तथा शिल्प सौंदर्य

दिनकर अपने विशिष्ट काव्य-प्रयोगों से भाषा को लाक्षणिक बनाने में सिद्धहस्त हैं। वे ऐसे प्रयोगों की झड़ी लगा देते हैं; जैसे – बाँहों की विभा सँभालना, चट्टानों की छाती से दूध निकालना, चंद्रमाओं को पकड़ कर निचोड़ना आदि। किंतु ये प्रयोग मात्र चमत्कार पैदा करने के उद्देश्य से नहीं होते, बल्कि इससे भाषा और भावों की सामर्थ्य बढ़ जाती है।

वीरता और देशप्रेम दिनकर के काव्य का मूल स्वर है। प्रस्तुत रचना में दोनों का सुंदर समन्वय हुआ है। प्रत्येक पंक्ति प्रेरणा, उत्साह और उमंग से परिपूर्ण है।

परिस्थितियों की माँग को समझते हुए कवि ने वैराग्य का खंडन किया है और वीरता की भावना को जगाने के लिए लाक्षणिकता का सुंदर उपयोग किया है। स्वतंत्रता के महत्व को समझाते हुए उसकी रक्षा का भी ओजपूर्ण शब्दावली में आह्वान है।

दिनकर की कविताओं में भाषा का सुंदर प्रयोग मिलता है। भावानुरूप भाषा उनके संकेतों पर चलती दिखाई देती है। भाषा के तत्सम रूप के प्रयोग में वे अग्रणी दिखाई देते हैं; जैसे- विभा, शिला, शैल-शिखर पीयूष, वीरत्व, शोणित, अश्रु आदि।

कविता की लयात्मकता और गत्यात्मकता सराहनीय है, जिससे कविता के वाचन में अद्भुत आनंद आता है।

कविता की निम्नलिखित पंक्तियों पर ध्यान दीजिए, इनमें कवि ने लाक्षणिक प्रयोग किए हैं-

(क) वैराग्य छोड़ बाँहों की विभा सँभालो

(ख) पीयूष चंद्रमाओं को पकड़ निचोड़ो

(ग) किरिचों पर अपने तन का चाम मढ़ो रे !

(ख) हरिवंशराय 'बच्चन'

चित्र 5.3 : हरिवंशराय बच्चन

बच्चन जी ने अपनी रचनाओं में बेबाकी से अपने निजी जीवन का वर्णन किया है। 'क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं' कविता हरिवंशराय 'बच्चन' की कृति 'निशा-निमंत्रण' से ली गई है। 1937-38 में लिखी इस रचना में कवि ने अपने जीवन के अनुभव को उजागर किया है। कवि की यह रचना भारतीय नारी के अस्तित्व को अपने संसार में विलीन कर देने का एक मार्मिक उदाहरण है। सन् 1936 में बच्चन जी की पत्नी श्यामा का निधन हो गया। कवि को अपनी पत्नी से अत्यधिक लगाव था और उनके निधन से बच्चन जी का जीवन अवसादों से घिर गया था। उन्होंने माना कि श्यामा के साथ वह भी कुछ मर गए और उनमें श्यामा भी कुछ जीती रहीं। यही हम सभी के जीवन का सत्य है कि यदि हमारा आत्मीय जन नहीं रहता है, तो हमारे अंदर भी कुछ मर जाता है और हमारी स्मृतियों में भी प्रिय जीवित रहता है।

यह कविता किसी व्यक्ति की निजी गाथा नहीं, अपितु व्यक्ति के जीवन के कोमल-कठोर पक्षों को जीवंत करती कविता है। इसके साथ ही इससे जीवन जीने की अद्‌भुत सीख भी प्राप्त होती है।

जीवन में कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन्हें हम भूलना चाहते हैं और कुछ ऐसी होती हैं जिन्हें हम याद रखना चाहते हैं। हम उन बातों को भूलना चाहते हैं, जिनसे हमें कष्ट पहुँचता है और हम दुखी हो जाते हैं। इसके विपरीत जिन बातों को याद करने से हमें खुशी मिलती है, उन्हें हम बार-बार याद करना चाहते हैं। कवि हरिवंशराय 'बच्चन' ने भी अपने जीवन में अनेक उतार-चढ़ाव देखे। अपनी स्मृतियों के मधुर और कटु अनुभव को उन्होंने इस कविता में पिरोया है। सुख और दुख दोनों ही पक्षों की सुंदर अभिव्यक्ति इस कविता में मिलती है। कवि के समक्ष स्मृतियों (मधुर-कटु) के चयन का द्वंद्व है। कवि स्मृतियों से मुक्ति प्राप्त करना चाहता है।

5.4 मूल पाठ

आइए, कवि हरिवंशराय 'बच्चन' की कविता 'क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं' को पढ़ें-

क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं!
अगणित उन्मादों के क्षण हैं,
रजनी की सूनी घड़ियों को, किन-किन से आबाद करूँ मैं!
क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं!

याद सुखों की आँसू लाती,
दुख की, दिल भारी कर जाती,
दोष किसे दूँ जब अपने से अपने दिन बर्बाद करूँ मैं!
क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं!

दोनों करके पछताता हूँ,
सोच नहीं, पर, मैं पाता हूँ,
सुधियों के बंधन से कैसे अपने को आज़ाद करूँ मैं!
क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं!

बोध प्रश्न 5.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. कवि अपने को किसके बंधन से आज़ाद न कर पाने की विवशता व्यक्त कर रहा है–

   (क) भूलने के

   (ख) दुख के

   (ग) सुख के

   (घ) यादों के

2. आँखों में आँसू कब आते हैं?

   (क) सुखों के याद आने पर

   (ख) दुखों के याद आने पर

   (ग) उन्माद की अवस्था में

   (घ) रात्रि के होने पर

5.5 आइए समझें

अंश-1

कविता के इस अंश को एक बार फिर से पढ़ लीजिए।

प्रसंग – आपने देखा कि यह कविता जीवन के उन्माद और अवसाद पर आधारित है। अतीत में कवि के लिए कुछ सुखमय, प्रेम के क्षण रहे हैं, जो बीत चुके हैं। पहली ही पंक्ति में कवि ने अपनी स्मृति में बसी हुई कटु और मधुर यादों को पुनः स्मरण करने और न करने की

टिप्पणी

शब्दार्थ

अगणित–जिसे गिना न जा सके
उन्माद–प्रेम किसी भाव की अतिशयता, अत्यधिक प्रेम
क्षण–पल, थोड़ी देर
अवसाद–विषाद, दुख, सुस्ती,
रजनी–रात
घड़ी–समय, अवसर, वक्त
आबाद–चहल-पहल
दिल भारी होना–दुख का अनुभव करना
सुधि–चेतना, होश, याद
सुधियों के बंधन–यादों से छुटकारा न पाना।

क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं!
अगणित उन्मादों के क्षण हैं,
रजनी की सूनी घड़ियों को,
किन-किन से आबाद करूँ मैं!
क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं!

किंकर्त्तव्यविमूढ़ता दर्शाई है। कवि 'मैं' के माध्यम से समाज के प्रत्येक व्यक्ति के मनोभावों को अभिव्यक्त कर रहा है। वह स्मृतियों के द्वंद्व से मुक्ति की कामना करता है।

व्याख्या–कवि ने इन पंक्तियों के माध्यम से जीवन के दोनों पक्षों – सुख और दुख के मर्म को प्रस्तुत किया है। कवि का मानना है कि जीवन में ऐसे अनगिनत क्षण हैं जो उसे सुख प्रदान करते हैं, जो जीवन में नई ऊर्जा का संचार करते हैं, उत्साहित और उल्लसित करते हैं। साथ ही, वह अवसादों के क्षणों को भी याद करता है। कवि के जीवन में ऐसे अनगिनत क्षण आते हैं जब वह अवसादों से घिर जाता है और बहुत दुखी और उदास हो जाता है।

कवि ने इन पंक्तियों के माध्यम से मनुष्य के जीवन के सुख-दुख – दोनों पक्षों की बात की है। 'मैं' का प्रयोग कवि के साथ ही समाज के किसी भी व्यक्ति के लिए हो सकता है। कवि कि यह वेदना है कि रात्रि के समय जब चारों ओर चुप्पी का वातावरण छा जाता है, शांति हो जाती है, उस समय किन बातों को याद करके वह अपना समय व्यतीत करे। उन्माद और अवसाद दोनों ही कवि को इस एकांत व सूनेपन में पीड़ा पहुँचा रहे हैं। वह असमंजस की स्थिति में है कि अकेलेपन में खुशी के क्षणों को याद करे या दुख के। सच तो यह है कि वह कुछ भी भूल नहीं पा रहा इसीलिए भूलने और याद करने की दुविधा में है।

टिप्पणी

(क) आप जानते हैं कि जहाँ एक ही वर्ण की आवृत्ति होती वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है। 'अगणित अवसादों के क्षण हैं' में 'अ' वर्ण की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार है।

(ख) जहाँ एक ही शब्द की बार-बार आवृति होती है, वहाँ पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार होता है। 'रजनी की सूनी घड़ियों को किन-किन से आबाद करूँ मैं' पंक्ति में 'किन-किन' शब्दों की आवृत्ति के कारण पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(ग) खड़ी बोली के सरल शब्दों का प्रयोग किया गया है।

(घ) भाषा भावानुकूल एवं प्रवाहमयी है।

(ङ) इस कविता में बार-बार 'क्या' और 'किन' शब्दों के प्रयोग सार्थक हैं। यहाँ कवि प्रश्न नहीं कर रहा है, बल्कि वह कह रहा है कि याद करने को उसके पास बहुत कुछ है।

पाठगत प्रश्न 5.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. कवि ने उन्मादों के क्षण कहा है–

   (क) याद करने को   (ख) भूलने को

   (ग) स्मृतियों को   (घ) सूनेपन को

2. प्रस्तुत पंक्तियों में 'किन-किन' का प्रयोग हुआ है–

(क) भूलों के लिए (ख) सूनी घड़ियों के लिए

(ग) रजनी के लिए (घ) उन्माद के क्षणों के लिए

अंश-2

आइए, अगली चार पंक्तियों को पुनः पढ़ें और समझें–

याद सुखों की आँसू लाती,
दुख की, दिल भारी कर जाती,
दोष किसे दूँ जब अपने से अपने
दिन बर्बाद करूँ मैं!
क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं!

प्रसंग– कवि के जीवन में सुख-दुख दोनों रहे हैं। वर्तमान में सुख-दुख को याद करता है, तो उसे उदासी घेर लेती है। इस उदासी का कारण वह अपने को ही मानता है।

चित्र 5.3 : एक दुखी व्यक्ति

व्याख्या– आप इस बात से सहमत होंगे कि आँसू प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के सच्चे साथी होते हैं, क्योंकि ये हर समय साथ देते हैं– चाहे सुख का समय हो या दुख का। हमारे जीवन में हमारा प्रिय या संबंधी यदि हमारे पास नहीं होता, तो उसके साथ बिताए गए अच्छे समय की यादें भी आँखों में आँसू ले आती हैं। ये आँसू खुशी के होने के साथ-साथ दुख भी लिए हुए होते हैं। कवि बच्चन ने इसी मनोभाव को स्पष्ट करते हुए कहा है कि सुख में बीते हुए समय को याद करके भी व्यक्ति की आँखों में आँसू आ जाते हैं, क्योंकि उसे ऐसा लगता है कि जो खुशी के पल बीत चुके हैं वे अब दोबारा वापस नहीं आ सकते। सुख के बीते पलों के साथ दुख के वर्तमान दिनों को जोड़ देने से मन व्यथित हो जाता है। पीड़ा में डूबे व्यक्ति के लिए स्वयं को मानसिक और शारीरिक– दोनों ही रूपों से संभालना कठिन हो जाता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति अपने वर्तमान के साथ तालमेल नहीं बैठा पाता और अपने कर्त्तव्य को भी नहीं निभा पाता। संवेदनशील कवि इस स्थिति को भली-भाँति समझते हैं इसीलिए वे अपने निजी जीवन के अनुभवों से बहुत दुखी होते हैं। परंतु केवल दुखी रहने से और अवसादों से घिरे रहने से जीवन व्यतीत करना संभव नहीं है, इसलिए कवि का मानना है कि मैं खुद ही अपने वर्तमान को नष्ट कर रहा हूँ। इसका आशय यह कि व्यक्ति खुद ही अपने आपको कष्ट देकर अपना समय बर्बाद कर रहा है। इन पंक्तियों के माध्यम से कवि यह सीख देना चाहता है कि जीवन के अवसादों से निकलकर वर्तमान में जीवन-यापन करना ही श्रेयस्कर है, क्योंकि जो कुछ बीत चुका उसे बदला नहीं जा सकता। अपने वर्तमान समय को व्यर्थ करके, कर्तव्यों से भागकर जीवन में कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 5.4

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. प्रस्तुत अंश में कवि किसे दोष देता है–

   (क) स्वयं को (ख) भूलों को

   (ग) दुख को (घ) आँसुओं को

2. दुखों की याद कवि पर क्या प्रभाव डालती है–

   (क) उसकी आँखों में आँसू दे जाती है।

   (ख) वह दूसरों को दोष देने लगता है।

   (ग) उसका मन व्यथा में डूब जाता है।

   (घ) उसका दिल भारी कर जाती है।

अंश-3

कविता के शेष अंतिम अंश को एक बार फिर से पढ़ लीजिए।

दोनों करके पछताता हूँ,
सोच नहीं, पर, मैं पाता हूँ,
सुधियों के बंधन से कैसे अपने को आज़ाद करूँ मैं!
क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं!

प्रसंग – इन पंक्तियों में कवि ने उन्माद और अवसाद के क्षणों को याद करते हुए मन पर होने वाले प्रभाव को व्यक्त किया है। यहाँ वह स्वयं को यादों के बंधन से छुटकारा पाने का रास्ता ढूँढ रहा है।

व्याख्या – कवि के सुख और दुख की स्मृतियों में डूबे रहने से केवल दुख ही प्राप्त होता है। स्मृतियाँ चाहे सुख की हों या दुख की, कवि का मानना है कि इन्हें याद करके केवल पछतावा होता है, क्योंकि वह इन पलों को अपने जीवन में वापस कभी भी नहीं ला सकता। इतना सब समझते हुए कवि अपनी विवशता को व्यक्त करता है। जानते हैं कि यह विवशता क्या है? यह है–यादों के बंधन से स्वयं को मुक्त न कर पाना। कवि ने बड़े ही मार्मिक तरीके से इस बात को कहा है कि यादों से छुटकारा पाना उसके वश में नहीं है। ऐसा नहीं कि यह कवि के साथ ही हो रहा है। यह सभी के साथ होता है। हमारे साथ भी। कवि ने बड़े प्रभावी तरीके से जीवन पर यादों के पड़ने वाले प्रभाव को यहाँ व्यक्त किया है।

टिप्पणी–

(क) इस कविता में, कवि ने शब्दों का संकेतात्मक प्रयोग किया है। 'सुख' और 'दुख' का अर्थ है– 'सुख के दिन' और 'दुख के दिन'।

(ख) आप जानते हैं कि कवि ने 'दिल भारी होना' मुहावरे का प्रयोग किया है। इसका अर्थ है–दुखी होना या उदास हो जाना।

(ग) लाक्षणिकता का प्रयोग भी इस कविता में है जब कवि कहता है–'सुधियों के बंधन से कैसे अपने को आजाद करूँ मैं!' इसका अर्थ है कि कवि पर यादें बहुत अधिक प्रभाव डाल रही हैं, वह पुरानी यादों से मुक्त नहीं हो पा रहा।

5.6 भाव-सौंदर्य

हर अनुभवी व्यक्ति के जीवन में ऐसा समय आता है जब वह अतीत के अनगिनत सुख-दुख वाले दिनों को याद करता है। इन दिनों को याद करके वह वर्तमान में प्रसन्न होता है या उदास होता है। उदासी या दुख भाव की प्रभावशाली अभिव्यक्ति इस कविता में हुई है। कवि ने बड़े मार्मिक ढंग से इस बात की अभिव्यक्ति की है कि स्मृतियों या यादों से छुटकारा पाना किसी के लिए संभव नहीं होता। वर्तमान के सूनपने में स्मृतियाँ हलचल भर देती हैं।

5.7 शिल्प-सौंदर्य

इस भावुकतापूर्ण कविता की भाषा सहज-सरल है। इसमें संकेतात्मक शब्दों का प्रयोग हुआ है। लाक्षणिकता भी है। 'अनुप्रास' एवं 'पुनरुक्ति-प्रकाश' अलंकार हैं। 'दिल भारी होना' मुहावरा है। कविता की पंक्तियाँ प्रश्नात्मक हैं, पर वे प्रश्न न होकर 'बहुत कुछ' होने को अभिव्यक्त करती हैं।

पाठगत प्रश्न 5.5

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. कवि के प्रस्तुत अंश में अधिकता है–

    (क) क्रोध की　　(ख) नाराजगी की

    (ग) ईर्ष्या की　　(घ) विवशता की

2. कवि स्वयं को किसके बंधन में पाता है–

    (क) अतीत की यादों के　　(ख) सोच न पाने के

    (ग) भूलने के　　(घ) पछतावे के

5.8 आपने क्या सीखा : चित्रात्मक प्रस्तुति

उत्तर छायावादी कविता

रामधारी सिंह 'दिनकर'	**हरिवंश राय 'बच्चन'**
भाव-सौंदर्य :	भाव-सौंदर्य :

- देशप्रेम, वीरता और ओज का समन्वय
- प्रेरणा, उत्साह और उमंग
- वैराग्य का खंडन

शिल्प-सौंदर्य :

- लाक्षणिकता
- ओजपूर्ण शब्दावली
- तत्सम शब्दावली
- लयात्मकता एवं गत्यात्मकता

- स्मृतियों का प्रभाव
- सुख-दुख की साथ-साथ अनुभूति
- वर्तमान के सूनेपन में स्मृतियों की हलचल
- स्मृतियों से छुटकारा संभव नहीं

शिल्प-सौंदर्य :

- सहज-सरल भाषा
- लाक्षणिकता
- सांकेतिकता
- प्रश्नात्मक शैली
- अनुप्रास और पुनरुक्ति-प्रकाश अलंकार

5.9 सीखने के प्रतिफल

- अपने साथियों के समक्ष अपने भावों की ज़रूरतों को अपनी भाषा में अभिव्यक्त करते हैं।
- नई रचनाएँ पढ़कर उन पर साथियों से बातचीत करते हैं।
- कविता को अपनी समझ के आधार पर नए रूप में प्रस्तुत करते हैं।
- विभिन्न साहित्यिक विधाओं को पढ़ते हुए, उनके सौंदर्य-पक्ष एवं व्याकरणिक संरचनाओं पर चर्चा करते हैं।
- राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों, घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को बोलकर/लिखकर व्यक्त करते हैं।
- भाषायी अभिव्यक्ति के विभिन्न माध्यमों से राष्ट्र के प्रति लगाव को अभिव्यक्त करते हैं।

5.10 योग्यता विस्तार

(क) कवि-परिचय : रामधारी सिंह 'दिनकर'

रामधारी सिंह 'दिनकर का' जन्म 1908 ई. में सिमरिया, ज़िला मुंगेर में हुआ। उन्होंने बी. ए. तक पटना विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त की और सीतामढ़ी में सब-रजिस्ट्रार पद पर कार्य प्रारंभ किया। वे राज्यसभा के सदस्य (1952-1964) रहे और भागलपुर विश्वविद्यालय के कुलपति (1964-1965) तथा भारत सरकार में हिंदी सलाहकार (1965-1971) के पद पर कार्यरत रहे। उनकी लगभग 50 कृतियाँ प्रकाशित हैं।

हिंदी काव्य-जगत को छायावादी प्रभाव से मुक्त करने वाले कवियों में दिनकर का नाम प्रमुख है। दिनकर की प्रवाहमयी ओजस्विनी कविताओं का हिंदी साहित्य में विशिष्ट महत्व है। उनके प्रमुख प्रबंध-काव्यों में कुरुक्षेत्र (1946 ई.), रश्मिरथी और उर्वशी (1961 ई.) शामिल हैं।

उनकी गद्य-रचनाओं में 'संस्कृति के चार अध्याय' प्रमुख है। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'मिट्टी की ओर', 'काव्य की भूमिका'; 'पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण गुप्त', 'शुद्ध कविता की खोज' आदि अनेक समीक्षात्मक निबंध भी लिखे। उनका देहावसान सन् 1974 में हुआ।

(ख) हरिवंशराय 'बच्चन'

हरिवंशराय 'बच्चन' का जन्म 27 नवंबर, 1907 में हुआ। वे उत्तर छायावाद के प्रमुख कवियों में हैं। 'मधुशाला' उनकी लोकप्रियता का आधार है। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अंग्रेज़ी का अध्ययन किया। उसके बाद वे भारत सरकार के विदेश मंत्रालय में हिंदी विशेषज्ञ रहे। वे राज्यसभा के मनोनीत सदस्य भी रहे।

बच्चन जी ने अनेक विधाओं में लेखन किया। 'मधुशाला', 'मधुबाला', 'मधुकलश', 'निशा निमंत्रण', 'सतरंगिनी', 'खादी के फूल', 'बुद्ध और नाचघर' (सभी कविता-संग्रह) और 'क्या भुलूँ क्या याद करूँ', 'नीड़ का निर्माण फिर', 'बसेरे से दूर', 'दशद्वार थे सोपान तक' (आत्मकथा) उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं। बच्चन जी को अनेक पुरस्कार एवं सम्मान मिले, जो हैं–साहित्य अकादमी सम्मान, सोवियत लैंड नेहरू सम्मान, सरस्वती सम्मान एवं पद्म भूषण। 18 जनवरी, 2003 को मुंबई में उनका देहांत हुआ।

5.11 पाठांत प्रश्न

1. कवि दिनकर देशवासियों को योगी के स्थान पर विजयी बनने का संदेश क्यों दे रहे हैं? प्रस्तुत कीजिए।
2. दिनकर की कविता में अनेक स्थानों पर लाक्षणिक प्रयोग हुआ है। ऐसी चार पंक्तियों का उल्लेख कीजिए।
3. स्वाधीनता हमारे लिए क्यों आवश्यक है? 'परशुराम के उपदेश' के आधार पर किन्हीं दो बिंदुओं का उल्लेख कीजिए।
4. स्वाधीनता और उद्यम का क्या संबंध है? उल्लेख कीजिए।
5. सप्रसंग व्याख्या कीजिए :

   वैराग्य छोड़ बाँहों की विभा सँभालो,
   चट्टानों की छाती से दूध निकालो।

है रुकी जहाँ भी धार, शिलाएँ तोड़ो,
पीयूष चंद्रमाओं को पकड़ निचोड़ो।

6. 'अगणित उन्मादों के क्षण' से कवि का क्या आशय है?

7. 'सुधियों' को 'बंधन' क्यों कहा गया है?

8. 'क्या भूलूँ, क्या याद करूँ' एक भावुकतापूर्ण कविता क्यों है?

9. 'क्या भूलूँ, क्या याद करूँ' कविता में कवि की विवशता की अभिव्यक्ति किस प्रकार हुई है?

10. 'क्या भूलूँ, क्या याद करूँ' कविता की भाषा की दो विशेषताएँ लिखिए।

5.12 उत्तरमाला

बोध प्रश्न 5.1

1. (ग)

2. (क)

3. (घ)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

5.1 1. (ग) 2. (ख)

5.2 1. (क) 2. (क)

बोध प्रश्न 5.2

1. (घ) 2. (क)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

5.3 1. (ग) 2. (घ)

5.4 1. (क) 2. (घ)

5.5 1. (घ) 2. (क)

6

नयी कविता
(अज्ञेय और भवानीप्रसाद मिश्र)

हिंदी कविता के इतिहास में 'नयी कविता' का आरंभ सन् 1950 के बाद हुआ। यह कविता प्रगतिवाद और प्रयोगवाद की विशेषताओं को साथ लेकर चली। लेकिन आगे चलकर इसने अपनी अलग पहचान बनाई। यह पहचान 'नयी कविता' पत्रिका के प्रकाशन काल (1954 ई.) से और स्पष्ट हुई। इसने नए भावबोध की अभिव्यक्ति के साथ नए मूल्यों और नए शिल्प-विधान का अन्वेषण किया। इस कविता ने कविता के परंपरागत संकीर्णताओं से अपने को मुक्त रखने की बात की। वस्तुतः कथ्य की व्यापकता और दृष्टि की उन्मुक्तता नयी कविता की सबसे बड़ी विशेषता है। इस कविता में दो तत्त्व प्रमुख हैं, एक-अनुभूति की सच्चाई और दूसरा-बौद्धिक यथार्थवादी दृष्टि। नयी कविता के कवि जीवन के प्रत्येक क्षण को जीने की लालसा रखते हैं। उनके लिए जीवन का हर क्षण सत्य है। इसलिए यह कविता अनुभूति को मार्मिकता के साथ पकड़ लेना चाहती है। नयी कविता के अंतर्गत आनेवाली अनेक कविताएँ आकार में छोटी हैं और प्रभाव में अत्यंत तीव्र। उसकी एक विशेषता यह भी है कि इसकी यथार्थवादी दृष्टि जीवन का मूल्य, उसका सौंदर्य, जीवन में ही खोजती है। आगे चलकर नयी कविता दो धाराओं में बँट गई—एक जिसमें वैयक्तिकता प्रमुख थी और जिसके प्रतिनिधि अज्ञेय थे और दूसरी वह जिसमें सामाजिक प्रतिबद्धता की प्रमुखता थी और जिसके प्रतिनिधि मुक्तिबोध थे।

आइए, इस पाठ में हम इस धारा के दो प्रमुख कवियों सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' और भवानीप्रसाद मिश्र की कविताएँ पढ़ते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- 'नदी के द्वीप' कविता में अभिव्यक्त व्यक्ति की स्वतंत्रता और अस्मिता का विवेचन कर सकेंगे;

- व्यक्ति, संस्कृति और समाज के अंतर्संबंधों पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- मानव जीवन में प्रकृति की भूमिका का उल्लेख कर सकेंगे;
- पर्यावरण-संरक्षण में अपनी भूमिका को अभिव्यक्त कर सकेंगे;
- प्रकृति के सौंदर्य और आदिवासी जीवन और संस्कृति के स्वरूप पर उपभोक्तावाद के प्रभाव का विश्लेषण कर सकेंगे।
- पठित कविताओं की भाषा-शैली और शिल्प-सौंदर्य की सराहना कर सकेंगे।

6.1 मूल पाठ

(क) सच्चिदानन्द हीरानंद वात्स्यांन 'अज्ञेय'

नदी के द्वीप

आइए, अज्ञेय की कविता को एक बार लय के साथ पढ़ लें-

चित्र 6.1: अज्ञेय

हम नदी के द्वीप हैं।
हम नहीं कहते कि हमको छोड़ कर स्रोतस्विनी बह जाय।
वह हमें आकार देती है।
हमारे कोण, गलियाँ, अंतरीप, उभार, सैकत कूल,
सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी हैं।

माँ है वह है, इसी से हम बने हैं।

किन्तु हम हैं द्वीप।
हम धारा नहीं हैं।
स्थिर समर्पण है हमारा। हम सदा से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के
किन्तु हम बहते नहीं हैं। क्यों कि बहना रेत होना है।
हम बहेंगे तो रहेंगे ही नहीं।

पैर उखड़ेंगे। प्लावन होगा। ढहेंगे। सहेंगे। बह जायेंगे।
और फिर हम चूर्ण होकर भी कभी क्या धार बन सकते?
रेत बन कर हम सलिल को तनिक गँदला ही करेंगे।
अनुपयोगी ही बनायेंगे।

द्वीप हैं हम।
यह नहीं है शाप। यह अपनी नियति है।
हम नदी के पुत्र हैं। बैठे नदी के क्रोड़ में।
वह बृहद् भूखंड से हमको मिलाती है।
और वह भूखंड अपना पितर है।

नदी, तुम बहती चलो।
भूखंड से जो दाय हम को मिला है, मिलता रहा है,

शब्दार्थ

द्वीप - स्थल का वह भाग जिसके चारों तरफ पानी हो
स्रोतस्विनी - नदी
अंतरीप - भूमि का वह नुकीला भाग जो समुद्र में दूर तक चला जाता है
उभार - उठान
सैकत कूल - रेतीला किनारा
धारा - प्रवाह, पानी का बहना
प्लावन - बाढ़, पानी में डूब जाना
चूर्ण - महीन रेत
सलिल - पानी
गँदला - गंदा
नियति - प्रकृति का विधान जो स्थिर और निश्चित होता है, भाग्य
क्रोड़ - गोद, बीच में
बृहद - विशाल
भूखंड - धरती का टुकड़ा
पितर - पिता
दाय - दान, प्राप्त किया हुआ
आह्लाद - आनंद
स्वैराचार - स्वेच्छाचार
अतिचार - अतिक्रमण, मर्यादा तोड़ना

माँजती, संस्कार देती चलो:
यदि ऐसा कभी हो
तुम्हारे आह्लाद से या दूसरों के किसी स्वैराचार से-अतिचार से-

तुम बढ़ो, प्लावन तुम्हारा घरघराता उठे,
यह स्रोतस्विनी ही कर्मनाशा कीर्तिनाशा घोर
काल-प्रवाहिनी बन जाय
तो हमें स्वीकार है वह भी। उसी में रेत होकर
फिर छनेंगे हम। जमेंगे हम। कहीं फिर पैर टेकेंगे।
कहीं फिर भी खड़ा होगा नये व्यक्तित्व का आकार।
मात:, उसे फिर संस्कार तुम देना।

चित्र 6.2: नदी के द्वीप

शब्दार्थ

घरघराता - नदी के तेज प्रवाह से उत्पन्न भीषण ध्वनि
कर्मनाशा - नदी का नाम
कीर्तिनाशा - यश का नाश करने वाली
घोर - प्रचंड, भीषण
काल-प्रवाहिनी - भयंकर प्रवाह वाली

बोध प्रश्न 6.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. कविता में किसके लिए 'माँ' शब्द का प्रयोग किया गया है ?

   (क) नदी (ख) धारा (ग) जल (घ) द्वीप

2. नदी के लिए किस अन्य शब्द का प्रयोग किया गया है ?

   (क) स्रोतस्विनी (ख) अंतरीप (ग) प्लावन (घ) संस्कार

3. 'पितर' किसे कहा गया है?

   (क) किनारे को (ख) भूखंड को (ग) समर्पण को (घ) श्राप को

6.2 आइए समझें

कविता पढ़कर आप जान चुके हैं कि इसमें प्रतीकों के माध्यम से एक विचार संप्रेषित किया गया है। कविता की आरंभिक पंक्तियों में नदी के मध्य बने द्वीप का बिंब है। इसमें नदी से द्वीप बनने की सहज प्रक्रिया का उल्लेख है। लेकिन आगे जब इन प्रतीकों का अर्थ खुलता है तो यह कविता बोध के स्तर पर एक अलग अर्थ संप्रेषित करती है। इस कविता में आए प्रतीकों के अर्थ को आरंभ में ही जान लेना आवश्यक है। इससे कविता को समझने में आसानी होगी। कविता में आए 'नदी', 'द्वीप' और 'भूखंड' शब्द का प्रयोग प्रतीक के अर्थ में हुआ है। 'नदी' का प्रयोग माँ और संस्कृति के अर्थ में, 'द्वीप' का शिशु और व्यक्तित्व के अर्थ में और 'भूखंड' का पिता और समाज के अर्थ में प्रयोग हुआ है। कविता में प्रतीकों का एक स्तर प्राकृतिक है (द्वीप, नदी, भूखंड) दूसरा स्तर मानवीय है (शिशु, माँ, पिता)। ये दोनों स्तर मिलकर प्रकृति और मनुष्य के संबंध को स्पष्ट करते हैं।

टिप्पणी

हम नदी के द्वीप हैं।
हम नहीं कहते कि हम को छोड़
कर स्रोतस्विनी बह जाय।
वह हमें आकार देती है।
हमारे कोण, गलियाँ, अंतरीप, उभार,
सैकत कूल,
सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी है।
माँ है वह। है, इसी से हम बने हैं।

आइए, इस कविता को समझते हैं।

अंश–1

हम नदी के द्वीप .... हम बने हैं।

आइए, कविता के पहले अंश को पढ़ते हैं।

प्रसंग : इस अंश में द्वीप नदी को अपनी माँ के रूप में देखता है और अपने स्वरूप ग्रहण करने की प्रक्रिया का उल्लेख करता है।

व्याख्या : आप जानते हैं कि द्वीप उस स्थल को कहते हैं जो चारों तरफ से पानी से घिरा होता है। ऐसे द्वीप नदियों में भी बने होते हैं। इन्हें नदियाँ अपनी धारा के साथ लायी मिट्टी और रेत के कणों से धीरे-धीरे रूप और आकार देकर निर्मित करती हैं। अपना रूप और आकार ग्रहण कर लेने के बाद ये द्वीप नदी की धारा में रहते हुए भी उसकी धारा से स्वतंत्र अपनी अलग पहचान बना लेते हैं। वे यह नहीं चाहते कि नदी की धारा इन्हें छोड़कर बह जाए। इसलिए कि द्वीप जानते हैं कि नदी के बिना इनका कोई अस्तित्व नहीं है। द्वीप इस सत्य से इनकार नहीं कर सकते कि इनके रूप और आकार में कोण, गलियाँ, उभार, रेतीले किनारे और गोलाइयों का जो सौंदर्य है; वह सब प्रवाहमान नदी ने ही गढ़े हैं। नदी से अपना अस्तित्व प्राप्त करने वाले द्वीप, नदी को अपनी माँ के रूप में देखते हैं।

कविता की इन पंक्तियों में नदी माँ का प्रतीक है और द्वीप उसके शिशु का। जिस प्रकार माँ अपने गर्भ में शिशु को धारण करके उसे रूप-आकार देकर जन्म देती है उसी प्रकार नदी भी द्वीप को रूप और आकार देकर उसे गढ़ती है। जिस प्रकार धीरे-धीरे शिशु अपनी माँ से भिन्न अपनी एक अलग पहचान प्राप्त करता है, उसी प्रकार द्वीप भी नदी से भिन्न अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्राप्त करता है।

कविता की इन आरंभिक पंक्तियों में कवि का उद्देश्य नदी और द्वीप के सामान्य प्राकृतिक अर्थ को अभिव्यक्त करना नहीं है। बल्कि यहाँ 'नदी' और 'द्वीप' का प्रयोग प्रतीकात्मक अर्थ में किया गया है। कवि बताना चाहता है कि जैसे नदी द्वीप के रूप, आकार और सौंदर्य को गढ़ती है और उसे एक 'स्वरूप' प्रदान करती है, एक पहचान देती है, उसी प्रकार माँ अपनी ममता, प्रेम और परिश्रम से अपने शिशु का पालन-पोषण कर उसके शरीर को पुष्ट आकार और चेतना को उत्तम संस्कार देकर उसे 'व्यक्तित्व' प्रदान करती है। जिससे वह समाज में अपनी स्वतंत्र पहचान प्राप्त करने में सक्षम होता है। कवि बल देते हुए कहता है कि नदी द्वीप को जन्म देने वाली उसकी माँ है।

पाठगत प्रश्न 6.1

उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. द्वीप नदी को माँ के रूप में देखते हैं, क्योंकि–

(क) द्वीप चारों तरफ से पानी से घिरा होता है

(ख) नदी से ही द्वीप निर्मित होते हैं

(ग) नदी माँ का प्रतीक है

(घ) द्वीप नदियों में बने होते हैं

2. संस्कृति का एक गुण है –

(क) उत्पन्न (ख) स्थिरता

(ग) स्वतंत्रता (घ) आकार देना

क्रियाकलाप 6.1

आप अपने बचपन को याद कीजिए। आपका पालन-पोषण और देखभाल आपकी माँ या परिवार में ही किसी ने या संरक्षक ने बहुत प्यार और दुलार से किया होगा। सबसे पहले उन्हीं से आपने बोलना, चलना, उठना-बैठना, खाना-पीना, कपड़े पहनना आदि सीखा होगा। लोगों से कैसा व्यवहार करना चाहिए और कैसा व्यवहार नहीं करना चाहिए यह सब भी सीखा होगा। यह भी जाना होगा कि किन बातों को स्वीकार करना चाहिए और किन बातों को नहीं। अपने जीवन की इन अनुभवों को याद कीजिए और लगभग 100 शब्दों में लिखिए।

अंश-2

आइए, कविता की अगला अंश पढ़कर देखें :

किन्तु हम ....अनुपयोगी ही बनायेंगे।

किन्तु हम हैं द्वीप।
हम धारा नहीं हैं।
स्थिर समर्पण है हमारा। हम सदा
से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के
किन्तु हम बहते नहीं हैं। क्योंकि
बहना रेत होना है।
हम बहेंगे तो रहेंगे ही नहीं।
पैर उखड़ेंगे। प्लावन होगा। ढहेंगे।
सहेंगे। बह जायेंगे।
और फिर हम चूर्ण होकर भी कभी
क्या धार बन सकते ?
रेत बन कर हम सलिल को तनिक
गँदला ही करेंगे।
अनुपयोगी ही बनायेंगे।

प्रसंग : अपनी 'पहचान' अथवा 'अस्मिता' के प्रति सजगता मनुष्य की सामान्य प्रवृत्ति है। आधुनिक हिंदी कविता में यह प्रवृत्ति प्रयोगवाद के साथ विशेष रूप से प्रकट हुई। साहित्य में इस धारा के प्रवर्तक 'अज्ञेय' माने जाते हैं। अज्ञेय ने अपने साहित्य में 'व्यक्ति-स्वातंत्र्य' और उसकी 'अस्मिता' को एक मूल्य के रूप में स्वीकार करते हुए 'व्यक्तित्व' को विशेष महत्व दिया है। इस अंश में द्वीप 'व्यक्तित्व' का प्रतीक है। अज्ञेय ने कविता में इस 'व्यक्तित्व' के निर्मित होने, उसके रूप-आकार ग्रहण करने और उसके अक्षय बने रहने की प्रक्रिया को प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

व्याख्या : आपने देखा कि कविता के इस अंश की आरंभिक दो पंक्तियों में पूर्ण विराम के साथ दो वाक्य हैं। कवि ने अपनी बात पर बल देने के लिए ऐसा वाक्य लिखा है। यह बात दृढ़तापूर्वक कही गयी है कि 'किन्तु हम हैं द्वीप।' 'हम धारा नहीं हैं'। इस कथन के द्वारा कवि द्वीप के अस्तित्व, उसकी पहचान की प्रमाणिकता को स्पष्ट रूप से स्थापित करना चाहता है। कवि बताना चाहता है कि द्वीप प्रवाहमान नदी से ही बने हैं लेकिन वे स्थिर हैं,

इस स्थिर रूप में ही उनकी पहचान है। वे नदी के प्रति अपना समर्पण भी इस स्थिर रूप में ही करते हैं। लेकिन ये द्वीप नदी के साथ कभी बहते नहीं हैं, इसलिए कि नदी के साथ बहते ही इनका अपना कोई अस्तित्व, कोई पहचान नहीं रह जाएगा। नदी के साथ बहते ही ये रेत में बदल जाएँगे और अपनी पहचान खो देंगे।

आगे की पंक्तियों में अस्तित्व या पहचान के मिटने को बड़े यथार्थवादी और संवेदनशील ढंग से रेखांकित किया गया है। द्वीप का अस्तित्व तभी तक स्थिर है जब तक वह जमीन से जुड़ा है; अन्यथा द्वीप ढ़हने लगेंगे, जल में डूबने लगेंगे, नदी के प्रवाह के धक्के लगेंगे और इस तरह अपनी पहचान खोकर नदी में रेत बनकर बह जाएँगे। कवि इन पंक्तियों में द्वीप की अस्मिता अथवा उसकी पहचान को लेकर यहाँ एक मार्मिक प्रश्न करता है कि द्वीप अपनी पहचान को मिटाकर नदी के साथ रेत बनकर बहते हुए क्या कभी धारा की पहचान पा सकता है ? वस्तुतः द्वीप अपनी पहचान मिटाकर, रेत बनकर नदी की धारा के साथ बहते हुए 'धारा' होने की पहचान कभी नहीं पा सकता बल्कि इस तरह रेत बनकर बहते हुए, वह नदी के जल की स्वच्छता को थोड़ा गंदा और मटमैला ही करेगा और नदी का वह जल किसी काम का नहीं रह जाएगा।

कविता में नदी को माँ स्वीकार करते हुए भी द्वीप धारा नहीं बनना चाहते, बल्कि द्वीप के रूप में ही अपनी पहचान बनाए रखना चाहते हैं। इसलिए कि उनकी पहचान हमेशा से ही नदी की धारा नहीं, द्वीप के रूप में ही रही है। व्यक्तित्व को अर्जित किए बिना समर्पण संभव ही नहीं हो सकता। कवि की धारणा है कि व्यक्तित्वहीन समर्पण का कोई मूल्य नहीं होता। नदी के साथ द्वीप अपना व्यक्तित्व कायम रखते हुए स्थिर समर्पण करना चाहते हैं, किन्तु नदी के साथ बहना नहीं चाहते। व्यक्तित्व की स्थिरता के बने रहने से ही समर्पण भी संभव है इसलिए कवि ने स्थिर समर्पण कहा है।

आप ध्यान से देखेंगे तो नदी में निरंतरता और परिवर्तन साथ-साथ दिखाई देते हैं, अर्थात नदी का जल लगातार बहते हुए बदलता रहता है लेकिन नदी की धारा कभी टूटती नहीं है, निरंतर बनी रहती है। इसी प्रकार संस्कृति में भी निरंतरता और परिवर्तनशीलता को एक साथ देखा जा सकता है।

टिप्पणीः कोई भी संस्कृति हमेशा एक जैसी नहीं रहती, उसमें समय के अनुकूल धीरे-धीरे बदलाव होते रहते हैं। ये बदलाव इतने सूक्ष्म और धीमी गति से होते हैं कि कई बार इन्हें स्पष्ट रूप से देखना संभव नहीं होता है। हर समाज के अपने कुछ विशिष्ट सांस्कृतिक मूल्य होते हैं। ये मूल्य ही व्यक्ति की पहचान निर्मित करके उसे एक व्यक्तित्व प्रदान करते हैं। इन्हीं से व्यक्ति अपनी पहचान और व्यक्तित्व को प्रमाणित करता है।

इस कविता के माध्यम से कवि यह भी बताना चाहता है कि संस्कृति व्यक्तित्व का निर्माण उसी प्रकार करती है जैसे नदी, द्वीप का निर्माण करती है। द्वीप हमेशा से नदी के मध्य में अपने अस्तित्व, अपनी पहचान के साथ स्थिर रहते हैं। आप नदी के किनारे गए होंगे। उसके बीच में द्वीप होते हैं वैसे ही व्यक्ति भी समाज और संस्कृति से अपना व्यक्तित्व निर्मित कर अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्राप्त कर लेता है। वस्तुतः चाहकर भी कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को किसी संस्कृति में विलीन करना नहीं चाहता।

कवि की धारणा है कि इस बहने के क्रम में सबसे पहले द्वीप के पैर उखड़ेंगे अर्थात उसके अस्तित्व का आधार नष्ट होगा। 'पैर उखड़ने' का अर्थ है यहाँ आधार न होना। इसके बाद प्लवन होगा अर्थात द्वीप जल की बाढ़ से पानी में डूब जाएगा। डूबने के क्रम में उसके कगार जल की धारा के प्रहार से टूट-टूट कर जल में गिरने लगेंगे और बहने लगेंगे। कवि प्रश्न शैली में संवाद करता है कि इस प्रकार रेत होकर बहते हुए क्या द्वीप धारा का रूप प्राप्त कर सकते हैं? आप बिलकुल ठीक समझ रहे हैं। द्वीप, धारा नहीं बन सकते हैं क्योंकि वे रेत हैं। इनका स्वभाव बहना नहीं, जमना है, स्थिर होना है। इसलिए बहने के क्रम में ये जल को थोड़ा मटमैला ही करेंगे। अपने अस्तित्व को नष्ट करने के बाद कवि उनकी कोई उपयोगिता नहीं देखता।

पाठगत प्रश्न 6.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. 'पैर उखड़ना' से तात्पर्य है-

   (क) नष्ट हो जाना (ख) डूब जाना

   (ग) टिक न पाना (घ) ऊपर उठना

2. रेत होने का आशय है-

   (क) नदी का बहना (ख) समर्पण करना

   (ग) पहचान मिटना (घ) मटमैला होना

अंश-3

आइए, कविता की अगली पंक्तियाँ पढ़ लें।

द्वीप हैं ... भूखंड अपना पितर है।

द्वीप हैं हम।
यह नहीं है शाप। यह अपनी नियति है।
हम नदी के पुत्र हैं। बैठे नदी के क्रोड़ में।
वह बृहद् भूखंड से हमको मिलाती है।
और वह भूखंड अपना पितर है।

प्रसंग : इस अंश में कवि ने भूखंड को पिता के रूप में देखने की बात कही है।

व्याख्या : कविता की इन पंक्तियों में कवि फिर से याद दिलाता है कि 'द्वीप हैं हम।' और इसके साथ ही यह घोषणा करता है कि द्वीप बनना अभिशाप या आकस्मिक घटना नहीं है, बल्कि यह उसकी नियति का परिणाम है। अर्थात द्वीप होना उसके भाग्य में पहले से ही निर्धारित है। कवि ने इन पंक्तियों में पुन: नदी को माँ और द्वीप को पुत्र के रूप में चित्रित किया है। यहाँ द्वीप को नदी के मध्य में ऐसे दिखाया गया है जैसे माँ अपने शिशु को गोद में लिए बैठी हो। कवि अपनी पहले कही बात को फिर से दुहराते हुए कहता है कि द्वीप नदी के पुत्र हैं। जिस प्रकार माँ अपने शिशु को गोद में समेटे भी रहती है, उसी प्रकार नदी के मध्य में द्वीप दिखाई देते हैं।

चित्र 6.3: वृक्ष और नदी

आपने देखा होगा कि नदी के बीच में रेत का थोड़ा उभरा हुआ हिस्सा, जो द्वीप के रूप में दिखाई देता है, वह नदी के दोनों किनारों पर दूर तक फैली हुई भूमि से भी जुड़ा होता है। कवि संकेत करता है कि नदी रूप-आकार देकर द्वीप को निर्मित ही नहीं करती है बल्कि उसे उस विस्तृत भू-खंड से भी मिलाने का भी काम करती है जिसका वह अटूट अंश है। इस कविता में जैसे नदी- माँ और संस्कृति तथा द्वीप- पुत्र और व्यक्तित्व के प्रतीक हैं, वैसे ही भूखंड-पिता और समाज के प्रतीक हैं। कविता में कवि ने माँ, पिता और पुत्र का एक पारिवारिक रूपक लिया है। जैसे माँ शिशु को जन्म देकर उसका पालन-पोषण करती है और उसका परिचय पिता से कराती है उसी प्रकार नदी भी द्वीप का निर्माण करती है और उसे विस्तृत भूखंड से मिलाती है। जैसे पुत्र से पिता का संबंध जैविक होता है उसे पालने का प्राथमिक दायित्व माँ का ही होता है। वैसे ही द्वीप भले ही विस्तृत भू-खंड का अंश होता है लेकिन उसे द्वीप के रूप में निर्मित करने का भार नदी ही उठाती है। भूखंड द्वीप का निर्माण नहीं कर सकते हैं। इस कविता में नदी, द्वीप और भू-खंड के प्रतीक का एक और स्तर है। इसे भी यहाँ समझ लेना आवश्यक है। जिस प्रकार नदी, द्वीप का निर्माण करती है और उसे विस्तृत भू-खंड से जोड़ती है, उसी प्रकार संस्कृति, व्यक्तित्व का निर्माण करती है और उसे समाज से जोड़ती है।

चित्र 6.4: माँ-बच्चे

पाठगत प्रश्न 6.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. नदी के क्रोड़ में बैठे होने की बात किसके लिए कही गयी है-

   (क) शिशु के   (ख) माँ के

   (ग) द्वीप के   (घ) पिता के

2. द्वीप को निर्मित करने का भार होता है–

   (क) नदी पर (ख) भू-खंड पर

   (ग) समाज पर (घ) संस्कृति पर

अंश- 4

आइए, कविता के इस अंश को एक बार पढ़ लें–

नदी तुम ... संस्कार तुम देना।

नदी, तुम बहती चलो।
भूखंड से जो दाय हम को मिला है,
मिलता रहा है,
माँजती, संस्कार देती चलो:
यदि ऐसा कभी हो
तुम्हारे आह्लाद से या दूसरों के किसी
स्वैराचार से–अतिचार
से–

तुम बढ़ो, प्लावन तुम्हारा घरघरा उठे,
यह स्रोतस्विनी ही कर्मनाशा कीर्तिनाशा
घोर
काल– प्रवाहिनी बन जाय
तो हमें स्वीकार है वह भी। उसी में
रेत हो कर
फिर छनेंगे हम। जमेंगे हम। कहीं
फिर पैर टेकेंगे।
कहीं फिर भी खड़ा होगा नये व्यक्तित्व
का आकार।
मात:, उसे फिर संस्कार तुम देना।

प्रसंग : इस अंश में कवि ने नदी का प्रतीकात्मक प्रयोग करते हुए उसकी निरंतरता की बात के साथ उसके भीषणतम रूप धारण करने पर भी नवीन सृजन और द्वीप के अस्तित्व के पुन: आकार लेने की बात कही है।

व्याख्या : आप जानते हैं कि इस कविता में प्रतीकों के कई स्तर हैं। आइए कविता के इस अंश को विभिन्न प्रतीकों के साथ जोड़ कर समझें। इन पंक्तियों में कवि नदी से निरंतर बहते रहने के लिए कह रहा है, क्योंकि नदी के प्रवाहमान होने से ही द्वीप का सृजन होता है। यह द्वीप नदी के तटों पर फैले विस्तृत भूखंड को पिता के रूप में स्वीकार करते हुए कहता है कि जिस प्रकार किसी पुत्र को विरासत में अपने पिता से बहुत सी वस्तुएँ स्वत: ही प्राप्त होती रही हैं, वैसे ही हमें भी विस्तृत भूखंड से वह सब कुछ प्राप्त होता रहा है। लेकिन हमें संस्कार देने और हमारे व्यक्तित्व को निखारने का काम तो माँ ही कर सकती है अर्थात् संस्कृति और परंपरा ही हमारा व्यक्तित्व निखारने का कार्य करते हैं। इसलिए तुम हमें निखारती और संस्कार देती चलो।

आप जानते हैं कि नदियों में पानी अधिक बढ़ जाने से या किन्हीं अवरोधों से नदियों में बाढ़ आ जाती है। कविता की इन पंक्तियों में कवि ने द्वीप के माध्यम से इन संभावनाओं की ओर संकेत करते हुए कहा है कि तुम्हारा भयंकर रूप भी हमें स्वीकार्य है। बाढ़ का भयंकर उफान आ जाए और तुम स्रोतस्विनी अर्थात निश्चित मार्ग से प्रवाहित होने वाली न रहो। कहने का आशय यह है कि प्रलय की स्थिति में हम अपनी पहचान को स्थिर नहीं रख सकते हैं। नदी के साथ प्रवाह में बह जाने से हम अपने को रोक नहीं सकते हैं। लेकिन द्वीप का विश्वास है कि नदी के प्रवाह में अपनी पहचान मिटाकर बहते हुए कभी न कभी उस जल प्रवाह से छनकर इकट्ठे होंगे और अपना रूप और आकार पाएँगे। फिर से अपनी पहचान बनाएँगे। नदी को 'माँ' कहकर संबोधित करते हुए कवि कहता है कि तुम उस रूप-आकार को, उस पहचान को फिर से संस्कार देना और उसे फिर से निखारना।

पाठगत प्रश्न 6.4

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. द्वीप को दाय मिलता है–

   (क) आह्लाद से (ख) माँजने से

   (ग) संस्कार से (घ) भूखंड से

2. कविता में प्रतीक के रूप में नहीं है–

(क) व्यक्ति (ख) भूखंड

(ग) नदी (घ) द्वीप

(ख) भवानीप्रसाद मिश्र

सतपुड़ा के घने जंगल

आपने दसवीं कक्षा में प्रकृति-सौंदर्य और प्रकृति के दोहन की समस्या आधारित कविताएँ पढ़ी है। इसी प्रकार अनेक कवियों ने प्रकृति के विभिन्न रूपों को कविता का विषय बनाया; जैसे- सुमित्रानंदन पंत, जयशंकर प्रसाद आदि। भवानीप्रसाद मिश्र का नाम सुनते ही परंपरा में मिट्टी की सोंधी खुशबू और प्रकृति की हरियाली बरबस आँखों में बस जाती है। मिश्रजी की कविताओं को पढ़कर लगता है कि उनका जीवन प्रकृति के काफी करीब रहा है। आइए, पढ़ते हैं उनकी कविता 'सतपुड़ा के घने जंगल' जिसे पढ़कर मन में हरे-भरे जंगल की छवि आँखों के सामने जीवंत हो जाती है।

चित्र 6.5: भवानी प्रसाद मिश्र

क्रियाकलाप 6.2

वनों को बचाने के लिए किए जा रहे प्रयासों के विषय में आपने पढ़ा और सुना होगा। अपने आस-पास के पेड़ों को ध्यान से देखिए और अपने शब्दों में लिखिए कि ये आपके लिए क्यों उपयोगी हैं?

....

....

....

6.5 मूल पाठ

आइए 'सतपुड़ा के घने जंगल' कविता को एक बार ध्यान से पढ़ लेते हैं।

अंश-1

सतपुड़ा के घने जंगल।

नींद में डूबे हुए-से,
ऊँघते अनमने जंगल।

झाड़ ऊँचे और नीचे,
चुप खड़े हैं आँख मींचे;
घास चुप है, कास चुप है
मूक शाल, पलाश चुप है।
बन सके तो धँसो इनमें,
धँस न पाती हवा जिनमें
सतपुड़ा के घने जंगल
ऊँघते अनमने जंगल।

मकड़ियों के जाल मुँह पर,
और सर के बाल मुँह पर
मच्छरों के दंश वाले,
दाग काले-लाल मुँह पर,
वात-झन्झा वहन करते,
चलो इतना सहन करते,
कष्ट से ये सने जंगल,
नींद में डूबे हुए से
ऊँघते अनमने जंगल।

अंश-2

अजगरों से भरे जंगल।
अगम, गति से परे जंगल
सात-सात पहाड़ वाले,
बड़े छोटे झाड़ वाले,
शेर वाले बाघ वाले,
गरज और दहाड़ वाले,
कम्प से कनकने जंगल
नींद में डूबे हुए से
ऊँघते अनमने जंगल।

इन वनों के खूब भीतर,
चार मुर्गे, चार तीतर
पाल कर निश्चिन्त बैठे,
विजन वन के बीच बैठे,
झोंपड़ी पर फूस डाले
गोंड तगड़े और काले।

शब्दार्थ

अनमना = उदास
मूक = चुप
वात = हवा, वायु
झंझा = आँधी
अगम = न चलने वाला
निश्चिन्त = चिंता रहित, बेफिक्र
विजन = जनहीन, एकांत
निर्झर = झरना
पंछी = पक्षी, चिड़िया
दूर्वा = एक घास जो हरी और सफेद दोनों प्रकार की होती है।
किसलय = पौधों से निकलने वाले नए पत्ते, कोंपल

जबकि होली पास आती,
सरसराती घास गाती,
और महुए से लपकती
मत्त करती बास आती,
गूंज उठते ढोल इनके,
गीत इनके, बोल इनके

सतपुड़ा के घने जंगल
नींद में डूबे हुए से
ऊँघते अनमने जंगल।

अंश-3

धँसो इनमें डर नहीं है,
मौत का यह घर नहीं है,
उतर कर बहते अनेकों,
कल-कथा कहते अनेकों,
नदी, निर्झर और नाले,
इन वनों ने गोद पाले।
लाख पंछी सौ हिरन-दल,
चाँद के कितने किरन दल,
झूमते बन-फूल, फलियाँ,
खिल रहीं अज्ञात कलियाँ,
हरित दूर्वा, रक्त किसलय,
पूत, पावन, पूर्ण रसमय
सतपुड़ा के घने जंगल,
लताओं के बने जंगल।

6.6 आइए समझें

'सतपुड़ा के घने जंगल' कविता पाठक को प्रकृति की ऐसी अकल्पनीय दुनिया में ले जाती है जो मनोरम सौंदर्य और आश्चर्य से भरी है। इस कविता में सतपुड़ा के जंगल का जीवंत वर्णन है। यह कविता अपने लयात्मक प्रवाह के लिए विशेष रूप से सराही जाती है।

भवानीप्रसाद मिश्र की 'सतपुड़ा के घने जंगल' एक मार्मिक कविता है। मध्य भारत का यह जंगल अपनी जैविक सम्पदा के लिए बहुत प्रसिद्ध है। कवि ने जीव-जगत के बीच मनुष्य की उपस्थिति को बहुत तटस्थता से उकेरा है। उन्होंने बहुत खामोशी से हमें यह समझाया है कि पृथ्वी सभी जीवों का आश्रय है। मनुष्य इन सभी जीवों में से एक प्राणी है। पूरी कविता की बनावट वाचिक शैली में है। अपनी ऊपरी बुनावट से यह कविता एक शिशु गीत का आनंद देती है। आइए, इस कविता के अर्थसंसार की एक बार सैर करते हैं।

अंश-1

सतपुड़ा के घने जंगल ..... ऊँघते अनमने जंगल।

व्याख्या

आइए, कविता के इस अंश को एक बार फिर से पढ़ लें।

प्रसंग : कवि ने इस अंश में जंगल की विविधता और जंगल के यथार्थ का चित्रण किया है।

व्याख्या : कवि बिना किसी भूमिका के हमें घने जंगल में प्रवेश कराते हैं। सतपुड़ा एक संज्ञा के रूप में प्रकट होता है। लेकिन ज्यों-ज्यों हम कविता में उतरते हैं, उसकी नवीन विशेषताएँ हमें मुग्ध करती चलती हैं। वन की सघन हरियाली नींद में ऊँघती हुई लग रही है। यह जंगल अपनी निश्चिन्तता में डूबा हुआ है। यानी जंगल का नीरव वातावरण नींद में तल्लीन है। कवि ने इन पंक्तियों में हमें यह भी संदेश दिया है कि आप इस अरण्य में बगैर किसी बाधा के प्रवेश करें। हस्तक्षेप से जंगल की नींद खुल जाएगी।

आगे कवि सतपुड़ा के जंगल का आँखों देखा हाल बयान करते हैं। जंगली झाड़ियाँ कुछ छोटी हैं और कुछ ऊँची। जंगल और झाड़ एक ही अरण्य के दो अनिवार्य हिस्से हैं। वहाँ घास और कास भी बहुतायत में हैं। इसी के बीच शाल और पलाश के पेड़ों का अन्तहीन सिलसिला है। लेकिन शाल के पेड़ भी इस सतपुड़ा के जंगल में चुपचाप बिना किसी कोलाहल के खड़े हैं। उसके संग-पड़ोस में पलाश का जो पेड़ है, वह भी मौन धारण किए हुए है। वृक्ष परंपरा में पलाश एक पवित्र वैदिक पेड़ है। विविध संस्कारों में पलाश के पत्ते और उसकी टहनियाँ काम में आते हैं। इसीलिए कवि की यह अभिलाषा है कि तनिक ठहर कर इसमें 'धँसो'। इसकी मनोरमता को आँखों में भर लो। जंगल की हवा भी इसमें सहसा नहीं प्रवेश कर पाती है।

इस सुखद दृश्य के बाद कवि जंगल के कठोर और डरावने पक्ष की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं। किसी भी सिक्के के दो पहलू होते हैं। हरियाली की गोद में भी कुछ डरावने पल बैठे हुए हैं। इस मनोहारी जंगल में मकड़ियों की विविध प्रजातियाँ भी हैं। जंगल में इन मकड़ियों के रहस्यमय जाले उनके स्वाभाविक घर हैं। मच्छरों की भिनभिनाहट और दंश इस जंगल का यथार्थ है। इस जंगल के शांत वातावरण में कवि तेज हवा, पानी, आँधी से भी हमारा परिचय कराते हैं। कविता में जंगल का रूप और रंग विविध मौसम में अपने अलग-अलग तेवर में प्रकट हुआ है। इसलिए मिश्रजी का यह जंगल एक रस नहीं है। यह बहुरूपिया है। यह जंगल अजगरों की उपस्थिति से भी समृद्ध है।

सतपुड़ा के घने जंगल।
नींद में डूबे हुए से,
ऊँघते अनमने जंगल।

झाड़ ऊँचे और नीचे,
चुप खड़े हैं आँख मींचे;
घास चुप है, कास चुप है
मूक शाल, पलाश चुप है।
बन सके तो धँसो इनमें,
धँस न पाती हवा जिनमें
सतपुड़ा के घने जंगल
ऊँघते अनमने जंगल।

मकड़ियों के जाल मुँह पर,
और सर के बाल मुँह पर
मच्छरों के दंश वाले,
दाग काले-लाल मुँह पर,
वात-झन्झा वहन करते,
चलो इतना सहन करते,
कष्ट से ये सने जंगल,
नींद में डूबे हुए से
ऊँघते अनमने जंगल।

पाठगत प्रश्न 6.5

1. जंगल में क्या चुप नहीं है-

   (क) पलाश (ख) कास

   (ग) हवा (घ) घास

2. कविता के इस अंश में जंगल में किसका चित्र नहीं दिखाई देता-

(क) मकड़ियों के जाल का (ख) होली के त्योहार का

(ग) मच्छरों के दंश का (घ) हिरन-दल का

अंश-2

अजगरों से ..... अनमने जंगल

अजगरों से भरे जंगल।
अगम, गति से परे जंगल
सात-सात पहाड़ वाले,
बड़े छोटे झाड़ वाले,
शेर वाले बाघ वाले,
गरज और दहाड़ वाले,
कम्प से कनकने जंगल
नींद में डूबे हुए से
ऊँघते अनमने जंगल।

इन वनों के खूब भीतर,
चार मुर्गे, चार तीतर
पाल कर निश्चिन्त बैठे,
विजन वन के बीच बैठे,
झोंपड़ी पर फूस डाले
गोंड तगड़े और काले।
जबकि होली पास आती,
सरसराती घास गाती,
और महुए से लपकती
मत्त करती बास आती,
गूंज उठते ढोल इनके,
गीत इनके, बोल इनके

सतपुड़ा के घने जंगल
नींद में डूबे हुए से
ऊँघते अनमने जंगल

प्रसंग : कवि ने इस अंश में जंगल की भयंकरता और उसमें मनुष्य की उपस्थिति का चित्रण किया है।

चित्र 6.6: बाघ आदि जानवर एक साथ

व्याख्या : जंगल और पहाड़ एक दूसरे के पूरक होते हैं। इन जंगलों की ओट में पहाड़ों की समानान्तर कई पंक्तियाँ फैली हुई हैं। इसीलिए सतपुड़ा के इस जंगल को "सात-सात पहाड़ वाले" कहा गया है। यानी वनस्पति के साथ पहाड़ का यह संगम इसे दुर्लभ बनाता है। पहाड़ों की इन श्रृंखलाओं में सिंह की उपस्थिति हमारे मन में कौतूहल और भय दोनों पैदा करती है। शेर की आवाज वनैले वातावरण को और स्वाभाविक बना देती है। जब कवि ने ऊँघते जंगल में प्रवेश किया तब उसने इस ध्वनि की कल्पना नहीं की थी। लेकिन यह जंगल विविध आवाजों का अजायबघर है। इन हिंसक पशुओं के बीच मजबूत कद-काठी के एक गोंड से मुलाकात होती है। कवि के अनुसार जंगल ही उसके जीवन का आधार है। सतपुड़ा का जंगल मानो उसमें एकाकार हो गया है। मुर्गे और तीतर उसके घर की शोभा बढ़ाते हैं। उसकी झोपड़ी जंगल की ही चीजों से निर्मित है। महुए की सुगंध से उसकी झोपड़ी सुवासित है। होली का उल्लास और मस्ती जंगल के कठोर वातावरण को स्वप्निल बना देते हैं। लेकिन यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि मनुष्य की उपस्थिति से सतपुड़ा का जंगल रोचक और आनंदमय हो गया है।

पाठगत प्रश्न 6.6

1. वन में कौन निश्चिंत है–

   (क) मुर्गे (ख) तीतर (ग) गोंड (घ) झोंपड़ी

2. कविता में निम्न में से कौन-सी विशेषता गोंड जनजातियों की नहीं है–

   (क) उन्होंने मुर्गे और तीतर पाले हुए हैं

   (ख) झोंपड़ी पर फूस डाल रखा है।

   (ग) वे तगड़े और काले हैं।

   (घ) वे अनमने रहते हैं

अंश-3

धँसों इनमें ... बने जंगल।

प्रसंग : कवि इन अंशों में जंगल की उपयोगिता और मानव जीवन में इनके महत्व को उद्‌घाटित करता है।

व्याख्या : अन्त में, कवि ने इस जंगल को हमारे लिए अत्यन्त मानवीय आनंदमय स्वरूप में प्रस्तुत किया गया है। जंगल ही हमारे प्राणवायु का आधार है। ये वर्षा वन हमारे जीवन के लिए, हमारे पोषण के लिए बहुत उपयोगी हैं। इसीलिए कवि ने इस जंगल हमारे जीवन का आधार माना है। ये मौत का घर नहीं है।

प्राणदायिनी नदियाँ इन्हीं जंगलों और पहाड़ों से आकार ग्रहण करती हैं। ये नदी, निर्झर और नाले जंगल को खूबसूरत बनाते हैं। सारे पर्यटन केंद्र इन्हीं जल धाराओं के आसपास होते हैं। परिंदों की चहचहाहट और नदियों की उदगम भूमि भी इन्हीं जंगलों में है। अरण्य, अभयारण्य और पक्षी बिहारों के एक-दूसरे के सरोकार होते हैं। कविता के अंत में कवि का मन भी हिरन-दल के साथ कुलाँचे भरने लगता है विविधवर्णी परिंदों के संग विचरण करने लगता है। वनैले पुष्पों के संग झूमने लगता है। रात की स्वच्छ चाँदनी की कल्पना में अठखेलियाँ करने लगता है। नए पत्ते और हरित दूर्वा कविता के अंत में एक सम्मोहनकारी और मनोरम वातावरण की सृष्टि करते हैं। ऐसे लतायुक्त जंगल से हम विदा लेते हुए कृतज्ञता से भर उठते हैं। यह एक आरण्यक कविता है। वनस्पति से पूरी सृष्टि का एक पावन रिश्ता है। जंगल का दर्द मिश्रजी शिद्‌दत से समझते हैं। इसीलिए इस कविता में वे पर्यावरण के प्रवक्ता के रूप में दिखाई देते हैं। वे कहीं उपदेशक के रूप में प्रकट नहीं हैं। इसीलिए यह एक सार्वकालिक सौंदर्य की कालजयी कविता है।

धँसो इनमें डर नहीं है,
मौत का यह घर नहीं है,
उतर कर बहते अनेकों,
कल-कथा कहते अनेकों,
नदी, निर्झर और नाले,
इन वनों ने गोद पाले।
लाख पंछी सौ हिरन-दल,
चाँद के कितने किरन दल,
झूमते बन-फूल, फलियाँ,
खिल रहीं अज्ञात कलियाँ,
हरित दूर्वा, रक्त किसलय,
पूत, पावन, पूर्ण रसमय
सतपुड़ा के घने जंगल,
लताओं के बने जंगल।

पाठगत प्रश्न 6.7

1. कवि सतपुड़ा के जंगल को मौत का घर नहीं मानते, क्योंकि–

   (क) यह बहुत घना है (ख) यह निर्जन है

   (ग) यह शांत है (घ) यह सभी का पालन करता है

2. जंगल ने किसे अपने गोद में पाला है–

   (क) नदी (ख) झरना

   (ग) नाले (घ) नदी, झरने और नाले को

6.7 भाव-सौंदर्य एवं शिल्प-सौंदर्य

(क) सतपुड़ा के जंगलों में एक गहन निस्तब्धता अर्थात् शांति है। सब कुछ अलसाया-सा, अनमना-सा है। कहीं आसमान को छूते हुए शाल के पेड़ हैं, तो कहीं वे आड़े-तिरछे

बेतरतीब ढंग से फैल कर पंगडंडियों के बिलकुल करीब आ गए हैं। ये जंगल इतने सघन हैं कि इनमें हवा भी प्रवेश नहीं कर पाती है। कवि इन जंगलों में धँसने के लिए कहकर निर्भयता का संदेश देता है।

(ख) इन जंगलों में अनेक नदी, निर्झर और नाले बहते हैं और पंछी, फूल, कलियाँ और हरी घास इनकी शोभा बढ़ाती है। जंगलों की शोभा, सुषमा इनमें प्रवेश करने की आकांक्षा भी जगाती है। ये जंगल अजगरों, बाघों और दुर्गम पहाड़ों से भी भरे पड़े हैं। लेकिन मनुष्य वही है जो इसका साहसपूर्वक सामना करे और इसमें प्रवेश करे अर्थात् एक ओर जंगल में सौंदर्य बिखरा पड़ा है और दूसरी ओर भय और कठिनाई भी है।

(ग) पेड़, नदी, पहाड़ और हवा हमारे साथी हैं। हम इन पर निर्भर हैं। इनके बिना मानव जाति का अस्तित्व ही खतरे में है। इन्हीं से हमारा पर्यावरण बनता है। पर्यावरण प्रकृति का अमूल्य उपहार है। अपनी संतुलित जिंदगी के लिए मनुष्य पेड़-पौधों, जल, वायु, पर्वत, जीव जंतुओं आदि पर निर्भर है, फिर भी ज़्यादा-से-ज़्यादा सुविधाओं के भोग के लालच में वह वनों का अंधाधुंध दोहन करता आ रहा है। इसका दुष्परिणाम प्राकृतिक आपदाएँ जैसे बाढ़, भूकंप, सूखा आदि हैं।

(घ) 'सतपुड़ा के घने जंगल' कविता को पढ़ते हुए आपने अनुभव किया होगा कि इसमें आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया गया है। कवि ने सरल और प्रवाहमयी भाषा का प्रयोग किया है जिसमें लयात्मकता भी है।

(ङ) आपने यह भी ध्यान दिया होगा कि इस कविता में दृश्यात्मकता है अर्थात् इसकी पंक्तियों में अनेक चित्र हैं जो कविता को दृश्यात्मक बनाते हैं। साथ ही इसमें चित्रों का काम करती हैं।

(च) मानवीकरण अलंकार भी है। जैसे-झाड़ ऊँचे और नीचे चुप खड़े हैं आँख मींचे। 'सतपुड़ा के घने जंगल' एक ऐसी कविता है जिसमें पेड़, लता, हवा, पत्तों, नदी, निर्झर को मनुष्य के रूप में चित्रित किया गया है। साहित्य की भाषा में इसे 'मानवीकरण अलंकार' कहते हैं। अर्थात् जो मानव नहीं है, जड़ है—कल्पना शक्ति से उसे मानव जैसा व्यवहार करते दिखाना। मिश्रजी ने सतपुड़ा के जंगल के प्राकृतिक सौंदर्य को दर्शाने के लिए इन जंगलों का मानवीकरण किया है।

सतपुड़ा राष्ट्रीय अभयारण्य

सतपुड़ा राष्ट्रीय अभयारण्य भारत के मध्य प्रदेश राज्य के अंतर्गत होशंगाबाद जिले में स्थित है। यह 524 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में फैला हुआ है। यह 1981 ई. में स्थापित किया गया था। राष्ट्रीय अभ्यारण्य का इलाका दुर्गम है। इसके अंतर्गत बलुआ पत्थर चोटियों, संकीर्ण घाटियों, नालों और घने जंगलों के इलाके हैं। इस उद्यान में 1350 मीटर ऊँचे धूपगढ़ शिखर भी हैं और सपाट मैदान भी हैं। यह जैव विविधता में बहुत समृद्ध है। यहाँ वन्य पशुओं में बाघ, तेंदुआ, सांभर, चीतल, नीलगाय, काला हिरण आदि पाए जाते हैं। यहाँ पक्षियों की अनेक प्रजातियाँ भी पाई जाती हैं। जिनमें धनेश और मोर प्रमुख हैं।

'सतपुड़ा के घने जंगल' कविता शिलालेख पर अमर

कवि भवानी प्रसाद मिश्र की कालजयी रचना 'सतपुड़ा के घने जंगल' अब किताबों तक ही सीमित नहीं रह गई है। यह कविता बैतूल जिले में जिस स्थान पर बैठकर लिखी गई थी, वहाँ उसे एक शिलालेख पर अंकित करवाकर हमेशा के लिए अमर कर दिया गया है। मिश्र ने वर्ष 1939 ई. में बैतूल शहर से सटे सोनाहारी पहाड़ पर बैठकर यह कविता लिखी थी। उस समय बदनूर (अब बैतूल) शहर जंगलों के बीचों-बीच बसा हुआ था। आज यह जंगल 20 किलोमीटर दूर सरक चुका है। आज के हालात में मिश्रजी की यह कविता 'सतपुड़ा के घने जंगल' हरियाली और पेड़ बचाने के लिए प्रेरणा देने का महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है। इस शिलालेख से आने वाली पीढ़ियों को इस क्षेत्र के अतीत की जानकारी मिलेगी और वे इससे प्रेरणा लेकर पेड़ बचाने व लगाने का संकल्प ले सकेंगे।

6.8 आपने क्या सीखा

1. 'नदी के द्वीप' कविता में प्रतीकों के माध्यम से एक ओर नदी से द्वीप बनने की सहज प्रक्रिया का चित्रण है दूसरी ओर संस्कृति के माध्यम से व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया का भी प्रस्तुतीकरण है।
2. 'नदी' का प्रयोग 'माँ' और संस्कृति के अर्थ में, 'द्वीप' का शिशु और व्यक्तित्व के अर्थ में और 'भूखंड' का पिता और समान के अर्थ में प्रयोग हुआ है अर्थात् कविता में प्रतीकों का एक स्तर प्राकृतिक और दूसरा मानवीय है। दोनों मिलकर प्रकृति और मनुष्य के संबंध को स्पष्ट करते हैं।
3. 'सतपुड़ा के घने जंगल' कविता में जंगल की विविधता, भयंकरता और उपयोगिता का अंकन है।
4. इसमें आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग हुआ है तथा भाषा सरल और प्रवाहमयी है। दृश्यात्मकता सर्वत्र विद्यमान है।
5. प्राकृतिक सौंदर्य में मानवीकरण अलंकार का सुंदर प्रयोग हुआ है।

6.9 सीखने के प्रतिफल

- अपने परिवेशगत अनुभवों पर अपनी स्वतंत्र और स्पष्ट राय व्यक्त करते हैं।
- नई रचनाएँ पढ़कर उन पर साथियों से बातचीत करते हैं।
- रोज़मर्रा के जीवन से अलग किसी घटना/स्थिति-विशेष में भाषा का काल्पनिक और सृजनात्मक प्रयोग करते हुए लिखते हैं; जैसे-बगैर पेड़ों का शहर, पानी के बिना एक दिन।

- विभिन्न साहित्यिक विधाओं को पढ़ते हुए उनके सौंदर्य पक्ष एवं व्याकरणिक संरचनाओं पर चर्चा करते हैं।
- प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों, घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को बोलकर/लिखकर व्यक्त करते हैं।
- हिंदी भाषा एवं साहित्य की परंपरा की समझ लिखकर, बोलकर एवं विचार-विमर्श के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं।

6.10 योग्यता विस्तार

(क) कवि-परिचय : सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

हिन्दी साहित्य में 'अज्ञेय' नाम से प्रसिद्ध हैं। उनका जन्म कुशीनगर, उत्तर प्रदेश में 07 मार्च, 1911 को हुआ था। उनके बचपन के कुछ वर्ष लखनऊ, श्रीनगर और जम्मू में बीते। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा अंग्रेजी और संस्कृत में हुई। वे आरंभ में विज्ञान के विद्यार्थी थे। विद्यार्थी में स्नातक करने के बाद उन्होंने एम.ए. अंग्रेजी में प्रवेश लिया। लेकिन क्रांतिकारी आंदोलन में भाग लेने के कारण उन्हें अपना अध्ययन बीच में ही छोड़ना पड़ा।

अज्ञेय ने देश-विदेश की अनेक यात्राएँ की। वे कुशल संपादक थे। उन्होंने 'नवभारत टाइम्स' के अलावा 'सैनिक', 'विशाल भारत', 'प्रतीक', 'नया प्रतीक' आदि अनेक साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया। हिंदी के प्रसिद्ध समाचार साप्ताहिक 'दिनमान' के वे संस्थापक संपादक थे। 'सप्तक' परंपरा का सूत्रपात करते हुए उन्होंने तार सप्तक, दूसरा सप्तक, तीसरा सप्तक का सम्पादन किया। प्रत्येक सप्तक में सात कवियों की कविताएँ संगृहीत हैं जो अपने युग की काव्य-चेतना को प्रकट करती हैं।

अज्ञेय ने कविता के साथ कहानी, उपन्यास, यात्रा-वृत्तांत, निबंध, आलोचना आदि अनेक विधाओं में लेखन कार्य किया। शेखर : एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने-अपने अजनबी (उपन्यास), अरे यायावर रहेगा याद, एक बूँद सहसा उछली (यात्रा-वृत्तांत), त्रिशंकु, आत्मनेपद (निबंध), विपथगा, परंपरा, कोठरी की बात, शरणार्थी, जयदोल और ये तेरे प्रतिरूप (कहानी संग्रह) प्रमुख रचनाएं हैं।

अज्ञेय प्रकृति-प्रेम और मानव-मन के अंतरद्वंद्व के कवि हैं। उनकी कविता में व्यक्ति की स्वतंत्रता का आग्रह और बौद्धिकता का विस्तार है। उन्होंने शब्दों को नया अर्थ देकर हिंदी काव्य-भाषा का विकास किया। उन्हें साहित्य अकादमी, भारत भारती सम्मान और भारतीय ज्ञानपीठ आदि साहित्य के अनेक पुरस्कार मिले।

(ख) भवानी प्रसाद मिश्र

भवानी प्रसाद मिश्र का जन्म 1914 ई. में हुआ था। उन्होंने 'कल्पना' नामक पत्रिका का संपादन किया और आकाशवाणी में सेवारत रहे। वे गाँधी जी के अहिंसावादी विचारों से बहुत

प्रभावित थे। नौकरी से अवकाश पाने के बाद उन्होंने गांधी-साहित्य के संपादक मंडल के सदस्य के रूप में भी काम किया। सन् 1985 ई. में उनका निधन हो गया।

भवानी प्रसाद मिश्र का जीवन सादगीपूर्ण था। उन्होंने कविता में भी सहज, सरल और बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है। आम बोलचाल की भाषा में बातचीत के अंदाज में कविता करने के लिए वे नई कविता के कवि के रूप में जाने जाते हैं। लयात्मकता उनकी कविता की प्रमुख विशेषता है। उनकी 'गीत-फरोश' शीर्षक कविता बहुत अधिक सराही गई है। 'अनाम तुम आते हो', 'त्रिकाल संध्या', 'परिवर्तन जिए', 'मान सरोवर दिन', 'कालजयी', 'गीतफरोश' आदि उनकी प्रमुख काव्य-कृतियाँ हैं।

6.11 पाठांत प्रश्न

1. 'नदी के द्वीप' में 'नदी' किसका प्रतीक है? स्पष्ट कीजिए।
2. द्वीप को आकार देने में नदी की क्या भूमिका है? स्पष्ट कीजिए।
3. नदी के प्रलयंकारी रूप का वर्णन क्यों किया गया है? उल्लेख कीजिए।
4. 'नदी के द्वीप' कविता का मूल संदेश क्या है? वर्णन कीजिए।
5. द्वीप के माध्यम से आप व्यक्तित्व-निर्माण के लिए कौन-सी शिक्षा प्राप्त करते हैं? उदाहरण द्वारा प्रस्तुत कीजिए।
6. नदी, द्वीप और भूखंड की तुलना किन चीजों से की है? पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
7. निम्नलिखित को लगभग 50 शब्दों में स्पष्ट कीजिए:

   (क) नदी और माँ

   (ख) भूखंड और पिता

   (ग) द्वीप और पुत्र
8. आपके व्यक्तित्व को निखारने में जिन लोगों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया उसके बारे में लिखिए।
9. 'नदी के द्वीप' कविता के शिल्प-सौंदर्य का वर्णन कीजिए।
10. निम्नलिखित पंक्तियों के आशय स्पष्ट कीजिए :

    (क) सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी हैं।

    (ख) क्योंकि बहना रेता होना है।
11. सतपुड़ा के घने जंगल में हवा क्यों नहीं प्रवेश कर पाती?
12. कवि ने इन जंगलों में किन-किन कष्टों को सहन करने की बात कही है?

13. कवि ने सतपुड़ा के जंगलों में ऐसा क्या देखा कि वे उसे मौत का घर नहीं मानते?
14. 'सतपुड़ा के घने जंगल' कविता का मूल कथ्य स्पष्ट कीजिए।
15. 'सतपुड़ा के घने जंगल' कविता के सौंदर्य के तीन बिंदुओं को अपने शब्दों में रेखांकित कीजिए।
16. 'वन हैं तो हम हैं–' इस विषय पर तर्क सहित अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

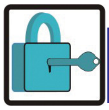

6.12 उत्तरमाला

बोध प्रश्नों के उत्तर 6.1

1. (क)
2. (क)
3. (ख)

पाठगत प्रश्न के उत्तर

6.1	1. (ख)	2. (घ)
6.2	1. (ग)	2. (ग)
6.3	1. (ग)	2. (क)
6.4	1. (घ)	2. (क)
6.5	1. (ग)	2. (ख)
6.6	1. (ग)	2. (घ)
6.7	1. (घ)	2. (घ)

7

साठोत्तरी कविता
(सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और दुष्यंत कुमार)

हिंदी में साठोत्तरी कविता का आरंभ 1960 ई. के बाद हुआ। इस युग की कविताओं की प्रमुख प्रवृत्तियाँ अपने बीज रूप में 'नयी कविता' में विद्यमान थीं। असंतोष, अस्वीकृति और विद्रोह का जो स्वर नयी कविता में थोड़ा मंद था वह सन् साठ के बाद की कविता में बहुत स्पष्टता से उभरा और इसने तीखे व्यंग्य और विद्रोह का रूप धारण कर लिया। इस धारा के कवियों ने नयी कविता की काव्यगत रूढ़ियों को अस्वीकार करके कविता को पुन: जीवन के साथ जोड़ दिया। छोटी-छोटी मामूली बातों की ओर झुकाव और उसकी अभिव्यक्ति इस कविता की सबसे बड़ी विशेषता है। ये कविताएँ रोजमर्रा की ज़िंदगी की अनुभूति को बड़ी सहजता से अभिव्यक्त करती हैं।

इस धारा के कवियों में एक ओर व्यक्तिगत पीड़ा को और स्थिति की विषमता को व्यक्त करने वाले कवि हैं, तो दूसरी ओर स्थिति की विषमता के विरुद्‌ध विद्रोह और आक्रोश व्यक्त करने वाले कवि भी हैं। नयी कविता के युग में 'नवगीत' का जो दौर चला उसे साठ के बाद की कविताओं में भी प्रतिष्ठा मिली। इस दौर के कवि ग़ज़लकार भी थे, इनमें दुष्यंत कुमार प्रमुख हैं। इन कविताओं की भाषा में बातचीत की सहजता है।

आइए, इस पाठ में साठोत्तरी कविता के दो महत्वपूर्ण कवियों– दुष्यंत कुमार और सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविताएँ पढ़ें।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- पाशविकता के विरुद्‌ध संघर्ष करने की कला का वर्णन कर सकेंगे;
- मानवीयता की स्थापना और उसकी विजय का महत्व प्रस्तुत कर सकेंगे;

- सामूहिक चेतना और संघर्षशीलता के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे;
- आज के संदर्भ में साठोत्तरी कविताओं की प्रासंगिकता पर अपना मत प्रस्तुत कर सकेंगे;
- कविता के काव्य-सौन्दर्य का उल्लेख कर सकेंगे;
- ग़ज़ल विधा की शैली और भाषा पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- समाज व देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों को समझते हुए अपना मत व्यक्त कर सकेंगे।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

(क) भेड़िए

हमारे प्राचीन साहित्य में देवताओं, दानवों एवं मानव चरित्रों के साथ-साथ पशु-पक्षियों का भी खूब चित्रण हुआ है। रामायण, महाभारत, पंचतंत्र की कथाओं आदि में भी विभिन्न पशु-पक्षियों के बहाने कोई-न-कोई संदेश देने का उद्देश्य रचनाकार का रहा है। मनुष्य से भिन्न प्राणियों को कथा का हिस्सा बनाकर रचनाकारों ने मनुष्य-समाज के समक्ष आदर्श प्रस्तुत किया है एवं मनुष्य की संवेदना में विस्तार करने का प्रयास किया है। आज भी ऐसे प्रयोग जारी हैं। हाँ, अभिव्यक्ति का ढंग जरूर परिवर्तित हो रहा है। हमारे परिवेश में विषय भी बदल रहे हैं। अभिव्यक्ति के नए ढंग और भावबोध से परिचित कराने के लिए सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की कविता 'भेड़िया' का पाठ प्रस्तुत है। सबसे पहले आप कविता पढ़िए और इसका आनंद लीजिए।

7.1 मूल पाठ

आइए, इस कविता को एक बार ध्यान से पढ़ते हैं–

भेड़िया

भेड़िया गुर्राता है
तुम मशाल जलाओ।
उसमें और तुममें
यही बुनियादी फ़र्क है
भेड़िया मशाल नहीं जला सकता।

अब तुम मशाल उठा
भेड़िये के करीब जाओ
भेड़िया भागेगा।

करोड़ों हाथों में मशाल लेकर
एक-एक झाड़ी की ओर बढ़ो
सब भेड़िये भागेंगे।

चित्र 7.1 : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

फिर उन्हें जंगल के बाहर निकाल
बर्फ में छोड़ दो
भूखे भेड़िये आपस में गुर्राएँगे
एक-दूसरे को चीथ खाएँगे।

भेड़िये मर चुके होंगे
और तुम ?

7.2 आइए समझें

प्रसंग– यह कविता हिंसक-शोषक-दमनकारी ताकतों के विरुद्ध आम आदमी को संगठित करने का संदेश देती है। प्रस्तुत अंश में वास्तविक मनुष्य एवं मनुष्य के भेष में भेड़ियों के बीच अंतर किया गया है और भेड़ियों के विरुद्ध आमजन को संगठित होने के लिए कहा गया है।

आइए, अब हम कविता के पहले अंश का भाव समझने के लिए इसे एक बार फिर से पढ़ लें।

अंश-1

व्याख्या – कविता के इस अंश को पढ़ने के बाद आप इतना तो समझ ही गए होंगे कि कवि द्वारा भेड़िए की हिंसक क्रूरता के विरुद्ध इंसानों को एकजुट होकर 'मशाल' जलाने की बात कही गई है। आप जानते हैं कि आग जलाने की कला इंसान ने सदियों पहले सीख ली थी। पशु आज भी आग जलाना नहीं जानता, बल्कि वह आग से डरता है। कवि ने इसीलिए हिंसक भेड़ियों के विरुद्ध मशाल जलाने की बात कही है।

भेड़िया गुर्राता है
तुम मशाल जलाओ।
उसमें और तुममें
यही बुनियादी फर्क है

भेड़िया मशाल नहीं जला सकता।

अब तुम मशाल उठा
भेड़िए के करीब जाओ
भेड़िया भागेगा।

कविता में 'भेड़िया' शब्द का प्रयोग प्रतीकात्मक अर्थ में किया गया है। भेड़िया उस वर्ग का प्रतीक है जो अपनी हिंसा, क्रूरता और लालच से व्यापक जन-समुदाय को डराकर उनके अधिकारों को छीन लेता है। यह कविता सामान्य जन को भेड़िए जैसे हिंसक, क्रूर, लालची लोगों से लड़ने का साहस जगाने का काम करती है।

आप यह जानते हैं कि भेड़िया एक जंगली जानवर है। यह हिंसक और क्रूर पशु है। हिंस्रता और क्रूरता पाशविक प्रवृत्ति है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु वह गुर्राता है। जैसा कि हम संकेत कर चुके हैं कि यहाँ भेड़िया केवल एक पशु नहीं है, एक प्रतीक भी है– दमन-शोषण, अन्याय और अत्याचार जैसे जनविरोधी कार्यों में लिप्त लोगों का। इसका केवल एक ही उद्देश्य रहता है कि किसी भी तरह वर्चस्व कायम रहे और स्वार्थ की पूर्ति होती रहे।

कविता की दूसरी पंक्ति में कवि ने 'तुम' सर्वनाम शब्द का प्रयोग किया है। 'तुम' वह जनसामान्य है जो सदियों से शोषित, अन्याय का शिकार, पीड़ित, उपेक्षित और शोषित जीवन जीने के लिए विवश है। इन्हीं मामूली लोगों से मशाल जलाने का आग्रह कवि कर रहा है। यहाँ मशाल भी प्रतीकात्मक है। संगठित होने की चेतना को जागृत करने की शक्ति सामान्यजन के पास होती है न कि अत्याचारी, शोषक और दमनकारी सत्ता के पास होती है। इसलिए,

कवि ने पाशविकता और मानवीयता में बुनियादी फ़र्क को रेखांकित करते हुए कहा है– तुम मशाल जला सकते हो जबकि भेड़िया इस आग से डरता है।

इस अंश की अगली पंक्ति में कवि ने मशाल उठाकर भेड़िए के सामने जाने की बात कही है। सदियों से जिसने सामान्य जन को डराकर अपनी सत्ता बनाए रखी थी, आज वह अपने सामने विरोध की मशाल देखकर भयभीत है। कवि का दृढ़ विश्वास है कि मशाल देखते ही भेड़िया भाग खड़ा होगा। संगठित शक्ति का सामना करना किसी भी क्रूर अमानवीय सत्ता के लिए एक चुनौती होती है। कवि का जनशक्ति में दृढ़ विश्वास है। इसलिए वह निश्चयपूर्वक कहता है– 'भेड़िया भागेगा।'

आगे आप दुष्यंत कुमार की कविता पढ़ेंगे, जिसमें उन्होंने 'अपने नहीं तो किसी और के सीने में ही आग जलने' की बात कही है। यहाँ भी आग जलने का अर्थ है अन्याय, दमन और शोषण के विरुद्ध संघर्ष करने की चेतना जगाना।

टिप्पणी

1. आपने ध्यान दिया होगा कि कविता के आरंभ में कवि ने संकेतों के माध्यम से कविता को विशिष्ट अर्थ प्रदान किया है। सांकेतिकता अथवा प्रतीकात्मकता कविता को विशेष अर्थ प्रदान करती है।

2. आपने यह भी देखा होगा कि कविता की हरेक पंक्ति में क्रिया शब्द का प्रयोग हुआ है; जैसे– गुर्राना, जलाना, उठाना, जाना, भागना आदि। प्रश्न है कि कवि ने क्रियाओं का इतना अधिक प्रयोग क्यों किया है? ऐसा प्रतीत होता है कि सामान्य जन को क्रियाशील, कर्मशील बनाकर समाज-विरोधियों को खदेड़ना कवि का उद्देश्य है। 'भेड़िया भागेगा' काव्य-पंक्ति के माध्यम से यह बात सिद्ध होती है।

3. कवि ने पाशविकता और मानवीयता में भेद को रेखांकित करते हुए मनुष्यता का पक्ष लिया है। उसका मानना है कि पशविकता से लड़ने की ज़रूरत बार-बार पड़ती है। उसे एक बार में नहीं हराया जा सकता है। इसलिए समाज में जब-जब पशविकता पैदा होगी तब-तब उससे लड़ने के लिए हमें एकजुट होना पड़ेगा। उसके विरुद्ध मशाल जलानी होगी।

पाठगत प्रश्न 7.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

1. भेड़िया के गुर्राने का कारण है–

   (क) उसे बहुत भूख लगी है

   (ख) उसे बहुत गुस्सा आता है

(ग) उसे दूसरों को भयभीत करना है

(घ) उसे अपनी नाराजगी प्रकट करनी है।

2. 'तुम' का प्रयोग हुआ है–

(क) भेड़ियों के लिए

(ख) कवि के लिए

(ग) सामान्य जन के लिए

(घ) मशाल के लिए

3. भेड़िया मशाल नहीं जला सकता, क्योंकि–

(क) वह आग से बहुत अधिक डरता है

(ख) उसे मशाल जलाने की कला मालूम नहीं है

(ग) उसमें संगठन की चेतना ही नहीं है

(घ) उसके लिए मशाल जलाना समय बर्बाद करना है।

4. कविता में प्रयुक्त निम्नलिखित प्रतीकों का उनके अर्थों के साथ मिलान कीजिए :

भेड़िया	जनशक्ति
मशाल	शोषक
तुम	सामूहिक चेतना

अंश–2

आइए, हम पाठ के दूसरे अंश को समझने से पहले उसे ध्यानपूर्वक पुनः पढ़ लें।

करोड़ों हाथों में मशाल लेकर
एक-एक झाड़ी की ओर बढ़ो
सब भेड़िये भागेंगे।

फिर उन्हें जंगल के बाहर निकाल
बर्फ में छोड़ दो
भूखे भेड़िये आपस में गुर्राएँगे
एक-दूसरे को चीथ खाएंगे।

भेड़िये मर चुके होंगे
और तुम ?

प्रसंग – कविता के प्रस्तुत अंश में जनता को संगठित होकर आगे बढ़ने के लिए कहा गया है। यह जनता अपनी सामूहिक ताकत से भेड़ियों को इतना पीछे धकेल देती है कि वे भूख से व्याकुल होकर आपस में ही एक-दूसरे का विनाश करने लगते हैं और जनता की जीत होती है।

व्याख्या – आपने कविता के इस अंश का वाचन करते समय ध्यान दिया होगा कि कविता के पहले अंश में भेड़िया एकवचन में था लेकिन दूसरे अंश में 'भेड़िये' शब्द का प्रयोग बहुवचन में हुआ है। ऐसा क्यों हुआ है? आइए समझें। आप जानते हैं कि अपने निजी हितों के लिए समाज का शोषण और दमन करनेवाला कोई एक ही नहीं होता, बल्कि बहुत-से लोग होते हैं। ऐसे लोगों को कवि ने 'भेड़िये' कहा है।

आप जानते हैं कि भेड़िये जंगल की झाड़ियों में रहते हैं। ये झाड़ियाँ उनके किले हैं। वे यहाँ अपने को सुरक्षित महसूस करते हैं। कवि का आग्रह है कि करोड़ों हाथों में मशाल थामकर

इन झाड़ियों की ओर बढ़ने से ही ये भेड़िए भागेंगे। कवि का विश्वास है कि करोड़ों की संख्या में आम जनता ही यह कार्य कर सकती है। इसी से शोषण समाप्त होगा और आमजन के जीवन में परिवर्तन संभव होगा। लेकिन ऐसा नहीं है कि इससे समाज सदा के लिए इनसे मुक्त हो जाएगा; क्योंकि ये अन्यायी, शोषक और उत्पीड़क लोग कहीं दूसरे लोक से नहीं आते हैं, बल्कि हमारे बीच से ही कुछ लोग भेड़िये बनकर सामने आ जाते हैं। ऐसी स्थिति में आमजन को भेड़ियों के विरुद्ध बार-बार सक्रिय होना पड़ेगा। कहीं किसी झाड़ी में, माँद में, किले में, महल में या हमारे आसपास कोई भेड़िया छिपा न रह जाए। इसकी पहचान ज़रूरी है– कवि का ऐसा दृढ़ विश्वास है। करोड़ों लोगों के मशाल उठा लेने से मानव–विरोधी शक्तियाँ भागेंगी। जब वे भागने लगें तो मशालधारी तब तक उनका पीछा करें जब तक कि जंगल की सीमा समाप्त न हो जाए और बर्फीला स्थान न मिल जाए। तमाम झाड़ियों से निकले भेड़िये बर्फ के प्रदेश में एक-दूसरे को देख गुर्राएँगे, लड़ेंगे, भिड़ेंगे, भूख के कारण एक-दूसरे को नोच डालेंगे। शोषक ही शोषक की हत्या में लिप्त हो जाएँगे। इस तरह से शोषकों के कुल का विनाश हो जाएगा तथा इन दमनकारी ताकतों का अंत होगा। यहाँ "और तुम?" से कवि का स्वप्न साकार हो रहा है कि मानवीयता और सामूहिक चेतना की जीत होने वाली है। जब भी इतिहास लिखा जाएगा उसमें यह लिपिबद्ध होगा कि शोषित और पीड़ित जनता ने अत्याचारी सत्ता को समाप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

कविता के दोनों खंडों के अध्ययन के पश्चात आप समझ चुके होंगे कि कवि ने अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थितियों की ओर संकेत किया है। सदियों से आम जन के सामाजिक और आर्थिक शोषण के ज़िम्मेदार भेड़ियों को समाप्त किए बिना समतामूलक समाज की स्थापना संभव नहीं है। देश में जंगलराज कायम करने वालों का निडर होकर सामना करना बहुत आवश्यक है। भेड़ियों से भागना समस्या का समाधान नहीं है, बल्कि उन्हें भगाना समस्या का समाधान है।

टिप्पणी

1. सर्वेश्वर की 'भेड़िया' शीर्षक से तीन कविताएँ हैं। ये इनके छठे कविता-संग्रह 'जंगल का दर्द' (1976) में संकलित हैं। इन कविताओं में कवि ने आम जनता का भेड़िया के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए आह्वान किया है। कवि का कहना है कि जनता स्वयं को असहाय समझती है, लेकिन संगठित जनशक्ति के सम्मुख शोषक वर्ग की सत्ता का बने रहना संभव नहीं है। यह कवि की कोरी कल्पना नहीं, उसका गहरा आत्मविश्वास है। इतिहास में जनशक्ति के सामने दमनकारी जनविरोधी सत्ताएँ बार-बार घुटने टेकती रही हैं।

2. उम्मीद है यह कविता आपको अच्छी लगी होगी। अब 'भेड़िये' शीर्षक अन्य दो कविताएँ भी आप एक बार पढ़ लीजिए। अन्य दोनों कविताएँ आपकी पढ़ी हुई कविता की पूरक रचनाएँ साबित होंगी। इससे आपकी समझ विकसित होगी। इस शीर्षक के अंतर्गत पहली कविता है–

भेड़िये की आँखें सुर्ख हैं

उसे तब तक घूरो
जब तक तुम्हारी आँखें
सुर्ख न हो जाएँ ।

और तुम कर भी क्या सकते हो
जब वह तुम्हारे सामने हो ?

यदि तुम मुँह छिपा भागोगे
तो भी तुम उसे
अपने भीतर इसी तरह खड़ा पाओगे
यदि बच रहे।

भेड़िये की आँखें सूर्ख हैं।
और तुम्हारी आँखें?

अब आप तीसरी कविता भी एक बार ध्यान से कर पढ़ लीजिए–

भेड़िये फिर आएँगे।

अचानक
तुममें से ही कोई एक दिन
भेड़िया बन जाएगा ।

भेड़िये का आना ज़रूरी है
तुम्हें खुद को पहचानने के लिए

निर्भय होने का सुख जानने के लिए
मशाल उठाना सीखने के लिए।

इतिहास के जंगल में
हर बार भेड़िया माँद से निकाला जाएगा
आदमी साहस से, एक होकर,
मशाल लिए खड़ा होगा।

इतिहास जिंदा रहेगा
और तुम भी
और भेड़िया ?

7.3 भाव-सौन्दर्य

'भेड़िया' शीर्षक कविता प्रतीकात्मक है। भेड़िया शोषक वर्ग का प्रतीक है। शोषण, दमन, अन्याय, अत्याचार आदि मनुष्यविरोधी कार्यों से यह वर्ग अपना वर्चस्व कायम रखता है। यह

वर्ग परजीवी होता है। कवि ने संगठित किसानों, मज़दूरों और संघर्षशील लोगों के प्रति अपनी गहरी आस्था दिखाई है। बदलाव की चेतना इसी वर्ग में उभरती है, क्योंकि यह वर्ग सकर्मक होता है। कविता सामान्य जन से और पाठक से भी सीधे संवाद स्थापित करती है। कविता में पूछा गया प्रश्न आकर्षित करता है। यद्यपि कविता अतुकांत है, तथापि इसमें लयात्मकता बनी हुई है। कविता में इस बात पर जोर दिया गया है कि शोषण और दमन से मुक्त तभी हुआ जा सकता है जब लोगों में चेतना उत्पन्न हो। समाज के पीड़ित और उपेक्षित वर्ग में पाशविकता का निर्भीक होकर मुकाबला करने का साहस संचित हो। इस कविता की खूबसूरती यह है कि कवि ने शोषणकरने वालों के विरुद्ध हिंसक आंदोलन की वकालत नहीं की है, बस उन्हें खदेड़ने की बात कही है। खदेड़े गए भेड़िये आपस में लड़-भिड़कर खुद मर जाएँगे। कवि का दृढ़ विश्वास है कि पाशविक प्रवृत्ति पर मानवीय प्रवृत्ति की विजय होगी।

7.4 शिल्प-सौन्दर्य

कविता की भाषा सरल और सहज है। इसमें प्रयुक्त शब्द भी आसान और बोलचाल की भाषा के हैं। पूरी कविता में शायद ही ऐसा कोई कठिन शब्द हो, जिसका अर्थ पाठक अथवा श्रोता के लिए अबूझ हो। देशज शब्दों का खूब प्रयोग है। साथ ही क्रियात्मक शब्दों के प्रयोग में कवि को विशेष सफलता हासिल हुई है।

इस कविता की भाषिक विशेषताओं में उल्लेखनीय हैं- प्रतीकात्मकता, लयात्मकता और प्रभावोत्पादकता। ऐसा प्रतीत होता है कि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के लिए कविता कला की बाजीगरी नहीं, बल्कि लोकजीवन के यथार्थ से सीधे जूझने की एक प्रभावशाली कसौटी है।

'भेड़िया' जैसी कविता से गुज़रकर आम आदमी जीवन के यथार्थ से स्वाभाविक तौर पर रू-ब-रू होता है। यह कविता के भाषाई सौंदर्य का सबसे सुंदर उदाहरण है। व्यापक संवेदना और गहरे आक्रोश को रूपायित करने की शक्ति सर्वेश्वर की कविता की भाषा की मूलभूत विशेषता है।

पाठगत प्रश्न 7.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. करोड़ों हाथों का संबंध किनसे है–

   (क) देवताओं से   (ख) आम आदमी से

   (ग) पूँजीपतियों से   (घ) भेड़ियों से

2. हाथों में मशाल लेकर बढ़ने में कौन-सा भाव है–

   (क) संघर्षशीलता का   (ख) अँधेरे को मिटाने का

   (ग) गर्माहट का   (घ) प्रेम का

(ख) दुष्यंत कुमार

हम अक्सर अपने आस-पास हो रही घटनाओं पर आपस में चर्चा करते रहते हैं। ऐसी कई बातें हैं जो वर्षों से हमें परेशान करती रही हैं। कुछ लोग समस्याओं के समाधान की कोशिश करते हैं और अधिकांश लोग जैसी व्यवस्था चली आ रही है, उसका चुप रहकर अनुसरण करते रहते हैं, जो कुछ भी घटित हो रहा है उसे जीवन का हिस्सा मान लेते हैं। कवि या लेखक समाज की यथार्थ स्थिति को अपनी रचनाओं के माध्यम से उजागर करते हैं और शासन व व्यवस्था के लिए समाधान भी प्रस्तुत करते हैं।

चित्र 7.3 : दुष्यंत कुमार

हमारा देश आज भी कई सामाजिक, आर्थिक एवं अन्य असमानताओं और समस्याओं से जूझ रहा है। समाज में परिवर्तन के प्रति जो उदासीनता है उसे केंद्र में रखकर दुष्यंत कुमार ने एक ग़ज़ल लिखी है। इसमें उन्होंने आम आदमी को जागरूक करते हुए व्यवस्था में सकारात्मक परिवर्तन के लिए आगे बढ़ने का आह्वान किया है। आइए, इस ग़ज़ल के माध्यम से कवि की भावनाओं और ग़ज़ल के संदेश को समझने का प्रयास करते हैं।

7.5 मूल पाठ

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी,
शर्त लेकिन थी कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए।

हर सड़क पर, हर गली में, हर नगर, हर गाँव में,
हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए।

सिर्फ़ हंगामा खड़ा करना मेरा मक़सद नहीं,
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

शब्दार्थ:

पीर–पीड़ा, कष्ट
बुनियाद–नींव, आधार
मकसद–लक्ष्य, उद्देश्य
सूरत–चेहरा, शक्ल
सीना–छाती, हृदय
लाश–शरीर, निष्क्रिय या संवेदनशून्य

बोध प्रश्न 7.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

1. कवि आग्रह कर रहा है–

   (क) राजनेताओं से (ख) सैनिकों से

   (ग) युवाओं से (घ) देशवासियों से

2. 'गंगा निकलने' से कवि का आशय है–

(क) आंदोलन करना (ख) समाधान निकलना

(ग) समस्या पहचानना (घ) विद्रोह करना

3. 'आग जलानी चाहिए' से कवि का आशय है–

(क) ईर्ष्या व द्वेष की भावना (ख) क्रोध से तप्त होना

(ग) बदलाव के लिए संघर्ष-चेतना (घ) असहयोग की भावना

7.6 आइए समझें

अंश-1

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

प्रसंग – आप जानते हैं कि हमारे समाज व देश में ऐसी कई समस्याएँ हैं जो वर्षों से बनी हुई हैं। आप ऐसा महसूस भी कर रहे होंगे कि परिस्थितियाँ और व्यवस्था बदल नहीं रही है, बल्कि समय के साथ-साथ और बदतर होती जा रही हैं। कवि ने इसी बात को इन पंक्तियों में उद्घाटित किया है। यहाँ केवल समस्याओं का उल्लेख ही नहीं हुआ है, अपितु समाधान की ओर भी संकेत दिया गया।

हाशिए पर दिए गए अंश–1 को एक बार पढ़ लीजिए।

व्याख्या – दुष्यंत कुमार मानते हैं कि मनुष्य की पीड़ा अर्थात् उसके समाज की समस्याएँ पर्वत के समान विशाल हो गई हैं। ये इतना विराट रूप ले चुकी हैं कि कवि उनको ऊँचे पर्वत के रूप में देखता है। कवि इनको समाप्त करना बहुत ज़रूरी मानता है और कहता है कि इन समस्याओं में से ही इनका समाधान निकलना चाहिए। जैसे हिमालय से गंगा निकलती है और जनमानस को नवजीवन देकर खुशहाल बनाती है, उसी प्रकार भीषण समस्याओं से जूझने वाले ही कोई समाधान निकालेंगे। विरोध का स्वर फूटेगा और समाज में नवीन परिस्थितियाँ निर्मित होंगी। समाज में नवनिर्माण से लोगों का जीवन सुखमय होगा।

शिक्षार्थियों, इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि कुरीतियों, अव्यवस्थाओं और शोषण के प्रति जागरूकता उत्पन्न करता है और समाधान हेतु प्रेरित भी करता है। प्रत्येक व्यक्ति जागरूक होकर संघर्ष करे और अपने सक्रिय विरोध से परिवर्तन की नई कहानी लिखे। कवि मानता है कि समस्याओं को देखकर घबराना नहीं चाहिए, क्योंकि इनके बीच से ही समाधान की गंगा निकलने की संभावना है।

टिप्पणी

1. पीड़ा के अनेक संदर्भ हैं; जैसे– अन्याय, शोषण, भूख, गरीबी, असमानता, भेदभाव, बीमारी, अशिक्षा इत्यादि।

2. कवि ने यातना, पीड़ा एवं कष्ट को पर्वत की तरह कठोर माना है। इसका आशय यह

है कि यह कष्ट बहुत पुराना है जो पत्थरों की तरह जम गया है। पीड़ा को पर्वत के समान कहने में उपमा अलंकार है।

3. दु:ख के हिमालय रूपी पहाड़ से समाधान अथवा दु:ख का अंत करने वाली गंगा निकलने की बात कही गई है। यहाँ प्रतीकात्मकता तो है ही रूपक अलंकार भी है।

अंश-2

प्रसंग : ग़ज़ल में दुष्यंत कुमार पिछली बात को आगे बढ़ाते हैं और समाज में परिवर्तन पर बल देते हैं। आइए, इस दूसरे अंश को ध्यान से पढ़ लीजिए।

आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी,
शर्त लेकिन थी कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए।

कवि इस ग़ज़ल के दूसरे अंश में कहता है कि हमारे समाज व व्यवस्था में बहुत-सी दीवारें ऐसी हैं जो आपसी मेल-मिलाप व सुख के बीच बाधा बनती रही हैं। ये ऐसी दीवारें हैं जिनकी वजह से हम दूसरे के जीवन को खुशहाल नहीं देख पाते। ये दीवारें हैं भाषा की, जाति की, धर्म की, रंग की और अमीरी-गरीबी की। 'दीवार' शब्द का प्रयोग यहाँ प्रतीकात्मक रूप में किया गया है जिसका आशय है मनुष्य और उसके सुखों की बीच खड़ी दीवारें। आज के सामाजिक परिवेश में अन्याय, शोषण, अत्याचार एवं असमानता की दीवारें थोड़ी कमज़ोर पड़ी हैं, इसलिए कवि इन्हें हिलता हुआ देखता है। लेकिन वह इस दीवार की नींव को हिलाना चाहता है। जिस प्रकार दीवारों पर टंगे परदे हवा से हिलकर भी वहीं टँगे रहते हैं, वैसे ही समस्याएँ थोड़ी-सी हलचल के बावजूद पूर्ववत रहती हैं। इसलिए कवि चाहता है कि दीवार की बुनियाद को हिलाकर स्थायी समाधान निकाला जाए। हर तरह के शोषण व अन्याय को तभी मिटाया जा सकता है जब इनके आधारभूत कारणों को पूरी तरह नष्ट किया जाए। कवि कहता है कि इन समस्याओं को जड़ से मिटाने की ज़रूरत है। यहाँ ग़ौर करने वाली बात यह है कि कवि इस बुनियादी परिवर्तन के लिए सभी लोगों को आगे बढ़कर संघर्ष के लिए प्रेरित कर रहा है अर्थात् समाज में शोषण, अन्याय और अत्याचार की जो बुनियादें सदियों से बनी हैं, उन्हें जड़ से मिटा देने का आह्वान कर रहा है।

अंश-3

हर सड़क पर, हर गली में,
हर नगर, हर गाँव में,
हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए।

प्रसंग – प्रस्तुत अंश में परिवर्तन की लहर को हर जगह देखने की कामना की गई है।

व्याख्या – कवि अपनी इस ग़ज़ल के तीसरे अंश में समाज के हर वर्ग को जागृत करने का प्रयास करता है। कवि उन्हें भी आंदोलित करता है जो अभी तक विकास की मुख्यधारा से कोसों दूर हैं और जो परिवर्तन करना चाहते हैं। कवि की इच्छा है कि सड़क, गली, नगर और गाँव के हर व्यक्ति में परिवर्तन की चेतना हो।

कवि इस अंश के माध्यम से कहना चाहता है कि सदियों से दलित-शोषित समाज निर्जीव हो गया है, जिसमें जीवन तो है, परंतु जीवंतता नहीं है। निराश होकर वे अपनी अभावग्रस्त दयनीय स्थिति को ही अपनी नियति मान बैठे हैं। अभाव, अपमान, उपेक्षा और उत्पीड़न को वे अपने जीवन का एक हिस्सा मान चुके हैं। ऐसे उपेक्षित जनसमूह को कवि देश की हर सड़क, हर

गली, हर नगर और हर गाँव से अपने मौलिक अधिकारों के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा देता है। कवि प्रत्येक व्यक्ति की व्यथा को वाणी देना चाहता है। कवि इन मृतप्राय अर्थात् निष्क्रिय लोगों से अपने हक़ के लिए व्यवस्था विरोध की बात कहता है। साथ ही हाथ उठाकर लहराते हुए समाज में अपनी उपस्थिति दर्ज करने की प्रेरणा देता है। कवि इन्हें इतना सक्षम और जागरूक बनाना चाहता है कि समाज की कोई व्यवस्था इनकी उपेक्षा और दमन न कर सके। 'चाहिए' के प्रयोग के माध्यम से कवि ने कहा है कि ऐसा होना चाहिए। यह मेरी इच्छा है।

टिप्पणी:

1. 'हर' शब्द का प्रयोग महत्त्वपूर्ण है। यह शब्द परिवर्तन की प्रत्येक जगह उपस्थिति की आवश्यकता की ओर संकेत करता है। साथ ही इसके प्रयोग से भाषा का चमत्कार एवं विशेष ढंग की लय भी आ गई है।
2. 'लाश' शब्द प्रतीकात्मक है। इसका अर्थ है– निर्जीव या जड़ हो चुके लोग।
3. 'पीर' शब्द पीड़ा के लिए आया है जो सामान्य बोलचाल का है।

पाठगत प्रश्न 7.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

1. कवि ने पीड़ा को किसके समान बताया है?

   (क) नदी के   (ख) पर्वत के

   (ग) सागर के   (घ) लहरों के

2. जिनमें जीवन है पर जीवंतता नहीं, उन्हें कवि ने किसके समान माना है–

   (क) मशाल के   (ख) आग के

   (ग) गंगा के   (घ) लाश के

क्रियाकलाप 7.1

आज हमारे सामने कौन-सी ऐसी मुख्य समस्याएँ हैं जिन्हें तत्काल दूर करने हेतु हमें प्रयास शुरू कर देना चाहिए। किन्हीं पाँच समस्याओं के विषय में लिखिए :

- ....
- ....

अंश–4

सिर्फ़ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं,
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

प्रसंग – प्रस्तुत अंश में दुष्यंत कुमार अपने विरोध-भाव या परिवर्तनकामी चेतना को सकारात्मक बताते हैं। वे स्पष्ट करते हैं कि, मैं केवल विरोध के लिए विरोध नहीं कर रहा हूँ बल्कि समाज बदले यह मेरी इच्छा है।

आइए इस अगले अंश को एक बार फिर ध्यान से पढ़ लें।

व्याख्या – कवि समाज की वर्तमान स्थिति से असंतुष्ट है और वह इसे बदलना चाहता है। इस बदलाव के लिए वह हंगामा करने को एक ज़रूरी शर्त तो मानता है, लेकिन यह हंगामा वास्तविक या सकारात्मक परिवर्तन के लिए होना चाहिए न कि दिखावे के लिए। कवि का बल समाज की दशा को वास्तविक रूप से बदलने और लोगों के जीवन में और समानता, एकता भाईचारा, लाने पर है।

वह अन्याय और असमानता के शिकार लोगों के जीवन में वास्तविक बदलाव लाना चाहता है। 'सूरत बदलने' से कवि का आशय है कि समाज और उसका स्वरूप बदलना चाहिए।

टिप्पणी

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

अंश-5

यहाँ कवि चेतना जागृति के माध्यम से व्यवस्था में क्रांतिकारी बदलाव की बात करता है। कवि इस बात का आह्वान करता है कि इस जनविरोधी व्यवस्था के प्रति विद्रोह की आग किसी-न-किसी के भीतर जलती रहनी चाहिए। इसमें 'आग' व्यवस्था के प्रति विद्रोह की भावना का प्रतीक है। कवि कहता है कि व्यवस्था के प्रति विद्रोह मेरे हृदय में हो या न हो परंतु समाज में यह कहीं-न-कहीं अवश्य होनी चाहिए। इस ग़ज़ल में यह बात स्पष्ट हुई है कि अब तक हम बहुत अन्याय सह चुके हैं, अब हमें अपने अधिकारों के प्रति सचेत व सक्रिय होना ही होगा। दुष्यंत कुमार कल्पना में नहीं, समाज को यथार्थ रूप में बदलने का आह्वान करते हैं। जो लोग जनविरोधी, अन्यायपूर्ण और अपमानजनक परिस्थितियों में जीने के लिए मज़बूर हैं, उन्हें निरंतर विरोध करना ही होगा। आग का जलते रहना एक सतत प्रक्रिया है। समय के साथ-साथ समाज में नई समस्याएँ व चुनौतियाँ उत्पन्न होती रहती हैं और उन्हें पहचानते हुए हर काल में उन्हें दूर करने का प्रयास करते रहना होगा। एक समस्या आज खत्म हुई तो कई दूसरी मुँह फैलाए निगलने को खड़ी हो जाती हैं। इसलिए नई चुनौतियों को स्वीकार करते हुए संघर्ष की ऊर्जा सदैव बनी रहनी चाहिए।

टिप्पणी

1. कवि ग़ज़ल के माध्यम से हमारे समक्ष कई सवाल खड़े करता है और समाधान का भी संकेत करता है। वह कहता है कि संघर्ष की आग को अपना लक्ष्य पाने तक जलाए रखना होगा।
2. कठोर और जटिल भावों और विचारों को भी सरलता, सहजता एवं मार्मिकता से कहना इस ग़ज़ल की ख़ासियत है।
3. 'आग' यहाँ पर प्रतीक है– परिवर्तनकामी चेतना की।
4. 'मेरे', 'तेरे' 'आग' शब्दों का प्रभावशाली प्रयोग है।

7.7 भाव-सौंदर्य

1. यह कविता देशवासियों का आह्वान है।

2. सामाजिक समस्याओं से और व्यवस्था की जड़ता, कुरीतियों को लेकर विरोध का भाव है।
3. स्वाधीनता के बाद व्यवस्था का विरोध है।
4. व्यवस्था के खिलाफ परिवर्तन की माँग करता है।
5. कवि बाहरी ढाँचे में नहीं अपितु मूलभूत या आधारभूत परिवर्तन चाहता है अर्थात् समस्या में आमूलचूल परिवर्तन।
6. यह परिवर्तन व्यापक जनसमूह की सहभागिता से संभव होगा।
7. कवि को लगता है कि बहुत से लोग परिवर्तन का दावा करते हैं और मात्र हंगामा करते हैं जबकि जो भी आंदोलन हो या विरोध हो उससे वास्तविक परिवर्तन होना चाहिए।

7.8 शिल्प-सौंदर्य

1. 'चाहिए' शब्द की पुनरावृत्ति कवि के भीतर की छटपटाहट को व्यक्त करता है।
2. कवि ने अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए प्रतीकात्मकता का सहारा लिया है।
3. 'हर' का बार-बार प्रयोग बलाघात है। अनुप्रास अलंकार। समाज के सभी लोगों को जोड़ने का संकल्प।
4. भाषा और शैली साक्षी संस्कृति को अभिव्यक्त करती है। हिंदी और उर्दू के समन्वित रूप की अभिव्यक्ति।
5. ग़ज़ल सरल भाषा में लिखी गई है। यह सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति में सक्षम है।

7.9 आपने क्या सीखा : चित्रात्मक प्रस्तुति

- 'भेड़िये' शीर्षक कविता में पाशविकता के विरुद्ध मानवता का संघर्ष चित्रित हुआ है। इस संघर्ष तक पहुँचने के लिए आधारभूत क्रमों, जैसे- जागरूकता, चेतना, सामूहिकता, साहसिकता आदि के बारे में उल्लेख।
- पाशविकता को दूर भगाने और मनुष्यता की स्थापना करने का हमारा भी दायित्व है, जिसे पूरा करना हमारा परम कर्त्तव्य है।
- सामूहिक चेतना के विकास का बहुत महत्व है। जनशक्ति के सामने किसी भी मनुष्य-विरोधी सत्ता का वर्चस्व टिकना संभव नहीं है।
- आज के संदर्भ में भी इस कविता की अर्थवत्ता है।
- कविता की भाषा प्रतीकात्मक और लयात्मक है। देशज शब्दों का खूब प्रयोग हुआ है।
- कविता की भाषा सरल, सहज और प्रभावशाली है।

साठोत्तरी कविता

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

- मनुष्य एवं भेड़िए के बीच अंतर
- 'भेड़िए' की प्रतीकात्मकता
- जनता की एकजुटता का महत्व
- जनशक्ति में दृढ़ विश्वास
- संकेतात्मकता
- क्रिया शब्द
- आम बोलचाल की भाषा

दुष्यंत कुमार

- समस्या एवं समाधान
- बुनियादी परिवर्तन की आवश्यकता
- परिवर्तनकामी चेतना का प्रसार
- चेतना की अग्नि कहीं-न-कहीं होनी चाहिए
- प्रतीकात्मकता
- उपमा और रूपक अलंकार
- ग़ज़ल
- बोलचाल की भाषा

7.10 सीखने के प्रतिफल

- अपने परिवेशगत अनुभवों पर अपनी स्वतंत्र और स्पष्ट राय व्यक्त करते हैं।
- पाठ्य-सामग्री में शामिल रचनाओं के साथ ही इतर रचनाओं—कविता, कहानी, एकांकी और समाचारपत्र पढ़ते हैं।
- साहित्य की विविध विधाओं में प्रयुक्त भाषा की बारीकियों पर चर्चा करते हैं; जैसे - विशिष्ट शब्द, वाक्य, शैली एवं संरचना।
- विभिन्न साहित्यिक विधाओं को पढ़ते हुए उनके सौंदर्य-पक्ष एवं व्याकरणिक संरचनाओं पर चर्चा करते हैं।
- प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों, घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को बोलकर/लिखकर व्यक्त करते हैं।
- हिंदी भाषा एवं साहित्य की परंपरा की समझ लिखकर, बोलकर एवं विचार-विमर्श के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं।
- सभी प्रकार की विविधताओं (धर्म, जाति, लिंग, क्षेत्र एवं भाषा-संबंधी) के प्रति सकारात्मक एवं विवेकपूर्ण समझ लिखकर, बोलकर एवं विचार-विमर्श के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं।
- भाषा-कौशलों के माध्यम से जीवन-कौशलों को आत्मसात करते हैं और अभिव्यक्त करते हैं।

7.11 योग्यता-विस्तार : कवि परिचय

(क) सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का जन्म 15 सितंबर, 1927 ई को बस्ती जिले के पिकोरा नामक गाँव में हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय से एम. ए. करने बाद उन्होंने विभिन्न पदों पर नौकरी की। उन्होंने आकाशवाणी के लखनऊ और दिल्ली केन्द्रों में भी काम किया। लगभग सत्रह वर्षों तक उन्होंने हिन्दी की प्रसिद्ध पत्रिका 'दिनमान' में काम किया। उन्होंने बच्चों की मासिक पत्रिका 'पराग' का भी संपादन किया था।

सर्वेश्वर की पहली कविता 1941 में 'आर्यमित्र' में प्रकाशित हुई थी। 1951 में उनकी कई कविताएँ 'प्रतीक' में प्रकाशित और चर्चित हुई। कवि की साहित्यिक यात्रा 1941 से 1983 तक की है। कवि अज्ञेय द्वारा संपादित 'तीसरा सप्तक' में कविताएँ संकलित होने के बाद उन्हें अत्यधिक ख्याति मिली। उनके काव्य-संकलन हैं– 'काठ की घंटियाँ', 'बाँस का पुल', 'एक सूनी नाव', 'गरम हवाएँ', 'कुआनो नदी', 'जंगल का दर्द', 'खूँटियों पर टँगे लोग', 'कोई मेरे साथ चले', 'बतूता का जूता' और 'महँगू की टाई'। अंतिम दोनों पुस्तकें बाल काव्य हैं।

23 सितंबर, 1983 को मात्र 57 वर्षो की आयु में सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का निधन हो गया।

(ख) दुष्यंत कुमार

दुष्यंत कुमार का जन्म उत्तर प्रदेश में बिजनौर जनपद के राजपुर नवादा गाँव में 1 सितंबर, 1933 को हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव के विद्यालय में हुई। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी.ए. और हिंदी साहित्य में एम.ए. किया। उन्होंने आकाशवाणी, दिल्ली में स्क्रिप्ट राइटर के रूप में कार्य किया। कुछ समय के लिए मध्य प्रदेश के संस्कृत संचालनालय के भाषा-विभाग में सहायक संचालक पद पर कार्यरत रहे। उन्होंने आदिम जाति जनकल्याण विभाग में भी कार्य किया।

'सूर्य का स्वागत' शीर्षक से उनकी कविताओं का संग्रह सन् 1957 में प्रकाशित हुआ। इसके बाद 'आवाज़ों के घेरे' कविता-संग्रह (1963) और 'एक कंठ विषपायी' काव्यनाटक (सन् 1964) प्रकाशित हुआ। बाद में 'छोटे-छोटे सवाल' और 'आँगन में एक वृक्ष' उपन्यास प्रकाशित हुए। तीसरा कविता-संग्रह 'जलते हुए वन का वसंत' (1973) और लोकप्रिय ग़ज़ल-संग्रह 'साये में धूप' (सन् 1975) प्रकाशित हुआ। केवल 42 वर्ष की उम्र में इनकी मृत्यु सन् 1975 में हुई।

दुष्यंत कुमार मानते थे कि उन्होंने उर्दू शब्दों को उस रूप में इस्तेमाल किया है, जिस रूप में वे हिंदी में घुल-मिल गए हैं। उनकी सदैव यही कोशिश रही कि उर्दू और हिंदी एक-दूसरे के बेहद करीब आ सकें। उन्होंने अपनी ग़ज़ल उस भाषा-शैली में लिखी जो वे बोलते और अधिक से अधिक लोग समझते थे। सरल, सुबोध और प्रखर भाषा के कारण वे लोकप्रिय शायर बन गए।

7.12 पाठांत प्रश्न

1. निम्नलिखित अंशों का काव्य-सौंदर्य लिखिए :

   (i) उसमें और तुममें
   यही बुनियादी फ़र्क है
   भेड़िया मशाल नहीं जला सकता।

   (ii) सिर्फ़ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं,
   मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

2. भेड़िया क्यों गुर्राता है ? कविता के संदर्भ में स्पष्ट कीजिए।
3. कविता में भेड़िया किसका प्रतीक है? स्पष्ट कीजिए।
4. आपकी दृष्टि में भेड़िये को भगाना क्यों जरूरी है? वर्णन कीजिए।
5. 'भेड़िया' कविता की अंतिम पंक्ति में 'और तुम?' से कवि का क्या आशय है? स्पष्ट कीजिए।
6. अपने परिवेश से एक उदाहरण देते हुए लिखिए कि सामूहिक चेतना के विकास में हमारी क्या भूमिका हो सकती है।
7. 'भेड़िया' कविता की भाषिक विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
8. दुष्यंत कुमार ने 'पीर' को 'पर्वत' के समान क्यों कहा है?
9. ग़ज़ल के माध्यम से कवि किस प्रकार का परिवर्तन चाहता है? प्रस्तुत कीजिए।
10. 'ग़ज़ल' के संदर्भ में 'लाश' का आशय स्पष्ट कीजिए।

7.13 उत्तरमाला

पाठगत प्रश्न के उत्तर

7.1 1. (ग) 2. (ग) 3. (ग) 4. भेड़िया – शोषक
मशाल-- सामूहिक चेतना
तुम–जनशक्ति

7.2 1. (ख) 2. (क)

7.3 1. (ख) 2. (घ)

बोध प्रश्न-7.1

1. (घ) 2. (ख) 3. (ग)

8

समकालीन कविता (आज की कविता)
(राजेश जोशी तथा नरेश सक्सेना)

पिछले पाठ में आपने साठोत्तरी कविता के बारे में पढ़ा। आज कविता-लेखन की परंपरा अनेक रूपों में विद्यमान है। आज की कविता के केंद्र में आम लोगों के जीवन की अभिव्यक्ति है। किसान, मजदूर और वंचित समूह आदि ने कविता में नायकत्व पाया है अर्थात् कविता में अंतिम आदमी की चिंता है। साथ ही परिवेशगत यथार्थ की व्यापक अभिव्यक्ति हुई है। एक ओर निराशा, अवसाद और मूल्यहीनता की कविता है, तो दूसरी ओर नई दिशा और दृष्टि का अवलोकन भी है। जनसामान्य के भीतर आत्मविश्वास का भाव प्रकट हुआ है। राजनीतिक संदर्भ पर आधारित कविताओं की संख्या आज बढ़ी है। साथ ही स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, आदिवासी-विमर्श, दिव्यांग-विमर्श आदि का प्रचलन कविता में बढ़ा है। भाषा और शिल्प के स्तर पर भी अनेक नए प्रयोग हो रहे हैं; जैसे- सपाटबयानी, नए दृश्य बिंब विधान, नए मुहावरे, नवगीत आदि।

आइए इस पाठ में समकालीन कविता के दो प्रमुख कवियों राजेश जोशी और नरेश सक्सेना की कविताएँ पढ़ते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- परिवार और समाज के संबंध को स्पष्ट कर सकेंगे;
- संयुक्त परिवार के टूटने के कारण सामाजिक संबंधों में आए बदलावों का उल्लेख कर सकेंगे;
- संयुक्त परिवार के गुणों और एकल परिवार के अवगुणों का वर्णन कर सकेंगे;
- कविता के भाव-सौंदर्य और शिल्प-सौंदर्य को प्रस्तुत कर सकेंगे।

- 'संयुक्त परिवार' एवं 'नक्शे' कविताओं का भाव-सौंदर्य प्रस्तुत कर सकेंगे;
- पर्यावरण तथा वर्तमान वैश्विक एवं सामाजिक बदलावों को अभिव्यक्त कर सकेंगे;
- 'संयुक्त परिवार' तथा 'नक्शे' कविता की भाषा संरचना एवं शिल्प-सौंदर्य का विश्लेषण कर सकेंगे;
- हिंदी कविता की परंपरा के साथ-साथ आधुनिक कविता के नए रूपों का वर्णन कर सकेंगे;

8.1 मूल पाठ

राजेश जोशी

(क) संयुक्त परिवार

मेरे आने से पहले ही कोई लौट कर चला गया है
घर के ताले में उसकी पर्ची खुसी है

आया होगा न जाने किस काम से वह
न जाने कितनी बातें रही होंगी मुझसे कहने को
चली गई हैं सारी बातें भी लौट कर उसी के साथ
रास्ते में हो सकता है कहीं उसने पानी तक न पिया हो
सोचा होगा शायद उसने कि यहीं मेरे साथ पिएगा चाय
कैसा लगता है इस तरह किसी का घर से लौट जाना

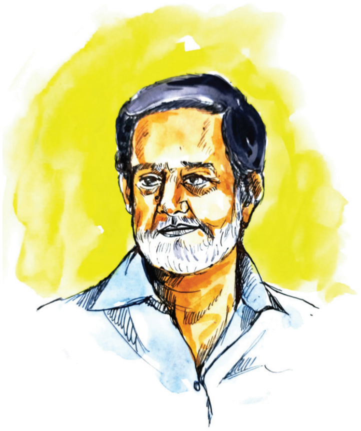

चित्र 8.1 : राजेश जोशी

इस तरह कभी कोई नहीं लौटा होगा
बचपन के उस पैतृक घर से
वहाँ बाबा थे, दादी थीं, माँ और पिता थे
लड़ते-झगड़ते भी साथ-साथ रहते थे सारे भाई-बहन
कोई न कोई हर वक़्त बना ही रहता था घर में
पल दो पल को बिठा ही लिया जाता था हर आने वाले को
पूछ लिया जाता था गुड़ और पानी को
खबर मिल जाती थी बाहर गए आदमी की
ताला देखकर शायद ही कभी कोई लौटा होगा घर से

टूटने के क्रम में टूट चुका है बहुत कुछ, बहुत कुछ
अब इस घर में रहते हैं ईन मीन तीन जन
निकलना हो कहीं तो सब निकलते हैं एक साथ
घर सूना छोड़कर
यह छोटा सा एकल परिवार
कोई एक बाहर चला जाए तो दूसरों को
काटने को दौड़ता है घर

नए चलन ने बहुत सहूलियत बख़्शी है
चोरों को

कम हो रहा है मिलना-जुलना
कम हो रही है लोगों की जान-पहचान
सुख-दु:ख में भी पहले की तरह इकट्ठे नहीं होते लोग
तार से आ जाती है बधाई और शोक सन्देश
बाबा को जानता था सारा शहर
पिता को भी चार मोहल्ले के लोग जानते थे
मुझे नहीं जानता मेरा पड़ोसी मेरे नाम से
अब सिर्फ़ एलबम में रहते हैं
परिवार के सारे लोग एकसाथ
टूटने की इस प्रक्रिया में क्या-क्या टूटा है
कोई नहीं सोचता

कोई ताला देखकर मेरे घर से लौट गया है !

बोध प्रश्न 8.1

दिए गए विकल्पों में से सही विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. संयुक्त परिवार किसे कहते हैं ?

   (क) जिसमें माता पिता और उनके बच्चे रहते हैं

   (ख) जिस परिवार में पाँच या उससे कम लोग रहते हैं

   (ग) जिस परिवार में पिता की ओर के सभी सगे-सम्बन्धी रहते हैं

   (घ) जिस परिवार में माता और पिता दोनों के सगे-सम्बन्धी रहते हैं।

2. संयुक्त परिवार के टूटने का क्या कारण है ?

   (क) बाज़ारीकरण

   (ख) पश्चिमी संस्कृति

   (ग) व्यक्तिवाद और पूंजीवाद

   (घ) उपरोक्त सभी

3. 'ईन मीन तीन जन' से कवि का क्या अभिप्राय है ?

   (क) यह तीन नाम हैं

   (ख) यह कवि के सगे-सम्बन्धी हैं

   (ग) इसका आशय एक, दो, तीन की संख्या से है

   (घ) इसका आशय विशिष्ट लोगों से है

8.2 आइए समझें

परिवार को सामाजिकता की पहली इकाई माना जाता है। एक संस्था के रूप में परिवार की रचना मानव-सभ्यता के इतिहास में बहुत पहले हुई होगी। परिवार ही हमारी पहली पाठशाला मानी जाती है। हम बहुत कुछ परिवार में ही सीखते हैं। एक संस्था के रूप में आज परिवार का आकार और उसकी स्थिति बदलती जा रही है। आधुनिक रहन-सहन, जीवन-शैली और बदलते मूल्यों के कारण संयुक्त परिवार टूटकर अब एकल परिवार में बदल रहे हैं। जिसके कारण सामाजिक संबंध भी बिखरने लगे हैं। बाज़ार का इसमें बहुत बड़ा हाथ है। आइए इस टूटते-बिखरते इन सामाजिक संबंधों को आधार बनाकर लिखी गई राजेश जोशी की कविता 'संयुक्त परिवार' पढ़ते हैं –

अंश - 1

मेरे आने से पहले .... घर से लौट जाना।

व्याख्या : कविता की शुरुआत किसी व्यक्ति के दरवाजे पर ताला लगा देखकर लौट जाने से हुई है। कवि बताता है कि दरवाज़े में ताला लगा देखकर किसी आगंतुक ने ताले में एक पर्ची लगा दी है। सम्भव है पर्ची में उस व्यक्ति ने अपना नाम, पता और आने का कारण लिखा हो। लेकिन यह स्पष्ट नहीं है।

आप जानते हैं कि एकल परिवार (अर्थात वह परिवार जिसमें सिर्फ़ माता-पिता और उनके बच्चे होते हों) के सभी सदस्य घर से बाहर होते हैं, तो दरवाजे पर ताला लग जाता है किंतु संयुक्त परिवार (वह परिवार जिसमें दादा-दादी, चाचा-चाची सहित चचेरे भाई-बहन आदि होते हों) वाले घर में ताला लगाने की ज़रूरत कभी नहीं होती, क्योंकि कोई-न-कोई सदस्य घर में हमेशा रहता है। एकल परिवार के सदस्य अपने-अपने कार्यों से घर से बाहर जाते रहते हैं इसलिए उन्हें घर के दरवाज़े पर ताला लगाना पड़ता है। कवि इस बात से चिंतित है कि मिलने के लिए आने वाला व्यक्ति मिले बिना लौटकर चला गया है। उसकी चिंता का विषय यह भी है कि वह व्यक्ति जाने किस काम से आया होगा ? उसके पास बहुत-सी बातें रही होंगी कहने के लिए, लेकिन बिना कहे ही वह लौट गया होगा। कवि उसके लौट जाने से व्यथित है। वह उसके

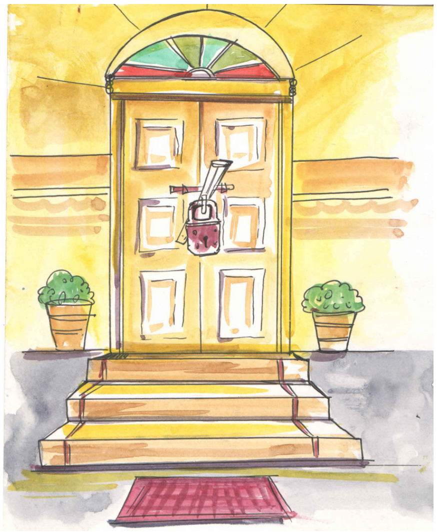

चित्र 8.2 : दरवाजे पर ताला

टिप्पणी

मेरे आने से पहले ही कोई लौटकर
चला गया है
घर के ताले में उसकी पर्ची खुसी
है

आया होगा न जाने किस काम से
वह
न जाने कितनी बातें रही होंगी
मुझसे कहने को
चली गई हैं सारी बातें भी लौटकर
उसी के साथ
रास्ते में हो सकता है कहीं उसने
पानी तक न पिया हो
सोचा होगा शायद उसने कि यहाँ
मेरे साथ पिएगा चाय
कैसा लगता है इस तरह किसी का
घर से लौट जाना

प्यासे होने के बारे में भी सोचता है और यह भी सोचता है कि शायद वह मेरे साथ चाय पीने की इच्छा से भी आया हो। घर के ताले में पर्ची का लगा होना व्यक्ति का समाज से संवाद के टूट जाने की त्रासदी को दिखाता है।

ताले में पर्ची लगी देखकर कवि बेचैन और चिंतित है कि न जाने वह आगंतुक किस काम से आया होगा! शायद कुछ कहना चाह रहा होगा! अगर वह कहीं दूर से आया होगा तो उसने पानी तक नहीं पिया होगा। कवि को इसका भी पछतावा है कि वे सारी सूचनाएँ जो उसे आगंतुक से मिलतीं, उससे वह वंचित रह गया है। आपने यह देखा होगा कि चाय पीते हुए लोग अपने सुख-दु:ख की बातें किया करते हैं। यहाँ कवि को इस बात का दु:ख है कि वह आगंतुक जो लौट गया शायद मेरे साथ बैठकर चाय पीना चाहता होगा।

पाठगत प्रश्न 8.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. 'ताला' किसका प्रतीक है ?

   (क) घर बंद होने का

   (ख) घर में किसी के न होने का

   (ग) घर की सुरक्षा का

   (घ) किसी से बात नहीं होने का

2. कवि को किस बात का पछतावा है ?

   (क) किसी के लौट जाने का

   (ख) घर में ताला लगाने का

   (ग) ताले में खुसी पर्ची का

   (घ) अतिथि से मिलने का

3. चाय की क्या सामाजिक भूमिका है ?

   (क) इसे समाज में लोग मिलकर बनाते हैं।

   (ख) यह लोगों को एक-दूसरे से मिलने का अवसर देता है।

   (ग) चाय की दुकान पर राजनीति की बातें होती हैं।

   (घ) चाय बहुत स्वादिष्ट होती है।

4. किसी का घर से लौट जाना कवि की परेशानी का कारण क्यों है ?

   (क) वह कवि की जान–पहचान का था।

   (ख) उससे कवि को बहुत ज़रूरी बातें करनी थी।

   (ग) कवि के घर से अब तक कोई अतिथि बिना मिले नहीं लौटा था।

   (घ) क्योंकि कवि को हर बात से परेशान होने की आदत है।

अंश - 2

इस तरह कभी कोई .... दौड़ता है घर।

व्याख्या : हमारी परम्परा में 'अतिथि देवो भव' के आदर्श का पालन होता रहा है। हमारे यहाँ वैदिक युग से ही अतिथि को देवता के समान माना जाता रहा है। कवि को इस बात का बहुत दु:ख है कि उसके पैतृक घर से कभी कोई इस तरह नहीं लौटा होगा। किसी आगंतुक का लौट जाना कवि के लिए एक कष्टदायक घटना है। उसे याद आते हैं संयुक्त परिवार में रहने वाले दादा-दादी, माता-पिता, चाचा-चाची और भाई-बहन सभी साथ-साथ रहते थे। यहाँ कवि की स्मृति बार-बार अपने पैतृक घर की ओर जाती है।

कविता के इस अंश में कवि उपभोक्तावादी संस्कृति पर आधारित नगरीय जीवन–शैली की तुलना ग्रामीण जीवन–शैली से करता है जहाँ उसके लिए पहले 'घर' का मतलब एक संयुक्त परिवार हुआ करता था। कवि अपने बचपन के उस पैतृक घर को याद करता है जहाँ कभी कोई दरवाज़े से ताला देखकर नहीं लौटा था। आज की नगरीय जीवन शैली में परिवार के जीविकोपार्जन का दायित्व सभी पर है, जिसके कारण प्राय: कार्य दिवसों पर घर में कोई मौजूद नहीं रहता। दरवाज़े पर लगा ताला उसी का सूचक है। कवि के शब्दों में अब इस घर में रहते हैं – 'ईन मीन तीन जन'। अर्थात् बदलती हुई आर्थिक व्यवस्था के दबाव के कारण लोग अपने कस्बों और गाँवों से पलायन करते हुए जब महानगरों की ओर आते हैं तब प्राय: पति-पत्नी और बच्चे ही उस परिवार में रहते हैं। दादा-दादी और दूसरे रिश्तेदार पीछे छूट जाते हैं।

कवि घर के सूनेपन के अहसास से घबराते हैं। खाली घर उसे काटने को दौड़ता है। मनुष्य की सामाजिकता उसके मानसिक स्वस्थ्य के लिए बहुत ज़रूरी है। वह अकेले नहीं जी सकता।

पाठगत प्रश्न 8.2

निम्नलिखित वाक्यों को ध्यानपूर्वक पढ़िए और सही वाक्यों के आगे सही (√) और ग़लत वाक्यों के आगे ग़लत (×) का निशान लगाइए :

(क) संयुक्त परिवार में अतिथि हमेशा लौट जाया करते हैं।

(ख) संयुक्त परिवार में अतिथि बिना स्वागत के नहीं लौटते हैं।

टिप्पणी

इस तरह कभी कोई नहीं लौटा होगा
बचपन के उस पैतृक घर से
वहाँ बाबा थे, दादी थीं, मां और पिता थे
लड़ते-झगड़ते भी साथ-साथ रहते थे सारे भाई-बहन
कोई न कोई हर वक्त बना ही रहता था घर में
पल दो पल को बिठा ही लिया जाता था और हर आने वाले को
पूछ लिया जाता था गुड़ और पानी को
खबर मिल जाती थी बाहर गए आदमी की
ताला देखकर शायद ही कभी कोई लौटा होगा घर से

टूटने के क्रम में टूट चुका है बहुत कुछ, बहुत कुछ
अब इस घर में रहते हैं ईन मीन तीन ज न
निकलना हो कहीं तो सब निकलते हैं एक साथ
घर सूना छोड़कर
यह छोटा सा एकल परिवार
कोई एक बाहर चला जाए तो दूसरों को
काटने को दौड़ता है घर

(ग) एकल परिवार में दादा-दादी रहते हैं।

(घ) संयुक्त परिवार में ईन मीन तीन जन ही रहते हैं।

(ङ) एकल परिवार वाला खाली घर काटने को दौड़ता है।

क्रियाकलाप 8.1

अबतक आप यह जान चुके हैं कि हमारे समाज में पहले संयुक्त परिवार हुआ करते थे जिनके टूटने से अब एकल परिवार बनने लगे हैं। हमारी परम्परा में संयुक्त परिवार का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। आप अपने आस-पास के बड़े बुजुर्गों से बात करें और उनसे यह जानने का प्रयास करें कि संयुक्त परिवार कैसा होता था ? उसके क्या फायदे थे ? एकल परिवार के बनने से हमारे सामाजिक संबंधों में किस प्रकार के बदलाव आए हैं। अपने अनुभव को लिखिए।

नए चलन ने बहुत सहूलियत बख्शी है
चोरों को
कम हो रहा है मिलना-जुलना
कम हो रही है लोगों की जान पहचान
सुख-दु:ख में भी पहले की तरह इकट्ठे नहीं होते लोग
तार से आ जाती है बधाई और शोक-सन्देश

बाबा को जानता था सारा शहर
पिता को भी चार मोहल्ले के लोग जानते थे
मुझे नहीं जानता मेरा पड़ोसी मेरे नाम से
अब सिर्फ एलबम में रहते हैं
परिवार के सारे लोग एक साथ
टूटने की इस प्रक्रिया में क्या- क्या टूटा है
कोई नहीं सोचता

कोई ताला देखकर मेरे घर से लौट गया है !

अंश - 3

नए चलन ने .... लौट गया है।

व्याख्या : कवि यहाँ उस समय को याद कर रहा है जब लोग एक दूसरे के सुख-दु:ख में शामिल रहते थे। इसके विपरीत आज एकल परिवार में सभी लोग जीवन की अपनी-अपनी जरूरतों में उलझे हैं। ऐसी जीवन शैली के कारण एक ओर लोगों के पास एक-दूसरे के लिए समय नहीं है तो दूसरी ओर चोरों को सुनहरा अवसर मिल जाता है। घरों में लगे इन तालों ने लोगों को अपने आस-पड़ोस से काट दिया है। लोग न तो एक साथ मिलकर खुशियाँ मना पाते हैं न ही दु:ख के समय एक दूसरे के काम आ पाते हैं।

इसकी मुख्य वजह यह है कि न तो लोग अपने नाते-रिश्तेदारों के साथ रहते हैं और न पड़ोसियों से मित्रता कायम करने की अब फुर्सत है। लोग मोबाइल आदि माध्यमों के जरिए बधाई और शोक के संदेश भेजकर औपचारिकता पूरी कर लेते हैं।

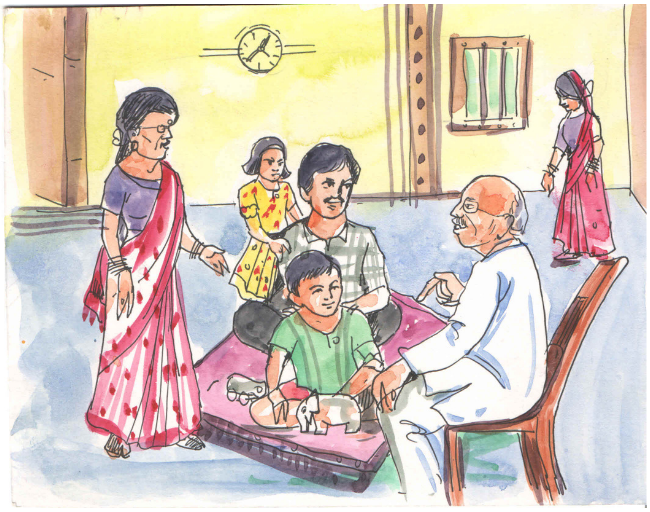

चित्र 8.3 : संयुक्त परिवार

कवि को परिवार 'टूटने' का अहसास बार-बार सताता है। संयुक्त परिवार के टूटने से अनेक स्तरों पर मूल्यों का ह्रास हो रहा है। ये मूल्य ही

परम्परा, संस्कृति और मर्यादा के नाम से जाने जाते हैं।

उन्हें इस बात की शिकायत भी है कि उपभोक्तावाद, पूँजीवाद और व्यक्तिवाद ने हमारी मूल्य व्यवस्था को बेहद क्षति पहुँचाई है। कवि संयुक्त परिवार के टूटने और एकल परिवार के बनने की प्रक्रिया में पूर्वजों और अपनी पीढ़ी के बीच के अंतर पर ध्यान दिलाते हैं। जहां उनके बाबा को सारा शहर जनता था, वहीं उनके पिता की पीढ़ी से 'अजनबीपन' का यह दौर शुरू हो गया। लेकिन तब भी उनके पिता को चार मुहल्लों के लोग जानते थे। लेकिन कवि की पीढ़ी में उसके पड़ोसी तक उनका नाम नहीं जानते। द्वार पर आया हुआ अतिथि दरवाज़े का ताला देखकर कवि के घर से लौट गया है। यह ताला आज नगरों में रहने वाले व्यक्तियों के सामाजिक अलगाव को इंगित करता है।

क्रियाकलाप 8.2

अपने परिवार के बड़े-बुजुर्गों से यह पूछें कि आपके परिवार में पहले कितने लोग साथ रहते थे? आपके परिवार की संरचना में किस तरह के बदलाव आए हैं, इस बारे में उनसे चर्चा कीजिए और संक्षेप में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

पाठगत प्रश्न 8.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. चोरों को सहूलियत होने से लेखक का क्या तात्पर्य है –

   (क) घर में ताले लगने लगे हैं।

   (ख) चोरों की संख्या बहुत बढ़ गयी है।

   (ग) घर में बहुत सारे लोग रहने लगे हैं।

   (घ) घर में लोग हमेशा नहीं रहते हैं।

2. कवि के अनुसार हमारे परिवार और समाज में क्या बदलाव आ रहा है।

   (क) आज नाते-रिश्तेदार साथ रहते हैं।

   (ख) मित्रता कायम रखने की फुर्सत नहीं।

   (ग) आज संयुक्त परिवार का विस्तार हुआ है।

   (घ) लोग अवसर विशेष पर ही एकत्रित होते हैं।

8.3 भाषा तथा शिल्प-सौन्दर्य

भाषा अभिव्यक्ति का साधन है। इसी के माध्यम से कवि अपनी अनुभूतियों एवं विचारों को अभिव्यक्त करता है। कविता रागात्मक, लाक्षणिक, प्रतीकात्मक एवं आलंकारिक होती है। कविता की भाषा सामान्य भाषा की तुलना में स्वच्छंद, लचीली, जीवन्त, प्रभावी और संप्रेषणीय होती है। आधुनिक कवियों का बल भाषा के संप्रेषण को प्रभावी बनाने पर होता है। आइए, देखते हैं कि 'संयुक्त परिवार' कविता भाषा की दृष्टि से दूसरी कविताओं से किस तरह अलग है ?

आधुनिक कविताओं में कवि का जोर परंपरागत रस, छन्द, अलंकार के नियमों पर नहीं रहता है। आधुनिक कविता की भाषा आम बोलचाल की भाषा है। यह वह भाषा है जिसमें आम जनता सोचती है, बोलती है और अपनी भावनाएँ संप्रेषित करती है। यह कविता को पढ़ते हुए आपको लगा होगा कि कवि अपनी आप बीती सुना रहा है। भाषा की सहजता इस कविता की महत्वपूर्ण विशेषता है। जब कवि एकल परिवार के सदस्यों को 'ईन मीन तीन जन' कहते हैं तब उनकी भाषा की सहजता बोली की मिठास तक पहुँच जाती है।

भाषा की सहजता आधुनिक कविता की विशेषता है। इसका कारण यह है कि आधुनिक कवि संप्रेषण को बहुत महत्वपूर्ण मानते हैं। परंतु यह आधुनिक कवि के लिए एक चुनौती भी है। माना जाता है कि लेखन में कभी भी शब्दों और उसमें निहित भावों को उस रूप में उतारना सम्भव नहीं होता, जैसा हम बातचीत के दौरान कर पाते हैं।

'संयुक्त परिवार' कविता में राजेश जोशी भाषा और शिल्प की इस चुनौती पर खरे उतरे हैं। इस कविता में 'ताला' न सिर्फ़ घर के दरवाजे पर लगा है अपितु सामाजिक संबंधों के ऊपर भी। कविता का आरंभ ही ताले में खुसी पर्ची से होता है। पर्ची कोई चाभी नहीं है जो ताले को खोल सके। लेकिन कवि ने इसके माध्यम से जिन सवालों को उठाया है, वह सभ्यता के सवाल हैं। इन दृश्यों की बुनावट के लिए इस्तेमाल भाषा इतनी सहज और सरल है कि हर पाठक जुड़ाव महसूस करता है। जिन्हें हमारे जीवन में इतना दोहराया जाता है कि वे आम व्यक्ति के लिए मुहावरे बन गए हैं।

(ख) नरेश सक्सेना (नक्शे)

अब तक आप आदिकाल, मध्यकालीन एवं आधुनिक काल के कई कवियों की कविताएँ पढ़ चुके हैं। मैथिली, ब्रज एवं अवधी भाषा की कविताओं की यात्रा करते हुए आप खड़ी बोली हिंदी के तट पर विश्राम कर रहे हैं। खड़ी बोली हिंदी का सीधा संबंध आधुनिक काल की कविताओं एवं कवियों से है। हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल का प्रारंभ अगर 1850 ई. से मानें तो आधुनिक काल का दायरा

चित्र 8.4 : नरेश सक्सेना

लगभग 150 वर्षों का ठहरता है। 150 वर्षों के इस विस्तृत काल-खंड में भी हिन्दी कविता भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, समकालीन कविता जैसे काव्य-आंदोलनों से गुजरते हुए आज यहाँ तक पहुँची है। नरेश सक्सेना आधुनिक काल के भी सबसे आधुनिक (समय के संदर्भ में) कवियों में से एक है। पिछले 50-60 वर्षों से हिन्दी कविता-लेखन के क्षेत्र में वह सक्रिय हैं। अतः उनको पढ़ना और जानना आधुनिक समय और समाज के बदलावों को जानना है। नरेश सक्सेना की कविताएँ प्राकृतिक सौंदर्य के विविध रूपों, इंजीनयरिंग पेशे के अनुभवों एवं मानवीयता के प्रति अपार प्रेम से भरी हुई हैं। वैश्वीकरण के पश्चात (भारत के संदर्भ में 1990 के बाद) बदली हुई विश्व-व्यवस्था, बाज़ारवाद के प्रति प्रतिरोध की भावना एवं पर्यावरण की चिंता भी नरेश जी की कविताओं में दिखाई पड़ती हैं। 'नक्शे' कविता पढ़ते हुए आप इन बातों को और भी गहराई से समझ पाएँगे। तो आइए, पढ़ते हैं कविता के मूल पाठ को।

क्रियाकलाप 8.3

अब तक के अपने जीवन में आपने तरह-तरह के नक्शे देखे होंगे। जैसे- ज़मीन का नक्शा, विद्यालय का नक्शा, शहर, राज्य, राष्ट्र एवं विश्व का नक्शा। मकान एवं आवासीय परिसरों के प्रचार-प्रसार का नक्शा तो आपने अखबारों में विज्ञापन के तौर पर देखा ही होगा। इन नक्शों की चार विशेषताओं को लिखिए-

(1) ....(2)...

(3) ....(4)..

आपने देखा होगा कि हर नक्शे का एक पैमाना होता है जिसका उल्लेख अधिकांशतः नक्शा बनाने वाले नक्शे के नीचे कर दिया करते हैं। नक्शे का आकार इसी से तय होता है। किसी भी 'एटलस' (मानचित्र) में राजनैतिक एवं भौगोलिक मानचित्र को ध्यान से देखें तथा उसके 'पैमाने' एवं आकार के बारे में जानकारी प्राप्त करें। समझने की कोशिश करें कि मानचित्र में क्यों 'कोई राज्य, देश, पहाड़, नदी, समुद्र आदि छोटे और बड़े दिखते हैं'?

8.4 मूल पाठ

आइए। अब कविता से रू-बरू होते हैं। किसी भी कविता को समझने का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा होता है- उसका उचित आरोह-अवरोह के साथ पाठ/वाचन। तो सबसे पहले उचित आरोह-अवरोह के साथ 'नक्शे' कविता को पढ़ते-सुनते हैं-

नक्शे

नक्शे में जंगल हैं पेड़ नहीं
नक्शे में नदियाँ हैं पानी नहीं
नक्शे में पहाड़ हैं पत्थर नहीं

टिप्पणी

नक्शे में देश है लोग नहीं
समझ ही गये होंगे आप कि हम सब
एक नक्शे में रहते हैं

हमारी पैंटों और चप्पलों से लेकर
वल्दियत और चोटों के निशान
नब्ज़ रक्तचाप और तापमान
स्वप्न और स्मृतियों सहित नप चुके हैं
और नक्शे तैयार हैं

नक्शों में नदियाँ अब भी कितनी
साफ़ हैं और चमकदार
कहती हुई
'हमें तो अब यहीं अच्छा लगता है'

नक्शों में गतियाँ हैं लक्ष्य हैं दिशाएँ हैं
अतीत है भविष्य है और सब तरह के रंग
क्या नहीं है
बाजरे की रोटियाँ और धनिये-पोदीने की चटनी तक
नक्शे में जा चुकी है

एक लंबे क्यू में खड़े बदहवास हम पूछते हैं
'भाई साहब,
कहीं हम नक्शों से बाहर तो नहीं छूट जायेंगे'

नक्शों में सबसे ख़तरनाक चीज़ होती है उनका पैमाना
पैमाना घटाते ही
बौने हो जाते हैं पहाड़
समुद्र पोखर हो जाते हैं
शहरों को छोड़िए
छोटे-मोटे देश तक ग़ायब हो जाते हैं
इसमें क़ुसूरवार नक्शे नहीं
आँखे ठहराई जाती हैं

तफ़रीह की जगह नहीं है यह
नक्शों से फ़ौरन बाहर निकल आइए
मुझे लगता है एक दिन
सारे नक्शों को मोड़कर जेब में रख लेगा कोई मसख़रा
और चलता बनेगा।

शब्दार्थ

वल्दियत – पिता का नाम
नब्ज़ – नाड़ी
स्मृति – यादाश्त
नप चुकना/चुके– किसी घेरे में आना, खत्म होना
रक्तचाप – रक्त का दबाव (ब्लड प्रेशर)
लक्ष्य – उद्‌देश्य, मंजिल
बदहवास – परेशान, हैरान
पैमाना – मापने का आधार
पोखर – तालाब
कुसूरवार – ग़लती करने वाला
तफ़रीह – मन-बहलाव हेतु इधर-उधर घूमना-फिरना
फ़ौरन – तुरंत, तत्काल
मसखरा – विदूषक, परिहास करनेवाला

क्रियाकलाप 8.4

(1) 'नक्शा' शब्द के लिए अपनी मातृभाषा से शब्द ढूँढ़कर नीचे लिखिए तथा यह भी सोचकर लिखिए कि कविता का शीर्षक 'नक्शे' (बहुवचन रूप में) क्यों है?

....

....

(2) आमतौर पर किसी भी नक्शे में क्या-क्या चीजें दिखाई जाती है?

....

....

8.5 आइए समझें

अंश-1

नक्शे में जंगल हैं पेड़ नहीं
नक्शे में नदियाँ हैं पानी नहीं
नक्शे में पहाड़ हैं पत्थर नहीं
नक्शे में देश है लोग नहीं
समझ ही गये होंगे आप कि हम सब
एक नक्शे में रहते हैं

हमारी पैंटों और चप्पलों से लेकर
वल्दियत और चोटों के निशान
नब्ज़ रक्तचाप और तापमान
स्वप्न और स्मृतियों सहित नप चुके हैं
और नक्शे तैयार हैं

नक्शों में नदियाँ अब भी कितनी
साफ़ हैं और चमकदार
कहती हुई
'हमें तो अब यहीं अच्छा लगता है'

प्रसंग : अब तक आप कविता पढ़ चुके हैं। 'नक्शा' देखना एक बात है और नक्शे को मानवीयता और उसकी आवश्यकताओं से जोड़कर समझना दूसरी बात। आइए! अब देखते हैं कि नरेश सक्सेना का 'नक्शा' कैसे अन्य नक्शों से भिन्न है? मानचित्र में रचनाकार रेखाओं के सहारे मानचित्र बनाता है जबकि कवि शब्दों के सहारे ही कविता में नक्शा गढ़ता है। शब्द ही कवि के कूची, रंग और रेखाएँ हैं। नरेश सक्सेना मूल-रूप से बोलचाल की भाषा के कवि हैं। इसलिए उनकी कविताओं में अधिकतर शब्द भी आम बोल-चाल के ही आते हैं।

व्याख्या : नरेश सक्सेना के लिखने और अधिक पढ़े जाने वाले कवि हैं। अब तक उनके दो संग्रह- 'समुद्र पर हो रही है बारिश' एवं 'सुनो चारुशीला' प्रकाशित हो चुके हैं। 'नक्शे' उनके प्रथम संग्रह की आखिरी कविता है। अब तक आप इस कविता को पढ़कर, जानकर और अलग-अलग प्रश्नों का जवाब देकर समझ चुके हैं कि कविता में 'नक्शे' की अवधारणा को भिन्न दृष्टिकोण से देखा गया है। इस दृष्टिकोण के मूल में मानवीयता, बाज़ारीकरण का असर एवं पर्यावरण की चिंता है। मूल रूप से विज्ञान एवं इंजीनियरिंग के अध्येता होने के कारण नरेश सक्सेना का वैज्ञानिक दृष्टिकोण भी इस भिन्नता का कारण है। दरअसल नरेश सक्सेना का बचपन प्रकृति की उन्मुक्त छाँव में बीता था। उन्होंने प्रकृति का स्वच्छ, निर्मल एवं प्रसन्न रूप देखा-भोगा था। इसीलिए किसी परिजन की तरह कविताओं में नरेश सक्सेना प्रकृति और पर्यावरण की दुरावस्था के प्रति चिंता अभिव्यक्त करते हैं। वस्तु और पदार्थ भी कवि के लिए मानव की तरह ही सजीव हैं। 'नक्शे' कविता में कवि की इन भावनाओं को देखा-परखा जा सकता है।

टिप्पणी

नक्शों में गतियाँ हैं लक्ष्य हैं दिशाएँ हैं
अतीत है भविष्य है और सब तरह के रंग
क्या नहीं है
बाजरे की रोटियाँ और धनिये-पोदीने की चटनी तक
नक्शे में जा चुकी है

एक लंबे क्यू में खड़े बदहवास हम पूछते हैं
'भाई साहब,
कहीं हम नक्शों से बाहर तो नहीं छूट जायेंगे'

समझ की सुविधा के लिए 'नक्शे' कविता को दो हिस्सों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम हिस्से में, नक्शे में क्या है और क्या नहीं है–का उल्लेख किया गया है। मध्य की तीन पंक्तियों में एक सामान्य व्यक्ति की जिज्ञासा और बदहवासी अभिव्यक्त की गई है कि–''कहीं हम नक्शों से बाहर तो नहीं छूट जायेंगे।'' और फिर है कविता का अंतिम और सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा। आइए, अब हम प्रथम हिस्से के अर्थ-ग्रहण की प्रक्रिया में शामिल होते हैं।

आप अलग-अलग तरह के नक्शों का मुआयना कर चुके हैं। आपने भारत और उसके सीमावर्ती देशों का नक्शा देखा। अपने राज्य और पड़ोसी राज्यों का नक्शा देखा है। अपनी ज़मीन और मकान का नक्शा देखा है। आजकल तो मकान से लेकर दुकान तक, विद्यालय से लेकर अस्पताल तक, हकीकत से लेकर ख्वाब तक–हर चीज़ का नक्शा आपके समक्ष विज्ञापन दे-देकर प्रस्तुत किया जाता है। इसीलिए कवि किसी एक नक्शा के बारे में बात करने की बजाए नक्शे (बहुवचन रूप) की बात करता है। कवि कहना चाहता है कि जाने-अनजाने आज के समय में हम सब किसी न किसी नक्शे में रहते हैं। अब सवाल यह उठता है कि वह नक्शा है कैसा? ये ऐसे नक्शे हैं जिसमें जंगल तो हैं, पर पेड़ नहीं। नदियाँ हैं, पर पानी नहीं। पहाड़ हैं, पर पत्थर नहीं। और तो और इन नक्शों में देश के देश दिखाई पड़ते हैं, पर लोगों का नामोनिशान नहीं है। मतलब भौगोलिक रूप से तो ये चीज़ें मौजूद हैं, किंतु उनका प्राण-तत्व, उनकी जीवंतता गायब है। नदी का पानी के बिना, पहाड़ का पत्थरों के बिना और देश का लोगों के बिना क्या अस्तित्व है? ज़रा सोचिए!

ऐसे नक्शे अस्तित्व में हैं और लोगों को अपनी ओर अपने रंग-रोगन और योजनाओं से आकर्षित भी कर रहे हैं। बाज़ार में तो ऐसे नक्शों की भरमार है। बस इन नक्शों में मानवीयता एवं संवेदनाएँ जगह नहीं पाती हैं। वैसे भी बाज़ार में पदार्थ और उत्पाद की जगह होती है, संवेदनाओं और मानवीयता की नहीं।

आगे की पंक्तियों में अपनी बात को बढ़ाते हुए कवि कहता है कि हमारे जीवन की छोटी-छोटी चीज़ें भी इन नक्शों की भेंट चढ़ चुकी हैं। पैंट और चप्पल उन छोटी चीज़ों के प्रतीक हैं जिनका उपयोग हम दैनिक जीवन में करते हैं। 'वल्दियत' से इशारा उन चीज़ों के प्रति है जो हमें अपने पुरखों और अपनी परंपरा से मिलता है। चोटों के निशान, हमारी स्मृति और सुख-दुख का हिस्सा हैं, जो नितांत व्यक्तिगत चीज़ें होती हैं। नब्ज, रक्तचाप और तापमान हमारे शरीर के उन हिस्सों की ओर संकेत करते हैं जिन पर सिर्फ़ और सिर्फ़ हमारा ही अधिकार होना चाहिए, चाहे वह शारीरिक बीमारी के रूप में ही क्यों न हो। परंतु नक्शे के इस ज़माने में कुछ भी हमारा नहीं है। न ही स्वप्न और न ही स्मृति। ये सभी के सभी वस्तु और उत्पाद के रूप में तब्दील होकर किसी-न-किसी नक्शे में समा गए हैं। मतलब कि हम और हमारी चीज़ें खत्म होती जा रही हैं और तरह-तरह के नक्शे तैयार हो रहे हैं। पर्यावरण प्रदूषित होता जा रहा है। प्रकृति का इतना दोहन हो रहा है कि वह अपना मूल रूप खोती जा रही है। दूसरी तरफ़ तरह-तरह के चमकदार नक्शे हमारे सामने प्रस्तुत किए जा रहे हैं। ऐसी ही स्थिति पर चुटकी लेते हुए कवि लिखता है कि अब तो नदियाँ भी कहने लगी हैं कि उन्हें भी नक्शे में ही रहना अच्छा लगता है, क्योंकि सिर्फ़ नक्शों में ही नदियाँ साफ़ और चमकदार दिखती हैं। इन पंक्तियों में प्रकृति और पर्यावरण की वर्तमान परिस्थितियों पर गहरा व्यंग्य किया

गया है। नदियों के माध्यम से यहाँ कवि की अपनी भावना अभिव्यक्त हुई है और एक तरह का आक्रोश भी। प्रकृति, पर्यावरण और नदियों की दुरावस्था तथा नक्शा प्रस्तुत करने वालों में कोई-न-कोई संबंध तो अवश्य है। कहीं इस दुरावस्था के ज़िम्मेदार वे ही तो नहीं हैं। ज़रा सोचिए और पर्यावरण के प्रति सचेत लोगों से चर्चा कीजिए।

आगे नक्शे की शक्ति का उल्लेख करते हुए कवि लिखता है कि इन नक्शों में कोई कमी नहीं है। जो-जो चीज़ें हमारे जीवन से गायब हो चुकी हैं वे भी यहाँ मौजूद हैं। अतीत और भविष्य के तमाम रंग यहाँ मौजूद हैं। हमारी परंपरा से लेकर अगले कई वर्षों की योजनाएँ लक्ष्य, भविष्य की दशा-दिशा; सब कुछ यहाँ उत्पाद रूप में मौजूद हैं। ऐसी गति और कहाँ दिखेगी जहाँ एक नज़र में आप सैकड़ों वर्ष आगे और पीछे देख सकते हैं। यहाँ तक कि बाजरे की रोटियाँ और धनिये-पोदीने की चटनी यानी कि हमारा स्वाद तक उत्पाद बन कर नक्शे में समा चुका है। यों भी आजकल गूगल के नक्शे में आपको जगह से लेकर स्वाद तक की सूचना देने वाले सभी ऐप मौजूद हैं और हमारी छोटी से छोटी सूचनाएँ उनके ऐप में दर्ज हैं। हमारी आदतें, हमारी पसंद, हमारी जगहें, क्या नहीं है उनके पास?

नक्शे में क्या है और क्या नहीं है पर इतनी बात कर लेने के बाद एक सामान्य और इस नई व्यवस्था के दुष्प्रभाव से अनजान व्यक्ति के प्रश्न से कविता अपनी भाव-भंगिमा बदलती है। इस व्यवस्था में नक्शे ने ऐसा आकर्षण और आवश्यकता पैदा कर दी है कि हर किसी को नक्शे में शामिल रहना ही श्रेयस्कर लगता है। क्या आप बता सकते हैं कि यहाँ 'हम पूछते हैं' में हम कौन है? हम इस व्यवस्था के शिकार वे तमाम लोग हैं जो किसी भी कीमत पर नक्शे में शामिल हो जाना चाहते हैं जिन्हें वर्तमान और खुद पर भरोसा नहीं है और भविष्य की चिंता से भयभीत हैं। नक्शे से बाहर छूटने की आशंका उनके इसी भय को अभिव्यक्त करती है।

अंश-2

प्रसंग : इसके बाद प्रारंभ होता है कविता का सबसे महत्वपूर्ण और अंतिम हिस्सा। इन पंक्तियों में कवि नक्शे की असलियत और उद्देश्य को उद्घाटित करता है।

व्याख्या : अभी तक कवि नक्शे के स्वरूप और उसकी वर्तमान स्थिति पर तटस्थ भाव से टिप्पणी कर रहा था। परंतु आगे की पंक्तियों में कवि की धारणाएँ और विचार अभिव्यक्त हुए हैं। आपको ध्यान होगा कि कविता में प्रवेश करने से पूर्व आपने नक्शे और पैमाने के बारे में जानकारी प्राप्त की थी। नक्शे के उस विज्ञान को ध्यान में रखते हुए अब आगे की पंक्तियाँ पढ़िए और अर्थ का अनुमान लगाइए। सोचिए कि पैमाने को सबसे खतरनाक क्यों बताया गया है? अब तक आप जान चुके हैं कि तय किए गए पैमाने के अनुसार ही नक्शे में किसी जगह की लंबाई-चौड़ाई और क्षेत्रफल तय होते हैं। इसीलिए कवि कहता है कि पैमाना घटाते ही पहाड़, शहर, समुद्र तो छोड़िए देश तक नक्शे से गायब हो जाते हैं। यानी नक्शे में कौन रहेगा और कौन नहीं, यह पैमाने से ही तय होता है। उदाहरण के लिए अगर पैमाने में 100 किमी. को एक इकाई मान लिया गया तो नक्शे में 100 किमी. से छोटी जगहें नहीं के बराबर दिखाई पड़ेंगी। और मज़े की बात तो यह है कि इसके लिए दोषी न तो नक्शे को ठहराया जाता है

नक्शों में सबसे ख़तरनाक चीज़ होती
है उनका पैमाना
पैमाना घटाते ही
बौने हो जाते हैं पहाड़
समुद्र पोखर हो जाते हैं
शहरों को छोड़िए
छोटे-मोटे देश तक ग़ायब हो जाते
हैं
इसमें कुसूरवार नक्शे नहीं
आँखे ठहराई जाती हैं

टिप्पणी

तफ़रीह की जगह नहीं है यह
नक्शों से फ़ौरन बाहर निकल आइए
मुझे लगता है एक दिन
सारे नक्शों को मोड़कर जेब में रख
लेगा कोई मसख़रा
और चलता बनेगा।

और न ही नक्शे के योजनाकारों को। बल्कि दोषी उन लोगों को माना जाता है जो उस नक्शे को देखते हैं या उसमें शामिल होना चाहते हैं।

विश्व की तमाम योजनाएँ एवं देश की विभिन्न सरकारी योजनाएँ इसके जीते-जागते उदाहरण हैं, जहाँ योजनाओं में शामिल नहीं होने की सारी ज़िम्मेदारी आम नागरिकों पर ही डाल दी जाती है। इसीलिए कवि कहता है कि जितनी जल्दी हो सके इन नक्शों से बाहर निकल आइए। यह कोई आनंद या घूमने-फिरने की जगह नहीं है। पता नहीं इन नक्शों की योजनाएँ किस उद्‌देश्य से बनाई गई हो। कवि आशंका व्यक्त करता है कि न जाने इन नक्शों के पीछे कौन-कौन से षडयंत्र हों। या फिर कोई सोची-समझी रणनीति से हमें मूर्ख ही बना रहा हो। कवि को लगता है कि एक दिन कोई परिहास करने वाला व्यक्ति सारे नक्शों को लेकर चलता बनेगा और हम ठगे-ठगे से देखते रह जाएँगे। नक्शे की राजनीति करने वाले व्यक्ति हमारे वश में नहीं है, किन्तु हम तो अपने-आपको इन योजनाओं और नक्शों से बाहर कर सकते हैं। इसीलिए कवि कविता के अंत में तमाम लोगों से अपील करता है कि नक्शों से फौरन बाहर निकल आइए। प्रकृति और मानवीयता के हित में यही है कि मनुष्य नक्शे में शामिल होने की इस अंधी दौड़ से बाहर निकल आए।

टिप्पणी

(1) 'नक्शे' कविता दो स्तरों पर चलती है। पहली 'नक्शे' और मानचित्र के संदर्भ में। यहाँ 'नक्शा', 'पैमाना' आदि जैसे शब्दों का मूल अर्थ के अलावा प्रतीकात्मक अर्थविस्तार भी है।

(2) नक्शा इस पूँजीवादी व्यवस्था द्वारा तैयार की गई उन तमाम योजनाओं का प्रतीक है जिसमें आम लोगों और देशों को शामिल होने के लिए मज़बूर किया जाता है। जिसमें व्यक्ति, प्रकृति, संवेदना और मानवीयता के लिए कोई जगह नहीं है। जहाँ हर चीज़ वस्तु और उत्पाद की तरह देखी जाती है। जहाँ गलाकाट प्रतिस्पर्द्धा, व्यावसायिकता और मुनाफ़ाखोरी ही उद्देश्य है। जहाँ शक्तिशाली राष्ट्र और लोग ही तय करते हैं 'पैमाना'। 'पैमाना' अर्थात् आधार। वे जब चाहें पैमाने को छोटा या बड़ा कर किसी को नक्शे में शामिल कर सकते हैं तो किसी को नक्शे से गायब।

(3) नरेश सक्सेना मानवीयता के प्रबल पक्षधर हैं। मनुष्य अपने जिन गुणों के कारण मनुष्य कहलाता है, उसके खोते चले जाने की चिंता इस कविता में अभिव्यक्त हुई है; जैसे– बाजरे की रोटियाँ और धनिये-पोदीने की चटनी का नक्शे में समा जाना। इसका आशय स्वाद की विविधता के खत्म हो जाने से है। इस वैश्वीकृत व्यवस्था में छोटी-छोटी चीज़ों का कोई महत्व नहीं रह गया है और बाज़ार सबको एक जैसा बना डालना चाहता है। मनुष्य ही वह प्राणी है जो अपनी परंपरा, संस्कृति और स्मृति को सहेज कर रखना चाहता है। वल्दियत और चोटों के निशान इसी ओर इशारा करते हैं। नक्शे के इस विराट रूप के समक्ष हमारे स्वप्न, स्मृति, परंपरा और संस्कृति सब कुछ खतरे में है। इसलिए कवि चाहता है कि जितनी जल्दी संभव हो इस नक्शे से बाहर निकल जाया जाए। यही मनुष्यता के हित में है।

(4) इस कविता में पर्यावरण की चिंता भी गंभीर रूप से अभिव्यक्त हुई है। कहते हैं कि महान वैज्ञानिक गैलीलियो प्रकृति को पुस्तक की तरह देखा करते थे। नरेश सक्सेना का बाल्यकाल भी स्वच्छ और स्वच्छंद प्रकृति की गोद में ही बीता था। उनकी कविताओं को पढ़ने से ऐसा लगता है कि प्रकृति ही उनकी सबसे बड़ी गुरु है। इसीलिए विज्ञान के सारे सिद्धांतों को भी वे प्रकृति में ही ढूँढ़ते हैं। प्रकृति की चिंता भी वे किसी प्रिय और आत्मीय जन की तरह करते हैं। पेड़, पानी, पत्थर, नदियाँ आदि की चिंताएँ कविता में यूँ ही अभिव्यक्त नहीं हुए हैं।

क्रियाकलाप 8.4

अब आप कविता को पढ़ और समझ चुके हैं। फिर भी कविता में कुछ शब्द ऐसे ज़रूर होंगे जो पूरी तरह आपकी समझ में नहीं आ रहे होंगे। ऐसे शब्दों को आप अपरिचित शब्द कह सकते हैं। परंतु एक बार इन शब्दों के साथ मित्रता स्थापित हो जाने के बाद ये आजीवन एक अच्छे मित्र की तरह आपका साथ निभाएँगे। तो कविता से ऐसे अपरिचित शब्दों को छाँटकर नीचे दिए गए बॉक्स में लिखिए :

अपरिचित शब्द	संभावित अथवा अनुमानित अर्थ
(1)	
(2)	
(3)	
(4)	
(5)	
(6)	
(7)	

अब अपरिचित शब्दों को ध्यान में रखते हुए एक बार और कविता को पढ़िए। इन शब्दों के ऊपर और नीचे के संदर्भ को ध्यान में रखते हुए शब्दों के अर्थ का अनुमान लगाइए। शब्दों के अनुमानित अर्थ को बॉक्स में शब्दों के सामने लिखिए।

8.6 शिल्प-सौंदर्य

1. 'नक्शे' आधुनिक काल में लिखी जा रही छंदमुक्त कविताओं का एक उदाहरण है। 'नक्शे' कविता में न तो छंद है और न ही तुकबंदी। तो फिर सवाल उठता है कि यह कविता कैसे है? गद्य से किस प्रकार भिन्न है? आधुनिक कविताएँ छंदविहीन होते हुए भी आंतरिक लय के कारण कविता होती हैं। 'नक्शे' कविता भी आंतरिक लय के

कारण ही कविता है। यह लय बनती है कविता में मौजूद भावार्थ एवं शब्दों के उपयुक्त स्थान पर प्रयोग से। उदाहरण के लिए कविता की दो पंक्तियाँ लीजिए–

पैमाना घटाते ही
बौने हो जाते हैं पहाड़

इसे गद्य रूप में कुछ यों लिखा जा सकता है– ''पहाड़ पैमाना घटाते ही बौने हो जाते हैं।'' इन गद्य-पंक्तियों में कोई लय नहीं है, क्योंकि यहाँ व्याकरण के नियमों के अनुसार क्रम का पालन किया गया है। इसके विपरीत कविता की पंक्तियों में शब्दों के उचित प्रयोग के कारण एक आंतरिक लय है जिसे आप भाव के अनुसार पढ़ते हुए भी महसूस कर सकते हैं। इसीलिए आधुनिक काल की कविताओं में उतार-चढ़ाव रखना होता है क्योंकि यहाँ रुकने और आगे बढ़ने के लिए छंद की तरह तय नियम नहीं होते हैं।

2. कविता पढ़ते हुए आपने ध्यान दिया होगा कि पूरी कविता में विराम-चिह्नों का उपयोग नहीं के बराबर किया गया है। पहला विराम ''भाई साहब'' के पश्चात संवाद को स्पष्ट करने के लिए आया है तो दूसरा कविता के अंत में। यह सिर्फ़ 'नक्शे' कविता की ही बात नहीं है। छंद मुक्त आधुनिक कविताओं में गद्य के विपरीत विराम-चिह्नों का उपयोग अल्प ही मिलता है। ऐसे में कविता वाचन के दौरान कहाँ रुकना है, कहाँ आगे बढ़ना है या कि कहाँ सुर को ऊपर की ओर ले जाना है- तय करना मुश्किल हो जाता है। इसलिए कविता के भाव को ध्यान में रखकर ही ऐसी कविताओं का उपयुक्त आरोह-अवरोह के साथ पाठ किया जा सकता है। आधुनिक कविता और गद्य की भिन्नता को आप इन बिन्दुओं को भी ध्यान में रखते हुए समझ सकते हैं। आपने यह भी ध्यान दिया होगा कि गद्य की तरह आधुनिक कविताएँ निरंतरता में नहीं लिखी जातीं। छोटे-छोटे वाक्य, भाव और लय को ध्यान में रखते हुए एक खास क्रम में एक दूसरे के नीचे रखे जाते हैं। लिखने के इस तरीके और कारण को पहचानने की कोशिश कीजिए। उदाहरण के लिए कविता की शुरू की छः पंक्तियों को ध्यान से देखिए कि उन्हें किस क्रम में एक-दूसरे के नीचे रखा गया है। यह भी समझने की कोशिश कीजिए कि गद्य-लेखन से यह किस प्रकार भिन्न है।

3. पहले भी उल्लेख किया जा चुका है कि नरेश सक्सेना बोलचाल की भाषा के कवि हैं। इसीलिए वे खुद भी मानते हैं कि उनकी कविताओं को आमतौर पर व्याख्या की ज़रूरत नहीं होती है। उनकी भाषा सरल, सहज एवं बोलचाल के करीब है। उर्दू के शब्द भी जगह-जगह मिल जाते हैं; जैसे– 'नक्शा', 'पैमाना', 'तफरीह' मसखरा आदि। इसके अलावा उनकी कविताओं में वैज्ञानिक शब्दावलियों का भी उपयोग दिखाई पड़ता है।

4. आधुनिक कविता में अभिव्यक्ति के महत्वपूर्ण तौर-तरीकों में से एक है- प्रतीक। इस कविता में भी प्रतीकों का सार्थक उपयेग किया गया है। यहाँ 'नक्शा' और 'पैमाना'

टिप्पणी

अपने मूल अर्थ के अलावा अन्य अर्थों की ओर भी संकेत कर रहा है। कविता में आए प्रतीकों और उनसे जुड़े भावों का उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। इन प्रतीकों को ध्यान में रखते हुए पुन: कविता के भाव का विस्तार करें।

5. कविता में एक खास तरह की नाटकीयता भी है। प्रारंभ में शांति, सहजता और गंभीरता, फिर एक बदहवासी एवं अंत में एक भय और सावधान सलाह– नाटकीयता को उभारते हैं। नाटकीय बनाने के लिए जगह-जगह नाटक की ही तरह संवाद का भी उपयोग किया गया है। जैसे–

   ''भाई साहब,

   कहीं हम नक्शों से बाहर तो नहीं छूट जाएँगे।''

   या फिर–

   'हमें तो अब यहीं अच्छा लगता है।'

6. पदार्थों एवं प्रकृति का भी जीवंत चित्रण किया गया है। इसीलिए नदियाँ मनुष्य की तरह बोल पड़ती हैं।

8.7 कुछ और कविताएँ/स्वयं पढ़ें/पाठ से आगे/कविता से आगे

आपने जाना और समझा कि पर्यावरण और प्रकृति के प्रति अतिरिक्त सजगता और चिंता के कारण ही नरेश सक्सेना को हरित कवि एवं उनकी कविता को हरित कविता तक कहा गया है। इसीलिए आधुनिक कवि विष्णु खरे उनके बारे में लिखते हैं– ''हिन्दी कविता में पर्यावरण को लेकर इतनी सजगता और स्नेह बहुत कम कवियों के पास है।'' नरेश सक्सेना की कविताओं की दूसरी सबसे बड़ी विशेषता उनका वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। इंजीनियरिंग पेशे और विज्ञान का दखल उनकी कविताओं में लगातार बना रहता है। आप चाहें तो उन्हें वैज्ञानिक कवि भी कह सकते हैं। नरेश सक्सेना की कविताएँ पूँजीवादी व्यवस्था एवं बाज़ारवाद के कारण पैदा हुई अमावनीय परिस्थितियों के प्रति भी गंभीर चिंता अभिव्यक्त करती हैं। आइए, उनकी इन प्रवृत्तियों को अभिव्यक्त करने वाली कविताओं में से एक को पढ़ते हैं–

एक वृक्ष भी बचा रहे

अंतिम समय जब कोई नहीं जाएगा साथ
एक वृक्ष जाएगा
अपनी गौरैयों-गिलहरियों से बिछुड़कर
साथ जाएगा एक वृक्ष
अग्नि में प्रवेश करेगा वहीं मुझसे पहले
'कितनी लकड़ी लगेगी'
श्मशान की टालवाला पूछेगा
गरीब से गरीब भी सात मन तो लेता ही है
लिखता हूँ अंतिम इच्छाओं में

कि बिजली के दाहघर में हो मेरा संस्कार
ताकि मेरे बाद
एक बेटे और बेटी के साथ
एक वृक्ष भी बचा रहे संसार में।

8.8 आपने क्या सीखा

- संयुक्त परिवार टूटते जा रहे हैं या टूट चुके हैं और उसकी जगह एकल परिवार बन रहे हैं। संयुक्त परिवार के टूटने से हमारे सामाजिक संबंधों को अपूरणीय क्षति पहुँची है।
- उपभोक्तावाद और पूँजीवादी जीवनमूल्य हमारी भारतीय परंपरा के लिए विनाशकारी साबित हुए हैं।
- 'अतिथि देवो भव' की हमारी परंपरा एकल परिवार और व्यक्तिवाद के कारण नष्ट होती जा रही है। हमारी भारतीय परंपरा जीवनमूल्यों को सिखाती है। हमें उन्हें जानना चाहिए और उसका पालन करना चाहिए।
- 'नक्शे' कविता में चित्रित किया गया है कि नक्शे में क्या है और क्या नहीं है। साथ ही नक्शे के स्वरूप और वर्तमान स्थिति की अभिव्यक्ति है।
- मनुष्य को नक्शे में शामिल होने की अंधी दौड़ से बाहर आना चाहिए।

8.9 सीखने के प्रतिफल

- अपने परिवेशगत अनुभवों पर अपनी स्वतंत्र और स्पष्ट राय व्यक्त करते हैं।
- अपने साथियों की ज़रूरतों को अपनी भाषा में अभिव्यक्त करते हैं।
- विभिन्न साहित्यिक विधाओं को पढ़ते हुए उनके सौंदर्य पक्ष एवं व्याकरणिक संरचनाओं पर चर्चा करते हैं।
- प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों, घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को बोलकर/लिखकर व्यक्त करते हैं।
- विभिन्न विषयों के आपसी संबंधों की समझ लिखकर, बोलकर एवं विचार-विमर्श के द्वारा व्यक्त करते हैं।
- विभिन्न अवसरों पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रदर्शित करते हैं; जैसे-विचार-विमर्श, वैचारिक लेखन, वाद-विवाद प्रतियोगिता आदि।
- भाषा-कौशलों के माध्यम से जीवन-कौशलों को आत्मसात करते हैं और अभिव्यक्त करते हैं।

8.10 योग्यता विस्तार

(क) राजेश जोशी

'संयुक्त परिवार' कविता के लेखक राजेश जोशी का जन्म 18 जुलाई, 1946 को नरसिंहगढ़ (मध्यप्रदेश) में हुआ था। उन्होंने प्राणिशास्त्र में एम.एस.सी. और समाजशास्त्र में एम.ए. की पढ़ाई की है। उन्होंने कुछ दिनों तक विद्यालय में अध्यापक की नौकरी की और बाद में बैंक की नौकरी करते हुए अवकाश लिया। राजेश जोशी की अनेक कविताओं का भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

उनके प्रकाशित कविता-संग्रह हैं : समर गाथा (1977), एक दिन बोलेंगे पेड़ (1980), मिट्टी का चेहरा (1985), नेपथ्य में हँसी (1994), दो पंक्तियों के बीच (2000), चाँद की वर्तनी (2006), गेंद निराली मीठू की (1989)। इनके कुछ कहानी-संग्रह जैसे सोमवार और अन्य कहानियाँ (1982), कपिल का पेड़ (2001) और कई नाटक प्रकाशित हो चुके हैं। उन्हें कई पुरस्कार भी मिले हैं; जैसे - साहित्य अकादमी पुरस्कार (2002), शमशेर सम्मान (1996), मुक्तिबोध पुरस्कार (1978), माखनलाल चतुर्वेदी पुरस्कार (1985) आदि।

(ख) नरेश सक्सेना

नरेश सक्सेना का जन्म 16 जनवरी, 1939 को ग्वालियर, मध्य प्रदेश में हुआ। पिता की नौकरी के कारण इनका बचपन जंगलो में नदियों के किनारे बीता। प्रकृति की स्वच्छंदता और उन्मुक्तता का यही अनुभव उनकी कविताओं में पर्यावरण की चिंता के प्रति अभिव्यक्त होता है। विज्ञान की पृष्ठभूमि से होने के कारण वे प्रकृति में विज्ञान एवं विज्ञान में प्रकृति ढूंढ़ते हैं। कुल मिलाकर नरेश सक्सेना की कविताओं के मूल में पर्यावरण की चिंता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं इंजीनयरिंग पेशे का अनुभव मौजूद है। इसीलिए कुछ आलोचकों ने उन्हें 'हरित कवि' एवं 'वैज्ञानिक कवि' जैसे नामकरणों से भी विभूषित किया है।

इन सारी विशेषताओं के साथ-साथ मानवीयता के प्रति अगाध-प्रेम से इनकी कविताएँ परिपूरित हैं। इसीलिए सिर्फ राष्ट्र ही नहीं, वैश्विक चिंताएँ भी इनकी कविताओं में अभिव्यक्ति पाती हैं। सामान्यत: इनकी कविताओं की भाषा बोलचाल की भाषा है। विज्ञान की पृष्ठभूमि से होने के कारण इनकी दृष्टि तार्किक एवं खोजपरक है। नरेश सक्सेना ने कम किंतु सार्थक कविताएँ लिखी हैं।

अब तक उनके दो कविता-संग्रह–'समुद्र पर हो रही है बारिश' एवं 'सुनो चारुशीला' प्रकाशित हो चुके हैं। हिंदी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ प्रकाशित होती रही हैं। उनके द्वारा लिखा गया नाटक 'आदमी का आ' देश की कई भाषाओं में पाँच हजार से ज्यादा बार प्रदर्शित हो चुका है। फिल्म निर्देशन के लिए भी उन्हें 1992 में राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। साहित्य के क्षेत्र में अपने योगदान के लिए उन्हें कबीर सम्मान (2017), पहल सम्मान (2000), भवभूति सम्मान, मीरा स्मृति सम्मान, कविता कोश

सम्मान, जनकवि नागार्जुन स्मृति सम्मान (2018) आदि अनेक प्रसिद्ध साहित्यिक सम्मान प्राप्त हो चुके हैं।

8.11 पाठांत प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में लिखिए।

1. संयुक्त परिवार से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिए।
2. संयुक्त परिवार क्यों टूट रहे हैं? अपने विचार लिखिए।
3. संयुक्त परिवार में संबंधों की क्या अहमियत होती है? स्पष्ट कीजिए।
4. 'ताले में खुसी पर्ची' से क्या आशय है? प्रस्तुत कीजिए।
5. कविता का मूल संदेश क्या है? उल्लेख कीजिए।
6. संयुक्त परिवार और एकल परिवार में तुलना करते हुए स्पष्ट कीजिए की दोनों में कौन उत्तम है? तर्क सहित उत्तर दीजिए?
7. निम्नलिखित काव्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए :

   टूटने की इस प्रक्रिया में क्या क्या टूटा है

   कोई नहीं सोचता
8. 'नक्शे' कविता का मुख्य विषयवस्तु क्या है? संक्षेप में उल्लेख करें।
9. 'नक्शे' कविता में कवि का कहना है कि 'हम सब एक नक्शे में रहते है'। क्या आप कवि के इस विचार से सहमत हैं? पक्ष या विपक्ष में अपने तर्क दीजिए।
10. 'नक्शे' कविता के आधार पर नक्शे में जो हैं और जो नहीं हैं उनकी एक सूची निम्न प्रारूप में तैयार कीजिए।

नक्शे में जो है	जो नहीं है
....	....
....	....
....	....

11. कवि ने ऐसा क्यों लिखा है कि नदियों को अब नक्शे में रहना ही अच्छा लगता है?
12. कवि को ऐसा क्यों लगता है कि एक दिन कोई मसखरा सारे नक्शों को मोड़कर जेब में रख लेगा और चलता बनेगा?
13. कविता के आधार पर लिखिए कि हर कोई नक्शे में शामिल होने के लिए क्यों परेशान है?

14. कविता में नक्शे के बजाए आँखों को कुसूरवार ठहराने से कवि का क्या आशय है?
15. नरेश सक्सेना की कविताओं की किन्हीं तीन विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
16. इस कविता की शिल्पगत विशेषताओं का बिन्दुवार उल्लेख कीजिए।

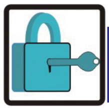

8.12 उत्तरमाला

बोध प्रश्न 8.1

1. (ग) 2. (घ) 3. (ग) 4. (ग)

पाठगत प्रश्न के उत्तर

8.1 1. (ख) 2. (क) 3. (ख) 4. (ग)

8.2 क. ग़लत ख. सही ग. ग़लत घ. ग़लत ङ. सही

8.3 1. (क) 2. (घ)

9

चीफ़ की दावत

(भीष्म साहनी)

आप दावतों में शामिल हुए होंगे और घर पर भी दावतें आयोजित की होंगी। इनके पीछे कोई-न-कोई उद्देश्य अवश्य होता है। 'चीफ़ की दावत' कहानी भी एक दावत की घटना पर आधारित है जिसके माध्यम से नगरों में रह रहे मध्यमवर्गीय परिवारों में तेज़ी से उन्नति करने की लालसा, अवसरवादिता, स्वार्थपूर्ति के लिए पारिवारिक संबंधों की आत्मीयता को ताक पर रखने की प्रवृत्तियाँ उजागर हुई हैं।

आइए, इस परिप्रेक्ष्य पर आधारित कहानी को विस्तार से पढ़ते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप :

- मध्यवर्गीय लोगों में पारिवारिक संस्कारों के विघटन का उल्लेख कर सकेंगे;
- लोगों में बढ़ रही स्वार्थपरता और अवसरवाद की प्रवृत्ति का उल्लेख कर सकेंगे;
- कहानी की प्रासंगिकता की पहचान कर अपने शब्दों में व्यक्त कर सकेंगे;
- कहानी के तत्त्वों के आधार पर पाठ की व्याख्या कर सकेंगे;
- कहानी की विशेषताओं को अभिव्यक्त कर सकेंगे।

क्रियाकलाप 9.1

- आप अपने आस-पास ऐसे वृद्ध लोगों को देखते होंगे जो परिवार में रहते हुए भी अकेलेपन से ग्रस्त रहते हैं। ऐसे किसी वृद्ध व्यक्ति के बारे में लगभग 100 शब्दों में विचार प्रकट कीजिए।

9.1 मूल पाठ

चीफ़ की दावत

आज मिस्टर शामनाथ के घर चीफ़ की दावत थी।

शामनाथ और उनकी धर्मपत्नी को पसीना पोंछने की फ़ुर्सत न थी। पत्नी ड्रैसिंग गाउन पहने, उलझे हुए बालों का जूड़ा बनाए, मुँह पर फैली हुई सुर्खी और पाउडर को भूले, और मिस्टर शामनाथ सिगरेट-पर-सिगरेट फूँकते हुए, चीज़ों की फेहरिस्त हाथ में थामे, एक कमरे से दूसरे कमरे में आ-जा रहे थे।

आखिर पाँच बजते-बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी। कुर्सियाँ, मेज, तिपाइयाँ, नैपकिन, फूल, सब बरामदे में पहुँच गए। ड्रिंक का इंतज़ाम बैठक में कर दिया गया। अब घर का फालतू सामान आलमारियों के पीछे और पलँगों के नीचे छिपाया जाने लगा। तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन खड़ी हो गई, माँ का क्या होगा?

इस बात की ओर न उनका और न उनकी कुशल गृहिणी का ध्यान गया था। मिस्टर शामनाथ, श्रीमती की ओर घूमकर अंग्रेजी में बोले- "माँ का क्या होगा?"

श्रीमती काम करते-करते ठहर गईं, और थोड़ी देर तक सोचने के बाद बोलीं, "इन्हें पिछवाड़े इनकी सहेली के घर भेज दो। रात-भर बेशक वहीं रहें। कल आ जाएँ।"

शामनाथ सिगरेट मुँह में रखे, सिकुड़ी आँखों से श्रीमती के चेहरे की ओर देखते हुए पल-भर सोचते रहे, फिर सिर हिलाकर बोले, " नहीं मैं नहीं चाहता कि उस बुढ़िया का आना-जाना यहाँ फिर से शुरू हो। पहले ही बड़ी मुश्किल से बंद किया था। माँ से कहें कि जल्दी ही खाना खाके शाम को ही अपनी कोठरी में चली जाएँ। मेहमान कहीं आठ बजे आयेंगे। इससे पहले ही अपने काम से निबट लें।"

सुझाव ठीक था। दोनों को पसंद आया। मगर फिर सहसा श्रीमती बोल उठीं, "जो वह सो गयीं और नींद में खर्राटे लेने लगीं तो? साथ ही तो बरामदा है, जहाँ लोग खाना खायेंगे।"

"तो इन्हें कह देंगे कि अंदर से दरवाज़ा बंद कर लें। मैं बाहर से ताला लगा दूँगा। या माँ को कह देता हूँ कि अंदर जाकर सोयें नहीं, बैठी रहें, और क्या?"

"और जो सो गयीं तो? डिनर का क्या मालूम कब तक चले। ग्यारह-ग्यारह बजे तक तो तुम ड्रिंक ही करते रहते हो।"

शामनाथ कुछ खीज उठे, हाथ झटकते हुए बोले, "अच्छी-भली यह भाई के पास जा रही थीं।

तुमने यूँ ही खुद अच्छा बनने के लिए बीच में टाँग अड़ा दी।''

''वाह ! तुम माँ और बेटे की बातों में मैं क्यों बुरी बनूँ ? तुम जानो और वह जानें।''

मिस्टर शामनाथ चुप रहे। यह मौका बहस का न था, समस्या का हल ढूँढने का था। उन्होंने घूमकर माँ की कोठरी की ओर देखा। कोठरी का दरवाज़ा बरामदे में खुलता था। बरामदे की ओर देखते हुए झट-से बोले, ''मैंने सोच लिया है,'' और उन्हीं कदमों से माँ की कोठरी के बाहर जा खड़े हुए। माँ दीवार के साथ एक चौकी पर बैठी, दुपट्टे में मुँह-सिर लपेटे, माला जप रही थीं। सुबह से तैयारी होती देखते हुए माँ का भी दिल धड़क रहा था। बेटे के दफ्तर का बड़ा साहब घर पर आ रहा है, सारा काम सुभीते से चल जाय।

''माँ, आज तुम खाना जल्दी खा लेना। मेहमान लोग साढ़े सात बजे आ जायेंगे।''

माँ ने धीरे-से मुँह पर से दुपट्टा हटाया और बेटे को देखते हुए कहा, ''आज मुझे खाना नहीं खाना है, बेटा, तुम जानते तो हो, माँस-मछली बने, तो मैं कुछ नहीं खाती।''

''जैसे भी हो, अपने काम से जल्दी निबट लेना।''

''अच्छा बेटा!''

''और माँ, हम लोग पहले बैठक में बैठेंगे। उतनी देर तुम यहाँ बरामदे में बैठना। फिर जब हम यहाँ आ जायें, तो तुम गुसलखाने के रास्ते बैठक में चली जाना।''

माँ अवाक् बेटे का चेहरा देखने लगीं। फिर धीरे-से बोली, ''अच्छा बेटा।''

''और माँ, आज जल्दी सो नहीं जाना। तुम्हारे खर्राटों की आवाज़ दूर तक जाती है।''

माँ लज्जित-सी आवाज में बोलीं, ''क्या करूँ बेटा, मेरे बस की बात नहीं है। जब से बीमारी से उठी हूँ, नाक से साँस नहीं ले सकती।''

मिस्टर शामनाथ ने इंतज़ाम तो कर दिया, फिर भी उनकी उधेड़-बुन खत्म नहीं हुई। जो चीफ़ अचानक उधार आ निकला तो ? आठ-दस मेहमान होंगे, देसी अफसर, उनकी स्त्रियाँ होंगी, कोई भी गुसलखाने की तरफ जा सकता है। क्षोभ और क्रोध में वह फिर झुँझलाने लगे। एक कुर्सी को उठाकर बरामदे में कोठरी के बाहर रखते हुए बोले, आओ माँ, इस पर ज़रा बैठो तो।

माँ माला सँभालती, पल्ला ठीक करती उठीं, और धीरे-से कुर्सी पर आकर बैठ गयीं।

''यूँ नहीं, माँ, टाँगें ऊपर चढ़ाकर नहीं बैठते। यह खाट नहीं है।''

माँ ने टाँगें नीचे उतार लीं।

''और खुदा के वास्ते नंगे पाँव नहीं घूमना। न ही वह खड़ाऊँ पहनकर सामने आना। किसी दिन तुम्हारी वह खड़ाऊँ उठाकर मैं बाहर फेंक दूँगा।''

माँ चुप रहीं।

"कपड़े कौन-से पहनोगी माँ?"

"जो हैं, वही पहनूँगी बेटा ! जो कहो, पहन लूँ।

मिस्टर शामनाथ सिगरेट मुँह में रखे, फिर अधखुली आँखों से माँ की ओर देखने लगे, और माँ के कपड़ों की सोचने लगे। शामनाथ हर बात में तरतीब चाहते थे। घर का सब संचालन उनके अपने हाथ में था। खूँटियाँ कमरों में कहाँ लगायी जायँ, बिस्तर कहाँ पर बिछें, किस रंग के पर्दे लगाये जायें, श्रीमती कौन-सी साड़ी पहनें, मेज किस साइज़ की हो .... शामनाथ को चिंता थी कि अगर चीफ़ का साक्षात् माँ से हो गया, तो कहीं लज्जित नहीं होना पड़े। माँ को सिर से पाँव तक देखते हुए बोले, "तुम सफ़ेद कमीज़ और सफ़ेद सलवार पहन लो माँ। पहन के आओ तो, जरा देखूँ।"

माँ धीरे-से उठीं और अपनी कोठरी में कपड़े पहनने चली गयीं।

"यह माँ का झमेला ही रहेगा," उन्होंने फिर अंग्रेज़ी में अपनी स्त्री से कहा, कोई ढंग की बात हो, तो भी कोई कहे। अगर कहीं कोई उल्टी-सीधी बात हो गयी, चीफ़ को बुरा लगा, तो सारा मज़ा जाता रहेगा।"

माँ सफ़ेद कमीज़ और सफ़ेद सलवार पहनकर बाहर निकलीं। छोटा-सा कद, सफ़ेद कपड़ों में लिपटा, छोटा-सा सूखा हुआ शरीर, धुंधली आँखें, केवल सिर के आधे झड़े हुए बाल पल्ले की ओट में छिप पाये थे। पहले से कुछ ही कम कुरूप नजर आ रही थीं।

"चलो ठीक है। कोई चूड़ियाँ-वूड़ियाँ हों, तो वह भी पहन लो। कोई हर्ज नहीं।"

"चूड़ियाँ कहाँ से लाऊँ बेटा ? तुम तो जानते हो, सब ज़ेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गये।"

यह वाक्य शामनाथ को तीर की तरह लगा। तिनककर बोला, "यह कौन-सा राग छेड़ दिया, माँ ! सीधा कह दो, नहीं हैं ज़ेवर, बस ! इससे पढ़ाई-वढ़ाई का क्या तकल्लुक है? जो जेवर बिका, तो कुछ बनकर ही आया हैं, निरा लँडूरा तो नहीं लौट आया। जितना दिया था, उससे दुगना ले लेना।"

"मेरी जीभ जल जाए बेटा, तुमसे ज़ेवर लूँगी ? मेरे मुँह से यूँ ही निकल गया। जो होते तो लाख बार पहनती !"

साढ़े पाँच बज चुके थे। अभी मिस्टर शामनाथ को खुद भी नहा-धोकर तैयार होना था। श्रीमती कब की अपने कमरे में जा चुकी थीं। शामनाथ जाते ही एक बार फिर माँ को हिदायत करते गये, "माँ, रोज की तरह गुमसुम बन के नहीं बैठी रहना। अगर साहब इधर आ निकलें और कोई बात पूछें, तो ठीक तरह से बात का जवाब देना।"

"मैं न पढ़ी, न लिखी, बेटा, मैं क्या बात करूँगी। तुम कह देना, माँ अनपढ़ है, कुछ जानती-समझती नहीं। वह नहीं पूछेगा।"

सात बजते-बजते माँ का दिल धक्-धक् करने लगा। अगर चीफ़ सामने आ गया और उसने

कुछ पूछा, तो वह क्या जवाब देंगी। अंग्रेज़ को तो दूर से ही देखकर वह घबरा उठती थीं, यह तो अमरीकी है। न मालूम क्या पूछे। मैं क्या कहूँगी। माँ का जी चाहा कि चुपचाप पिछवाड़े विधवा सहेली के घर चली जायँ। मगर बेटे के हुक्म को कैसे टाल सकती थीं। चुपचाप कुर्सी पर से टाँगें लटकाये वहीं बैठी रहीं।

एक कामयाब पार्टी वह है, जिसमें ड्रिंक कामयाबी से चल जाएँ। शामनाथ की पार्टी सफलता के शिखर चूमने लगी। वार्तालाप उसी रौ में बह रहा था, जिस रौ में गिलास भरे जा रहे थे। कहीं कोई रुकावट न थी, कोई अड़चन न थी। साहब को व्हिस्की पसंद आयी थी। मेम साहब को पर्दे पसंद आये थे, सोफ़ा-कवर का डिज़ाइन पसंद आया था, कमरे की सजावट पसंद आयी थी। इससे बढ़कर क्या चाहिए। साहब तो ड्रिंक के दूसरे दौर में ही चुटकले और कहानियाँ कहने लग गये थे। दफ्तर में जितना रोब रखते थे, यहाँ पर उतने ही दोस्त-परवर हो रहे थे और उनकी स्त्री, काला गाउन पहने, गले में सफ़ेद मोतियों का हार, सेंट और पाउडर की महक से ओत-प्रोत, कमरे में बैठी सभी देसी स्त्रियों की आराधना का केंद्र बनी हुई थीं। बात-बात पर हँसतीं, बात-बात पर सिर हिलातीं और शामनाथ की स्त्री से तो ऐसे बातें कर रही थीं, जैसे उनकी पुरानी सहेली हों।

और इसी रौ में पीते-पिलाते साढ़े दस बज गये। वक्त गुजरता पता ही न चला।

आखिर सब लोग अपने-अपने गिलासों में से आख़िरी घूँट पीकर खाना खाने के लिए उठे और बैठक से बाहर निकले। आगे-आगे शामनाथ रास्ता दिखाते हुए, पीछे चीफ़ और दूसरे मेहमान ।

बरामदे में पहुँचते ही शामनाथ सहसा ठिठक गए। जो दृश्य उन्होंने देखा, उससे उनकी टाँगें लड़खड़ा गयीं, और क्षण-भर में सारा नशा हिरन होने लगा। बरामदे में ऐन कोठरी के बाहर माँ अपनी कुर्सी पर ज्यों-की-त्यों बैठी थीं। मगर दोनों पाँव कुर्सी की सीट पर रखे हुए, और सिर दायें से बायें और बायें से दायें झूल रहा था और मुँह में से लगातार गहरे ख़र्राटों की आवाज़ें आ रही थीं। जब सिर कुछ देर के लिए टेढ़ा होकर एक तरफ़ को थम जाता, तो खर्राटे और भी गहरे हो उठते। और फिर जब झटके से नींद टूटती, तो सिर फिर दायें से बायें झूलने लगता। पल्ला सिर पर से खिसक आया था, और माँ के झरे हुए बाल, आधे गंजे सिर पर अस्त-व्यस्त बिखर रहे थे।

देखते ही शामनाथ क्रुद्ध हो उठे। जी चाहा कि माँ को धक्का देकर उठा दें, और उन्हें कोठरी में धकेल दें, मगर ऐसा करना संभव न था,

चित्र 9.1 : बूढ़ी महिला अकेली बैठी हुई

चीफ़ और बाकी मेहमान पास खड़े थे।

माँ को देखते ही देसी अफ़सरों की कुछ स्त्रियाँ हँस दीं कि इतने में चीफ़ ने धीरे-से कहा-पूअर डियर !

माँ हड़बड़ा के उठ बैठीं। सामने खड़े इतने लोगों को देखकर ऐसी घबरायीं कि कुछ कहते न बना। झट-से पल्ला सिर पर रखती हुई खड़ी हो गयीं और ज़मीन को देखने लगीं। उनके पाँव लड़खड़ाने लगे और हाथों की उँगलियाँ थर-थर काँपने लगीं।

''माँ, तुम जाके सो जाओ, तुम क्यों इतनी देर तक जाग रही थीं ?'' और खिसियायी हुई नजरों से शामनाथ चीफ़ के मुँह की ओर देखने लगे।

चीफ़ के चेहरे पर मुस्कराहट थी। वह वहीं खड़े-खड़े बोले, ''नमस्ते!''

माँ ने झिझकते हुए, अपने में सिमटते हुए दोनों हाथ जोड़े, मगर एक हाथ दुपट्टे के अंदर माला को पकड़े हुए था, दूसरा बाहर। ठीक तरह से नमस्ते भी न कर पायीं। शामनाथ इस पर भी खिन्न हो उठे।

इतने में चीफ़ ने अपना दायाँ हाथ, हाथ मिलाने के लिए माँ के आगे किया। माँ और भी घबरा उठीं।

''माँ, हाथ मिलाओ।''

पर हाथ कैसे मिलातीं ? दायें हाथ में तो माला थी। घबराहट में माँ ने बायाँ हाथ ही साहब के दायें हाथ में रख दिया। शामनाथ दिल-ही-दिल में जल उठे। देसी अफ़सरों की स्त्रियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

''यूँ नहीं, माँ ! तुम तो जानती हो, दायाँ हाथ मिलाया जाता है। दायाँ हाथ मिलाओ।''

मगर तब तक चीफ़ माँ का बायाँ हाथ ही बार-बार हिलाकर कह रहे थे- ''हौ डू यू डू?''

''कहो माँ, मैं ठीक हूँ, खैरियत से हूँ।''

माँ कुछ बड़बड़ायीं।

''माँ कहती हैं, मैं ठीक हूँ। कहो माँ, हौ डू यू डू!''

माँ धीरे-से सकुचाते हुए बोलीं- ''हौ डू डू...''

एक बार फिर क़हक़हा उठा।

वातावरण हल्का होने लगा। साहब ने स्थिति संभाल ली थी। लोग हँसने-चहकने लगे थे। शामनाथ के मन का क्षोभ भी कुछ-कुछ कम होने लगा था।

साहब अपने हाथ में माँ का हाथ अब भी पकड़े हुए थे, और माँ सिकुड़ी जा रही थीं। साहब के मुँह से शराब की बू आ रही थी।

शामनाथ अंग्रेज़ी में बोले, ''मेरी माँ गाँव की रहनेवाली हैं। उमर-भर गाँव में रही हैं। इसलिए आपसे लजाती हैं।''

साहब इस पर खुश नजर आए। बोले, ''सच? मुझे गाँव के लोग बहुत पसंद हैं, तब तो तुम्हारी माँ गाँव के गीत और नाच भी जानती होंगी?'' चीफ़ खुशी से सिर हिलाते हुए माँ को टिकटिकी बाँधे देखने लगे।

''माँ, साहब कहते हैं, कोई गाना सुनाओ। कोई पुराना गीत, तुम्हें तो कितने ही याद होंगे।''

माँ धीरे-से बोली, ''मैं क्या गाऊँगी, बेटा ! मैंने कब गाया है ?''

''वाह, माँ ! मेहमान का कहा भी कोई टालता है ?''

''साहब ने इतनी रीझ से कहा है, नहीं गाओगी, तो साहब बुरा मानेंगे।''

''मैं क्या गाऊँ, बेटा, मुझे क्या आता है ?''

''वाह ! कोई बढ़िया टप्पे सुना दो। दो पत्तर अनाराँ दे...''

देसी अफ़सर और उनकी स्त्रियों ने इस सुझाव पर तालियाँ पीटीं। माँ कभी दीन दृष्टि से बेटे के चेहरे को देखतीं, कभी पास खड़ी बहू के चेहरे को।

इतने में बेटे ने गंभीर आदेश-भरे लहजे में कहा, ''माँ !''

इसके बाद हाँ या ना का सवाल ही न उठता था। माँ बैठ गयीं और क्षीण, दुर्बल, लरज़ती आवाज़ में एक पुराना विवाह का गीत गाने लगीं-

हरिया नी माये, हरिया नी भैणे

हरिया ते भागी भरिया है!

देसी स्त्रियाँ खिलखिला के हँस उठीं। तीन पंक्तियाँ गा के माँ चुप हो गयी।

बरामदा तालियों से गूँज उठा। साहब तालियाँ पीटना बंद ही न करते थे। शामनाथ की खीज प्रसन्नता और गर्व में बदल उठी थी। माँ ने पार्टी में नया रंग भर दिया था।

तालियाँ थमने पर साहब बोले, ''पंजाब के गाँवों की दस्तकारी क्या है ?''

शामनाथ खुशी में झूम रहे थे। बोले, ''ओ, बहुत कुछ साहब ! मैं आपको एक सेट उन चीज़ों का भेंट करूँगा। आप उन्हें देखकर खुश होंगे।''

मगर साहब ने सिर हिलाकर अंग्रेज़ी में फिर पूछा, ''नहीं, मैं दुकानों की चीज़ नहीं माँगता। पंजाबियों के घरों में क्या बनता है, औरतें खुद क्या बनाती हैं?''

शामनाथ कुछ सोचते हुए बोले, ''लड़कियाँ गुड़ियाँ बनाती हैं, औरतें फुलकारियाँ बनाती हैं।''

''फुलकारी क्या है ?''

शामनाथ फुलकारी का मतलब समझाने की असफल चेष्टा करने के बाद माँ को बोले, ''क्यों, माँ, कोई पुरानी फुलकारी घर में है ?''

माँ चुपचाप अंदर गयीं और अपनी पुरानी फुलकारी उठा लायीं।

साहब बड़ी रुचि से फुलकारी देखने लगे। पुरानी फुलकारी थी, जगह-जगह से उसके तागे टूट रहे थे और कपड़ा फटने लगा था। साहब की रुचि को देखकर शामनाथ बोले, ''यह फटी हुई है, साहब, मैं आपको नयी बनवा दूँगा। माँ बना देंगी। क्यों, माँ, साहब को फुलकारी बहुत पसंद है, इन्हें ऐसी ही फुलकारी बना दोगी न?

माँ चुप रहीं। फिर डरते-डरते धीरे-से बोली, ''अब मेरी नज़र कहाँ है, बेटा ? बूढ़ी आँखें क्या देखेंगी?''

मगर माँ का वाक्य बीच ही में तोड़ते हुए शामनाथ साहब को बोले, ''वह ज़रूर बना देंगी। आप उसे देखकर खुश होंगे।''

साहब ने सिर हिलाया, धन्यवाद किया और हल्के-हल्के झूमते हुए खाने की मेज की ओर बढ़ गए। बाकी मेहमान भी उनके पीछे-पीछे हो लिए।

जब मेहमान बैठ गए और माँ पर से सबकी आँखें हट गयीं, तो माँ धीरे-से कुर्सी पर से उठीं, और सबसे नज़रें बचाती हुई अपनी कोठरी में चली गयीं।

मगर कोठरी में बैठने की देर थी कि आँखों से छल-छल आँसू बहने लगे। वह दुपट्टे से बार-बार उन्हें पोंछतीं पर वह बार-बार उमड़ आते, जैसे बरसों का बाँधा तोड़कर उमड़ आए हों। माँ ने बहुतेरा दिल को समझाया, हाथ जोड़े, भगवान का नाम लिया, बेटे के चिरायु होने की प्रार्थना की, बार-बार आँखें बंद कीं, मगर आँसू बरसात के पानी की तरह जैसे थमने में ही न आते थे।

आधी रात का वक्त होगा। मेहमान खाना खाकर एक-एक करके जा चुके थे। माँ दीवार से सटकर बैठी आँखें फाड़े दीवार को देखे जा रही थीं। घर के वातावरण में तनाव ढीला पड़ चुका था। मुहल्ले की निस्तब्धता शामनाथ के घर पर भी छा चुकी थी, केवल रसोई में प्लेटों के खनकने की आवाज आ रही थी। तभी सहसा माँ की कोठरी का दरवाज़ा जोर से खटकने लगा।

''माँ, दरवाज़ा खोलो।''

माँ का दिल बैठ गया। हड़बड़ाकर उठ बैठीं। क्या मुझसे फिर कोई भूल हो गयी? माँ कितनी देर से अपने-आपको कोस रही थीं कि क्यों उसे नींद आ गई, क्यों वह ऊँघने लगी। क्या बेटे ने अभी तक क्षमा नहीं किया? माँ उठीं और काँपते हाथों से दरवाज़ा खोल दिया।

दरवाजा खुलते ही शामनाथ झूमते हुए आगे बढ़ आये और माँ को आलिंगन में भर लिया।

''ओ अम्मी ! तुमने तो आज रंग ला दिया ! साहब तुमसे इतना खुश हुआ कि क्या कहूँ। ओ अम्मी ! अम्मी !''

माँ की छोटी-सी काया सिमटकर बेटे के आलिंगन में छिप गई। माँ की आँखों में फिर आँसू आ गए। उन्हें पोंछती हुई धीरे-से बोली, ''बेटा, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो। मैं कबसे कह रही हूँ।''

शामनाथ का झूमना सहसा बंद हो गया और उनकी पेशानी पर फिर तनाव के बल पड़ने लगे। उनकी बाँहें माँ के शरीर पर से हट आयीं।

''क्या कहा, माँ? यह कौन-सा राग तुमने फिर छेड़ दिया?''

शामनाथ का क्रोध बढ़ने लगा था, बोलते गये-''तुम मुझे बदनाम करना चाहती हो, ताकि दुनिया कहे कि बेटा माँ को अपने पास नहीं रख सकता।''

''नहीं बेटा, अब तुम अपनी बहू के साथ जैसा मन चाहे रहो। मैंने अपना खा-पहन लिया। अब यहाँ क्या करूँगी। जो थोड़े दिन ज़िंदगानी के बाकी हैं, भगवान का नाम लूँगी। तुम मुझे हरिद्वार भेज दो!''

''तुम चली जाओगी, तो फुलकारी कौन बनाएगा? साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है।''

''मेरी आँखें अब नहीं हैं, बेटा, जो फुलकारी बना सकूँ। तुम कहीं और से बनवा लो। बनी-बनायी ले लो।''

''माँ, तुम मुझे धोखा देके यूँ चली जाओगी। मेरा बनता काम बिगाड़ोगी? जानती नहीं, साहब खुश होगा, तो मुझे तरक्की मिलेगी!''

माँ चुप हो गयीं। फिर बेटे के मुँह की ओर देखती हुई बोलीं- ''क्या तेरी तरक्की होगी? क्या साहब तेरी तरक्की कर देगा? क्या उसने कुछ कहा है?''

''कहा नहीं, मगर देखती नहीं, कितना खुश गया है। कहता था, जब तेरी माँ फुलकारी बनाना शुरू करेंगी, तो मैं देखने आऊँगा कि कैसे बनाती हैं। जो साहब खुश हो गया, तो मुझे इससे बड़ी नौकरी भी मिल सकती है, मैं बड़ा अफ़सर बन सकता हूँ।

माँ के चेहरे का रंग बदलने लगा, धीरे-धीरे उसका झुर्रियों-भरा मुँह खिलने लगा, आँखों में हल्की-हल्की चमक आने लगी।

''तो तेरी तरक्की होगी, बेटा?''

''तरक्की यूँ ही हो जायेगी ? साहब को खुश रखूँगा, तो कुछ करेगा, वर्ना उसकी ख़िदमत करनेवाले और थोड़े हैं?''

''तो मैं बना दूँगी, बेटा, जैसे बन पड़ेगा, बना दूँगी।''

और माँ दिल-ही-दिल में फिर बेटे के उज्ज्वल भविष्य की कामनाएँ करने लगीं और मिस्टर शामनाथ, ''अब सो जाओ, माँ'' कहते हुए, तनिक लड़खड़ाते हुए अपने कमरे की ओर घूम गये।

बोध प्रश्न 9.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. चीफ़ के आने पर शामनाथ ने अपनी माँ को कहाँ छिपाया-

(क) कुर्सी के पीछे (ख) माँ की कोठरी में

(ग) अलमारी के पीछे (घ) माँ की सहेली के घर

2. ''शामनाथ और उसकी धर्मपत्नी को पसीना पोंछने की फुर्सत न थी''– इसका अर्थ है–

(क) शामनाथ सिगरेट-पर-सिगरेट फूँक रहे थे

(ख) वे बहुत चिंतित थे

(ग) वे बहुत व्यस्त थे

(घ) वे एक कमरे से दूसरे कमरे में आ-जा रहे थे

3. माँ के द्वारा उसे हरिद्वार भेजने के अनुरोध पर शामनाथ क्रोधित हो जाता है, क्योंकि–

(क) वह माँ से अत्यंत प्रेम करता है

(ख) उसे लोक लाज का भय है।

(ग) उसे लगा कि वह माँ से फुलकारी न बनवा सकेगा।

(घ) माँ पर खर्च बढ़ जाएगा।

9.2 आइए समझें

'चीफ़ की दावत' कहानी के प्रमुख चरण

आप पढ़ चुके हैं कि शामनाथ के घर पर चीफ़ की दावत है। यह पूरी कहानी इस अवसर पर घर के सभी सदस्यों के व्यवहार के माध्यम से खुद को अभिव्यक्त करती है। आइए अब कहानी की घटनाओं को जानते हैं :

- चीफ़ की दावत के लिए तैयारी जोरों से हो रही थी। उपयोगी सामान; जैसे- कुर्सियाँ, नैपकिन, फूल बरामदे में लाए गए। फालतू सामान छिपाया जाने लगा।
- माँ को लेकर लोग चिंतित हो गए और विचार करने लगे कि माँ का व्यवहार, पहनावा कैसा हो?
- पार्टी के दौरान मेहमान जब भोजन के लिए उठे तब कुर्सी पर खर्राटे लेती माँ को देखकर उनका उपहास उड़ाने लगे।
- माँ को जबरन गाने के लिए और फुलकारी बनाने के लिए कहा गया जिससे वे बहुत आहत थीं।
- जब माँ हरिद्वार जाने का अनुरोध करती हैं तो शामनाथ मना कर देता है।

- शामनाथ को माँ से फुलकारी बनवानी है इसलिए वह माँ पर भावनात्मक दबाव बनाता है।
- माँ बेटे की तरक्की होने और अफसर बनने के लोभ में फुलकारी बनाने पर राज़ी हो जाती हैं।

आइए अब कहानी के तत्त्वों के आधार पर इस पाठ को समझने का प्रयास करते हैं–

कहानी के तत्त्वों के आधार पर समीक्षा

कहानी के तत्त्व

- कथावस्तु
- देशकाल और वातावरण
- चरित्र-चित्रण
- संवाद योजना
- भाषा एवं शैली
- उद्देश्य

(क) कथावस्तु

'चीफ़ की दावत' कहानी की कथावस्तु तीन भागों में विभाजित की जा सकती है। प्रथम भाग में शामनाथ के चीफ़ के लिए दावत की तैयारियाँ की जा रही हैं। सजावट का सामान सही जगह पर लगाया जा रहा है। शराब का भी प्रबंध किया गया है। अवांछनीय सामान छिपाया जा रहा है। ऐसे में शामनाथ और उनकी पत्नी को माँ को लेकर मन में दुविधा है कि माँ का क्या किया जाए? चूँकि बूढ़ी माँ शामनाथ की जीवन-शैली से मेल नहीं खाती, उसका होना शामनाथ को हीनता-बोध से भरता है, इसलिए उसे छिपाए जाने के विकल्प खोजे जाने लगे। माँ को सहेली के घर नहीं भेजा जा सकता क्योंकि इससे सहेली, फिर से माँ से मिलने आने लगेगी। जल्दी खाना खिलाकर कोठरी में नहीं भेजा जा सकता, क्योंकि माँ सोते हुए खर्राटे लेती है। अंततः समाधान निकाला गया और माँ को ताकीद की गई कि वह कुर्सी पर सलीके से बैठी रहेगी।

कहानी के दूसरे भाग में पार्टी के आयोजन का वर्णन है। शामनाथ के साहब को शराब पसंद आई और मेम साहब को घर की सजावट। चुटकुलों, कहानियों का सिलसिला चल रहा था। ड्रिंक्स का दौर रात साढ़े दस तक चलता रहा। जब मेहमान खाना खाने बरामदे में आए तो देखा माँ कुर्सी पर ज्यों-की-त्यों बैठी गहरे खर्राटे ले रही थीं। वह हड़बड़ाकर जग गई और चीफ़ के अभिवादन का सलीके से उत्तर नहीं दे पाई और सभी ने उसका उपहास उड़ाया। चीफ़ को खुश करने के लिए माँ को जबरन गीत गाना पड़ा। सभी खुश हो गए। चीफ़ को और अधिक प्रभावित करने के उद्देश्य से शामनाथ माँ की पुरानी फुलकारी दिखाता है और आश्वासन देता है कि वह माँ से फुलकारी बनवाकर चीफ़ को भेंट करेगा। माँ की नज़र कमज़ोर है। अपनी लाचारी और बेटे की संवेदनहीनता से आहत होकर माँ अपनी कोठरी में आकर बहुत रोती है।

कथा के तीसरे भाग में दावत खत्म हो जाने के बाद का वर्णन है। बेटे के निर्मम व्यवहार के कारण माँ की आँखों से नींद ओझल हो चुकी थी। घर का वातावरण यद्यपि शांत था, परंतु माँ का हृदय व्यथित था। शामनाथ ने माँ की कोठरी का दरवाज़ा खटखटाया तो माँ घबरा उठी कि उससे कोई भूल तो नहीं हो गई।

शामनाथ खुश होकर माँ को गले लगा लेता है। माँ खुद को हरिद्वार भेजने के लिए कहती है। इस पर शामनाथ क्रोधित हो जाता है और उसे लगता है कि माँ चली जाएगी तो फुलकारी कौन बनाएगा और मेरी तरक्की कैसे होगी? वह माँ को कोसने लगता है। बेटे के व्यवहार से माँ दुखी है लेकिन उसकी तरक्की की बात सुनकर, वह फुलकारी बनाने के लिए तैयार हो जाती है और बेटे के उज्ज्वल भविष्य की कामनाएँ करती है।

पाठगत प्रश्न 9.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. 'चीफ़ की दावत' की कथावस्तु का केंद्रीय बिंदु है–

   (क) दावत का आयोजन   (ख) चीफ़ द्वारा फुलकारी का अनुरोध

   (ग) माँ की करुण स्थिति   (घ) शामनाथ की पदोन्नति की लालसा

2. कहानी के अंत में माँ सुनकर प्रसन्न हो जाती है–

   (क) बेटे की तरक्की की बात   (ख) फुलकारी बनाने की बात से

   (ग) बेटे के गले लगाने से   (घ) हरिद्वार जाने की बात से

(ख) देशकाल एवं वातावरण

जब भी आप कोई कहानी पढ़ते हैं तो आप उसकी पृष्ठभूमि और परिस्थिति को जानना चाहते हैं। आइए इस कहानी के देशकाल एवं वातावरण को जानने का प्रयत्न करते हैं। 'चीफ़ की दावत' तब लिखी गई थी जब भारत को स्वतंत्र हुए बहुत अधिक समय नहीं हुआ था। ग्रामों से नगरों की ओर पलायन हो रहा था। नवनिर्मित मध्यवर्ग उच्चवर्ग में शामिल होने के लिए पूरी तरह से तत्पर था। स्वतंत्र होने के बाद बावजूद मानसिकता परतंत्र ही थी। नई पीढ़ी विदेशी जीवन-शैली को अपनाने लगी थी और अपने पारिवारिक मूल्यों को तिलांजलि देने लगी थी। विदेशी खान-पान, रहन-सहन, भाषा, शिष्टाचार ही मानो आधुनिकता के पर्याय बन चुके थे। कहानी में शामनाथ ने दावत का आयोजन किया था जिसमें अफ़सरों और उनकी पत्नियों को आमंत्रित किया गया था। कहानी में दर्शाया गया है कि युवा पीढ़ी विदेशी जीवन-शैली से काफ़ी प्रभावित है और अपने घर की वृद्ध पीढ़ी को फालतू सामान की भाँति छिपाना चाहती है। माँ की माला, खड़ाऊँ आदि शामनाथ में खीज उत्पन्न करते हैं। इनमें मूल्यगत संस्कारों

के प्रति कोई आग्रह नहीं है। आधुनिक कहलाने और तरक्क़ी की चाह में अपने माँ-बाप के सिखाए मूल्यों और संस्कारों को त्याग रही है और महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति में लगी है।

पाठगत प्रश्न 9.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. 'चीफ़ की दावत' कहानी में अभिव्यक्ति है-

   (क) रूढ़िवादी मानसिकता की (ख) पराधीन मानसिकता की

   (ग) पारिवारिक मूल्यों की (घ) नगर की ओर पलायन की

2. शामनाथ की मुख्य चिंता है–

   (क) पड़ोस से संबंधित (ख) माँ से संबंधित

   (ग) पत्नी से संबंधित (घ) तरक्क़ी से संबंधित

(ग) चरित्र-चित्रण

कथावस्तु को आगे बढ़ाने का दायित्व चरित्रों का होता है। ये चरित्र कहानी में वांछनीय प्रभाव उत्पन्न करते हैं। इस कहानी में चार प्रमुख चरित्र हैं : माँ, शामनाथ, शामनाथ की पत्नी और चीफ़।

इनमें माँ और शामनाथ मुख्य चरित्र हैं और शामनाथ की पत्नी और चीफ़ गौण चरित्र। कहानी के केंद्र में शामनाथ और माँ हैं। शामनाथ की पत्नी और चीफ़ उचित समय पर कहानी में उपस्थित होते हैं और अपनी भूमिका निभाकर कहानी की मुख्य धारा से हट जाते हैं।

आइए अब हम कहानी के इन पात्रों की चरित्रगत विशेषताएँ जानने का प्रयत्न करते हैं।

शामनाथ में आधुनिक बनने की अत्यधिक लालसा है। इसीलिए उसे श्री शामनाथ न कहकर मिस्टर शामनाथ कहा गया है। चूँकि उसने अपने आर्थिक स्तर को बेहतर करने के लिए कड़ी मेहनत की है इसलिए वह खुद को आधुनिक दिखाने के लिए भी पूरी तरह से तत्पर है। घर का संचालन उसी के हाथ में है। खूँटियाँ कमरों में कहाँ लगाई जाएँ, बिस्तर कहाँ पर बिछे, किस रंग के पर्दे लगाए जाएँ, श्रीमती कौन-सी साड़ी पहनें आदि के बारे में उसका निर्णय ही प्रमुख है। वह चाटुकार अधिकारी है। कहानी का शीर्षक उसकी इस प्रवृत्ति का परिचायक है। वह मेहनत की अपेक्षा अपने चीफ़ को दावत पर आमंत्रित कर, महँगी शराब पिलाकर, तरक्की पाना चाहता है। चीफ़ की खुशामद करने में वह अपने संस्कार तक भूल जाता है।

शामनाथ एक संवेदनहीन और शुष्क व्यक्ति है। वह भूल जाता है कि जिस माँ ने उसे अपने गहने बेच कर, इतनी कठिनाइयाँ उठाकर पाला है, उस ममतामयी माँ के प्रति उसका व्यवहार

अत्यंत शुष्क है। वह फालतू सामान की भाँति माँ को भी इस डर से कहीं छिपाना चाहता है, कि कहीं उसकी छवि खराब न हो जाए। उसे माँ की सहेली पसंद नहीं। माँ की वेशभूषा पसंद नहीं, माँ का बैठने का तरीका पसंद नहीं। उसे चिंता है कि अगर वह खर्राटे लेने लगेगी तो उसे मेहमानों के सामने शर्मिंदगी होगी। उसे माँ के नंगे पाँव घूमने से और खड़ाऊँ पहनने से भी परेशानी है।

वह आधुनिक, सभ्य और शिष्ट होने का दिखावा करने के साथ-साथ अपनी संपन्नता का प्रदर्शन करता है। इसीलिए वह माँ से पूछता है कि सोने की चूड़ियाँ कहाँ हैं और वह उन्हें पहन ले ताकि चीफ़ व अन्य मेहमानों को उसकी समृद्धि का आभास मिले।

शामनाथ पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित है। शामनाथ का माँ के प्रति व्यवहार असंवेदनशील है। माँ उसकी प्रतिक्रिया से भयभीत रहती है। घर में माँ असहज रहती है। वह अपनी सुविधा के लिए माँ के किसी से मिलने पर प्रसन्न नहीं होता, और उत्तरदायित्व का भी अनुभव नहीं करता। माँ से छुटकारा पाना चाहता है और पत्नी पर खीझ निकालते हुए कहता है– "अच्छी-भली यह भाई के पास जा रही थी। तुमने यूँ ही खुद अच्छा बनने के लिए बीच में टाँग अड़ा दी!" पत्नी के उत्तर देने पर शामनाथ चुप रहा, क्योंकि उसके अनुसार यह मौका बहस का न था।

माँ ने गहने बेचकर उसे पढ़ाया। उसे इस त्याग का कोई अहसास नहीं है।

वह माँ के प्रति अमानवीय व्यवहार रखता है। माँ को आदर-सम्मान की अपेक्षा शामनाथ से सिर्फ़ हुक्म मिलते हैं। माँ का जी चाहा कि चुपचाप पिछवाड़े विधवा सहेली के घर चली जाए। मगर बेटे के 'हुक्म' को कैसे टाल सकती है। माँ क्या पहनेगी, कैसे बैठेगी, क्या बोलेगी, क्या नहीं करेगी इस बारे में लगातार शामनाथ आदेश देता है। इससे पता चलता है, उसमें मानवीय संस्कार और भावनाएँ लुप्त हो गई हैं।

माँ

शामनाथ की माँ इस कहानी का मुख्य चरित्र है। वह छोटे कद-काठी की वृद्ध महिला है। आँखें धुँधली हैं और सिर के आधे बाल झड़ गए हैं। चीफ़ की दावत, घर का फालतू सामान अलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा तब शामनाथ के सामने एक समस्या आ गई कि माँ का क्या होगा?' माँ शुद्ध शाकाहारी धार्मिक महिला है। माँ घरेलू कामों में हाथ नहीं बँटा पाती इसलिए उसे कोई नहीं पूछता। जब घर में माँस-मच्छी बनता है तब वह भोजन नहीं करती। उसकी इस आदत का सम्मान नहीं होता। दुर्भाग्यवश माला जपने वाली, खड़ाऊँ पहनने वाली माँ लज्जा का कारण बन जाती है।

वह शामनाथ का हर उचित-अनुचित आदेश मानती है– चाहे जल्दी न सोने का हो, कुर्सी पर बैठने का तरीका हो, कपड़े पहनने का हो, चीफ़ के अभिवादन का हो या गीत गाने का हो। इसके साथ ही क्षीण आँखों, काँपते हाथों से बेटे की तरक्की के लिए फुलकारी बनाने का हो, वह सब मान जाती है।

माँ ममतामयी महिला है। माँ ने शामनाथ को जन्म दिया, ममता से, स्नेह से उसे पाला, उसकी शिक्षा एवं रोजगार के लिए निरंतर प्रयत्न किए और अपना तन, मन, धन सब न्यौछावर कर दिया। अपने गहने तक बेच डाले ताकि शामनाथ का सामाजिक, आर्थिक स्तर बढ़ा सके। लेकिन उसे सब उपकारों के विपरीत पुत्र की कृतघ्नता ही मिलती है।

बेटे के रूखे, अमानवीय व्यवहार से निरंतर दुखी रहने वाली माँ अपने पुत्र को चिरायु होने और तरक्की पाने की कामना करती है। पुत्र जब चीफ़ के लिए फुलकारी बनाने के लिए कहता है तो वह सब भूलकर फुलकारी बनाने के लिए तुरंत तैयार हो जाती है।

(घ) संवाद-योजना

कहानी में संवाद-योजना की महत्वपूर्ण भूमिका होती है जिससे कहानी में रोचकता और प्रभावशीलता बनी रहती है और घटनाओं का क्रम आगे बढ़ता है।

इस पृष्ठभूमि में यदि हम 'चीफ़ की दावत' कहानी के संवादों का विश्लेषण करें तो स्पष्ट होता है कि इस कहानी के संवाद इसके मुख्य उद्देश्य को उद्घाटित करते हैं।

'चीफ़ की दावत' कहानी में मध्यवर्ग में पारिवारिक संबंधों की उपेक्षा, आधुनिकता के प्रदर्शन की प्रवृत्ति और स्वार्थी व्यवहार को लेखक ने अत्यंत सूक्ष्मता से अंकित किया है। कहानी के संक्षिप्त संवादों से पात्रों की मन:स्थितियाँ दर्शायी गई हैं।

आइए, कुछ उदाहरण देखते हैं-

कहानी का पहला संवाद ही इसके मूल बिंदु पर ला खड़ा करता है जब शामनाथ अंग्रेज़ी में अपनी पत्नी से पूछता है माँ का क्या होगा? अपनी झूठी प्रदर्शनप्रियता के कारण, 'आधुनिक पार्टी में बेमेल-सी लग रही माँ को कहाँ छिपाएँ', यह समस्या है।

इससे आगे पति-पत्नी के संवाद माँ की करुण स्थिति का चित्र खींचने में पूर्णतया सक्षम हैं।

इसी तरह यह संवाद देखिए-

'माँ, आज तुम खाना जल्दी खा लेना। मेहमान लोग साढ़े सात बजे आ जाएँगे।'

'आज मुझे खाना नहीं खाना है, बेटा, तुम जानते तो हो, माँस-मछली बने, तो मैं कुछ नहीं खाती।'

'जैसे भी हो, अपने काम से जल्दी निबट लेना!'

इसी तरह कहानी के अनेक संवादों से शामनाथ के चारित्रिक अवगुण प्रकट होते हैं। माँ की लाचारी, करुण स्थिति, उसके बलिदानों के प्रति शामनाथ की कृतघ्नता साफ़ झलकती है।

'चीफ़ की दावत' कहानी के संवादों की प्रमुख विशेषता है- संक्षिप्तता। संवाद छोटे-छोटे हैं और यही कारण है कि अपेक्षित प्रभाव डालने में पूर्णतया सक्षम हैं।

(ङ) उद्देश्य

प्रत्येक लेखक की रचना के पीछे उसका कोई-न-कोई उद्देश्य अवश्य होता है। भीष्म साहनी भी इस कहानी के माध्यम से पाठकों को संदेश देना चाहते हैं कि मध्यवर्गीय लोग स्वार्थपरता, दिखावटीपन, अर्थलोलुपता को अपना रहे हैं। वे अपने माँ-बाप के बलिदानों के प्रति कृतघ्न हैं और जहाँ भी अवसर मिलता है। यह पीढ़ी पुरानी पीढ़ी का उपयोग करने में, शोषण करने में हिचकती नहीं है। पारिवारिक मूल्यों को दरकिनार करती हुई यह पीढ़ी आत्मप्रेम से ग्रस्त है। इसमें पुरानी पीढ़ी के प्रति कर्त्तव्यबोध लुप्त है। इसका लक्ष्य केवल निजी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति है और उसके लिए वह कुछ भी करने को तैयार है। इस प्रकार 'चीफ़ की दावत' कहानी का मुख्य उद्देश्य पारिवारिक जीवन-मूल्यों के विघटन को स्पष्ट करना है। इस कहानी के एक महत्वपूर्ण संदेश की ओर भी आपका ध्यान जाना चाहिए। वह यह कि शामनाथ उसे छिपा रहा है जो दिखाया जाना चाहिए। माँ फुलकारी बनाना जानती है जो भारतीय कलाओं में एक है। इस तरह से वह भारतीयों की अस्मिता का रूप है। हीनता-बोध के कारण शामनाथ इसकी उपेक्षा करता है, जबकि इसे चीफ़ पहचान रहा है।

(च) भाषा एवं शैली

कहानी की भाषा पात्रों के शैक्षिक एवं सामाजिक स्तर के अनुकूल है। मुख्य रूप से इसमें नगरीय बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया गया है। इसमें तदभव शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ है। साथ ही अंग्रेजी और उर्दू शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। उर्दू शब्दों तथा तद्भव शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ है।

उर्दू : मुकम्मल, इंतजाम, फालतू, बेशक।

अंग्रेज़ी : नैपकिन, मिस्टर, ड्रेसिंग गाउन, सिगरेट।

तद्भव : लड़खड़ाना, बरसात आदि।

इसी तरह शामनाथ को भी श्रीमान न कहकर मिस्टर कहा गया है जो शामनाथ की तथा कथित आधुनिकता के प्रति लालसा को दर्शाता है। माँ उस पुरानी पीढ़ी की प्रतीक है जिसने अगली पीढ़ी की शिक्षा और रोजगार के लिए हर तरह से त्याग किया, परंतु पारिवारिक मूल्यों को स्थानांतरित नहीं कर पायी।

इसी तरह शामनाथ मध्यवर्ग के उस पीढ़ी का प्रतीक है जो आधुनिक बनने और तरक्की पाने के लिए अपनी परंपराओं, पारिवारिक मूल्यों को तिलांजलि देने से भी पीछे नहीं हटती।

इस प्रकार 'चीफ़ की दावत' कहानी की भाषा-शैली कहानी की कथा की विश्वसनीयता, पात्रों के चरित्र और कहानी के उद्देश्य को प्रभावशाली बनाने में पूर्णतया सफल हुई है।

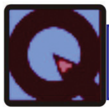

पाठगत प्रश्न 9.3

उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. शामनाथ के व्यक्तित्व की विशेषता नहीं है–
   (क) मध्यवर्गीय मानसिकता
   (ख) परंपरा के प्रति आदर भाव
   (ग) स्वार्थी होना
   (घ) प्रदर्शन करने वाला होना
2. शामनाथ की माँ की मुख्य चिंता है–
   (क) अपने गहनों का न मिलना
   (ख) शामनाथ की तरक्की
   (ग) फुलकारी बनाना न आना
   (घ) शामनाथ द्वारा अपमानित किया जाना

क्रियाकलाप 9.2

भीष्म साहनी का सर्वाधिक चर्चित उपन्यास 'तमस' पढ़िए और जानिए कि देश की प्रगति, उन्नति के लिए सांप्रदायिक सौहार्द कितना आवश्यक है। इस महत्वपूर्ण कार्य में आपकी क्या भूमिका हो सकती है? संक्षेप में प्रस्तुत कीजिए।

9.3 आपने क्या सीखा (चित्रात्मक प्रस्तुति)

कहानी के तत्त्व

कथावस्तु	देशकाल और वातावरण	चरित्र-चित्रण	संवाद	भाषा-शैली	उद्देश्य
- मेहमान के आगमन की तैयारी - पार्टी का आयोजन - माँ का तिरस्कार और उसकी पीड़ा, बच्चे के लिए सब सहन करने को तैयार	- नई पीढ़ी की विदेशी शैली - परिवार का बिखराव	- माँ - शामनाथ - शामनाथ की पत्नी - चीफ़	- रोचक एवं प्रभावी - उद्देश्यपरक - संक्षिप्त - व्यंग्ययुक्त	- नगरीय बोलचाल की भाषा - तद्भव शब्दों का अधिक प्रयोग - शैली उद्देश्य के अनुसार	- युवा पीढ़ी की स्वार्थपरता, दिखावटीपन और अर्थलोलुपता का उद्घाटन - पारिवारिक मूल्यों का विघटन

9.4 सीखने के प्रतिफल

- अपने परिवेशगत अनुभवों पर अपनी स्वतंत्र और स्पष्ट राय व्यक्त करते हैं।
- कहानी को अपनी समझ के आधार पर नए रूप में प्रस्तुत करते हैं।
- प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों, घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को बोलकर/लिखकर व्यक्त करते हैं।
- भाषा-कौशलों के माध्यम से जीवन-कौशलों को आत्मसात करते हैं और अभिव्यक्त करते हैं।
- सामाजिक, शारीरिक एवं मानसिक रूप से चुनौती प्राप्त समूहों के प्रति संवेदनशीलता एवं समानुभूति लिखकर अभिव्यक्त करते हैं।

9.5 योग्यता विस्तार

लेखक परिचय

भीष्म साहनी हिंदी साहित्य के प्रमुख साहित्यकार के रूप में जाने जाते हैं। उनका जन्म रावलपिंडी में 1915 में हुआ। उन्होंने लाहौर से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. किया और पंजाब विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की। विभाजन के बाद उन्होंने भारत आकर समाचारपत्रों में कार्य किया। बाद में वे दिल्ली विश्वविद्यालय में साहित्य के प्रोफ़ेसर हुए। उन्हें पंजाबी, हिंदी, संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी का बहुत अच्छा ज्ञान था। भीष्म साहनी को प्रेमचंद की परंपरा का अग्रणी लेखक माना जाता है। वे सदैव मानवीय मूल्यों के पक्षधर रहे। उनकी कहानियों में मध्यवर्ग के द्वन्द्व हैं तो निम्नवर्ग की संघर्षशीलता भी प्रखरता से अभिव्यक्त हुई है। उन्होंने मुख्य रूप से उपन्यासों, कहानियों और नाटकों की रचना की।

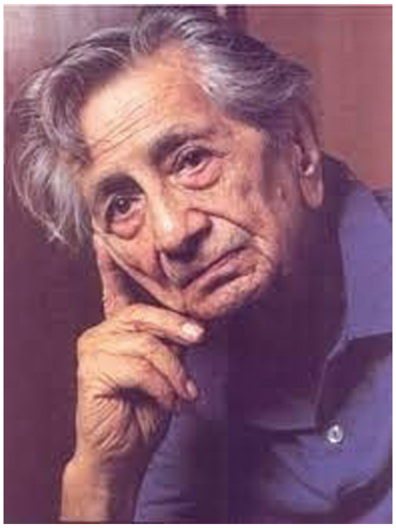

चित्र 9.2 : भीष्म साहनी

उनके सर्वाधिक चर्चित उपन्यास 'तमस' पर 1975 में साहित्य अकादमी पुरस्कार भी मिला। उनके अन्य उपन्यास झरोखे, मायादास की माड़ी आदि प्रमुख हैं। 'तमस' हिंसा और घृणा से उत्पन्न सांप्रदायिकता की भयावहता और देश के विभाजन के समय मृत्यु और विनाश का करुण चित्र खींचती है। उन्हें 1975 में एफ्रो-एशियाई लेखकों के संघ द्वारा लोटस अवार्ड दिया गया। 1983 में सोवियतलैंड नेहरू पुरस्कार दिया गया। साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान के लिए 1998 में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया।

टिप्पणी

9.6 पाठांत प्रश्न

1. घर पर दावत के दौरान शामनाथ अपनी माँ को चीफ़ से क्यों छुपाना चाहता था?
2. इस कहानी का कोई और अंत भी हो सकता है? संक्षेप में प्रस्तुत कीजिए।
3. ''माँ का क्या होगा?'' यह संक्षिप्त संवाद पूरी कहानी के मर्म को उद्घाटित करता है। टिप्पणी कीजिए।
4. शामनाथ चीफ़ को दावत पर क्यों आमंत्रित करता है? स्पष्ट कीजिए।
5. 'अब घर का फालतू सामान आलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा।' यह कथन मध्यम वर्ग की किस प्रवृति की ओर इशारा करता है? स्पष्ट कीजिए।
6. माँ घर में सबसे बुजुर्ग होने के वाबजूद अपने बेटे के व्यवहार के प्रति निरंतर चिंतित क्यों रहती है?
7. कहानी के बीच-बीच में शामनाथ पत्नी से अंग्रेज़ी में बात करता है। इससे शामनाथ की व्यक्तित्व के किस पक्ष का उद्घाटन होता है?
8. 'चीफ़ की दावत' कहानी मध्यवर्गीय मानसिकता का जीवंत दस्तावेज है।' सिद्ध कीजिए।
9. 'चीफ़ की दावत' कहानी की मुख्य पात्र माँ हैं। उनके चरित्र की किन्हीं दो विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
10. 'चीफ़ की दावत' कहानी की भाषा और शैली की किन्हीं दो विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
11. 'चीफ़ की दावत' कहानी का मुख्य उद्देश्य क्या है, स्पष्ट कीजिए।

9.7 उत्तरमाला

बोध प्रश्न 9.1

1. (ख)   2. (ग)   3. (ग)

पाठगत प्रश्न के उत्तर

9.1 1. (ग) 2. (क)

9.2 1. (ख) 2. (घ)

9.3 1. (ख) 2. (ख)

10

पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ

(हरिशंकर परसाई)

आप बहुत-सी पत्र-पत्रिकाओं के नाम से परिचित होंगे। इनमें से पत्रिकाओं को आपने पढ़ा होगा। इन्हें हाथ में लेते ही सबसे पहले आप उनकी विषय-सूची देखते ही हैं। उस सूची में कहानी, व्यंग्य, चुटकुले, रेखाचित्र आदि लिखा हुआ भी अवश्य देखते होंगे और सोचते होंगे कि ये क्या हैं? वास्तव में ये गद्य की विविध विधाएँ या रूप हैं। इनमें से व्यंग्य का अपना अलग ही महत्व है। वैसे तो अधिकतर व्यंग्य आप समझ लेते हैं, पर व्यंग्य को समझने का कौशल विकसित करना भी आवश्यक है। इसी उद्देश्य से आप 'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' नामक व्यंग्य-रचना पढ़ने जा रहे हैं, जिसे प्रसिद्ध व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई ने लिखा है। यह रचना एक ओर तो दो पीढ़ियों के बीच अंतर और संघर्ष दिखाती है तो दूसरी ओर किसी भी स्थिति में अपने कर्त्तव्य और अधिकार को बनाए रखने वालों पर कटाक्ष या चोट करती है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- व्यंग्य का अर्थ और उसकी विशेषताएँ लिख सकेंगे;
- व्यंग्य-विधा के तत्वों के आधार पर पाठ का विवेचन कर सकेंगे;
- पाठ में निहित व्यंग्य की व्याख्या कर सकेंगे;
- दो पीढ़ियों के बीच चल रहे संघर्ष पर अपने विचार लिख सकेंगे;
- व्यंग्य की भाषा-शैली पर टिप्पणी कर सकेंगे।

क्रियाकलाप 10.1

आपने कुछ व्यंग्य रचनाएँ पढ़ी होंगी, किन्हीं पाँच व्यंग्य रचनाकारों के नाम लिखिए।

10.1 मूल पाठ

पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ

साहित्य के वयोवृद्ध थकित हुए।

वे लाठी टेकते हुए सड़क पर चलते।
मोटा चश्मा लगाकर चाँद देखते।
निमोनिया की दवा जेब में रखकर बगीचे में घूमते।
कान में ऊँचा सुनने का यंत्र लगाकर संगीत-सभा में बैठते।
भोजन से अधिक मात्रा में पाचन का चूरन खाते।

एक दिन तरुणों ने उनसे कहा, ''प्रातः स्मरणीयो, सुनामधन्यो! आप अब वृद्ध हुए-वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध और कलावृद्ध हुए। आप अब देवता हो गए। हम चाहते हैं कि आप लोगों को मंदिर में स्थापित कर दें। वहाँ आप आराम से रहें और हमें आशीर्वाद दें।''

वयोवृद्ध थोड़ी देर तक विचार करते रहे। फिर बोले, ''प्रस्ताव कोई बुरा नहीं है। पर हमारे यश का क्या होगा?''

''हम आपकी जय बोलेंगे।'' तरुणों ने कहा।

''और हमारे झंडों का क्या होगा?''

''हम आपके झंडों को मंदिर के सामने के पीपल पर टाँग देंगे। वे वहाँ ऊँचे फहराएँगे।''

''और हमारे भोग का क्या होगा?''

''हम आपके भोग का प्रबंध करेंगे। रोज हम पकवानों के थाल लेकर आएँगे।''

''हमें श्रद्धा भी तो चाहिए। उसका क्या प्रबंध होगा?''

''हम रोज़ आपकी आरती करेंगे, और आपके चरणों पर मस्तक रखेंगे।''

''हमारे अर्थ का क्या होगा?''

''आपकी रॉयल्टी हम मंदिर में ही पहुँचा दिया करेंगे। आपको हम हर

शब्दार्थ

वयोवृद्ध - बहुत बूढ़े
निमोनिया - एक रोग जो ठंड के कारण होता है। पसलियों में जकड़न् का अनुभव होता है
तरुण - युवक, जवान
समाधान - उपाय करना
ज्ञानवृद्ध - अत्यंत ज्ञानी
कलावृद्ध - कला में अत्यंत निपुण

पाठ्य- पुस्तक में रखवाएँगे और जो प्रकाशक धन देने में आनाकानी करेगा, उसे ठीक करेंगे।''

''पर हम कर्म के बिना कैसे जीवित रहेंगे?'' वयोवृद्ध ने कहा।

तरुणों ने समाधान किया, ''जहाँ तक कर्म का संबंध है, आप लोगों की संस्मरण की अवस्था है। आप लोग आपस में संस्मरण सुनाएँगे ही। उनका रिकार्डिंग होता जाएगा और हम उनकी पुस्तकें छपवा देंगे।''

सयानों ने आपस में सलाह की और एकमत से कहा, ''हमें मंज़ूर है। बनाओ हमें देवता।''

चित्र 10.1 : कवियों की दो पीढ़ियाँ

युवकों ने एक दिन समारोहपूर्वक वयोवृद्धों को देवता बनाकर मंदिर में प्रतिष्ठित कर दिया। उनके झंडे पीपल पर चढ़ा दिए। उनकी आरती की, उनके चरण छुए और भोग लगाकर काम पर चले गए।

देवता जब अकेले छूट गए, तब उनका ध्यान तरुणों पर गया।

एक ने बात उठाई, ''लड़के इस समय न जाने क्या कर रहे होंगे!''

''सड़कों पर घूम रहे होंगे,'' दूसरे ने कहा।

तीसरा बोला, ''कोई खा रहा होगा, पी रहा होगा।''

चौथे ने कहा, ''कोई खेल रहा होगा।''

पाँचवे ने कहा, ''कोई नाटक देख रहा होगा, कोई फिल्म देख रहा होगा।''

छठा बोला, ''कोई प्रेम कर रहा होगा।''

सातवें ने कहा, ''कोई बढ़िया कपड़े पहने लोगों को लुभाता घूम रहा होगा।''

आठवें ने कहा, ''कोई कविता सुना रहा होगा और 'वाह-वाह' लूट रहा होगा।''

वे उदास हो गए। कहने लगे, ''लड़के बाहर ऐसा आनंद कर रहे हैं; जीवन को इस तरह भोग रहे हैं! और देवता बने हम इस मंदिर की कारा में बैठे हैं।''

तभी एक देवता, जो अब तक चुप था, बोला ''खाने-खेलने दो लड़कों को। हम तो न चल सकते, न खेल सकते, न दौड़ सकते। ज़्यादा खा लेंगे, तो अजीर्ण हो जाएगा। ज़्यादा बोलेंगे, तो साँस फूल उठेगी। प्रेम करने की भी अवस्था नहीं रही। भोगने दो जवानों को जीवन। वे हमारी जय तो बोलते हैं, हमारे झंडे तो फहराते हैं! हमारी आरती तो करते हैं! और क्या चाहिए हमें!''

टिप्पणी

शब्दार्थ

रॉयल्टी	-	पुस्तक बिकने पर लेखक को मिलने वाला पैसा
आनाकानी करना	-	किसी काम को न करने की अस्पष्ट इच्छा दिखाना
संस्मरण	-	पुरानी यादें
वाह-वाह लूटना	-	प्रशंसा सुनना
कारा	-	जेल
अजीर्ण	-	हज़म न होना

लेकिन बाकी देवताओं को उसकी बात अच्छी नहीं लगी। वे बोले, ''तुम बिल्कुल नि:सत्व हो। तुम्हें इस बात का कोई बुरा नहीं लगता कि जहाँ-जहाँ हम थे, वहाँ-वहाँ वे जम गए हैं। जो हमारा था, वह सब उन्होंने ग्रहण कर लिया है और हमें प्रतिमा बनाकर यहाँ चिपका दिया है।''

वह उठकर मंदिर के दूसरे हिस्से में चला गया।

देवताओं में सलाह होती रही। फिर उनमें हलचल हुई।

शाम को युवक जब थालियों में मिष्ठान सजाकर देवताओं की जय बोलते हुए मंदिर के पास पहुँचे, तो देखा कि सब देवता चबूतरे पर खड़े हैं। उनके पास पत्थरों का ढेर है, और वे हाथों में भी पत्थर लिये हैं।

जवान आगे बढ़े, तो देवताओं ने उन पर पत्थर बरसाना शुरू कर दिया।

तरुण रुक गये। चिल्लाये, ''देवताओ, पत्थर क्यों मार रहे हो?''

देवता बोले, ''वहीं रुको और हमारी बात सुनो। तुमने हमें वंचित किया है।''

''किससे वंचित किया है''? तरुणों ने पूछा।

''उस सबसे, जो हमारा था।'' देवता उधर से चिल्लाए।

तरुणों ने जवाब दिया, ''हमने तुम्हें वंचित नहीं किया। तुमने अपने आप को वंचित किया है, तुम्हारी थकान ने, तुम्हारी उम्र ने, तुम्हारी चेतना-दुर्बलता ने, तुम्हारी शक्ति-हीनता ने तुम्हें वंचित किया है। हम तो तुम्हें पूज रहे हैं, और तुम देवता होकर पत्थर मारते हो!''

देवताओं ने कहा, ''हमें ऐसी पूजा नहीं चाहिए। हम भी तुम्हें वंचित करेंगे।''

एक देवता बोला, ''तुम उन सड़कों पर नहीं चलोगे, जिन पर हम चलें। वे मात्र हमारी हैं।''

दूसरा देवता चिल्लाया, ''जो हमने खाया, वह तुम नहीं खाओगे, क्योंकि वह मात्र हमारा भोज्य था।''

तीसरा बोला, ''जो हमने भोगा, वह तुम नहीं भोगोगे, वह मात्र हमारा भोग्य था।''

चौथा चिल्लाया, ''जो हमने किया, वह तुम नहीं करोगे, क्योंकि वह केवल हमारा कर्म था।''

पाँचवाँ बोला, ''तुम अपने झंडे नहीं फहराओगे। झंडे सिर्फ़ हमारे होंगे। हमारे बाद किसी का कोई झंडा नहीं होगा।''

तरुणों ने कहा, ''आप लोग देवता हैं, दरोगा नहीं। देवोचित व्यवहार करिए।'' आप जिए, इसलिए क्या जीवन पर सिर्फ़ आपका अधिकार हो गया और कोई दूसरा जी भी नहीं सकता! हमें यह सब स्वीकार नहीं है।''

''नहीं है तो लो''-कहकर देवताओं ने पत्थर बरसाना शुरू कर दिया।

उन जवानों ने भी पास ही पड़े मिट्टी के ढेर से पत्थर उठाकर उन देवताओं पर फेंकने

शब्दार्थ

- नि:सत्व - जिसका सार निकल गया हो
- प्रतिमा - मूर्ति
- मिष्ठान - मिठाइयाँ आदि
- वंचित - जिसके पास कुछ न हो
- चेतना-दुर्बलता - सोचने-समझने में कमज़ोर
- भोज्य - खाने योग्य पदार्थ
- भोग्य - भोगने योग्य
- कलागत मूल्य - कला में छिपे मूल्य

शुरू कर दिये।

एक युवक पीपल पर चढ़ गया और देवताओं के झंडे फाड़कर फेंक दिये।

दोनों तरफ़ से पथराव हो रहा था, दोनों तरफ़ से गाली-गलौज हो रही थी।

एक राहगीर से दूसरे ने पूछा, ''यह क्या मामला है?''

राहगीर ने जवाब दिया, ''दो पीढ़ियों की कलागत मूल्यों पर बहस चल रही है।''

बोध प्रश्न 10.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. साहित्य के वयोवृद्ध जेब में क्या रखकर बगीचे में घूमते-

   (क) मोटा चश्मा (ख) निमोनिया की दवा

   (ग) ऊँचा सुनने का यंत्र (घ) पाचन का चूरन

2. तरुण चाहते थे कि-

   (क) वृद्धों की सेवा करें। (ख) वृद्धों की बात न मानें।

   (ग) वृद्धों का स्थान लें। (घ) अपने झंडे फहरायें।

3. पाठ के अंतिम वाक्य में है:

   (क) घृणा (ख) क्रोध

   (ग) नाराजगी (घ) व्यंग्य

10.3 आइए समझें

आइए, 'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' पाठ को ठीक से समझने से पहले जान लें कि व्यंग्य क्या है?

व्यंग्य क्या है?

जब कही गई बात का अर्थ कुछ और हो तथा जो किसी विसंगति (कोई बुराई यानी जो होना चाहिए, वह न होकर कुछ और हो) पर चोट करता हो- व्यंग्य कहलाता है कभी-कभी कोई बुराई इतनी फैल जाती है कि कहीं-कहीं, उसके न होने पर भी व्यंग्य किया जाता है; जैसे- कहा जाए- ''था तो वह एक बहादुर व्यक्ति परंतु काम कर रहा था।'' इसका अर्थ हुआ कि सामान्यत: लोग यह मानते हैं कि कटपुतली की तरह काम करते हैं, परंतु यह व्यक्ति इस धारणा को तोड़कर अपना काम दूसरों के अनुसार ईमानदारी के साथ कर रहा है, अर्थात् जैसा माना जाता है उसकी विपरीत दिशा में कार्यरत है।

व्यंग्य में शब्दों की गहरी मार होती है जो ऊपर से नीचे तक व्यक्ति को झकझोर कर रख देती है। व्यंग्य में बात करने का अर्थ है विचारों को कुछ इस प्रकार प्रस्तुत करना कि उसका प्रभाव सीधा दिल और दिमाग पर हो, साथ में भिन्न प्रकार की हँसी भी आए और वह हँसी ऐसी करारी चोट पैदा करे कि अगला व्यक्ति तिलमिला कर रह जाए और उस बात पर गहराई से सोचने पर मज़बूर हो जाए। सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार श्री कन्हैयालाल नंदन का कहना है कि ''व्यंग्य का लिखना एक साधना है और व्यंग्य का सहना उससे भी बड़ी साधना है।''

आप अक्सर अखबारों में कार्टून का कोना देखते होंगे। उसमें रोज़मर्रा की जिंदगी से जुड़ी किसी-न-किसी घटना को परोक्ष रूप से प्रस्तुत किया जाता है। इसे केवल चित्र न समझकर उस घटना पर टिप्पणी समझनी चाहिए। कार्टून में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र से संबंधित किसी विसंगति या घटना पर कार्टूनिस्ट की दृष्टि छिपी होती है। इसी प्रकार किसी व्यंग्य की विषयवस्तु सत्य पर आधारित होती है। वह सत्य किसी भी क्षेत्र से संबंधित हो सकता है।

व्यंग्य को अंग्रेज़ी भाषा में 'सटायर' भी कहते हैं जो मूलत: लैटिन भाषा से आया है। इसका अर्थ होता है 'गड़बड़झाला'। गुजराती भाषा में इसे 'कटाक्ष' और उर्दू में 'तंज' कहा जाता है।

10.4 'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' का तात्त्विक विवेचन

'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' पाठ आप पढ़ चुके हैं। आशा है इसे पढ़ते समय आपको आनंद भी मिला होगा। आइए, अब हम व्यंग्य के तत्त्वों के आधार पर इस पाठ का विवेचन करते हैं।

अंश - 1

भूमिका

लेखक व्यंग्य का आरंभ इस सूचना से करता है कि वयोवृद्ध साहित्यकार थक चुके हैं। उनकी अवस्था में आई शारीरिक दुर्बलता का चित्रण करने के लिए लेखक बताता है कि उन्हें चलने के लिए सहारा चाहिए, ठीक से देख पाने के लिए चश्मा जरूरी है, प्रात:काल बगीचे में घूमने पर उन्हें ठंड लगने से निमोनिया हो सकता है तथा अब वे भोजन को भी आसानी से पचा नहीं पाते।

आप सोचेंगे कि इस पाठ की आरंभिक पंक्तियों में व्यंग्य कहाँ है? ऐसे बूढ़े तो हम रोज़ ही देखते हैं जो लाठी टेककर चलते हैं, चश्मा लगाते हैं, निमोनिया की दवा रखते हैं, कान में ऊँचा सुनने का यंत्र लगाते हैं और पाचन का चूरन खाते हैं। आपकी बात ठीक है। लेकिन आप व्यंग्य से यह उम्मीद मत रखिए कि वह आपको इस लोक से उठाकर किसी दूसरे लोक में ले जाएगा। वह आपके ही जीवन-जगत की विसंगतियों, विषमताओं, बनावटीपन और पाखंड से उभरता है और व्यंग्यकार उन पर चोट करता है। इस व्यंग्य के आरंभ में लेखक ने शरीर से क्षीण होते, साहित्यिक क्षेत्र के ऐसे बूढ़ों का उल्लेख किया है, जिन्होंने अपने

जीवन में भरपूर सुख और प्रसिद्धि प्राप्त की है और क्षीण होती अवस्था में भी इन सुखों और प्रतिष्ठा को वे छोड़ना नहीं चाहते। प्राकृतिक दृष्टि से वे इस लायक नहीं रहते कि और सुख भोग सकें लेकिन मोह न छोड़ पाने के कारण कृत्रिम या बनावटी उपाय करते हैं। अब आप कल्पना कीजिए किसी ऐसे व्यक्ति की जो किसी चीज़ के योग्य न हो, उस चीज की उसे ज़रूरत भी न हो, लेकिन उसे प्राप्त करने का लालच न छोड़ सके, इसके लिए जबरदस्ती उपाय करें। हँसी ही आएगी न ऐसे व्यक्ति पर! इस पाठ के बूढ़े कृत्रिम उपायों के बल पर सड़क पर चलना चाहते हैं, चाँद की तरफ़ देखते हैं, बगीचे में घूमते हैं, संगीत-सभा में बैठते हैं और आवश्यकता से अधिक भोजन करते हैं। होना तो यह चाहिए कि इन बूढ़ों को खुशी के साथ सारा मोह तथा लोभ त्यागकर सब कुछ अगली पीढ़ी को सौंप देना चाहिए, जिससे कि उसके विकास का मार्ग तैयार हो सके। परंतु यहाँ ऐसा नहीं है। इस बात की सूचना इस व्यंग्य के आरंभिक अंश से मिलती है।

विषयवस्तु

इस आरंभिक अंश के बाद हम पाठ की विषयवस्तु की ओर आगे बढ़ते हैं। लेखक बताता है कि एक दिन युवाजन उन वृद्धों के पास आए और उनसे निवेदन किया कि वे बहुत वृद्ध तथा यशस्वी हो चुके हैं। अब उन्हें आराम करना चाहिए और आशीर्वाद देते रहना चाहिए, क्योंकि अब वे पूजनीय हो गए हैं। युवकों के अनुसार जिस प्रकार देवताओं को मंदिर में स्थापित कर उनकी पूजा की जाती है, वैसी ही पूजा अब उन वृद्धों की भी होनी चाहिए। वृद्धों को यह बात पसंद आ जाती है परंतु उन्हें शंकाएँ हैं कि उनके यश, उनके झंडों, भोग, आमदनी तथा उनके प्रति श्रद्धा का क्या होगा?

यहाँ आप ज़रा दिमाग पर ज़ोर डालकर सोचें तो पाएँगे कि यश, झंडे, भोग, श्रद्धा और आमदनी से भाव यह है कि अब तक वे वृद्ध अपने जीवन में जो लाभ प्राप्त करते रहे, जिस किसी मान्यता या खेमे को स्थापित कर पाए, यश पा सके उन सबकी निरंतर प्रतिष्ठा या प्राप्ति अब कैसे संभव होगी।

इसका समाधान युवकों ने बहुत आसानी से कर दिया। उन्होंने वृद्धों को आश्वासन दिया कि उन्हें रोज़ भोग यानी श्रेष्ठ भोजन आदि उपलब्ध होता रहेगा। मंदिर में उनकी आरती उतारकर श्रद्धा-भाव प्रकट किया जाता रहेगा। वृद्ध साहित्यकारों की जो आमदनी अपनी पुस्तकों की बिक्री से होती थी, जिसे रॉयल्टी कहा जाता है, उन तक नियमित रूप से पहुँचाने की व्यवस्था हो जाएगी।

आप ठीक ही समझ रहे हैं कि जिस प्रकार देवता मंदिर में स्थापित होते हैं और सब कुछ प्राप्त करते रहते हैं, वैसे ही ये वृद्ध साहित्यकार भी प्राप्त करते रहेंगे। लेकिन यह साधारण अर्थ है। व्यंग्य यह है कि ये बुजुर्ग केवल इसी लायक रह गए हैं कि बैठकर अगली पीढ़ी को आशीर्वाद दें और समाज में मूर्ति के रूप में रहें। ये अब जीवन के उस पड़ाव पर पहुँच चुके हैं जिसके बाद सर्जनात्मकता या कुछ नया करने की संभावना समाप्त हो जाती है और जीवन निष्क्रिय हो जाता है। इनकी ज़रूरतें भी अब बहुत अधिक नहीं रह गई हैं। इसलिए सहज रूप में जितना मिल सके उतने में ही इन्हें संतोष करना चाहिए। बहुत अधिक प्राप्त

करने के लालच को छोड़ देना चाहिए। देवता नाम में भी व्यंग्य है। जिस प्रकार देवता राग-द्वेष से दूर रहते हैं, उसी प्रकार इन बूढ़ों को भी रहना चाहिए। लेकिन ये देवता के पद को तो अपना लेते हैं पर आचरण देवताओं जैसा नहीं कर पाते।

लेखक के अनुसार एक वयोवृद्ध ने बहुत महत्त्वपूर्ण सवाल किया कि *"पर हम कर्म के बिना कैसे जीवित रहेंगे।"* वृद्धों की यह आशंका स्वाभाविक थी, क्योंकि आप जानते ही हैं कि जीवन में कुछ तो कार्य करना ही चाहिए। अच्छे कार्य को, अपने कर्त्तव्य को निभाना ही कर्म कहलाता है।

इस पर युवकों ने सुझाव दिया कि आप वृद्ध लोग एक-दूसरे को अपने विगत जीवन के संस्मरण सुनाएँ, जिसकी रिकॉर्डिंग करके उसकी पुस्तकें छपवा दी जाएँगी। आपने ऐसे अनेक वयोवृद्ध व्यक्तियों को देखा होगा जो अपने अतीत की प्रशंसा बहुत करते हैं और उसके संस्मरण सुनाते हैं। तो वे बूढ़े भी इसी लायक रह गए हैं कि आपस में बैठकर बीती बातें, किस्से और रोचक संस्मरण सुनाएँ। वृद्ध सहमत हो गए और उन्होंने देवता बनना मंजूर कर लिया।

उपर्युक्त प्रकरण में लेखक ने कई व्यंग्यात्मक प्रहार किए हैं, जो वृद्धों की हठधर्मिता और मोह को प्रकट करते हैं। चलते-चलते ऐसे प्रकाशकों पर भी व्यंग्य किया गया है जो रॉयल्टी देने में आनाकानी करते हैं।

व्यंग्य के अंतिम भाग में वयोवृद्ध साहित्यकारों को देवता बनाकर मंदिरों में प्रतिष्ठित कर दिया जाता है। देवता बनकर प्रतिष्ठित होने के बाद वृद्धों का ध्यान युवकों पर गया। वे उनके बारे में बात करने लगे कि वे बाहर की दुनिया का आनंद ले रहे होंगे और हम मंदिर रूपी कारागार में बंद हैं। बाहर युवकों में से कोई नाटक देख रहा होगा, कोई पकवान खा रहा होगा। सब खुश होंगे, मस्त होंगे। यहाँ पर लेखक कहना चाहता है कि वृद्धजन देवता तो बन गए लेकिन मोह को न छोड़ पाए। इसलिए युवकों के जीवन की खुशी और उत्साह के प्रति उनमें ईर्ष्या या जलन का भाव उत्पन्न होता है।

लेकिन इनमें एक वृद्ध ऐसा है जो दूसरों की तरह नहीं बल्कि समझदार है। वह कहता है- "वे युवक हैं, तरुण हैं, खाने-खेलने लायक हैं। हम तो इस योग्य अब रहे नहीं, ज़्यादा खाएँगे तो हाजमा खराब होगा। कुछ काम करेंगे तो साँस फूल जाएगी। ये भोग का जीवन अब हमारे लिए नहीं रहा। इतना ही काफी है कि वे हमारी वंदना करते हैं। यही हमारे लिए ठीक भी है।" लेकिन दूसरे देवताओं को यह बात पसंद नहीं आई, उन्होंने प्रतिवाद में कहा कि जो हमारा था उस पर युवकों ने अधिकार जमा लिया। जहाँ कभी हम थे वहाँ वे हैं, हमें केवल मूर्ति बनाकर रख दिया गया है। प्रायः सभी देवताओं के मन में अपने अधिकार वापस लेने की लालसा थी। वह देवता इनमें शामिल न हुआ और उसने वही किया जो ऐसे मौके पर अकेला पड़ गया व्यक्ति करता है। वह चुपके से वहाँ से उठकर मंदिर के दूसरे हिस्से में चला गया। इस बूढ़े व्यक्ति के प्रति आपके मन में कैसा भाव जगता है? सभी देवताओं में यही आपको सही और अच्छा लगा होगा। वह इसलिए कि लेखक भी चाहता है कि बुजुर्गों को ऐसा ही होना चाहिए। उन्हें अपनी स्थिति और क्षमता का बोध होना चाहिए। दूसरे के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि रखनी चाहिए, खासतौर पर युवाओं के प्रति। इसका

अर्थ यह हुआ कि लेखक सभी बुजुर्गों पर व्यंग्य नहीं करता। केवल ऐसे लोगों पर व्यंग्य करता है जो अपने निरर्थक स्वार्थ के कारण दूसरों का मार्ग रोककर खड़े हो जाते हैं।

पाठगत प्रश्न 10.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. देवता जब अकेले छूट गए तो उनका ध्यान तरुणों पर गया, क्योंकि-

   (क) वे सड़कों पर घूम रहे थे। (ख) वे कविता सुना रहे थे।

   (ग) वे नाटक देख रहे थे। (घ) उन्होंने वृद्धों का स्थान ले लिया था।

2. वृद्ध बातें करते-करते एकदम उदास हो गए, क्योंकि-

   (क) उनके खाने-पीने का ध्यान नहीं रखा जा रहा था।

   (ख) उन्हें प्रकाशक रॉयल्टी नहीं दे रहा था।

   (ग) वे देवता बने मंदिर में सजे थे और युवा आनंद मना रहे थे।

   (घ) वे संगीत-सभा का आनंद नहीं ले पा रहे थे।

3. पाठ में वयोवृद्ध साहित्यकारों को 'देवता' बनाया जाता है, ताकि वे-

   (क) युवकों पर पत्थर फेंक सकें

   (ख) युवकों को आशीर्वाद दे सकें

   (ग) युवकों से अधिक महत्वपूर्ण हो सकें

   (घ) युवकों को संस्मरण सुना सकें।

अंश - 2

उपसंहार

अंत में देवताओं ने सलाह करके जो निष्कर्ष निकाला वह शाम को युवकों के आने पर ज़ाहिर हुआ। जैसे ही युवक थाल में मिठाई सजाकर लाए तो देखा कि देवता लोग चबूतरे पर खड़े हैं और उन्होंने युवकों पर पत्थर बरसाने शुरू कर दिए।

युवकों ने इस पथराव का कारण पूछा। देवताओं ने कहा तुमने हमें उन सबसे रहित कर दिया जो कल तक हमारा था। अब युवकों ने स्पष्ट किया कि उन सबसे वंचित रहने का मूल कारण उनकी बढ़ती उम्र, ढलती शक्ति आदि ने किया है-हमने नहीं। फिर भी हम तुम्हें सम्मान दे रहे हैं और तुम हो कि पत्थर से हमें चोट पहुँचा रहे हो, हमें अपमानित कर रहे हो।

इस पर देवताओं ने पहले से तैयार अपना फ़ैसला सुना दिया कि जिन राहों पर हम चले थे, उन पर युवक न चलें, जो हमारा भोज्य था, वह युवक नहीं खाएँगे तथा झंडे भी हमारे ही फहराये जाएँगे, युवकों के नहीं।

आप समझ ही रहे होंगे कि झंडे से यहाँ तात्पर्य अपना सिद्धांत, अपना मत और अपना वर्चस्व है।

नए युग के युवकों ने देवताओं का फैसला मानने से इनकार कर दिया जिस पर कुपित हो देवताओं ने उन्हें पत्थर मारने शुरू कर दिए और जैसी कि उम्मीद थी, एक युवक ने आव देखा न ताव, पीपल के पेड़ पर फहरा रहे देवताओं के झंडों को ही फाड़ कर फेंक दिया। दोनों ओर से हमले होने लगे और जब एक राहगीर ने दूसरे से मामला पूछा, जवाब आया– यह लड़ाई नहीं है बल्कि दो पीढ़ियों के बीच कलागत मूल्यों पर बहस हो रही है। कलागत मूल्य एक व्यंग्योक्ति है। बरसों तक कला को लेकर प्रश्न उठते रहे हैं लेकिन उनके निश्चित उत्तर आज भी नहीं मिल पाए हैं। ऐसे ही पुरानी और नई पीढ़ी के बीच यह बहस सदा जारी है। इसके जरिए परसाई जी भी उन बहसों पर कटाक्ष कर रहे हैं जो व्यर्थ में केवल विरोध के लिए की जाती हैं, उनसे समाज को हासिल कुछ नहीं हो पाता।

यह था इस व्यंग्य रचना का कथ्य। यह पीढ़ियों के संघर्ष को उजागर करता है। नई पीढ़ी को दायित्वहीन कहने वाली पुरानी पीढ़ी दरअसल नए लोगों पर दायित्व सौंपना ही नहीं चाहती। उसे भय रहता है कि कहीं हमारे वर्चस्व को समाप्त करके नई पीढ़ी अपना वर्चस्व स्थापित न कर ले। हम समझ सकते हैं कि पुरानी पीढ़ी की यह लालसा और झूठा भय किस प्रकार समाज की युवा-पीढ़ी के विकास, उसकी स्वतंत्रता और सुख-समृद्धि को प्रभावित करती है। जिस समाज में ऐसी पुरानी पीढ़ी होगी उस समाज के युवक कुंठित, आत्मविश्वास विहीन तथा अकेलेपन से ग्रस्त होकर समाज विरोधी होंगे।

शीर्षक की सार्थकता

इस व्यंग्य का शीर्षक है 'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ'। पीढ़ियाँ वय (उम्र) और अनुभव के भेद को दर्शाती हैं। पुरानी पीढ़ी के अंतर्गत वृद्ध माता-पिता, गुरु आदि आते हैं तथा नई पीढ़ी के अंतर्गत युवा, शिष्य, पुत्र आदि आते हैं। हर पीढ़ी की अपनी अलग सोच होती है, जो पीढ़ी के बदलते ही नया रूप ग्रहण कर लेती है। प्रायः पीढ़ी का यह क्रम बारह से सोलह वर्षों में बदल जाता है, क्योंकि लगभग इतने समय में ही छोटे बच्चे युवक बन जाते हैं।

गिट्टियाँ होती हैं ढेले, छोटे-छोटे पत्थर या इसी प्रकार का कोई अन्य तत्त्व।

एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को गिट्टियाँ मारती है, पत्थर मारती है अर्थात् एक-दूसरे पर हमला करती है। नई और पुरानी पीढ़ियों में कोई भी अपने को दूसरे से नीचा नहीं देखना चाहता, इसीलिए दोनों में संघर्ष चलता रहता है। संघर्ष प्रायः विचार, सोच, मत के धरातल पर होता है। लेखक ने संकेत से इसे गिट्टियाँ कहा है।

अपने विचारों को दूसरों पर लादने के कारण इस रचना का यह शीर्षक 'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' सार्थक लगता है। स्पष्ट है कि पाठ में दो पीढ़ियों के बीच के संघर्ष को दिखाया

गया है। यह व्यंजित किया गया है कि इस संघर्ष से समाज को नुकसान होता है, क्योंकि एक पीढ़ी भोग और वर्चस्व को छोड़ना नहीं चाहती, दूसरी पीढ़ी अधिकारविहीन होकर अनुभवरहित रह जाती है।

क्रियाकलाप 10.2

हमारे परिवारों में अधिकतर वृद्ध नई पीढ़ी के विरोधी नहीं होते। वे किशोरों और युवकों के साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार करते हैं। उन्हें अपना फ़ैसला खुद करने के अधिकार देते हैं और उनके मानसिक विकास के रास्ते खोलते हैं। इस संबंध में आपका भी कोई-न-कोई अनुभव अवश्य रहा होगा। उसका उल्लेख कीजिए।

पाठगत प्रश्न 10.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. वृद्ध तरुणों को पत्थर मार रहे थे, क्योंकि-

   (क) तरुणों द्वारा उनकी पूजा की जा रही थी।

   (ख) तरुणों ने उनके अधिकारों पर कब्जा कर लिया था।

   (ग) तरुण उन्हें सम्मानित नहीं मानते थे।

   (घ) तरुणों ने उनके झंडे फाड़कर फेंक दिए थे।

2. जो वृद्ध मंदिर के दूसरे हिस्से में चला गया था-

   (क) उसी ने युवकों पर पत्थर फेंके।

   (ख) वह सबसे अधिक सुविधाएँ चाहता था।

   (ग) वह युवकों से सहानुभूति रखता था।

   (घ) देवता बनकर संतुष्ट नहीं था।

3. तरुणों के मत में वृद्ध किसके अधिकारी थे-

   (क) वर्चस्व के (ख) सम्मान के (ग) हमले के (घ) कर्म के

10.5 भाषा-शैली

'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' हरिशंकर परसाई की एक व्यंग्य-रचना है। व्यंग्य के विषय में आप जान चुके हैं।

'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' नामक व्यंग्य एक ओर तो वृद्धों की बढ़ती उम्र परंतु मन में दबी

इच्छाओं को उद्घाटित करता है, तो दूसरी ओर अगली पीढ़ी के तरुण और युवा जो वृद्धों द्वारा जीवन की सुविधाओं और साधनों पर रोक-टोक से परेशान थे, उनकी मनः स्थिति को बताता है। दोनों पीढ़ियों के बीच इस वर्चस्व को लेकर संघर्ष होता है।

पूरा व्यंग्य आम बोलचाल की भाषा में लिखा गया है। इसमें वाक्य छोटे-छोटे हैं, जो संवाद के रूप में लिखे गए हैं। ये संवाद विषय के अनुरूप और सटीक हैं। कहीं-कहीं तो लेखक ने हाज़िरजवाबी का परिचय दिया है। उदाहरण के लिए :

''और हमारे भोग का क्या होगा?''

''हम आपके भोग का भी प्रबंध करेंगे। रोज़ हम पकवानों के थाल लेकर आएँगे।''

''में श्रद्धा भी तो चाहिए। उसका क्या प्रबंध होगा?''

''हम रोज़ आपकी आरती करेंगे और आपके चरणों पर मस्तक रखेंगे।''

व्यंग्य की भाषा की यह विशेषता होती है कि देखने में तो शब्द और वाक्य-संरचना बिल्कुल स्पष्ट और सीधी-सादी होती है परंतु अर्थ की दृष्टि से वह बहुत गहरी और गंभीर बात की ओर संकेत करती है। जैसे पाठ के शुरू में ही फिर से पढ़िए-

''साहित्य के वयोवृद्ध थकित हुए''

''वे लाठी टेकते हुए सड़क पर चलते। मोटा चश्मा लगाकर चाँद देखते, निमोनिया की दवा जेब में रखकर बगीचे में घूमते। कान में ऊँचा सुनने का यंत्र लगाकर संगीत-सभा में बैठते। भोजन से अधिक मात्रा में पाचन का चूरन खाते।''

पहला वाक्य बताता है कि आगे लिखी सभी बातें साहित्य के क्षेत्र में कार्यरत वयोवृद्ध और जीवन से थके व्यक्तियों के लिए लिखी गई हैं। और उसके बाद का एक-एक वाक्य व्यंग्य में लिखा गया है अर्थात् वाक्य तो सीधे हैं परंतु वे अर्थ कुछ और ही देते हैं। जैसे ''मोटा चश्मा लगाकर चाँद देखते।'' में कहने का तात्पर्य है कि उन वृद्धों को कुछ दिखाई नहीं देता है, फिर भी इच्छा चाँद को देखने की है।

इसी प्रकार बगीचे में घूमना उन्हें इतना पसंद है कि वे ठंड में भी घूमते हैं, परंतु कहीं निमोनिया न हो जाए इस डर से हमेशा दवाइयाँ भी खाते रहते हैं। संगीत-सभा में जाना उनके लिए अधिक महत्वपूर्ण है, चाहे वे उसे यंत्र लगाकर ही क्यों न सुनें। उनकी चूरन खाने की मात्रा भोजन से अधिक होती है यानी भोजन पचाने के लिए भोजन से अधिक चूरन खाने पर मजबूर हैं। कहने का तात्पर्य हुआ कि जितना उन्हें भोगना था भोग चुके हैं पर अभी भी तमन्ना है- हर चीज को और अधिक भोगने की। संतुष्टि कहीं भी नहीं है। आगे भी इसी प्रकार के वाक्य हैं, ध्यान दीजिए-

''हमारे अर्थ का क्या होगा?''

''आपकी रॉयल्टी हम मंदिर में ही पहुँचा दिया करेंगे। आपको हम हर पाठ्य-पुस्तक में रखवाएँगे, और जो प्रकाशक धन देने में आनाकानी करेगा, उसे ठीक करेंगे।''

ये सभी बातें वृद्ध साहित्यकारों पर कटाक्ष करती हैं। साहित्यकार सदैव रॉयल्टी के लिए परेशान रहते हैं, पाठ्य-पुस्तकों में अपनी रचनाएँ रखवाने के लिए अनावश्यक प्रयास करते हैं, प्रकाशकों से हमेशा परेशान रहते हैं। 'ठीक करेंगे' पर ध्यान दीजिए। स्पष्ट होता है कि यहाँ ठीक करेंगे का अर्थ है- युवक डंडे के बल पर प्रकाशक से रॉयल्टी दिलवा देंगे यानी तरुण वृद्धों के लिए एक बहुत बड़ा काम करके देंगे जो उनके बस की बात नहीं है।

लेखक ने एक स्थान पर कहा है **'स्मरणीयो, सुनामधन्यो!'** यह संबोधन वाचक है। हिंदी भाषा में संबोधन का प्रयोग करते समय अक्सर लोग एक बिंदी और लगा देते हैं जैसे ''प्रिय मित्रों'' जो गलत है, सदैव 'प्रिय मित्रो!', 'प्रिय बहनो!' का ही प्रयोग करना उचित है जो भाषाई दृष्टि से शुद्ध है। 'स्मरणीयो' और 'सुनामधन्यो' में व्यंग्य भी है, यह कि वृद्ध अब केवल स्मरण करने लायक रह गए हैं। अब उन्हें यश को और फैलाने की आवश्यकता नहीं है।

आगे वाक्य पर ध्यान दीजिए- ''**युवकों** ने एक दिन समारोहपूर्वक **वयोवृद्धों** को देवता बनाकर मंदिर में प्रतिष्ठित कर दिया-तब उनका ध्यान **तरुणों** पर गया।'' ''**सड़कों** पर घूम रहे **होंगे**'' इन काले उभरे शब्दों में मात्रा के साथ बिंदी भी लगी है। यहाँ इन सभी का **प्रयोग बहुवचन** के लिए किया गया है।

लेखक ने पूरे पाठ में व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग किया है। अब तक आप समझ चुके होंगे कि व्यंग्यात्मक शैली किसे कहते हैं? जी हाँ, **व्यंग्यपूर्ण अंदाज़ में किसी बात को कहना ही व्यंग्यात्मक शैली होती है।**

लेखक ने स्थान-स्थान पर मुहावरों का **सटीक** प्रयोग किया है, जैसे-आनाकानी करना-किसी बात को टालना, ठीक करना-बलपूर्वक काम करवाना, ऊँचा सुनना-कम सुनाई देना, खाने-खेलने देना-जीवन का आनंद लेने देना।

10.6 भाषा-कार्य

निम्नलिखित कथनों को पढ़िए-

1. वे प्रातः स्मरणीय हैं, सुनामधन्य हैं। वृद्ध हो गए हैं।
2. प्रातः स्मरणीयो, सुनामधन्यो! आप अब वृद्ध हुए।
3. अब आप आराम से रहें।

क्या आप तीनों कथनों को एक ही स्वर में पढ़ते हैं? निश्चय ही नहीं। पहला कथन तीन साधारण वाक्यों से बना है और आप विराम चिह्नों पर रुकते हुए लगभग समान स्वर में वाक्य कह जाते हैं, किंतु दूसरे वाक्य में आप पहले वाक्य के ही शब्दों को संबोधन के रूप में बोलते हैं तो अंत में अपने सुर को खींचते हैं। तीसरे वाक्य में फिर सुर बदल जाता है।

भाषा में कुछ ऐसे तत्त्व होते हैं, जिन्हें लिपि से नहीं समझाया जा सकता। वे हैं बलाघात और अनुतान। शब्द के एक अंश को बोलने में जो बल दिया जाता है, उसे ही बलाघात कहते हैं। जैसे- अब आप आराम से रहें-'इस वाक्य में *'अब'* और 'आप' में पहले अक्षर

पर बलाघात है किंतु 'आराम' में 'रा' पर। इसी प्रकार ऊपर दिए अन्य वाक्यों में भी शब्दों में बलाघात का स्थान बोलकर पहचानिए। 'प्रात: स्मरणीयो' में 'त:' पर, 'सुनामधन्यो' में 'ना' पर बलाघात है।

अनुतान उच्चारण की सुरलहर है। प्रश्न पूछने में प्राय: वाक्य के अंत में सुर ऊँचा उठता है। संबोधन में संबोधन वाले शब्द के अंत में अनुतान होता है, जैसे:-

- *देवताओ! पत्थर क्यों मार रहे हो?*
- *किससे वंचित किया है?*
- *और कोई जी भी नहीं सकता!*

पाठगत प्रश्न 10.3

सही विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. ''लड़के इस समय न जाने क्या कर रहे होंगे।'' -वृद्ध के इस कथन में कौन-सा भाव निहित है?

   (क) लड़कों के प्रति सहानुभूति का।

   (ख) देवता बन जाने पर भी मोह न छोड़ पाने का।

   (ग) भोग नहीं लगाए जाने के कारण लड़कों के प्रति क्रोध का।

   (घ) रायल्टी न मिल पाने के कारण नाराज़गी का।

2. ''दो पीढ़ियों की कलागत मूल्यों पर बहस चल रही है।'' इस कथन के द्वारा नागरिक-

   (क) देवताओं और तरुणों पर व्यंग्य कर रहा है।

   (ख) दो पीढ़ियों की बहस पर गंभीरता से विचार कर रहा है।

   (ग) समाज के लिए दो पीढ़ियों का महत्व बता रहा है।

   (घ) युवकों के पागलपन के बारे में बता रहा है।

3. 'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' पाठ की विशेषता नहीं है-

   (क) मुहावरों से रहित भाषा　　(ख) व्यंजना शब्द शक्ति का उपयोग

   (ग) पीढ़ियों के बीच टकराव　　(घ) संवादों का उपयोग

क्रियाकलाप 10.1

(क) प्रस्तुत रचना का नाट्य रूपांतर करके अपने घर, मोहल्ले या किसी संस्था में नाट्य प्रस्तुत कीजिए।

(ख) आस-पास के पुस्तकालयों में जाइए और व्यंग्य संकलन लेकर पढ़िए और जानने की कोशिश कीजिए कि किस प्रकार यह कहानी या निबंध से अलग है।

10.6 आपने क्या सीखा

1. 'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' एक व्यंग्य रचना है, जो साहित्यिक क्षेत्र के वृद्धों और युवकों की मानसिकता को स्पष्ट करती है।
2. व्यंग्य में शब्दों की गहरी मार होती है जो व्यक्ति को झकझोर देती है। उसका सामाजिक उद्देश्य होता है।
3. व्यंग्य में विचारों की गहराई होती है ज़ो व्यक्ति को सोचने पर मजबूर करती है। व्यंग्य को अंग्रेज़ी में 'सटायर', गुजराती में 'कटाक्ष' और उर्दू में 'तंज' कहते हैं।
4. व्यंग्य में मुहावरे और व्यंग्योक्तियों का बहुत महत्व होता है, जो भाषा को अधिक प्रभावशाली और पैना बनाता है।
5. पाठ में छोटे-छोटे वाक्य संवादात्मक और व्यंग्यात्मक शैली में प्रस्तुत किए गए हैं।
6. भाषा सरल है। मुहावरों का सटीक प्रयोग किया गया है।
7. पाठ में दो पीढ़ियों का संघर्ष दर्शाया गया है।

10.7 चित्रात्मक प्रस्तुति

पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ (व्यंग्य रचना)

पीढ़ियाँ

वृदध साहित्यकार

- अधिकारों और वर्चस्व का मोह
- शारीरिक रूप से क्षीण पर भोग के कृत्रिम उपाय
- केवल सम्मान से संतुष्ट नहीं
- हठधर्मिता के कारण अगली पीढ़ी को अधिकार नहीं देते

गिट्टियाँ

तरुण पीढ़ी-

- अधिकार प्राप्ति के लिए इच्छुक
- वृद्धों को केवल सम्मान का अधिकारी मानने वाली
- बुजुर्गों की समस्याओं का समाधान तुरंत करती हैं
- वृद्धों से टकराने वाली
- पीढ़ियों के अनावश्यक टकराव के कारण सामाजिक प्रश्नों की उपेक्षा
- स्वार्थ से प्रभावित अपने मत को एक-दूसरे पर पत्थरों की तरह फेंकना।

भाषा एवं शैली

- व्यंग्य शैली, संवाद, मुहावरे, शब्द- शक्तियाँ, प्रभावशाली भाषा

10.8 सीखने के प्रतिफल

- दो पीढ़ियों के सोचने-समझने के अंतर को पहचानते हैं और सही-गलत का फैसला करते हुए दूसरों से चर्चा करते हैं।
- अपनी पीढ़ी के उत्तरदायित्व को पहचानकर जीवन में उसका उपयोग करते हैं।
- व्यंग्य शैली को समझकर भाषा में उसका गंभीरता से उपयोग करते हैं।

10.9 योग्यता विस्तार

लेखक परिचय

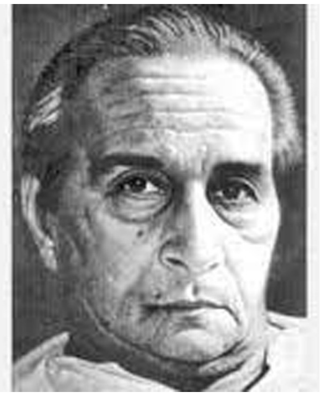
चित्र 10.3 : हरिशंकर परसाई

विख्यात व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई का जन्म 22 अगस्त, 1922 को मध्य प्रदेश में जिला होशंगाबाद के जमानी गाँव में हुआ। नागपुर विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. करने के बाद उन्होंने कुछ समय तक नौकरी की। उन्होंने सन् 1957 से लेखन को ही आजीविका का साधन बनाया। जबलपुर से 'वसुधा' नामक पत्रिका निकाली। 'नई दुनिया', 'नई कहानियाँ' तथा 'सारिका' में स्थायी स्तंभ लिखे। आप व्यंग्य-सम्राट कहे जाते हैं। आपकी रचनाओं में 'रानी नागफनी की कहानी', 'सदाचार का ताबीज', 'वैष्णव की फिसलन', 'ठिठुरता हुआ गणतंत्र', 'विकलांग श्रद्धा का दौर' प्रमुख हैं। आपकी समस्त रचनाएँ 'परसाई रचनावली' के रूप में छह खंडों में संकलित है। आपके व्यंग्य कथात्मकता और करुणा लिए होते हैं। दिनांक 18 अगस्त 1995 को जबलपुर में आपका देहावसान हुआ।

हरिशंकर परसाई समकालीन व्यंग्यकारों में सबसे बड़े रचनाकार माने जाते हैं। उन्होंने समाज में फैली विसंगतियों, असमानताओं तथा विडंबनाओं का बहुत विनोदपूर्ण वर्णन किया। सामाजिक तथा राजनीतिक समस्याओं पर भी उनकी कलम खूब चली।

प्राय: प्रत्येक विधा में तीन-चार पीढ़ियाँ एक साथ लिखती रहती हैं। व्यंग्य के साथ भी ऐसा ही है। परसाई जी की पीढ़ी में शरद जोशी, रवींद्रनाथ त्यागी। उनके बाद वाली दूसरी पीढ़ी में नरेंद्र कोहली, शंकर पुणताम्बेकर और अशोक शुक्ल, तीसरी पीढ़ी में ज्ञान चतुर्वेदी, प्रेम जनमेजय और हरीश नवल तथा चौथी पीढ़ी में यशांत व्यास, डॉ. शरद राकेश, शिवानंद कामड़े आदि अनेक व्यंग्यकारों की रचनाओं को पढ़िए।

10.10 पाठांत प्रश्न

1. व्यंग्य किसे कहते हैं? 'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' एक व्यंग्य रचना है।' सिद्ध कीजिए।

2. नई पीढ़ी, पुरानी पीढ़ी से क्या चाहती है? पुरानी पीढ़ी के लोग नई पीढ़ी को आगे क्यों नहीं आने देते? स्पष्ट कीजिए।

3. लेखक ने सभी वृद्धों पर व्यंग्य किया है या खास प्रकार के वृद्धों पर? पाठ से उदाहरण देते हुए अपनी बात सिद्ध कीजिए।

4. स्नेहपूर्ण सामाजिक वातावरण, युवकों के मानसिक-भावनात्मक विकास और भौतिक उपलब्धियों के लिए पुरानी और नई पीढ़ी के बीच किस प्रकार का संबंध आवश्यक है?

5. निम्नलिखित उक्तियों का अर्थ स्पष्ट कीजिए:

   (क) वे भोजन से अधिक मात्रा में पाचन का चूरन खाते।

   (ख) आपको हम हर पाठ्य-पुस्तक में रखवाएँगे और जो प्रकाशक धन देने में आनाकानी करेगा उसे ठीक करेंगे।

   (ग) आप लोगों की संस्मरण की अवस्था है। आप लोग आपस में संस्मरण सुनायेंगे ही। उनका रिकार्डिंग होता जाएगा और हम पुस्तक छपवा देंगे।

   (घ) लड़के बाहर ऐसा आनंद कर रहे हैं और देवता बने हम मंदिर की कारा में बैठे हैं।

   (ङ) तुम बिल्कुल निःसत्व हो। तुम्हें इस बात का बुरा नहीं लगता कि जहाँ-जहाँ हम थे, वहाँ-वहाँ वे जम गए हैं।

6. इस पाठ में साहित्य की पुरानी और नई पीढ़ी का संघर्ष दिखाया गया है। ऐसा संघर्ष हम जीवन के दूसरे क्षेत्रों में भी देखते हैं। आप अपना कोई ऐसा अनुभव लिखिए जब आपको लगा हो कि बुजुर्गों का अनावश्यक हस्तक्षेप युवकों की स्वतंत्रता और उनके विकास को बाधित करता है।

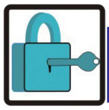

10.11 उत्तरमाला

बोध-प्रश्न 10.1

1. (ख)   2. (ग)   3. (घ)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

10.1 1. (घ), 2. (ग) 3. (घ)

10.2 1. (ग) 2. (ग) 3. (ख)

10.3 1. (ख) 2. (क) 3. (क)

11

दो कलाकार

(मन्नू भंडारी)

हम देखते हैं कि लोगों के जीवन में अपनी प्राथमिताएँ होती हैं। कोई व्यक्ति किसी बात को प्राथमिकता देता है तो कोई किसी और बात को। पर इन प्राथमिकताओं के बीच जब कभी किसी एक को चुनना पड़ता है तो हम महत्व की अधिकता की दृष्टि से इन पर विचार करते हैं। ऐसे में हम समझ लेते हैं कि संसार में सभी बातों की जरूरत होते हुए भी जब चुनाव की बात आती है तो सामाजिक दृष्टि से जो महत्वपूर्ण हो, उसे ही हमें चुनना चाहिए। आइए, एक कहानी के माध्यम से समझते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- चित्रा के साथ-साथ अरुणा को भी कलाकार सिद्ध करते हुए अपने विचार व्यक्त कर सकेंगे;
- दोनों प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ सोदाहरण लिख सकेंगे;
- कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'दो कलाकार' कहानी की विवेचना कर सकेंगे;
- कहानी की भाषा-शैली पर टिप्पणी लिख सकेंगे।

क्रियाकलाप 11.1

कहानी में एक पात्र अरुणा ने एक ओर निरक्षर बच्चों को पढ़ाया और दूसरी ओर गरीब बच्चे को पाल-पोसकर नया जीवन देने की कोशिश की। दोनों ही कार्य श्रेष्ठ हैं। यदि आपको इन दोनों में से कोई एक चुनना हो तो किसे चुनेंगे और क्यों? तीन तर्क दीजिए।

____

____

____

11.1 मूल पाठ

आइए, मूल कहानी को एक बार पढ़ लेते हैं:

दो कलाकार

'ऐ रूनी उठ,' और चादर खींचकर, चित्र ने सोती हुई अरुणा को झकझोरकर उठा दिया।

'अरे, क्या है?' आँख मलते हुए तनिक खिझलाहट भरे स्वर में अरुणा ने पूछा। चित्रा उसका हाथ पकड़कर खींचती हुई ले गई और अपने नए बनाए हुए चित्र के सामने ले जाकर खड़ा करके बोली- देख, मेरा चित्र पूरा हो गया।

'ओह! तो इसे दिखाने के लिए तूने मेरी नींद खराब कर दी। बदतमीज़ कहीं की!'

'अरे, ज़रा इस चित्र को तो देख। न पा गई पहला इनाम तो नाम बदल देना।' चित्र को चारों ओर से घुमाते हुए अरुणा बोली, 'किधर से देखूँ यह तो बता दे, हज़ार बार तुझसे कहा कि जिसका चित्र बनाए उसका नाम लिख दिया कर, जिससे गलतफ़हमी न हुआ करे, वरना तू बनाए हाथी और हम समझें उल्लू'। फिर तस्वीर पर आँख गड़ाते हुए बोली, 'किसी तरह नहीं समझ पा रही हूँ कि चौरासी लाख योनियों में से आखिर यह किस जीव की तस्वीर है?'

'तो आपको यह कोई जीव नज़र आ रहा है? अरे, ज़रा अच्छी तरह देख और समझने की कोशिश कर।'

'अरे, यह क्या? इसमें तो सड़क, आदमी, ट्राम, बस, मोटर, मकान- सब एक-दूसरे पर चढ़ रहे हैं, मानों सबकी खिचड़ी पकाकर रख दी हो। क्या घनचक्कर बनाया है?' और उसने वह चित्र रख दिया।

'जरा सोचकर बता कि यह किसका प्रतीक है?'

'तेरी बेवकूफी का। आई है बड़ी, प्रतीकवाली।'

'अरे, जनाब, यह चित्र आज की दुनिया के कंफ्यूजन का प्रतीक बस, हाँ थोड़ा-सा दिमाग जरूरी है।' चित्रा ने चुटकी ली तो अरूणा भड़क उठी। 'मुझे तो तेरे दिमाग के कंफ्यूजन का प्रतीक नज़र आ रहा है। बिना मतलब ज़िंदगी खराब कर रही है।' और अरूणा मुँह धोने के लिए बाहर चली गई। लौटी तो देखा तीन-चार बच्चे उसके कमरे के दरवाज़े पर खड़े उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। आते ही बोले,

चित्र 11.1 : चित्रा सुंदर चित्र बनाते हुए

शब्दार्थ

आँख गड़ाना	- ध्यान से देखना
खिचड़ी पकाना	- इधर-उधर की चीजों को जोड़कर एक चीज़ तैयार करना
घनचक्कर	- गोलमाल, ठीक से समझ में न आने वाला
रौब खाना	- प्रभाव में आना
हाड़ तोड़ना	- मेहनत करना
ढिंढोरा पीटना	- सभी को बता देना

'दीदी! सब बच्चे आकर बैठ गए, चलिए।'

'आ गए सब बच्चे? अच्छा चलो, मैं अभी आई।' 'बच्चे दौड़ पड़े'।

'क्या ये बंदर पाल रखे हैं तूने भी?' फिर ज़रा हँसकर चित्रा बोली, 'एक दिन तेरी पाठशाला का चित्र बनाना होगा। ज़रा लोगों को दिखाया ही करेंगे कि हमारी एक ऐसी मित्र साहिबा थीं जो सारे जमादार, दाइयों और चपरासियों के बच्चों को पढ़ा-पढ़ाकर ही अपने को भारी पंडिता और समाज-सेविका समझती थीं।'

चित्र 11.2 : अरुणा गरीब बच्चों को पढ़ाते हुए

'जा-जा, समझते हैं तो समझते हैं! तू जाकर सारी दुनिया में ढिंढोरा पीटना, हमें कोई शरम है क्या? तेरी तरह लकीरें खींचकर तो समय बर्बाद नहीं करते।' और पैर में चप्पल डालकर वह बाहर मैदान में चली गई, जहाँ बिना किसी आयोजन के ही एक छोटी-सी पाठशाला बनी हुई थी।

रात के दस बजे थे। सारे हॉस्टल की बत्तियाँ नियमानुसार बुझ चुकी थीं। ऊपर के एक तल्ले पर अँधेरे में ही खुसुर-फुसुर चल रही थी। रविवार के दिन तो यों ही छुट्टी का मूड रहता है। दूसरे, दिन में काफी नींद ली जाती थी, सो दस बजे लड़कियों को किसी तरह भी नींद नहीं आती थी। तभी हॉस्टल के फाटक में जलती हुई टार्च लिए कोई घुसा। अपने कमरे की खिड़की में से झाँकते हुए सविता ने कहा, 'ठाठ तो हास्टल में बस अरुणा ही के हैं, रात नौ बजे लौटो, दस बजे लौटो, कोई बंधन नहीं। हम लोग तो दस के बाद बत्ती भी नहीं जला सकते।'

'लौट आई अरुणा दी? आज सवेरे से ही वे बड़ी परेशान थीं। फुलिया दाई का बच्चा बड़ा बीमार था, दोपहर से वे उसी के यहाँ बैठी थीं। पता नहीं, क्या हुआ बेचारे का?' शीला ने ठंडी साँस भरते हुए कहा।

'तू बड़ी भक्त है अरुणा दी की।'

'उनके जैसे गुण अपना ले तो तेरी भी भक्त हो जाऊँगी।'

'मैं कहती हूँ, उन्हें यही सब करना है तो कहीं और रहें, हॉस्टल में रहकर यह जो नवाबी चलाती हैं, सो तो हमसे बर्दाश्त नहीं होती। सारी लड़कियाँ डरती हैं तो कुछ कहती नहीं, पर प्रिंसिपल और वार्डन तक रौब खाती हैं इनका, तभी तो सब प्रकार की छूट दे रखी है।'

'तू भी जिस दिन हाड़ तोड़कर दूसरों के लिए यों परिश्रम करने लग जाएगी न, उस दिन तेरा भी सब लोग रौब खाने लगेंगे। पर तुम्हें तो सजने-सँवरने से ही फुर्सत नहीं मिलती, दूसरों के

लिए क्या खाक काम करोगी।'

'अच्छा-अच्छा चल, अपना लेक्चर अपने पास रख।'

अरुणा अपने कमरे में घुसी तो बहुत ही धीरे से, जिससे चित्रा की नींद न खराब हो। पर चित्रा जग रही थी। दोपहर से अरुणा बिना खाए-पिए बाहर थी, उसे नींद कैसे आती भला? मेस से उसका खाना लाकर मेज़ पर ढककर रख दिया था। अरुणा के आते ही वह उठ बैठी और पूछा, 'बड़ी देर लग गई, क्या हुआ रूनी?'

'वह बच्चा नहीं बचा, चित्रा। किसी तरह उसे नहीं बचा सके।' और उसका स्वर किसी गहरे दुख में डूब गया।

चित्रा ने माचिस लेकर लैंप जलाया और स्टोव जलाने लगी, खाना गरम करने के लिए। तभी अरुणा ने कहा, 'रहने दे चित्रा, मैं खाऊँगी नहीं, मुझे ज़रा भी भूख नहीं है।' और उसकी आँखें फिर छलछला आईं।

बहुत ही स्नेह से अरुणा की पीठ थपथपाते हुए चित्रा ने कहा, 'जो होना था सो हो गया, अब भूखे रहने से क्या होगा, थोड़ा-थोड़ा खा ले।'

'नहीं चित्रा, अब रहने दे, बस तू लैंप बुझा दे।'

उसके बाद दो-तीन दिन तक अरुणा बहुत ही उदास रही, लेकिन समय के साथ-साथ यह गम भी जाता रहा, और सब काम ज्यों-का-त्यों चलने लगा।

चार बजते ही कॉलेज से लड़कियाँ लौट आईं, पर अरुणा नहीं लौटी। चित्रा चाय के लिए उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। 'पता नहीं कहाँ-कहाँ अटक जाती है, बस इसके पीछे बैठे रहा करो।'

'अरे, क्यों बड़-बड़ कर रही है। ले मैं आ गई। चल, बना चाय।'

'तेरे मनोज की चिट्ठी आई है।'

'कहाँ, तूने तो पढ़ ही ली होगी फाड़कर।'

'चल हट, ऐसी बोर चिट्ठियाँ पढ़ने का फालतू समय किसके पास है? तुम्हारी चिट्ठियों में रहता ही क्या है जो कोई पढ़े। बड़े-बड़े आदर्श की बातें, मानो खत न हुआ लेक्चर हुआ।'

'अच्छा-अच्छा', तू लिखा करना रसभरी चिट्ठियाँ, हमें तो वह सब आता नहीं।' वह लिफ़ाफ़ा फाड़कर पत्र पढ़ने लगी। जब उसका पत्र समाप्त हो गया तो चित्रा बोली, 'आज पिताजी का भी पत्र आया है, लिखा है जैसे ही यहाँ का कोर्स समाप्त हो जाए, मैं विदेश जा सकती हूँ। मैं तो जानती थी, पिता जी कभी मना नहीं करेंगे।'

'हाँ भाई! धनी पिता की इकलौती बिटिया ठहरी! तेरी इच्छा कभी टाली जा सकती है! पर सच कहती हूँ, मुझे तो सारी कला इतनी निरर्थक लगती है, इतनी बेमतलब लगती है कि बता नहीं सकती । किस काम की ऐसी कला, जो आदमी को आदमी न रहने दे।'

'तो तू मुझे आदमी नहीं समझती, क्यों?'

शब्दार्थ

प्रतीक्षा	- इंतजार
निरर्थक	- बेकार
आइडिया	- विचार
सामर्थ्य	- शक्ति

'तुझे दुनिया से कोई मतलब नहीं, दूसरों से कोई मतलब नहीं, बस चौबीस घंटे अपने रंग और तूलियों में डूबी रहती है। दुनिया में बड़ी से बड़ी घटना घट जाए, पर यदि उसमें तेरे चित्र के लिए कोई आइडिया नहीं तो तेरे लिए वह घटना कोई महत्त्व नहीं रखती। बस, हर घड़ी, हर जगह और हर चीज में से तू अपने चित्रों के लिए मॉडल खोजा करती है।'

'अरे, इस लगन को देखकर ही तो गुरुजी कहते हैं कि वह समय दूर नहीं, जब हिंदुस्तान के कोने-कोने में मेरी शोहरत गूँज उठेगी। अमृता शेरगिल की तरह मेरा भी नाम गूँज उठे, बस यही तमन्ना है।'

'कागज़ पर इन निर्जीव चित्रों को बनाने की बजाय दो-चार की ज़िंदगी क्यों नहीं बना देती, तेरे पास सामर्थ्य है, साधन है।'

'वह काम तो तेरे और मनोज के लिए छोड़ दिया है। तुम दोनों ब्याह कर लो और फिर जल्दी से सारी दुनिया का कल्याण करने के लिए झंडा लेकर निकल पड़ना।' और चित्रा हँस पड़ी। फिर बोली- 'अच्छा, यह बता कि तेरे यह सब करने से क्या हो जाएगा? तूने अपनी अनोखी पाठशाला में दस-बीस बच्चे पढ़ा दिए, तो क्या निरक्षरता मिट जाएगी? अरे, यह सब काम एक के किए नहीं होते। जब तक समाज का सारा ढाँचा नहीं बदलता तब तक कुछ होने का नहीं, और ढाँचा ही बदल गया तो तेरे-मेरे कुछ करने की ज़रूरत नहीं, सब अपने आप ही हो जाएगा।'

फिर दोनों में कला और जीवन को लेकर लंबी-लंबी बहसें होतीं और चित्रा अंत में कान पर हाथ धरकर उठ जाती, 'अच्छा-अच्छा, बंद कर यह लेक्चरबाजी, बोर कहीं की।' यह पिछले पाँच वर्षों से इसी प्रकार चल रहा था। हर दस-बीस दिन बाद दोनों में अपने-अपने उद्देश्य को लेकर, अपनी-अपनी दिनचर्या को लेकर एक गरमागरम बहस हो ही जाती, पर न वह उसकी बात का लोहा मानती थी, न वह उसकी बात की कायल होती थी।

शब्दार्थ

लोहा मानना - मन से बात को स्वीकार करना, सम्मान करना

कायल होना - किसी की बात स्वीकार करना, लाजवाब होना

तीन दिन से मूसलाधार वर्षा हो रही थी। रोज़ अखबारों में बाढ़ की खबरें आती थीं। बाढ़-पीड़ितों की दशा बिगड़ती जा रही थी, और वर्षा थी कि थमने का नाम ही नहीं लेती थी। अरुणा सारे दिन चंदा इकट्ठा करने में व्यस्त रहती। एक दिन आखिर चित्रा ने कह ही दिया, 'तेरे इम्तिहान सर पर आ रहे हैं, कुछ पढ़ती-लिखती तू है नहीं, सारे दिन बस भटकती रहती है। फेल हो गई तो तेरे ससुर साहब क्या सोचेंगे कि इतना पैसा बेकार ही पानी में बहाया।'

'आज शाम को एक स्वयंसेवकों का दल जा रहा है, प्रिंसिपल से अनुमति ले ली, मैं भी उनके साथ जा रही हूँ।' चित्रा की बात को बिना सुने उसने कहा।

शाम को अरुणा चली गई। पंद्रह दिन बाद वह लौटी तो उसकी हालत काफी खस्ता हो रही थी। सूरत ऐसी निकल आई थी मानो छह महीने से बीमार हो। चित्रा उस समय अपने गुरुदेव के पास गई हुई थी। अरुणा नहा-धोकर, खा-पीकर लेटने लगी, तभी उसकी नजर चित्रा के नए चित्रों की ओर गई। तीन चित्र बने रखे थे। तीनों बाढ़ के चित्र थे। जो दृश्य वह अपनी आँखों से देखकर आ रही थी, वैसे ही दृश्य यहाँ भी अंकित थे। उसका मन जाने कैसा-कैसा हो आया। वहाँ लोगों के जीने के लाले पड़ रहे हैं और उसमें भी इसे चित्रकारी ही सूझती है। और न जाने कितनी बात सोचते-सोचते वह सो गई।

शाम को चित्रा लौटी तो अरुणा को देखकर बड़ी प्रसन्न हुई। 'गनीमत है, तू लौट आई। मैं सोच रही थी कि कहीं तू बाढ़-पीड़ितों की सेवा करती ही रह जाए और मैं जाने से पहले तुझसे मिल भी न पाऊँ।'

'क्यों, तेरा जाने का तय हो गया?'

'हाँ, अगले बुध को मैं घर जाऊँगी और बस एक सप्ताह बाद हिंदुस्तान की सीमा के बाहर पहुँच जाऊँगी।' उल्लास उसके स्वर से छलक पड़ रहा था।

'सच कह रही है, तू चली जाएगी चित्रा! छह साल से तेरे साथ रहते-रहते मैं तो यह बात भूल ही गई कि कभी हमको अलग भी होना पड़ेगा। तू चली जाएगी तो मैं कैसे रहूँगी?'

'अरे, दो महीने बाद शादी कर लेगी, फिर याद भी न रहेगा कि कौन कमबख्त थी चित्रा! बड़ी लालसा थी तेरी शादी में आने की , पर अब तो आ नहीं सकूँगी। अच्छी तरह शादी करना, दोनों मिलकर सारे समाज का और सारे संसार का कल्याण करना।'

पर अरुणा के कानों में उसकी कोई भी बात नहीं पड़ रही थी। चित्रा के साथ बिताए हुए पिछले छह सालों के चित्र उसकी आँखों के सामने घूम रहे थे और वह उन्हीं में खोई बैठी रही।

'क्या सोचने लगी रूनी ! मनोज की याद आ गई क्या?'

'चल हट! हर समय का मज़ाक अच्छा नहीं लगता।'

उस दिन रात में भी अरुणा अपने और चित्रा के बारे में ही सोचती रही। दोनों के आचार-विचार, रहन-सहन, रुचि आदि में ज़मीन-आसमान का अंतर था, फिर भी कितना स्नेह था दोनों में। सारा हॉस्टल उनकी मित्रता को ईर्ष्या की नज़र से देखता था। जब उसके बी.ए. के इम्तिहान थे तो चित्रा कितना खयाल रखती थी उसका। वह अक्सर चित्रा को डाँट दिया करती थी, पर कभी उसने बुरा नहीं माना। यही चित्रा जब चली जाएगी- बहुत-बहुत दूर। ये दो महीने भी कैसे निकालेगी? और यही सब सोचते-सोचते उसे नींद आ गई।

आज चित्रा को जाना था। हॉस्टल में उसे बड़ी शानदार विदाई मिली थी। अरुणा सवेरे से ही उसका सारा सामान ठीक कर रही थी। एक-एक करके चित्रा सबसे मिल आई। फिर गुरुजी के घर की तरफ़ चल पड़ी। तीन बज गए, पर वह लौटी नहीं। अरुणा उसका सारा काम समाप्त करके उसकी राह देख रही थी। और भी कई लड़कियाँ वहाँ जमा थीं, कुछ बार-बार आकर पूछ जाती थीं, चित्रा लौटी या नहीं। पाँच बजे की गाड़ी से वह जाने वाली है। अरुणा ने सोचा, वह खुद जाकर देख आए कि आखिर बात क्या हो गई। तभी हड़बड़ाती-सी चित्रा ने प्रवेश किया, 'बड़ी देर हो गई ना। अरे, क्या करूँ, बस, कुछ ऐसा हो गया कि रुकना ही पड़ा।'

'आखिर क्या हो गया ऐसा, जो रुकना ही पड़ा, सुनें तो।' दो-तीन कंठ एक साथ बोले।'

'गर्ग-स्टोर के सामने पेड़ के नीचे अक्सर एक भिखारिन बैठी रहा करती थी ना, लौटी तो देखा कि वह वहीं मरी पड़ी है और उसके दोनों बच्चे सूखे शरीर से चिपककर बुरी तरह रो रहे हैं। जाने क्या था उस सारे दृश्य में, कि मैं अपने को रोक नहीं सकी - उसका एक रफ-सा स्केच बना ही डाला। बस, इसी में इतनी देर हो गई।' चर्चा इसी पर चल पड़ी, कैसे मर गई,

शब्दार्थ

विराट - बड़ा
सपने साकार होना - सोची हुई बात सच होना
अवाक् - आश्चर्य, चुप

कल तो उसे देखा था।' किसी ने दार्शनिक की मुद्रा में कहा, 'अरे, जिंदगी का क्या भरोसा, मौत कहकर थोड़े आती है।' आदि-आदि। पर इस सारी चर्चा से अरुणा कब खिसक गई, कोई जान ही नहीं पाया।

चित्र 11.3 : मृत भिखारिन और दो बच्चे

साढ़े चार बजे चित्रा हॉस्टल के फाटक पर आ गई, पर तब तक अरुणा का कहीं पता नहीं था। बहुत सारी लड़कियाँ उसे छोड़ने स्टेशन आईं, पर चित्रा की आँखें बराबर अरुणा को ढूँढ़ रही थीं। उसे दृढ़ विश्वास था कि वह इस विदाई की बेला में उससे मिलने ज़रूर आएगी। पाँच भी बज गए, रेल चल पड़ी, अनेक रूमालों ने हिल-हिलकर चित्रा को विदाई दी, पर उसकी आँखें किसी और को ही ढूँढ़ रही थीं- पर अरुणा न आई सो न आई।

विदेश जाकर चित्रा तन-मन से अपने काम में जुट गई, उसकी लगन ने उसकी कला को निखार दिया। विदेशों में उसके चित्रों की धूम मच गई। भिखमंगी और दो अनाथ बच्चों के उस चित्र की प्रशंसा में तो अखबारों के कॉलम भर गए। शोहरत के ऊँचे कगार पर बैठ, चित्रा जैसे अपना पिछला सब कुछ भूल गई। पहले वर्ष तो अरुणा से पत्र-व्यवहार बड़े नियमित रूप से चला, फिर कम होते-होते एकदम बंद हो गया। पिछले एक साल से तो उसे यह भी नहीं मालूम कि वह कहाँ है। नई कल्पनाएँ और नए-नए विचार उसे नवीन सृजन की प्रेरणा देते और वह उन्हीं में खोई रहती। उसके चित्रों की प्रदर्शनियाँ होतीं। अनेक प्रतियोगिताओं में उसका 'अनाथ' शीर्षकवाला चित्र प्रथम पुरस्कार पा चुका था। जाने क्या था उस चित्र में, जो देखता, वही चकित रह जाता। दुख-दारिद्रय और करुणा जैसे साकार हो उठे थे। तीन साल बाद जब वह भारत लौटी तो बड़ा स्वागत हुआ उसका। अखबारों में उसकी कला पर, उसके जीवन पर अनेक लेख छपे। पिता अपनी इकलौती बिटिया की इस कामयाबी पर गद्‌गद थे – समझ नहीं पा रहे थे कि उसे कहाँ-कहाँ उठाएँ, बिठाएँ। दिल्ली में उसके चित्रों की प्रदर्शनी का विराट आयोजन किया गया। उद्‌घाटन करने के लिए उसे ही बुलाया गया था। उस प्रदर्शनी को देखने के लिए जनता उमड़ पड़ी थी, भूरि-भूरि प्रशंसा हो रही थी और चित्रा को लग रहा था, जैसे उसके सपने साकार हो गए। उस भीड़-भाड़ में अचानक उसकी भेंट अरुणा से हो गई ! 'रूनी' ! कहकर वह भीड़ की उपस्थिति को भूलकर अरुणा के गले से लिपट गई– 'तुझे कब से चित्र देखने का शौक हो गया, रूनी!' 'चित्रों को नहीं, चित्रा को देखने आई थी। तू तो एकदम भूल ही गई।'

'अरे, ये बच्चे किसके हैं? दो प्यारे-से बच्चे अरुणा से सटे खड़े थे। लड़के की उम्र दस साल की होगी तो लड़की की कोई आठ।

'मेरे बच्चे हैं, और किसके ! ये तुम्हारी चित्रा मासी है, नमस्ते करो अपनी मासी को।' अरुणा ने आदेश दिया।

चित्र 11.4

बच्चों ने बड़ी अदा से नमस्ते किया। पर चित्रा अवाक् होकर कभी उनका और कभी अरुणा का मुँह देख रही थी। वह सारी बात की तुक नहीं मिला पा रही थी। तभी अरुणा ने टोका, 'कैसी मासी है, प्यार तो कर।' और चित्रा ने दोनों के सिर पर हाथ फेरा। प्यार का ज़रा-सा साहस पाकर लड़की चित्रा की गोदी में जा चढ़ी। अरुणा ने कहा, 'तुम्हारी ये मासी बहुत अच्छी तस्वीरें बनाती है, ये सारी तस्वीरें इन्हीं की बनाई हुई हैं।'

'सच ?' आश्चर्य से बच्ची बोल पड़ी। 'तब तो मासी, तुम जरूर ड्रांइग में फर्स्ट आती होगी। मैं भी अपनी क्लास में फर्स्ट आती हूँ – तुम हमारे घर आओगी तो अपनी कॉपी दिखाऊँगी।' बच्ची के स्वर में मुकाबले की भावना थी। चित्रा और अरुणा इस बात पर हँस पड़ीं।

'आप हमें सब तस्वीरें दिखाइए मासी, समझा-समझाकर।' बच्चे ने फरमाइश की। चित्रा समझाती हुई तस्वीरें दिखाने लगी। घूमते-घूमते वे उसी भिखारिन वाली तस्वीर के सामने आ पहुँचे। चित्रा ने कहा, 'यही वह तस्वीर है रूनी, जिसने मुझे इतनी प्रसिद्धि दी।'

'ये बच्चे रो क्यों रहे हैं, मासी?' तस्वीर को ध्यान से देखकर बालिका ने कहा!

'इनकी माँ मर गई, देखती नहीं मरी पड़ी है। इतना भी नहीं समझती।' बालक ने मौका पाते ही अपने बड़प्पन की छाप लगाई।

'ये सचमुच के बच्चे थे, मासी? बालिका का स्वर करुण से करुणतर होता जा रहा था।

'अरे, सचमुच के बच्चों को देखकर ही तो बनाई थी यह तस्वीर!'

'हाय राम! इनकी माँ मर गई तो फिर इन बच्चों का क्या हुआ?' बालक ने पूछा।

'मासी, हमें ऐसी तस्वीर नहीं, अच्छी-अच्छी, तस्वीरें दिखाओ, राजा-रानी की, परियों की..... ... उस तस्वीर को और अधिक देर तक देखना बच्चों के लिए असह्य हो उठा था। तभी अरुणा के पति आ पहुँचे। परिचय हुआ। साधारण बातचीत के पश्चात् अरुणा ने दोनों बच्चों को उनके

हवाले करते हुए कहा, 'आप जरा बच्चों को प्रदर्शनी दिखाइए, मैं चित्रा को लेकर घर चलती हूँ।

बच्चे इच्छा न रहते हुए भी पिता के साथ विदा हुए। चित्रा को दोनों बच्चे बड़े ही प्यारे लगे। वह उन्हें एकटक देखती रही। जैसे ही वे आँखों से ओझल हुए उसने पूछा, 'सच-सच बता, रूनी! ये प्यारे-प्यारे बच्चे किसके हैं?

'कहा तो, मेरे।' अरुणा ने हँसते हुए कहा।

'अरे, बताओ ना! मुझे बेवकूफ़ बनाने चली है।'

'एक क्षण रुककर अरुणा ने कहा, 'बता दूँ?' और फिर उस भिखारिन वाले चित्र के दोनों बच्चों पर उँगली रखकर बोली, 'ये ही वे दोनों बच्चे हैं।'

'क्या.... !' विस्मय से चित्रा की आँखें फैली की फैली रह गईं।

'क्या सोच रही है, चित्रा?'

'कुछ नहीं - मैं सोच रही थी कि .... ' पर शब्द शायद उसके विचारों में ही खो गए।

बोध प्रश्न 11.1

आशा है आपको कहानी पसंद आई होगी। अब दिए गए विकल्पों में से सही विकल्प चुनकर इस कहानी पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. 'तो इसे दिखाने के लिए मेरी नींद खराब कर दी, बदतमीज़ कहीं की'– अरुणा के इस कथन से कौन-सा भाव प्रकट होता है।

   (क) क्रोध (ख) प्रेम

   (ग) नाराजगी (घ) ईर्ष्या

2. जिस चित्र में सड़क, आदमी, ट्राम, बस, मोटर, मकान सब एक-दूसरे पर चढ़े नज़र आते हैं, उसे चित्रा किसका प्रतीक बताती है?

   (क) यातायात समस्या का (ख) जनसंख्या की बढ़ोतरी का

   (ग) दुनिया के कंफ्युजन का (घ) सड़क दुर्घटना का

3. अरुणा की भक्त कहकर किसे ताना दिया गया है–

   (क) सविता को (ख) वार्डन को

   (ग) प्रिंसिपल को (घ) शीला को

4. दोपहर से ही भूखी अरुणा ने रात को भी भोजन नहीं किया, क्योंकि–

   (क) फुलिया दाई के बच्चे के दुख के कारण भूख मर गई थी।

(ख) भोजन समाप्त हो चुका था।

(ग) चित्रा को कष्ट नहीं देना चाहती थी।

(घ) भोजन ठंडा था।

5. जब अरुणा रात देर से लौटी तो चित्रा–

(क) सो रही थी।

(ख) पढ़ रही थी।

(ग) बातें कर रही थी।

(घ) चिंता में थी कि अभी तक अरुणा लौटी क्यों नहीं।

6. चित्रा की सबसे बड़ी इच्छा है–

(क) विदेश जाने की   (ख) प्रसिद्धि पाने की

(ग) धन प्राप्ति की   (घ) समाज का ढाँचा बदलने की

7. निम्नलिखित में से सही कथन है–

(क) अपने विदेश जाने की बात पर चित्रा उदास हो जाती है।

(ख) अरुणा के डाँटने पर चित्रा नाराज हो जाती है।

(ग) विदेश जाकर भी चित्रा का स्वभाव नहीं बदलता।

(घ) चित्रा अरूणा के बच्चों पर कोई ध्यान नहीं देती।

11.3 आइए समझें

कथा के प्रमुख चरण

यह तो आप जान ही गए हैं चित्रा और अरुणा दो सखियाँ हॉस्टल में एक साथ रहती थीं। उनके व्यवहार और आदतों में अंतर होते हुए भी दोनों घनिष्ठ मित्र थीं। एक-दूसरे के सुख-दुख का ध्यान रखती थीं। आगे कहानी कुछ इस प्रकार आगे बढ़ती है–

- अरुणा का विवाह मनोज से निश्चित हो चुका है।
- चित्रा धनी पिता की इकलौती पुत्री है।
- अरुणा एक समाज सेविका है।
- चित्रा एक चित्रकार, प्रसिद्धि पाने की उत्सुक, जिसे गुरुजी का प्रोत्साहन प्राप्त है।
- अखबारों से पता चलता है कि लगातार मूसलाधार बारिश से बाढ़ आ गई है। बाढ़ पीढ़ितों की हालत बिगड़ चुकी है।

- अरुणा शिविर में जाती है और बाढ़ पीड़ितों की सेवा करती है।
- चित्रा उन पर आधारित चित्र बनाती है।
- 'गर्ग स्टोर' पर भिखारिन की मृत्यु हो जाती है। चित्रा उस मरी हुई भिखारिन और उसके बच्चों का चित्र बनाती है और फिर चली जाती है। भिखारिन वाले चित्र पर चित्रा को विशिष्ट पुरस्कार मिलता है।
- चित्रा विदेश से वापस आती है और भव्य प्रदर्शनी का आयोजन करती है, जिसमें उसे अपूर्व प्रसिद्धि मिलती है।
- प्रदर्शनी में अरुणा का चित्रा से मिलन होता है।
- अरुणा के साथ दो बच्चों को देख कर चित्रा अवाक रह जाती है।
- चित्रा को पता चलता है कि अरुणा के साथ आए दोनों बच्चे उसी भिखारिन के हैं –जिसका चित्र उसने बनाया था।
- वह खुद को अरुणा के सामने बहुत छोटा महसूस करती है।

11.3.1 कहानी कैसे पढ़ें

आपने अनेक कहानियाँ पढ़ी होंगी। आपको अनुभव हुआ होगा कि कहानी मनोरंजन का साधन होने के साथ ही किसी जीवन-मूल्य की तरफ़ भी संकेत करती है। दादा-दादी अथवा बड़ों द्वारा बच्चों को सुनायी जाने वाली कहानियों में से दोनों गुण भरपूर पाए जाते हैं। कहानी, राजा-रानी और काल्पनिक परियों से लेकर पौराणिक, वैज्ञानिक, ऐतिहासिक, सामाजिक आदि किसी भी विषय से जुड़ी हो सकती है। यह जीवन की किसी छोटी-बड़ी घटना पर आधारित होती है। कहानी को 'छोटे मुँह बड़ी बात' कहा गया है। सुप्रसिद्ध कहानीकार प्रेमचंद ने कहा है कि कहानी 'एक गमला है तो उपन्यास पूरा उद्यान।'

किसी भी कहानी को अच्छी तरह से समझने के लिए हम उसके छह तत्त्वों का अध्ययन करते हैं:

1. कथावस्तु
2. देशकाल तथा वातावरण
3. चरित्र-चित्रण
4. कथोपकथन अथवा संवाद
5. उद्देश्य
6. भाषा-शैली

लेकिन कभी-कभी कहानी में इनमें से कोई एक तत्त्व नहीं भी होता।

आइए, पढ़कर देखते हैं कि 'दो कलाकार' कहानी में ये सभी तत्त्व किस प्रकार मौजूद हैं।

1. कथावस्तु

कथावस्तु का निर्माण परिस्थितियों, घटनाओं और पात्रों के संयोग से होता है। वास्तव में लेखक अपने कथ्य या उद्देश्य के अनुसार ही कथावस्तु का स्वरूप तैयार करता है। उद्देश्य के अनुसार कभी घटनाओं की प्रधानता हो जाती है, कभी चरित्र और कभी वातावरण की। इस कहानी में वातावरण की कोई विशेष भूमिका नहीं है। केवल छात्राओं के हॉस्टल का परिवेश दिखाया गया है और उसी के इर्द-गिर्द रहने वाले लोगों की सेवा में जुटी अरूणा को कलाकार कहा गया है। कलाकार चित्रा भी है, पर अरुणा चूँकि समाज के बीच जाकर मुसीबतों में पड़े लोगों की सहायता करती है, अतः मन्नू भंडारी ने उसे बड़ा कलाकार माना है।

कहानी के शुरू में छात्रावास में रहने वाली चित्रा और अरुणा की रुचियों, उपहास-वृत्ति और प्रगाढ़ मैत्री को संवादों, आचरणों और कार्यों से रेखांकित किया गया है। छात्रावास में रहने वाली सविता और शीला के संवाद के माध्यम से न केवल अरुणा की सेवा भावना का पता चलता है, बल्कि सविता की ईर्ष्या और आरामपरस्ती की वृत्ति का भी पता चलता है। इस प्रकार कहानी के पहले अंश में संवादों और घटनाओं के माध्यम से कहानी को आगे बढ़ाया गया है। कहानीकार ने अपने कथ्य को संवादों के जरिए स्पष्ट किया है। अरुणा कागज़ पर चित्र बनाने की बजाए लोगों की ज़िंदगी बनाना ज़्यादा श्रेयस्कर समझती है। अरुणा का यह संवाद कि *'किस काम की ऐसी कला जो आदमी को आदमी न रहने दे'* ही कहानी का मूल संदेश है। इसी को स्पष्ट करने के लिए दोनों सखियों की भिन्न-भिन्न रुचियों और मनोवृत्तियों को संवादों के माध्यम से विस्तार दिया गया है। बाढ़-पीड़ितों की सेवा वाली घटना और भिखारिन के रोते हुए दोनों बच्चों वाली घटना से दोनों सखियाँ जुड़ी हुई हैं। चित्रा इन घटनाओं के चित्र बनाती है, किंतु अरुणा उनकी सेवा करके उन्हें जीवनदान देती है। पूरा कथानक रंगों और लकीरों की बजाए मानव सेवा को महत्व देने के लिए गढ़ा गया है।

कहानी का अंतिम भाग भी संवादों और घटना से ही विस्तार पाता है। यह खंड दोनों सखियों में चली आ रही उस बहस का भी अंत कर देता है जो अपने-अपने कामों को उत्तम सिद्ध करना चाहती थीं। अपनी चित्र प्रदर्शनी में अरुणा के साथ आए दोनों बच्चों को देखकर चित्रा चकित होती है और जब उसे यह पता चलता है कि वे दोनों मृत भिखारिन के बच्चे हैं, जिसका उसने स्केच बनाकर प्रसिद्धि पाई है, तो उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहता। वह स्वयं को छोटा महसूस करती है और अरुणा को महान कलाकार समझती है। कहानी में इस बात को शब्दों में नहीं कहा गया, बल्कि इसकी ओर संकेत भी किया गया है। इस प्रकार पूरी कहानी घटना और संवादों के माध्यम से सहज रूप से आगे बढ़ती है। कहीं से भी कथानक न तो अनगढ़ लगता है और न ही कृत्रिम। ऐसा लगता है कि जीवन का एक टुकड़ा पूरी सच्चाई, ईमानदारी और जीवंतता के साथ मूर्त कर दिया गया है।

पाठगत प्रश्न 11.1

दिए गए विकल्पों में से सही विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. कथानक के विस्तार में मुख्य भूमिका होती है–

   (क) संवाद-घटनाओं की (ख) हास्य-वर्णन की

   (ग) भाषा-शैली की (घ) चरित्र-चित्रण की

2. 'दो कलाकार' की कथावस्तु का मूल संदेश है–

   (क) चित्रकला को महत्वहीन सिद्ध करना

   (ख) समाज सेवा को भी चित्रकला के बराबर सिद्ध करना

   (ग) कला साधना की अपेक्षा समाज-सेवा को महत्व देना

   (घ) कला और समाज-सेवा में प्रतिस्पर्धा दिखाना

3. यदि मृत भिखारिन के बच्चे वाली घटना नहीं होती तो

   (क) कहानी अधूरी ही रह जाती

   (ख) अरुणा की स्वभावगत विशेषता प्रकट न हो पाती

   (ग) कला और सेवा में जुटी सखियों के विवाद का फैसला न हो पाता

   (घ) इनमें से कोई भी नहीं

4. 'दो कलाकार' कहानी में किस काल-खंड का वातावरण दिखाई देता है–

   (क) प्राचीन (ख) आधुनिक

   (ग) मध्यकालीन (घ) मिलाजुला

2. देशकाल तथा वातावरण

कहानी में देशकाल से आशय उन सामाजिक, भौगोलिक, ऐतिहासिक स्थितियों से है जिनमें कहानी लिखी गई होती है या जिन्हें कहानी में उभारने की कोशिश की गई होती है। देश का अर्थ तो आप जानते ही हैं, जी हाँ स्थान और काल का अर्थ होता है– समय यानी कहानी में देश या स्थान की जिस सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों तथा काल-खंड का वर्णन मिलता है या परोक्ष रूप से ये दिखाई देते हैं उसे देशकाल कहा जाता है। वातावरण का आशय किसी भी काल-खंड की स्थितियों से होता है। उदाहरण के लिए जब आप राजा-रानी की कोई कहानी पढ़ते हैं तो आपको स्पष्ट हो जाता है कि कहानी प्राचीन समय के वातावरण को उजागर कर रही है।

'दो कलाकार' आधुनिक काल-खंड में भारतीय समाज के वातावरण को दर्शाती है। चित्रा और अरुणा दो सहेलियाँ हैं जो हॉस्टल में रहती हैं। लेखिका ने उन्हें हॉस्टल में रहते हुए दिखाकर आधुनिक भारतीय समाज के वातावरण को प्रस्तुत किया है, क्योंकि आधुनिक काल से पहले लड़कियों का इस तरह से कहीं बाहर रहना और अपनी मर्ज़ी से काम करना प्रचलन में नहीं

था। इस कहानी में दोनों सहेलियाँ स्वतंत्र हैं, खुले विचारों की हैं। दोनों अपने पुरुष मित्रों के बारे में खुलकर बातें करती हैं और इसे बुरा नहीं मानतीं। आधुनिक शिक्षा और सोच के कारण किस तरह हमारे समाज में बदलाव आया है उससे समाज में महिलाओं की आज़ादी, उन्हें भी पुरुषों की तरह अपने जीवन का निर्णय लेने और समय से काम करने की परंपरा विकसित हुई है। इस कहानी में इस काल खंड की प्रवृत्तियों को साफ़ देखा जा सकता है। दोनों पात्रों में भरपूर आत्मविश्वास और निर्णय लेने की क्षमता है।

3. चरित्र-चित्रण

कहानी को पढ़ते हुए आपने जान लिया होगा कि इसमें मुख्यत: दो ही पात्र हैं- अरुणा और चित्रा। इस कहानी में छात्रावास और शहरी जीवन का परिवेश है। छात्रावास की अन्य छात्राओं की उपस्थिति कहानी में है, किंतु पूरी कहानी में यही दोनों पात्र छाए हुए हैं। हाँ, कुछ समय के लिए सविता और शीला भी दिखाई पड़ती हैं, जिनमें सविता की अरुणा के प्रति ईर्ष्या और शीला की सम्मान-भावना दिखाई देती है। कहानी में अरुणा की करुणा और कर्मनिष्ठा को स्पष्ट किया गया है। उसकी सत्कर्म प्रवृत्ति ने सभी को प्रभावित किया है, चाहे हॉस्टल की वार्डन हो या फिर कॉलेज की प्रिंसिपल।

आइए, अब इन दोनों प्रमुख पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं के बारे में विस्तार से जानें।

अरुणा

अरुणा एक मध्यमवर्गीय परिवार की लड़की है जो संस्कारों से परोपकारी तथा कर्म के प्रति समर्पित है। वह समाज-सेवा के लिए हमेशा तैयार रहती है। कभी वह आस-पास के बच्चों को पढ़ाती है तो कभी बाढ़ पीड़ितों के लिए चंदा इकट्ठा करने में व्यस्त रहती है। इन कार्यों की वजह से वह अपनी पढ़ाई की भी उपेक्षा कर देती है इसलिए उसकी सखी चित्रा उसे पढ़ाई के प्रति सचेत करते हुए कहती है- *'तेरे इम्तिहान सिर पर आ रहे हैं कुछ पढ़ती-लिखती तू है नहीं, सारे दिन बस भटकती रहती है।'* अरुणा के हृदय में समाज-सेवा के लिए इतना उत्साह है कि वह प्रधानाचार्य से स्वयंसेवकों के दल के साथ जाने के लिए अनुमति पा लेती है। संवेदनशील अरुणा बाढ़ पीड़ितों की सेवा में दिन-रात एक कर देती है और भूख-प्यास की परवाह किए बिना समाज सेवा में लगी रहती है। परिणाम यह होता है कि मात्र पंद्रह दिन में ही वह ऐसी लगती है मानो छह महीने से बीमार हो।

दरअसल अरुणा के स्वभाव में रोगियों, दुखियों के लिए अपार प्रेम है। जब वह फुलिया दाई के बच्चे की बीमारी के बारे में सुनती है तो फ़ौरन उसकी सेवा में तत्पर हो जाती है। सेवा करने के बावजूद वह बच्चे को नहीं बचा पाती। इस घटना से वह इतनी दुखी होती है कि दिन-भर भूखे रहने के बाद भी वापस हॉस्टल लौटने पर भोजन नहीं करती। वह इतनी करुणावान है कि चित्रा जब इस संबंध में उससे कुछ पूछती है तो वह उत्तर तक नहीं दे पाती और उसकी आँखें छलछला जाती हैं। बच्चे की मृत्यु के दु:ख से अरुणा इतनी व्यथित हो उठती है कि वह कई दिनों तक उदास रहती है और आखिर चित्रा को कहना ही पड़ता है *'जो होना था हो गया अब भूखे रहने से क्या होगा, थोड़ा-बहुत खा ले।'*

यद्यपि कहानी के आरंभ में अरुणा की उपहास-वृत्ति का पता चलता है किंतु वास्तविकता यह है कि स्वभाव से वह गंभीर है इसलिए चित्रा के यह कहने पर कि, *'क्या सोचने लगी रूनी,*

मनोज की याद आ गई क्या' वह उसे झिड़कते हुए कहती है कि *'हर समय का मजाक अच्छा नहीं लगता'*। जीवन के उपयोगी और रंजक पक्षों में से अरुणा को उपयोगी पक्ष ही बेहतर लगता है। वह सकर्मकता को यानी लोगों के दुख-दर्द को हर लेने में ही जीवन की सार्थकता समझती है। वह चित्रा से कहती है, *'कागज़ पर निर्जीव चित्रों को बनाने की बजाय दो चार की ज़िंदगी क्यों नहीं बना देती। तेरे पास सामर्थ्य भी है और साधन भी। किस काम की ऐसी कला जो आदमी को आदमी न रहने दे।'* वह कला और जीवन को लेकर कई बार चित्रा से बहस करती दिखाई देती है।

अरुणा न केवल समाज सेविका है, बल्कि अपने संबधों के प्रति भी पूर्णत: जागरूक है। वह अपनी सखी चित्रा का बराबर ध्यान रखती है। जब वह चित्रा के विदेश जाने की बात सुनती है तो उसके साथ बिताए छह वर्षों के चित्र उसकी आँखों के सामने घूमने लगते हैं। वह उन्हीं में खो जाती है और कहती है, *'छह साल तेरे साथ रहते-रहते मैं तो ये भूल गई कि एक दिन हमको अलग होना पड़ेगा। तू चली जाएगी तो मैं कैसे रहूँगी।'* विदेश गमन के समय चित्रा तो अन्य छात्राओं से मिलने चली जाती है किंतु अरुणा उसका सारा सामान तैयार करती है। जब चित्रा गुरु जी के पास से वापिस नहीं लौटती तो उसे बेचैनी होती है और उसे देखने जाने के लिए तत्पर हो उठती है।

अरुणा के हृदय में दूसरों के लिए इतना दर्द है कि वह हर परिस्थिति में उसकी सहायता करना चाहती है। 'गर्ग स्टोर' के सामने वाले पेड़ के नीचे बैठने वाली भिखारिन की घटना सुनते ही वह अपनी सखियों को छोड़ उसे देखने चली जाती है। वहाँ भिखारिन के बच्चों को सँभालने में वह इतनी तल्लीन हो जाती है कि अपनी प्रिय सखी को विदा करने के लिए स्टेशन पर भी नहीं जा पाती। वह भिखारिन के रोते-चीखते दोनों बच्चों को सँभालती है और उन्हें अपने पास रखकर भरण-पोषण करके नया जीवन देती है।

अरुणा के इस प्रेम-भाव से चित्रा भी चकित रह जाती है। जब अरुणा चित्रा की चित्र प्रदर्शनी में अपने साथ मृत भिखारिन के दोनों बच्चों को लाती है और चित्रा को पता चलता है कि ये दोनों बच्चे वे ही हैं जिनकी वजह से उसे इतनी प्रसिद्धि मिली है तो विस्मय से उसकी आँखें फैली की फैली रह जाती हैं। वस्तुत: उसी दिन उसे इस बात का अहसास होता है कि वास्तविक कला तो दूसरों को जीवन देना है जिसे उसकी सखी अरुणा ने इन दो बच्चों को दिया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अरुणा के हृदय में सच्ची संवेदना है। दया, मैत्री, परोपकार तथा सहानुभूति से भरा उसका हृदय कर्म के प्रति अनुप्रेरित करता रहता है। सबसे बड़ी बात यह कि उसके भीतर में करुणा का यह भाव ही उसे समाज के लिए कुछ करने को प्रेरित करता है।

चित्रा

चित्रा धनी पिता की इकलौती संतान है। वह चित्रकला की छात्रा है और महत्त्वाकांक्षी है। कोई भी चित्र जब पूरा हो जाता है तो उसे दिखाने के लिए उत्साहित होती है। इसीलिए वह सोती हुई अरुणा को उठा कर अपना नया चित्र दिखाती है।

चित्रकला की लगन उसे इतनी है कि वह हर समय रंगों में डूबी रहती है, ऐसे में उसे देश-दुनिया तक की खबर नहीं रहती। वह व्यक्तिगत उपलब्धियों को प्राथमिकता देती है, न कि सामाजिक कर्मों को। इसीलिए अरुणा उससे कहती है, 'तुझे दुनिया से कोई मतलब नहीं दूसरों से कोई मतलब नहीं, बस चौबीसों घंटे अपने रंग और तूलियों में डूबी रहती है।' चित्रकला को वह इतना महत्व देती है कि हरेक घटना में अपनी कला के लिए आइडिया की तलाश में रहती है। अरुणा उससे कहती है कि, *'दुनिया में बड़ी से बड़ी घटना घट जाए पर यदि उसमें तेरे चित्र के लिए कोई आइडिया नहीं तो तेरे लिए उस घटना का कोई महत्त्व नहीं। बस हर घड़ी हर जगह तू मॉडल खोजा करती है। उसकी इस लगन को देखकर गुरुजी कहते हैं कि वह समय दूर नहीं जब हिंदुस्तान के कोने-कोने में तेरी शोहरत गूँजेगी'।* इस कला के लिए वह अपनी सखी अरुणा से बहस भी करती है और 'समाज-सेवा' से 'कला' को बेहतर मानती है। कला की साधना से ही वह देश-विदेश में ख्याति प्राप्त करती है। अखबार की सुर्खियों में होती है। उसके चित्रों की प्रदर्शनी चर्चा का विषय बनती है। वह प्रथम पुरस्कार जीतती है और सम्मान पाती है।

कला में लगन के साथ-साथ चित्रा विनोदी स्वभाव की छात्रा है इसीलिए अपने हॉस्टल में वह इतनी लोकप्रिय है कि रेलवे स्टेशन पर अनेक छात्राएँ उसे विदा करने आती हैं। हॉस्टल में उसकी विदाई समारोह का आयोजन किया जाता है और गुरुजी के पास से लौटने में देरी होने पर सभी छात्राओं को उसकी चिंता रहती है।

चित्रा अपने मैत्री संबंधों का सदा ही ध्यान रखती है। वह अरुणा के फुलिया दाई के घर से लौटने पर खाना गर्म करने के लिए उठती है और अरुणा को खाना खिलाने का प्रयास करती है। वह बहुत स्नेह से अरुणा की पीठ थपथपाते हुए कहती है, *'जो होना था सो हो गया अब भूखे रहने से क्या होगा थोड़ा बहुत खा ले।'* कॉलेज से लौटते ही वह अरुणा के लिए चाय बनाती है। उसकी चिट्ठियों का ध्यान रखती है और यहाँ तक कि जब अरुणा बाढ़ पीड़ितों के लिए चंदा इकट्ठा करने का काम करती है तो वह चिंतित हो कहती है कि *'तेरे इम्तिहान सिर पर आ रहे हैं कुछ पढ़ती-लिखती तो तू है नहीं, सारे दिन बस भटकती रहती है। फेल हो गई तो तेरे ससुर साहब क्या सोचेंगे।'*

इस प्रकार हम देखते हैं कि चित्रा जहाँ एक ओर कला के प्रति समर्पित है वहीं अपनी मैत्री के प्रति निष्ठा से सबका दिल भी जीतती है।

पाठगत प्रश्न 11.2

1. अरुणा की कर्मनिष्ठा से कौन ईर्ष्या करता है-

   (क) चित्रा   (ख) सविता

   (ग) शीला   (घ) मनोज

2. किस घटना से अरुणा कई दिनों तक उदास रहती है–

(क) भिखारिन की मृत्यु से

(ख) फुलिया दाई के बच्चे को नहीं बचा पाने से

(ग) बाढ़ के दिनों में भी चित्रा के चित्र बनाने से

(घ) चित्रा के हॉस्टल छोड़ने की घटना से

3. अरुणा चपरासी, दाई आदि के बच्चों को पढ़ाती है, क्योंकि वह

(क) यश चाहती है (ख) समाज-सेवा करना चाहती है

(ग) पैसा चाहती है (घ) हॉस्टल से बाहर रहना चाहती है

4. अरुणा के व्यक्तित्व की विशेषता नहीं है–

(क) संबंधों के प्रति जागरुकता (ख) व्यक्तिगत उपलब्धियों से लगाव

(ग) करुणावान होना (घ) सकर्मक होना

4. कथोपथकन अथवा संवाद-योजना

हम बात कर चुके हैं कि कहानी में संवाद-योजना भी एक महत्वपूर्ण तत्त्व होता है। क्या आप बता सकते हैं कि संवाद किसे कहते हैं? फिल्में तो आप सभी देखते हैं, नाटक भी खेलते व देखते होंगे। उसमें पात्र आपस में बातचीत करते हैं उसे क्या कहते हैं? संवाद या डायलाग। कहानी में भी जब पात्र आपस में बातचीत करते हैं तो उसे संवाद कहा जाता है। प्रस्तुत कहानी 'दो कलाकार' संवादात्मक शैली में लिखी गई है। इस कहानी का आरंभ ही संवाद से हुआ है जो पाठक के भीतर जिज्ञासा एवं कौतूहल जगाता है। छोटे-छोटे संवादों के माध्यम से कहानी को विकसित किया गया है। कहानी जहाँ हास-उपहास से आरंभ होती है वहीं इसका अंत अत्यंत कारुणिक है। अंतिम घटना दो कलाकारों में से एक को कहीं अधिक उदास बना देती है। पूरी कहानी में आम बोल-चाल के छोटे-छोटे संवाद हैं।

मन्नू भंडारी की इस कहानी की दूसरी विशेषता है – आत्मीयता। अरुणा और चित्रा के इन संवादों से उनके आत्मीय व्यवहार को देखिए–

1. *'ऐ रूनी उठ'*

'अरे क्या है?'

'देख मेरा चित्र पूरा हो गया।'

'ओह! तो दिखाने के लिए तूने मेरी नींद खराब कर दी बदतमीज़ कहीं की!'

2. *चित्र को घुमाते हुए अरुणा बोली 'किधर से देखूँ यह तो बता दे। हज़ार बार कहा है जिसका चित्र बनाए उसका नाम लिख दिया कर, जिससे गलतफ़हमी न हुआ करे, वरना*

तू बनाए हाथी और हम समझें उल्लू।'

3. *'ज़रा सोचकर बता यह किसका प्रतीक है।'*

'तेरी बेवकूफ़ी का'

उक्त अंश में ऐसा आत्मिक व्यवहार है कि कहानी-कहानी न लगकर जीवन का सच्चा प्रतिबिंब लगती है। दोनों सहेलियों के संवादों में उपहास, छेड़छाड़ और एक-दूसरे के लिए बेचैनी साफ़ दिखाई देती है। साथ ही कहानी का विकास, पात्रों का विनोदी स्वभाव, उनकी खीझ, ईर्ष्या तथा दूसरों के प्रति दृष्टिकोण का संवादों के जरिए ही पता चलता है।

5. कहानी का उद्‌देश्य

आप जानते हैं हर रचना का कोई-न-कोई उद्‌देश्य होता है। लेखक इस रचना के माध्यम से कोई-न-कोई संदेश देना चाहता है। कहानीकार मन्नू भंडारी द्वारा लिखित इस कहानी का उद्‌देश्य समाज-सेवा को कला का दर्जा देना है और कला को सकर्मकता से जोड़ना है। यानी कहानीकार की नज़र में वही कलाकार बड़ा है जो निष्क्रिय होकर कला में ही न डूबा रहे, बल्कि समाज के जरूरतमंदों की सहायता करे। साथ ही वह व्यक्ति सच्चा कलाकार है जो इन ज़रूरतमंदों की सहायता करता है। जानते हैं ऐसा क्यों है? जी हाँ! सच्ची कला हमें संवेदनशील और करुणावान बनाती है जिसके कारण ही सामाजिक कार्यों के लिए प्रेरित होते हैं। अत: इस कहानी में चित्रों की अपेक्षा समाज-सेवा में कला की सच्ची संवेदना है। दूसरों की पीड़ा से अनुप्रेरित होने के कारण समाज-सेवा, चित्रकला से अधिक उपयोगी है। इस उद्‌देश्य की पूर्ति के लिए कहानीकार ने ऐसी स्थितियों और घटनाओं का चयन किया है, जिसमें दोनों ही पक्ष हिस्सा लेते हैं, और अपने-अपने कार्यों को श्रेष्ठ होने का दावा करते हैं।

कहानी के आरंभ में चित्रा कुछ लकीरें खींचकर दुनिया के श्रम को उजागर करती है, तो अरुणा हॉस्टल के इर्द-गिर्द रहने वाले बच्चों को पढ़ाकर और फुलिया दाई के बीमार बच्चे की सेवा करके सामाजिक-कार्यों में संलग्न रहती है। इसी तरह एक बाढ़-पीड़ितों के काल्पनिक चित्र तैयार करती है तो दूसरी उनके लिए चंदा इकट्‌ठा कर शिविर में जाती है और लोगों को जीवनदान देने के पुण्य कार्यों में जुटी हुई है।

तीसरे खंड में चित्रा एक भिखारिन के बच्चों का स्केच बनाती है और अरुणा भिखारिन की मृत्यु के बाद उसके दोनों बच्चों को पालती-पोसती है। कहानी का यह एक ऐसा बिंदु है जिस पर आज की परिस्थितियों में विचार करने की ज़रूरत है। आजकल कुछ ऐसी घटनाएँ हो रही हैं जिनसे कहानी के इस बिंदु को जोड़ा जा सकता है।

आप लगभग प्रतिदिन कुछ दुर्घटनाओं के बारे में सुनते हैं। उन दुर्घटनाओं के वीडियो भी देखते हैं। कभी-कभी यह भी सुनते हैं कि लोग इन दुर्घटनाओं को रोक सकते थे या रोकने की कोशिश कर सकते थे पर वे इनके वीडियो बना रहे थे। क्या यह वही स्थिति नहीं है जिसका संबंध चित्रा से है। चित्रा मृत भिखारिन और उसके रोते हुए बच्चों को अपने चित्र की सामग्री मात्र समझती है। इस चित्र के माध्यम से वह धन और यश की प्राप्ति करती है। उसकी प्राथमिकताएँ अरुणा की प्राथमिकताओं से भिन्न एवं व्यक्तिगत लाभ से प्रेरित हैं। निश्चित रूप

से हम पाठकों के लिए इन दोनों में से अरुणा अधिक प्रेरक पात्र है। उसमें एक सच्चे कलाकार की संवेदनशीलता एवं कर्मशीलता है जबकि चित्रा काम तो कलाकार का कर रही है पर उसमें सच्ची संवेदनशीलता और कर्मशीलता नहीं है। कल्पना कीजिए कि चित्रा चित्र बनाने के साथ ही अरुणा की सकर्ममता से युक्त होती तो क्या होता। तब वह अरुणा से अधिक अनुकरणीय पात्र बन जाती।

कहानीकार ने इन अनेक घटनाओं के माध्यम से समाज-सेवा को सहज रूप से उत्तम सिद्ध करना चाहा और बताया कि मानवीय संवेदनाओं से भरा व्यक्ति ही सच्चा कलाकार हो सकता है। *'किस काम की ऐसी कला जो आदमी को आदमी न रहने दे'*, *'दुनिया की बड़ी से बड़ी घटना भी इसे आंदोलित नहीं करती, जब तक उसमें कला के लिए कोई स्थान न हो'* जैसे संवादों से कहानीकार ने अपने उद्देश्य को स्पष्ट किया है और सहज रूप से आई घटनाओं, चरित्रों तथा संवादों के माध्यम से अपने उद्देश्य प्राप्त करने में सफलता पाई है। घटनाओं के अतिरिक्त संवादों के माध्यम से भी उद्देश्य को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। चित्रा और अरुणा जहाँ अपने-अपने कार्य को श्रेष्ठ बताती हैं वहीं उनके संवाद कहानी के उद्देश्य को रेखांकित करते हैं। चित्रा जहाँ बच्चों को पढ़ाने और रुलिया दाई के बीमार बच्चे की सेवा करने वाली घटना का मजाक उड़ाती है वहीं कहानी के अंत में अरुणा भी चित्रा द्वारा तैयार किए गए चित्र को चित्रा का कंफ्युजन यानी भ्रम कहती है। अरुणा का यह संवाद कि *'किस काम की ऐसी कला जो आदमी को आदमी न रहने दे'* कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट करता है। *'इन निर्जीव चित्रों की बजाए दो-चार की ज़िंदगी क्यों नहीं बना देती'* जैसे संवाद भी उद्देश्य को स्पष्ट करने में सहायक हैं। इस प्रकार संवादों के माध्यम से भी लेखिका ने कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

पाठगत प्रश्न 11.3

दिए गए विकल्पों में से उचित विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. निम्नलिखित में से कौन-सा कथन गलत है-

   (क) 'दो कलाकार' का आरंभ लेखक की टिप्पणी से हुआ है।

   (ख) 'दो कलाकार' के संवादों में पात्रों की आत्मीयता झलकती है।

   (ग) 'दो कलाकार' के संवाद बहुत बड़े न होकर छोटे हैं।

   (घ) 'दो कलाकार' के संवादों से पात्रों का स्वभाव अभिव्यक्त हुआ है।

2. कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट करने में सर्वाधिक योगदान रहा है:

   (क) संवादों और चरित्रों का   (ख) घटनाओं और संवादों का

   (ग) चरित्रों और घटनाओं का   (घ) वातावरण और चरित्रों का

3. कहानी का मूल उद्देश्य है–

(क) चित्रकला को श्रेष्ठ बताना
(ख) चित्रकला का विरोध करना
(ग) समाज-सेवा को श्रेष्ठ बताना
(घ) हर कला को श्रेष्ठ बताना

---

6. भाषा-शैली

मन्नू भंडारी नई कहानी के दौर की कथाकार हैं। इस दौर में कहानी की भाषा में एक गुणात्मक परिर्वतन आया है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है– बोलचाल की भाषा। मन्नू भंडारी की इस कहानी में भाषा के उक्त सभी गुण दिखाई देते हैं। हाँ, परिवेश और पात्र के अनुसार भाषा बदलती रहती है। बोल-चाल की भाषा का नमूना देखिए–

1. *'क्यों बड़-बड़ कर रही है। ले मैं आ गई। चल, बना चाय'*

2. *'तेरे मनोज की चिट्ठी आई है।'*
'तूने तो पढ़ ली होगी, फाड़कर।'
'चल हट।'

3. *'नहीं चित्रा, अब रहने दे, बस तू लैंप बुझा दे।'*

कहानी की भाषा में कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि वह जबरदस्ती ठूँसी गई है। भाषा सब जगह सरलता, सहजता, और बोलचाल का गुण लिए हुए है। इसके लिए आपने देखा होगा कि वाक्य छोटे हैं तथा तद्भव और देशज शब्दावली के साथ-साथ बोलचाल की अंग्रेज़ी और उर्दू के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है।

अंग्रेज़ी शब्दों में लैक्चर, बोर, आइडिया, कंफ्युजन, प्रिंसिपल, वार्डन जैसे अनेक शब्द हैं तो उर्दू के इम्तिहान, हुनर, बहस, अखबार, खस्ता, हालत आदि जैसे बोल-चाल के साधारण शब्दों का प्रयोग है।

पूरी कहानी में ऐसा कहीं नहीं है कि वाक्य भारी और बोझिल हों या संवाद लंबे-चौड़े दार्शनिकता से भरे हों। संवाद छोटे, चुस्त और प्रिय है। देखिए–

1. *'मासी तुम जरूर ड्राइंग में फर्स्ट आती होगी।'*
'तुम भी अपनी क्लास में फर्स्ट आती हो।'
'तुम हमारे घर आओगी तो अपनी कॉपी दिखाउँगी।'

2. *'ये बच्चे क्यों रो रहे हैं मासी!'*
'उनकी माँ मर गई, देखती नहीं मरी पड़ी है।'
'ये सचमुच के बच्चे थे मासी।'
'अरे सचमुच के बच्चे को देखकर ही तो बनाई थी यह तस्वीर।'

मन्नू जी की अपनी विशेषता है कि वे कहानी की स्थिति के अनुसार भाषा-व्यवहार का पूरा ध्यान रखती है।

पाठगत प्रश्न 11.4

1. अरुणा के इस कथन में भाषा की कौन-सी विशेषता है, 'क्यों बड़-बड़ करती है, ले मैं आ गई। चल, बना चाय।'

   (क) संस्कृत-निष्ठता (ख) आत्मीयता

   (ग) औपचारिकता (घ) कृत्रिमता

2. नयी कहानी की भाषा बोल-चाल की है। इस कथन के आधार पर 'दो कलाकार' कहानी में बोल-चाल की भाषा के दो उदाहरण दीजिए:

   (क) ....

   (ख) ....

11.4 भाषा-कार्य

- रचना की दृष्टि से वाक्य-भेद आप जान चुके हैं-सरल, संयुक्त और मिश्र वाक्य। आइए, अब कार्य की दृष्टि से वाक्य-भेद समझ लें, नीचे दिए हुए वाक्यों को पढ़िए:

  1. चित्रा ने सोती हुई अरुणा को उठाया।

  2. 'ऐ रूनी, उठ।'

  3. 'अरे यह क्या?'

  4. 'आ गए सब बच्चे?'

  5. 'तेरी तरह लकीरें खींचकर समय बर्बाद नहीं करते।'

  6. 'अमृता शेरगिल की तरह मेरा भी नाम गूँज उठे।'

  7. 'ओह! तो इसे दिखाने के लिए तूने मेरी नींद खराब कर दी।'

- ऊपर पहला वाक्य सामान्य सूचना दे रहा है। इसे **साधारण वाक्य** या **कथनात्मक वाक्य** कहते हैं। वाक्य 2 में आदेश/आज्ञा है। ऐसे वाक्य **आज्ञार्थक** कहे जाते हैं। वाक्य 3 और 4 में प्रश्न पूछे गए हैं इन्हें क्या कहेंगे? **प्रश्नार्थक।** वाक्य 5 में निषेध

है क्योंकि यह नहीं या मना करने का अर्थ दे रहा है। इसे कहेंगे निषेधार्थक। वाक्य 6 पढ़िए। इस वाक्य में चित्रा की मनोकामना है, इच्छा है, इसलिए ऐसे वाक्यों को **इच्छार्थक** कहते हैं। अंतिम वाक्य 'ओह' से प्रारंभ हो रहा है और मनोवेग को सूचित कर रहा है। ऐसे वाक्य मनोवेगात्मक वाक्य कहे जाते हैं। इस पाठ से ऐसे वाक्यों के और भी उदाहरण आप ढूँढ़ सकते हैं।

- अर्थ की दृष्टि से एक प्रकार की वाक्य रचना को आप दूसरी प्रकार की वाक्य रचना में बदल भी सकते हैं, जैसे–

⟹ **चित्रा ने सोई हुई अरुणा को उठाया** – **कथनात्मक**

⟹ चित्रा ने सोई हुई अरुणा को नहीं उठाया – **निषेधार्थक**

⟹ क्या चित्रा ने सोई हुई अरुणा को उठाया? – **प्रश्नार्थक**

⟹ चित्रा! सोई हुई अरुणा को उठाओ। – **आज्ञार्थक**

⟹ सोई हुई अरुणा उठे। – **इच्छार्थक**

⟹ काश, अरुणा उठती। – **मनोवेगात्मक**

- आम तौर पर निषेधार्थक वाक्यों में न, नहीं, मत, ना निपातों का प्रयोग होता है। किंतु हिंदी में इनके बिना भी निषेधार्थक वाक्य बनाए जाते हैं। ऐसे वाक्य बाहर से देखने पर कथनात्मक, प्रश्नात्मक या मनोवेगात्मक से प्रतीत होते हैं। पर अर्थ की दृष्टि से ये निषेधार्थक होते हैं, जैसे–

- हमें कोई शरम है क्या? ⟹ हमें शरम नहीं है।
- क्या खाक काम करोगी। ⟹ काम नहीं करोगी।
- तेरी इच्छा भी कभी टाली जा सकती है। ⟹ तेरी इच्छा नहीं टाली जा सकती।
- मौत कह कर थोड़े ही आती है। ⟹ मौत कह कर नहीं आती।
- अरे! ज़िंदगी का क्या भरोसा। ⟹ ज़िंदगी का भरोसा नहीं है।

11.5 आपने क्या सीखा (चित्र प्रस्तुति)

कहानी के तत्व

कथावस्तु	चरित्र-चित्रण	उद्देश्य	देशकाल तथा वातावरण	कथोपकथन संवाद	भाषा शैली	मानव मूल्य	रचनाकार
- होस्टल का परिवेश - बाढ़ का दृश्य - चित्रकला प्रदर्शनी	- **अरुणा :** मध्यमवर्गीय परिवार, परोपकारी, सेवा भाव, सहृदयी - **चित्रा :** धनी परिवार, महत्वाकांक्षी, अति उत्साही, विनोदी स्वभाव, समाज के प्रति उदासीनता	- अभावग्रस्तों की सहायता - सेवाधर्म - सामाजिक दायित्व बोध - समर्पण का भाव	- आधुनिक काल खंड - लड़कियों का छात्रावास में रहना - आधुनिक सोच आदि	- संवादात्मक शैली - छोटे सरल संवाद - हास-परिहास के साथ मार्मिकता - भावानुकूल भाषा	- आम बोलचाल - सरल एवं सहज भाषा - छोटे वाक्य - तद्भव, देशज शब्दावली - अंग्रेजी, उर्दू के शब्द	- परोपकार - सेवाभाव - सहयोग - मानव प्रेम	मन्नू भंडारी - प्रसिद्ध कहानीकार - सामाजिक मनोवैज्ञानिक लेखन - **प्रमुख कहानी संग्रह** मैं हार गई एक प्लेट सैलाब यही सच है - **उपन्यास** आपका बंटी महाभोज

11.6 सीखने के प्रतिफल

- अपने परिवेशगत अनुभवों पर अपनी स्वतंत्र और स्पष्ट राय व्यक्त करते हैं।
- अपने साथियों की जरूरतों को अपनी भाषा में अभिव्यक्त करते हैं।
- कहानी को अपनी समझ के आधार पर नए रूप में प्रस्तुत करते हैं।
- प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों, घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को बोलकर/लिखकर व्यक्त करते हैं।
- भाषा-कौशलों के माध्यम से जीवन-कौशलों को आत्मसात करते हैं और अभिव्यक्त करते हैं।

11.7 योग्यता विस्तार

1. लेखक परिचय

मन्नू भंडारी नए दौर के कहानीकारों में अग्रणी स्थान रखती हैं। इनका जन्म 3 अप्रैल 1931 ई. को भानपुरा, मध्यप्रदेश में हुआ था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा अजमेर में हुई। काशी

हिंदू विश्वविद्यालय से हिंदी में एम. ए. करने के बाद कलकत्ता में अध्यापन-कार्य करने लगीं। कुछ समय बाद इनकी नियुक्ति दिल्ली विश्वविद्यालय में प्राध्यापिका के पद पर हो गई। आपने अधिकतर सामाजिक और मनोवैज्ञानिक लेखन किया है। आपके प्रमुख कहानी संग्रह हैं- *'मैं हार गई'*, *'एक प्लेट सैलाब'*, *'तीन निगाहों की एक तस्वीर'*, *'यही सच है'* आदि। इनके *'महाभोज'* और *'आपका बंटी'* प्रसिद्ध उपन्यास हैं।' 2006 में सलाका सम्मान से अलंकृत। इनका देहावसान 15 नवंबर, 2021 को हुआ।

चित्र 11.5 : मन्नू भंडारी

11.8 पाठांत प्रश्न

1. 'दो कलाकार' शीर्षक की सार्थकता पर टिप्पणी लिखिए।
2. अरुणा को बच्चे क्यों बुलाने आए?
3. अरुणा देर रात हॉस्टल में कहाँ से लौटी थी और क्यों? स्पष्ट कीजिए।
4. देर रात आने पर अरुणा ने भोजन क्यों नहीं किया? कारण प्रस्तुत कीजिए।
5. कहानी में से उन पक्तियों को छाँटिए जो कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट करती हैं।
6. मृत भिखारिन और उसके सूखे शरीर से चिपके हुए दो बच्चों वाली घटना सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्यों है? विवेचन कीजिए।
7. अरुणा और चित्रा में से यथार्थवादी कौन हैं और आदर्शवादी कौन? उदाहरणों से अपने मत की पुष्टि कीजिए।
8. अरुणा में कौन से गुण थे जिनसे प्रिंसिपल तथा वार्डन भी उसका रौब मानती थीं?
9. 'कहानी में आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया गया है।' सिद्ध कीजिए।

11.9 उत्तरमाला

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (ग) 2. (ग) 3. (घ) 4. (क) 5. (घ) 6. (ख) 7. (ग)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

11.1	1. (क)	2. (ग)	3. (ख)	4. (ख)
11.2	1. (ख)	2. (ख)	3. (ख)	4. (ख)
11.3	1. (क)	2. (ख)	3. (ग)	
11.4	1. (ख)	2. (क) क्यों बड़-बड़ करती है (ख) ऐ ! रूनी उठ।		

12

जिजीविषा की विजय

(कैलाश चंद्र भाटिया)

शायद आप किसी ऐसे व्यक्ति से मिले होंगे जिन्होंने अपनी शारीरिक अशक्तता को ताक पर रख कर ऐसे कार्य किए, जिनसे उनकी क्षमता का लोहा पूरे देश ने माना और वे मिसाल बन गए। जीवन में बहुत से लोग हमारे संपर्क में आते हैं, परंतु उनमें कुछ एक लोग ऐसे भी होते हैं, जिनके प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व को हम उनकी विशेषताओं के कारण कभी भूल नहीं पाते। उनकी स्मृति हमारे मानस-पटल पर सदैव उजागर होती रहती है। ऐसे व्यक्तित्व को उचित प्रकार से स्मरण करना ही 'संस्मरण' है। आइए, प्रस्तुत पाठ में अक्षमता को मात देने वाले जिजीविषा और संकल्पशक्ति से जुड़े साहित्यकार और विचारक डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व के बारे में एक महत्वपूर्ण संस्मरण पढ़ते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- दिव्यांगता के बावजूद एक अद्भुत व्यक्तित्व के संकल्प और अध्यवसाय जैसे गुणों पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व और कृतित्व का उल्लेख कर सकेंगे;
- दिव्यांगों के साथ सहयोग एवं सम्मान के महत्त्व को प्रतिपादित कर सकेंगे;
- भाषा-शैली पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- संस्मरण-विधा के स्वरूप को स्पष्ट कर सकेंगे।

क्रियाकलाप 12.1

(क) आपके जीवन में कोई ऐसा मित्र, पड़ोसी, सगा-संबंधी या शिक्षक आया होगा जिसने आपके मन पर गहरी छाप छोड़ी हो, उसे भूल पाना संभव न हो। ऐसे किसी व्यक्ति के विषय में एक अनुच्छेद लिखिए।

(ख) विश्व में अनेक ऐसे दिव्यांग व्यक्ति हुए हैं, जिन्होंने अक्षमता को अनदेखा कर दुनिया को चकित कर देने वाले कार्य किए और बहुत प्रसिद्धि पाई। इनमें से किन्हीं दो के महत्त्वपूर्ण कार्यों का उल्लेख करते हुए एक फाइल तैयार कीजिए।

12.1 मूल पाठ

जिजीविषा की विजय

मन में समाहित 'जीवन लालसा' ने ही गोपामऊ (हरदोई) निवासी श्री रामसहाय के घर में जन्मे बालक रघुवंश सहाय वर्मा को हिंदी साहित्य के सुप्रसिद्ध विद्वान आचार्य डॉ. रघुवंश के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया।

मेरी डॉ. रघुवंश से सर्वप्रथम भेंट भारतीय हिंदी परिषद् के जयपुर अधिवेशन में 1954 ई. में हुई। राम निवास बाग के भव्य हॉल में अधिवेशन संपन्न हो रहा था। मैं तो देखते ही दंग रह गया कि एक व्यक्ति पैर से निरंतर तेज़ी से लिखता जा रहा है। जब वहाँ विद्यमान अन्य विद्वानों से उनका परिचय प्राप्त हुआ तो ज्ञात हुआ कि यह तो वही डॉ. रघुवंश हैं, जिनके विषय में विद्यार्थी जीवन से सुनता आया हूँ, पर यह नहीं मालूम था कि लेखन-कार्य में इतना सक्रिय विद्वान दोनों हाथों से लाचार है। तब तक उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. तथा 1948 में 'हिंदी साहित्य के भक्तिकाल और रीतिकाल में प्रकृति और काव्य' विषय पर डी.फिल्. की उपाधि प्राप्त कर ली थी। भाई डॉ. रमानाथ सहाय ने बातचीत के दौरान सूचित किया कि वह जब संस्कृत में एम.ए. कर थे तब डॉ. रघुवंश हिंदी में एम.ए. कर चुके थे और संस्कृत की कक्षाओं में उपस्थित रहते थे। उसी विश्वविद्यालय में वह प्राध्यापक बने। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के निकटस्थ होने के कारण वह सक्रिय रूप से भारतीय हिंदी परिषद् से जुड़ चुके थे और इसके मंत्री थे। मैं यह देखकर चकित रह गया कि इतने विशाल समुदाय में इतने सक्षम लेखकों के होते हुए भी पूरी कार्यवाही की निरंतर रिपोर्टिंग डॉ. रघुवंश ही बड़ी तेज़ी से अपने पैर से ही कर रहे थे। एक व्यक्ति इतना अधिक सक्रिय रह सकता है, यह आश्चर्यचकित करने के लिए पर्याप्त था। साधारणत: परीक्षा में भी ऐसे बालकों को कोई लेखक देने का प्रावधान है पर डॉ. रघुवंश ने अपनी सूझबूझ से ऐसी पद्धति विकसित कर ली थी जो प्राय: देखने को नहीं मिलती है। इस पद्धति से उन्होंने सारी परीक्षाएँ उत्तीर्ण कीं।

चित्र 12.1: डॉ. रघुवंश

इसमें दो राय नहीं है कि उन्हें प्रेरणा मिली – हिंदी भाषा और साहित्य के प्रकाश-स्तम्भ डॉ.

शब्दार्थ

जिजीविषा	–	जीने की इच्छा
सक्रिय	–	क्रियाशील
निकटस्थ	–	समीप, करीबी
निरंतर	–	लगातार
प्रावधान	–	नियम, चलन

टिप्पणी

धीरेन्द्र वर्मा से और अभूतपूर्व सहयोग और सहायता मिली डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी से। (संयोग से एलनगंज में डॉ. रघुवंश और डॉ. चतुर्वेदी साथ ही एक घर में निवास करते थे और बैंक रोड स्थित अपना-अपना स्थायी आवास भी पड़ोसी के रूप में बनवाया, जहाँ अब दोनों ही निवास कर रहे हैं।)

लेकिन यह सब तो प्राप्त हुआ इलाहाबाद आने के बाद ही। मैं निरंतर सोचता रहा कि आखिर कौन-सा तत्त्व है, जिससे रघुवंश विपरीत परिस्थितियों में भी आगे ही बढ़ते गए। काफ़ी सोच-विचार के बाद मत बनाया कि हो-न-हो उन्होंने अपने मन में कुछ बनने की ठान ली हो। एक बार दिल्ली में 'मन क्या है' विषय पर अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी हुई थी। देश-विदेश के विद्वानों, वैज्ञानिकों ने गंभीर विचार-विमर्श कर मन को परिभाषित करने की चेष्टा की। यह माना गया कि मन मस्तिष्क नहीं है। वैज्ञानिकों के अनुसार मस्तिष्क शरीर के भीतर एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण केंद्र है जिसमें बहुत कुछ घटता रहता है। मस्तिष्क की तरंगों को कोई चेतना, कोई चिति, कोई संज्ञान की संज्ञा देता है। कल्पना करना, अतीत में जाना, अवधान, पर्यवेक्षण, विचारणा आदि अभिक्रियाओं का संपादन मस्तिष्क करता है, जिनके समुच्चय का नाम 'मन' है। मन को विद्वानों ने तीन मंजिला भवन- नववल्कल, वत्सल, सर्पिल माना। लगता है, अतींद्रिय अनुभवों के केंद्र मन (सर्पिल) में ही उन्होंने पक्का विचार बना लिया होगा। उन्होंने जो लेखन कार्य किया, वह बहुत से उन विद्वानों से भी संभव नहीं हो सका जिन्होंने मज़बूत हाथ लेकर जन्म लिया। मात्र मन की मज़बूती से ही कालांतर में वह सर्वोच्च पद पर प्रतिष्ठित हुए। इस समय मुझे महाकवि प्रसाद की पंक्तियाँ स्मरण आ रही हैं :

> मन जब निश्चित-सा कर लेता कोई मत है अपना।
> बुद्धि-देव-बल से प्रमाण का सतत निरखता सपना।

यह मन ही तो है, जिसमें चाह है, लक्ष्य है, वहीं उसमें पवित्रता, कोमलता व प्रियता है। उनका नव उत्साह से भरा मन हमेशा लेखन कार्य, सेवा कार्य में रमता है। हर प्रकार की स्वच्छता की भावना उनके स्वभाव का अभिन्न अंग रही है। बहुत से लोगों में यह स्वच्छता बाह्य रूप में ही मिलती है, पर डॉ. रघुवंश बाह्य रूप और आंतरिक रूप में तो स्वच्छ हैं ही, अर्थ संबंधी मामलों में भी स्वच्छ हैं जो आजकल कम ही दिखाई देता है। किस युक्ति से वह रिक्शा में बैठने से पूर्व उस चालक की देय राशि निकालकर रख लेते हैं, यह विस्मयकारी है जिससे उनको साथ ले जाने वाले व्यक्ति अपने पास से रुपये न दे दें। अर्थ की शुचिता के वह ज्वलंत उदाहरण हैं। उनके रहन-सहन व व्यक्तित्व में जितनी स्वच्छता मिलती है, उसका स्पष्ट प्रभाव उनके द्वारा संपादित कार्यों में परिलक्षित होता है।

यह सब कुछ संभव हो पाने के पीछे उनका मज़बूत मन तो है ही, साथ ही वह संकल्प शक्ति भी है, जो उन्होंने स्वत: ही धारण कर ली थी क्योंकि मन ही तो संकल्पमय होकर सक्रिय हो उठता है। संकल्प ही व्यक्ति की प्रतिष्ठा है।

डॉ. रघुवंश ने जीवन में जो सर्जना की, वह सब कुछ इसी कारण है क्योंकि-सर्जनात्मक, चैतन्य ही तो संकल्प है, फिर सर्जना चाहे किसी भी प्रकार की हो, संकल्प के बिना संभव ही नहीं। संकल्प ही तो चेतना का वह गुण है, जिसमें मन की दृढ़ता, इच्छा, विचार, चिंतन,

शब्दार्थ

चिति	- जागृति
संज्ञान	- ज्ञान सहित
पर्यवेक्षण	- निरीक्षण
समुच्चय	- सुगठित
नव	- नया
वल्कल	- वृक्ष की छाल का कपड़ा
वत्सल	- बच्चों से प्रेम करने वाला
सर्पिल	- साँप जैसा घुमावदार
अवधान	- ध्यान, मनोयोग मन की एकाग्रता
बाह्य	- बाहरी
देय राशि	- देने के लिए धन
विस्मयकारी	- आश्चर्यजनक
शुचिता	- पवित्रता
परिलक्षित	- दिखाई देना
सर्जनात्मक	- निर्माणकारी
चैतन्य	- चेतना, जागृति

विमर्श विद्यमान रहते हैं। गुण के रूप में संकल्प ही मन का लक्षण है। मनुष्य मात्र इस संकल्प से ही संचालित होता है। इसको ही शोपेनहावर ने जीने का संकल्प, नीत्शे ने शक्ति संकल्प व विलियम जेम्स ने श्रद्धा का संकल्प बताया है। उसकी कुछ भी व्याख्या करें, संकल्प शक्ति ही मन में जागरित होती है और व्यक्ति के जीवन में नया प्राण फूँकती है, उसके जीवन को अर्थ देती है। तभी तो मनीषियों ने 'सर्वसंकल्पमूलम्' स्वीकार किया है।

इस संकल्प-शक्ति के कारण ही डॉ. रघुवंश निरंतर लिखते रहे। तंतुजाल, अर्थहीन, छायालय (कथा-साहित्य), हरिघाटी (यात्रा-संस्मरण), मानस पुत्र ईसा (जीवनी), नाट्यकला, साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य आदि कृतियाँ प्रकाशित हुईं। केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा में जो विशिष्ट व्याख्यानमाला के अंतर्गत भाषण दिए, उनको संस्थान ने ही 'समसामयिक हिंदी कविता और आलोचना' शीर्षक से प्रकाशित किया।

हमेशा उनका व्यक्तित्व सौम्य रहा। व्यक्ति की वृत्ति ही प्रसन्नता का रूप ले लेती है। उसके बाद स्वत: ही सौम्यता झलकती है और चेहरा तेज से दमकता है – प्रसन्नवृत्ति: सौम्यत्वम्।

मैं किसी से कम नहीं हूँ, यह भाव प्रारंभ से ही उनमें विद्यमान रहा। सच्चे अर्थों में वह 'कर्मयोगी' रहे हैं। शारीरिक दृष्टि से छोटा नहीं, अप्रत्याशित बाधा होते हुए भी मन कर्म में निरंतर रत रहा और नव-नव प्रकाश विकीर्ण होता रहा।

डॉ. रघुवंश को अधिक निकट से देखने का सौभाग्य मुझे 1963 में मिला। इस बार भी भारतीय हिंदी परिषद् का अखिल भारतीय अधिवेशन था।

यह अधिवेशन डॉ. नगेन्द्र की अध्यक्षता में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में संपन्न हुआ। जिसका उद्घाटन महादेवी जी ने किया। परिषद् के विविध क्रियाकलापों से जुड़े होने के कारण डॉ. रघुवंश पर विशेष उत्तरदायित्व था और मैं विश्वविद्यालय में कार्यरत था। उस समय उनकी कार्यपद्धति से अधिक अवगत हुआ।

जो आत्मविश्वासपूर्वक कार्य करता है, उसकी योग्यता तो उसके कार्यों से प्रकट होती है। यही कारण है कि डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के निर्देशन में जब 'हिंदी साहित्य कोश' का निर्माण प्रारंभ हुआ तो डॉ. रघुवंश न केवल संपादक मंडल में रहे वरन् उस परियोजना का संयोजकत्व भी किया। उन्होंने कोश के लिए लेखन-कार्य भी किया। 'हिंदी साहित्य कोश' के प्रकाशन में उनका बड़ा योगदान रहा। किसी भी परियोजना का विकास कर, उसको ऊँचाई तक ले जाना और उसके लिए अपने को न्योछावर करते रहना उनका स्वभाव बन गया। योजकता, आत्मविश्वास, आत्मबल, कर्त्तव्यनिष्ठा आदि गुणों का संबल लेकर वह निरंतर आगे बढ़ते ही गए।

समझौतावादी प्रवृत्ति उनमें कभी नहीं रही। अपनी योग्यता और क्षमता के बलबूते पर वह निरंतर अग्रसर हुए और सर्वोच्च पद से अवकाश प्राप्त कर उच्च शिक्षा संस्थान, शिमला में भी प्रतिष्ठित रहे। वहाँ रहते हुए भी उन्होंने अपने प्रतिमान स्थापित किए।

लेखन के साथ-साथ निरंतर संपादन-कार्य भी किया। भारतीय हिंदी परिषद् के मुख्यपत्र 'अनुशीलन' का अनेक वर्षों तक संपादन किया।

प्रारंभ से ही वह विद्रोही व जुझारू प्रकृति के रहे। लोहिया जी की विचारधारा से वह प्रभावित

शब्दार्थ

मनीषियों – ज्ञानी विद्वान, विचारशील
व्याख्यानमाला – कई व्याख्यान एक के बाद एक होना
समसामयिक – वर्तमान समय के संदर्भ में
सौम्य – शीतल, स्निग्ध
कर्मयोगी – कर्म में लगा व्यक्ति
अप्रत्याशित – आकस्मिक, जिसकी आशा न हो
विकीर्ण – फैला हुआ
योजकता – मिला हुआ
सर्वोच्च – सबसे ऊँचा
प्रतिमान – नमूना, मानक

टिप्पणी

रहे। देश में आपातकाल की घोषणा के बाद उन्होंने कारागार से जो पत्राचार किया, वह पत्र-विधा की अभूतपूर्व कृति बन गई और बाद में 'जेल और स्वतंत्रता' शीर्षक से प्रकाशित हुई। इस प्रकार डॉ. रघुवंश 'मन जिसका मजबूत' के जीते-जागते उदाहरण हैं।

डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व का मूल्यांकन अधूरा रह जाएगा यदि उनके विचारक-रूप को न समझा जाए। उनके प्रत्येक आलेख में उनकी मौलिकता तो झाँकती ही है, पर विचारक का रूप सबसे अधिक मुखर हुआ जब विचारों का त्रैमासिक 'क ख ग' उनके प्रयासों से प्रारंभ हुआ। वह इसके संपादक मंडल में भी थे और संयोजक भी थे।

जुलाई 1963 के प्रवेशांक में 'दृष्टिकोण' के अंतर्गत उनका सुविचारित आलेख 'नये राष्ट्र और वर्तमान की चुनौती' प्रकाशित हुआ जिसके कुछ अंश आज तीन दशक के बाद भी सामयिक होने के कारण उद्धृत करना चाहता हूँ। इसका सार-संक्षेप देने में मूल भाव के ओझल होने का खतरा है, अतएव कुछ उपयोगी अंश इस प्रकार हैं :

''यदि सचमुच एशिया और अफ्रीका को विकसित होना है, तो अपने सभी प्रश्नों को निजी संदर्भ में रखकर देखना होगा। विकास की यह पद्धति मूलत: भ्रामक है कि जिस रेखा में किसी दूसरे देश ने उन्नति की है, उसी रेखा पर आगे बढ़ा जा सकेगा। विकास की रेखा का प्रत्येक बिंदु आगे आने वाले बिंदुओं को अग्रसर करने में सहायक हुआ है, स्वयं पीछे रहकर, पिछड़कर। ऐसी स्थिति में दूसरा व्यक्ति या राष्ट्र अपने विकास के लिए उस रेखा का अनुकरण करना चाहेगा तो वह सदा के लिए अनुवर्ती बना रहेगा, पिछड़ा रहेगा। विकास की प्रतिद्वन्द्विता में, और बिना प्रतिद्वन्द्विता के विकास कभी संभव नहीं होता, सदा अपनी स्वतंत्र रेखा खींचनी होगी। अपना निजी मार्ग बनाना होगा। वह कितना ही छोटा प्रयत्न क्यों न लगे, परंतु एक ओर तो उस रेखा पर हमारी दृष्टि विकसित राष्ट्रों के उच्चतम बिंदु पर रह सकेगी और दूसरी ओर हमारी सर्जनात्मक प्रतिभा को पूर्ण मुक्ति मिल सकेगी। एशिया अथवा अफ्रीका के सभी स्वाधीन देशों को यूरोप की बौद्धिक पराधीनता से मुक्त होकर अपनी निजी प्रतिभा का अन्वेषण करना होगा और अपने निजी वैशिष्ट्य के बिना उनके विकास की संभावना पर विचार किया ही नहीं जा सकता। आर्थिक सहायताओं से अविकसित देशों की आर्थिक नीति, औद्योगिक पद्धति तथा विकास की दिशा निर्धारित हो जाती है। ये देश बिना मौलिक रूप से विकसित हुए ही विकास का अनुभव करने लगे हैं और बिना संतुलित संपन्नता के संपन्नता का आभास पाने लगे हैं।''

चिंतन के दो पक्ष हैं : चिंतन के क्षेत्र में शुद्ध सैद्धांतिक ज्ञान और राष्ट्रीय स्तर पर प्रयोगों और परीक्षणों की निश्चित योजना। चिंतन के क्षेत्र में निर्दिष्ट अंतरराष्ट्रीयता के आधार पर आगे बढ़ा जा सकता है और विज्ञान तथा प्रविधि के क्षेत्र में मौलिक तत्त्वों, सिद्धांतों तथा पद्धतियों के आधार पर अग्रसर हुआ जा सकता है। रूस और जापान ने यही करके दिखा भी दिया है। अपने मौलिक वैशिष्ट्य तथा सर्जनात्मक प्रतिभा के सहारे आगे बढ़ना है, उनके विकास का मार्ग वही भाग होगा।

निष्कर्ष रूप में डॉ. रघुवंश ने इस लंबे आलेख में घोषणा की :

शब्दार्थ

अन्वेषण की वृत्ति	- खोज, खोजी स्वभाव
कारागार	- जेल
अभूतपूर्व	- जो पहले न हुआ हो
भ्रामक	- भ्रम पैदा करने वाला
अनुकरण	- नकल, पीछे चलना
प्रतिद्वन्द्विता	- मुकाबला करने की अवस्था
वैशिष्ट्य परीक्षण	- परीक्षा लेने की विशेष क्रिया

''आज इन नयी स्वाधीनता प्राप्त और विकास की कामना करने वाले राष्ट्रों की सबसे बड़ी माँग होनी चाहिए - बौद्धिक मुक्ति और मौलिक सर्जनशीलता का अवसर।''

बौद्धिक जागरुकता के लिए 'क ख ग' का प्रकाशन महत्त्वपूर्ण उपलब्धि रही। ईमानदारी से सोचने व कहने की शुरुआत इस पत्रिका के माध्यम से हुई जिसका श्रेय डॉ. रघुवंश के विचारक रूप को है।

डॉ. रघुवंश का विचारक रूप निरंतर प्रखर होता गया जिसका दिग्दर्शन उनकी कृति 'मानव पुत्र ईसा : जीवन और दर्शन' में हुआ। इस कृति में ईसा की दया, करुणा और क्षमा को भारतीय परंपरा से संपृक्त कर व्याख्या करने का प्रयास किया गया है। हिंसा, प्रतिशोध और स्वार्थ के अंधकार से घिरे आज के विश्व के सामने ईसा का जीवन और दर्शन- दोनों ही प्रकाश की ओर उन्मुख करता है, निश्चय ही भारतीय ज्ञान-परंपरा के रंग इससे समानता रखते हैं। मनुष्य-जाति के कल्याण और उसके आसपास के मौलिक विश्व की भलाई के लिए उपयुक्त सत्य पाने की ओर प्रयास किया गया है जिसमें अन्वेषण की वृत्ति भी है। यह जीवनी विधा में लिखी गई पुस्तक हमारे समाज के लिए परम उपयोगी है जिस पर धर्म-दर्शन के लिए 1985 का श्री भगवानदास पुरस्कार उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ द्वारा डॉ. रघुवंश को दिया गया। डॉ. रघुवंश को यही सम्मान नहीं मिला, उनको अन्य सम्मान भी मिलते रहे जिनमें से बिड़ला ट्रस्ट द्वारा दिया गया 'शंकर पुरस्कार' सर्वोच्च है। 1994 में उन्हें उत्तर प्रदेश शासन का प्रतिष्ठित 'भारत भारती पुरस्कार' प्रदान किया गया। सहाय परिवार में असहाय स्थिति में उत्पन्न होते हुए मन की मज़बूती व संकल्प-शक्ति से वह मूर्धन्य स्थान पर प्रतिष्ठित हुए।

शब्दार्थ

प्रखर	- तीव्र बुद्धिवाला
दिग्दर्शन	- दिशा दिखाना
संपृक्त	- डूबा हुआ
उन्मुख	- जिसका मुख उस ओर हो, उत्सुक, तैयार
प्रतिष्ठित	- सम्मान-प्राप्त

बोध प्रश्न 12.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. लेखक की डॉ. रघुवंश से सर्वप्रथम भेंट कहाँ हुई-

   (क) विश्वविद्यालय बैंक रोड, इलाहाबाद स्थित आवास में

   (ख) भारतीय हिंदी परिषद् के जयपुर अधिवेशन में

   (ग) दिल्ली में हुई अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी में

   (घ) अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में हुए अधिवेशन में

2. डॉ. रघुवंश दिव्यांग होते हुए भी कैसे लिखते थे -

   (क) दोनों बाँहों में कलम फँसा कर

   (ख) हाथ की मुट्ठी में कलम फँसा कर

(ग) पैर की अँगुली में कलम फँसा कर

(घ) मुँह से कलम पकड़ कर

3. डॉ. रघुवंश ने किस विषय पर डी.फिल. की उपाधि प्राप्त की –

(क) हिंदी साहित्य के भक्तिकाल और रीतिकाल में प्रकृति और काव्य

(ख) हिंदी भाषा और डॉ. नगेन्द्र का साहित्य

(ग) साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य

(घ) मन और मस्तिष्क

4. डॉ. रघुवंश की कृति 'मानस पुत्र ईसा' किस विधा में लिखी गई है –

(क) उपन्यास (ख) कविता

(ग) संस्मरण (घ) जीवनी

5. 'मन क्या है' विषय पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन कहाँ हुआ –

(क) इलाहाबाद में (ख) आगरा

(ग) दिल्ली में (घ) अलीगढ़ में

6. डॉ. रघुवंश के किस रूप की चर्चा पाठ में नहीं है– :

(क) विचारक (ख) कवि

(ग) राजनीतिक (घ) संपादक

12.2 आइए समझें

प्रिय शिक्षार्थियो ! 'जिजीविषा की विजय' पाठ के प्रारंभ में ही आप पढ़ चुके हैं कि यह एक संस्मरण है। हिंदी साहित्य की कई नवीन विधाओं की तरह यह भी एक महत्त्वपूर्ण और रोचक विधा है। इस पाठ को भली-भाँति समझने के लिए आइए, पहले जान लें कि संस्मरण क्या है।

संस्मरण क्या है?

कभी-कभी कोई व्यक्तित्व अपनी विशेषताओं के कारण हमारी स्मृति में बस जाता है। उसकी यादें हमारे भीतर रह जाती हैं। बाद में उस व्यक्ति की विशेषताओं को आधार बनाकर स्मरण करना ही संस्मरण कहलाता है। ध्यान देने योग्य बात है कि आत्मीयता से जुड़े उस व्यक्तित्व को और उससे जुड़ी विशिष्ट घटनाओं को जब हम घटनाक्रम में बाँधकर उसे आकर्षक रूप में उजागर करते हैं तो साहित्य में वह विधा संस्मरण कहलाती है।

आपको एक बात और बता दें कि जब हम संस्मरण को पढ़ते हैं तो हमें स्थान-स्थान पर शब्दचित्रात्मक अभिव्यक्ति भी देखने को मिलती है। स्थान-स्थान पर शब्दों की इसी चित्रात्मक अभिव्यक्ति के कारण कभी-कभी यह रेखाचित्र विधा की झलक भी देने लगता है।

संस्मरण विधा की इस कड़ी में प्रो. कैलाश चंद्र भाटिया ने जिजीविषा और संकल्प के प्रतीक बन गए डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व को संस्मरणात्मक अभिव्यक्ति दी है। लेखक ने डॉ. रघुवंश को अपने स्मृतिपटल पर उभारा है और उस आधार पर संस्मरण की मुख्य विशेषताएँ - संस्मरणात्मक अभिव्यक्ति के रूप में सामने आई हैं।

जिस प्रकार कहानी, नाटक, उपन्यास, निबंध आदि गद्य साहित्य की विधाएँ हैं, उसी प्रकार संस्मरण भी गद्य साहित्य की नवीन विधा है। इसकी भी कुछ विशेषताएँ हैं, जिन्हें जानना बहुत ज़रूरी है। संस्मरण की प्रमुख विशेषताएँ हैं - परिचित एवं प्रभावपूर्ण व्यक्ति के चरित्र का स्पष्टीकरण, आत्मीयता, तटस्थ दृष्टि और रोचक शैली।

आइए, अब हम यह पढ़ें कि 'जिजीविषा की विजय' रचना में यह विशेषताएँ कितनी और किस प्रकार मिलती हैं।

12.3 संस्मरण विधा की विशेषताओं के आधार पर पाठ की समीक्षा

संस्मरणात्मक अभिव्यक्ति

आपने पूरा पाठ पढ़ा। आइए, अब इसे समझते हैं। डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व को और अधिक समझने के लिए हम इस संस्करण के लेखक के साथ-साथ कुछ अन्य सूचनाओं का भी सहारा लेंगे। लेखक डॉ. रघुवंश के नाम से विद्यार्थी जीवन से ही परिचित है। उसकी डॉ. रघुवंश से पहली भेंट हुई-भारतीय हिंदी परिषद् के जयपुर अधिवेशन में। डॉ. रघुवंश को देखकर लेखक दंग रह गया कि वे एक पैर से निरंतर तेज़ी से लिखते जा रहे हैं। उन्हें अभी तक यह नहीं पता था कि डॉ. रघुवंश दोनों हाथों से लाचार हैं। वह उनके व्यक्तित्व से कितने प्रभावित हुए इस अंश से समझा जा सकता है, *"मैं यह देखकर चकित रह गया कि इतने विशाल समुदाय में इतने सक्षम लेखकों के होते हुए भी पूरी कार्यवाही की निरंतर रिपोर्टिंग डॉ. रघुवंश ही बड़ी तेज़ी से अपने पैर से ही कर रहे थे। एक व्यक्ति इतना अधिक सक्रिय रह सकता है, यह आश्चर्यचकित करने के लिए पर्याप्त था।"* लेखक न केवल डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व से प्रभावित हुए अपितु उनकी निजी दृष्टि ने उन्हें यह सोचने पर मज़बूर कर दिया था कि परीक्षा में अपंग बालकों के लिए लेखक देने की सुविधा होती है, परंतु डॉ. रघुवंश अकेले निरंतर रिपोर्टिंग का काम कर रहे थे। वास्तव में उन्होंने अपनी सूझ-बूझ से लेखन की इस पद्धति को विकसित कर लिया था। डॉ. रघुवंश ने स्वयं आचार्य लोढ़ा को पत्र में लिखा,

"... आज न मेरा दाहिना पैर उठता है, जिसके पंजों के सहारे हज़ारों-हज़ार पृष्ठ लिखता रहा हूँ और न अपनी रीढ़ के सहारे बैठ पाता हूँ।... मैं अपनी लेखन-प्रक्रिया में किस प्रकार दाहिनी टाँग और रीढ़ पर जोर डालता रहा हूँ।" (दिनांक 26.7.05) उनका मन विपरीत स्थितियों में भी उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा देता था। उन्होंने अपने जीवन में कुछ-न-कुछ बनने की ठान ली थी। यह जानकारी पाठ के इस अंश को पढ़कर मिलती है "उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. किया तथा 'हिंदी साहित्य के भक्तिकाल और रीतिकाल में प्रकृति और काव्य' विषय पर डी.फिल्. की उपाधि प्राप्त कर ली थी। उसी विश्वविद्यालय में वे प्राधयापक बने।"

इस संदर्भ में डॉ. रघुवंश को समीप से जानने वाले उनके शिष्य डॉ. रामकमल राय ने उनके बारे में उल्लेख किया है, *"इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग की एम.ए. की परीक्षा में सर्वाधिक अंक प्राप्त कर उन्होंने सभी को चकित कर दिया। किंतु जब उन्होंने यह संकल्प व्यक्त किया कि वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्राध्यापन के अतिरिक्त और कोई कार्य नहीं स्वीकार करेंगे तो फिर उनके शुभचिंतकों के सामने एक नई समस्या आ खड़ी हुई। जो व्यक्ति हाथ से खड़िया नहीं पकड़ सकता, श्यामपट्ट पर कुछ लिख नहीं सकता उसे शिक्षक कैसे बनाया जाए? चयन समिति और विश्वविद्यालय की कार्यसमिति में इस बात पर काफ़ी बहस हुई, किंतु विजय अंतिम रूप से नैतिकता की ही हुई और रघुवंश जी इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्राध्यापक हो गए। इस उल्लेख से भी डॉ. रघुवंश की दृढ़ता और उनके संकल्प का परिचय मिलता है।*

घटनाओं की सत्यता और चरित्र का स्पष्टीकरण

शिक्षार्थियो ! आपके लिए यह जानना बहुत ज़रूरी है कि संस्मरण में स्मृति के आधार पर हम जिस प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व को अभिव्यक्ति देते हैं उसके जीवन से जुड़ी हुई जिन घटनाओं का हम उल्लेख करते हैं, उसमें सच्चाई का होना अत्यंत आवश्यक है। उसमें कल्पना का तत्त्व नहीं होता। घटनाओं के साथ-साथ उस विशिष्ट व्यक्ति का चरित्र भी उभर कर सामने आता है। अब हम इस दृष्टि से देखते हैं कि प्रस्तुत संस्मरण में ये विशेषताएँ किस सीमा तक हैं।

आपने मूल पाठ पढ़ा। आपने इस बात पर भी ध्यान दिया होगा कि लेखक प्रत्येक घटना के साथ-साथ डॉ. रघुवंश के चरित्र को खोलता चला जाता है। आपने अनुभव किया होगा कि घटनाक्रम के साथ-साथ हम डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों का परिचय प्राप्त करते चलते हैं। उदाहरण के लिए – उनके साथ पहली ही भेंट में हमने डॉ. रघुवंश को हाथों से अक्षम होने और उनकी कार्यक्षमता, तत्परता, सूझ-बूझ तथा कर्मठ प्रवृत्ति के बारे में पढ़ा। साथ ही यह सूचना भी हमें मिली कि *"उन्होंने जो लेखन कार्य किए, वे बहुत से उन विद्वानों से भी संभव न हो सका जिन्होंने मज़बूत हाथ लेकर जन्म लिया।"*

एक अन्य घटना के द्वारा हमें पता चलता है कि डॉ. रघुवंश बाह्य और आंतरिक रूप में तो

स्वच्छ थे ही, अर्थ-संबंधी मामलों में भी उनमें शुचिता दिखाई देती थी। आइए, यह उदाहरण देखें, *"किस युक्ति से वह रिक्शा में बैठने से पूर्व उस चालक की देय राशि निकाल कर रख लेते हैं, यह विस्मयकारी है जिससे उनको साथ ले जाने वाले व्यक्ति अपने पास से रुपए न दे दें।"* विद्यार्थियो ! आप जैसे-जैसे पाठ पढ़ते जाते हैं, वैसे-वैसे डॉ. रघुवंश का चरित्र उजागर होता जाता है। उनकी संकल्पशक्ति, सौम्य व्यक्तित्व, कर्मयोगी प्रवृत्ति, आत्मविश्वासपूर्ण कार्य करने की क्षमता, आगे बढ़ने की योग्यता, विद्रोही और जुझारू प्रकृति विभिन्न रूपों में दिखाई देती हैं। आप स्वयं भी पाठ पढ़ते हुए डॉ. रघुवंश के चरित्र की अन्य विशेषताएँ प्रकट कर सकते हैं।

पाठगत प्रश्न 12.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. डॉ. रघुवंश किसके प्रतीक बन गए –

   (क) आश्चर्य के (ख) संकल्प के

   (ग) संस्मरण के (घ) आकर्षण के

2. इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्राध्यापक बनकर डॉ. रघवंश ने परिचय दिया –

   (क) हठ का (ख) अहंकार का

   (ग) दृढ़ता का (घ) विवशता का

3. संस्मरण के लिए अनिवार्य नहीं है –

   (क) स्मृति (ख) सच्चाई

   (ग) व्यक्तित्व (घ) कल्पना

आइए, अब कुछ और विशेषताओं के आधार पर इस पाठ को समझते हैं–

आत्मीयता तथा तटस्थ दृष्टि

शिक्षार्थियो ! यहाँ पहले यह जानना ज़रूरी है कि आत्मीयता तथा तटस्थ दृष्टि से क्या तात्पर्य है। अभी तक आप यह जान चुके हैं कि संस्मरण में अनुभूत स्मृतियाँ सँजोई जाती हैं और उसमें कल्पना का स्थान नहीं होता। परिचित व्यक्ति से जुड़ी अनुभूतियों में निजी दृष्टि प्रधान होती है। परंतु साथ ही यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि संस्मरण अतीत से जुड़ा होता है। आत्मीयता यानी अपनापन, निजता संस्मरण का मूल आधार है और तटस्थ दृष्टि से विशिष्ट व्यक्ति का विश्लेषण करना संस्मरण की एक विशेषता है।

प्रस्तुत संस्मरण में हम यह पाते हैं कि लेखक डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व से बहुत अधिक प्रभावित है और अपनी स्मृतियों के आधार पर अनुभूत सत्यों और घटनाओं को प्रकट करते

हुए उनके चरित्र को खोलता चला जाता है। एक-एक करके उनके व्यक्तित्व तथा कृतित्व से जुड़ी विशेषताएँ प्रकट होती चलती हैं। लेखक उनके कृतित्व एवं विचारक रूप के विषय में बताते हुए कुछ ऐसी बातों का भी उल्लेख करता है, जो आज भी हमारे काम की हैं। उदाहरण के लिए डॉ. रघुवंश के आलेख 'नए राष्ट्र और वर्तमान की चुनौती' के उस अंश को उभारा गया है जो आज तीन दशक के बाद भी सामयिक है- "यदि सचमुच एशिया और अफ्रीका को विकसित होना है, तो अपने सभी प्रश्नों को निजी संदर्भ में रखकर देखना होगा। विकास की यह पद्धति मूलत: भ्रामक है कि जिस रेखा में किसी दूसरे देश ने उन्नति की है, उसी रेखा पर आगे बढ़ा जा सकेगा। विकास की रेखा का प्रत्येक बिंदु आगे आने वाले बिंदुओं को अग्रसर करने में सहायक हुआ है, स्वयं पीछे रहकर, पिछड़कर। ऐसी स्थिति में दूसरा व्यक्ति या राष्ट्र अपने विकास के लिए उस रेखा का अनुकरण करना चाहेगा तो वह सदा के लिए अनुवर्ती बना रहेगा, पिछड़ा रहेगा। विकास की प्रतिद्वन्द्विता में, और बिना प्रतिद्वन्द्विता के विकास कभी संभव नहीं होता, सदा अपनी स्वतंत्र रेखा खींचनी होगी।"

स्पष्ट है कि डॉ. रघुवंश से लेखक के लगाव के कारण अनेक हैं। अपनी अक्षमता को डॉ. रघुवंश ने किसी प्रकार की बाधा नहीं बनने दिया। वे लेखक के लिए तो प्रेरणा बने ही पाठकों के लिए भी उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। कभी-कभी हम सक्षम लोग भी निराश होकर निष्क्रिय बन जाते हैं, ऐसी स्थिति में डॉ. रघुवंश जैसे लोग हमें दिशा दिखाते हैं।

डॉ. रघुवंश के कृतित्व एवं सम्मान

- डॉ. रघुवंश ने अनुशीलन पत्र का अनेक वर्षों तक संपादन किया।
- अभूतपूर्व कृति के रूप में 'जेल और स्वतंत्रता' शीर्षक से पत्रों का संग्रह प्रकाशित हुआ।
- डॉ. रघुवंश एक विचारक के रूप में अधिक मुखर रूप में त्रैमासिक पत्रिका – 'क ख ग' से सभी के सामने आए। उन्होंने इस पत्रिका का संयोजन किया तथा संपादक मंडल में भी प्रमुख भूमिका निभाई।
- 'मानव पुत्र ईसा : जीवन और दर्शन' कृति द्वारा डॉ. रघुवंश का प्रखर विचारक रूप निखर कर आया। जिसके लिए उन्हें सन् 1985 में श्री भगवान दास पुरस्कार से सम्मानित किया गया। अन्य अनेक सम्मानों में बिड़ला ट्रस्ट द्वारा 'शंकर पुरस्कार' तथा उत्तर प्रदेश शासन द्वारा प्रतिष्ठित 'भारत भारती पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

सभी कुछ उन्होंने मज़बूत मन और दृढ़ इच्छाशक्ति द्वारा प्राप्त किया।

लेखक की तटस्थ दृष्टि ही डॉ. रघुवंश द्वारा रचित जीवनी 'मानव पुत्र ईसा : जीवन और दर्शन' की उस दृष्टि को उभारती है जिसमें हिंसा, प्रतिशोध और स्वार्थ के अंधकार में घिरा वर्तमान विश्व का वातावरण ईसा की दया, करुणा और क्षमा को भारतीय परंपरा से जोड़ कर देखता है। ईसा का जीवन और दर्शन भारतीय ज्ञान-परंपरा से मेल खाते हैं।

रोचक भाषा-शैली

संस्मरण परिचित व्यक्ति के जीवन से जुड़ी घटनाओं की सत्य अभिव्यक्ति होता है। इसलिए संस्मरण में स्वाभाविकता, सरलता व रोचकता के साथ-साथ वर्णनात्मक शैली भी होती है। प्रस्तुत संस्मरण सरल भाषा में लिखा गया है, जिसमें रोचकता का गुण विशेष रूप से विद्यमान है। जैसे-जैसे आप पाठ पढ़ते जाते हैं, वैसे-वैसे आपकी रुचि डॉ. रघुवंश को जानने के लिए बढ़ती चली जाती है। घटनाओं में वर्णनात्मकता के साथ-साथ कौतूहल और रुचि दोनों का समावेश है। आपने पढ़ा कि लेखक ने कितने अच्छे ढंग से 'मन' का विश्लेषण किया है। मन की व्याख्या जहाँ आपको एक नई दृष्टि देती है वहीं डॉ. रघुवंश के सुदृढ़ मन से भी परिचित कराती है। लेखक की भाषा सरल परंतु शुद्ध साहित्यिक भाषा है। तटस्थ, निकटस्थ, संगोष्ठी, पर्यवेक्षण अभिक्रिया, समुच्चय, नव-वल्कल, शुचिता, परिलक्षित, सर्जनात्मक, चैतन्य, बौद्धिक, प्रतिद्वन्द्विता जैसे साहित्यिक-तत्सम शब्द संस्मरण को प्रभावपूर्ण बनाते हैं।

भावात्मक, वर्णनात्मक और व्याख्यात्मक शैली के संयोजन से यह संस्मरण बहुत ही प्रभावपूर्ण बन पाया है।

- **भावात्मक शैली**

  ''मैं यह देखकर चकित रह गया कि इतने विशाल समुदाय में इतने सक्षम लेखकों के होते हुए भी पूरी कार्यवाही की निरंतर रिपोर्टिंग डॉ. रघुवंश ही बड़ी तेज़ी से अपने पैर से ही कर रहे थे।''

  ''मैं निरंतर सोचता रहा कि आखिर कौन-सा तत्त्व है, कारण है जिससे रघुवंश विपरीत परिस्थितियों में भी आगे ही बढ़ते गए।''

- **सहज-सरल भाषा**

  ''यह मन ही तो है, जिसमें चाह है, लक्ष्य है वहीं उसमें पवित्रता, कोमलता व प्रियता है। उनका नव उत्साह से भरा मन हमेशा लेखन कार्य, सेवा कार्य में रमता है।''

- **विषय के अनुसार गंभीर परंतु बोधगम्य भाषा**

  ''देश-विदेश के विद्वानों-वैज्ञानिकों ने गंभीर विचार-विमर्श कर 'मन' को परिभाषित करने की चेष्टा की। मस्तिष्क की तरंगों को कोई चेतना, कोई चिति, कोई संज्ञान की संज्ञा देता है। कल्पना करना, अतीत में जाना, अवधान, पर्यवेक्षण, विचारणा आदि अभिक्रियाओं का संपादन मस्तिष्क करता है जिनके समुच्चय का नाम 'मन' है।''

- **पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग**

  आप जानते हैं विशिष्ट क्षेत्र में विशिष्ट संदर्भ में निश्चित संकल्पनाओं को खोलने वाले शब्द ही पारिभाषिक शब्द कहलाते हैं। यहाँ 'मन' की बात विस्तार से हुई है तो

तत्संबंधी पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग दर्शनीय है: *''मन को विद्वानों ने तीन मंजिला भवन – नववल्कल, वत्सल और सर्पिल माना''।*

- **मानक वर्तनी का प्रयोग**

  आपने ध्यान दिया होगा पूरे पाठ में गद्य, शुद्ध, बुद्धि, औद्योगिक आदि शब्दों में संयुक्त शब्द तोड़ कर लिखे गए हैं। मानक भाषा वर्तनी के यही रूप स्वीकार्य हैं। इस प्रकार के अन्य शब्द चुनकर आप मानक और अमानक शब्दों की एक सूची तैयार कर सकते हैं।

अत: हम कह सकते हैं कि 'जिजीविषा की विजय', संस्मरण में वे सभी विशेषताएँ हैं जो एक अच्छे संस्मरण में होनी चाहिए। इस प्रकार किसी भी पाठक के मन पर संस्मरण के रूप में यह पाठ समग्र प्रभाव डालता है।

पाठगत प्रश्न 12.2

1. निम्नलिखित कथनों में सही के सामने (√) तथा गलत के आगे (X) का निशान लगाइए:

   (क) संस्मरण गद्य साहित्य की नवीन विधाओं में समाहित है। ( )

   (ख) संस्मरण के कुछ अंश हमारे लिए आज भी प्रासंगिक हैं। ( )

   (ग) संस्मरण में कल्पना जगत की ऊँची उड़ान भरने की पूरी छूट है। ( )

   (घ) सत्यता, तटस्थता और आत्मीयता अच्छे संस्मरण की विशेषताएँ हैं। ( )

   (ङ) डॉ. रघुवंश ने 'अनुशीलन' पत्र का अनेक वर्षों तक संपादन किया। ( )

2. सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

   'नए राष्ट्र और वर्तमान की चुनौती' के उद्धृत अंश की विशेषता है कि वह –

   (क) स्वतंत्र चिंतन पर बल देता है।

   (ख) अनुकरण पर बल देता है।

   (ग) दूसरों से पीछे रहने पर बल देता है।

   (घ) उन्नत देशों के पिछड़ेपन पर बल देता है।

3. पाठ में कौन-सी शैलियाँ नहीं हैं–

   (क) आलोचनात्मक और भावात्मक (ख) भावात्मक और वर्णनात्मक

   (ग) व्याख्यात्मक और भावात्मक (घ) वर्णनात्मक और व्याकरणात्मक

12.4 प्रमुख व्याख्याएँ

अब आपने पूरा पाठ पढ़ लिया है और संस्मरण की विशेषताओं से भी आप परिचित हो गए हैं। आइए, पाठ में आए कुछ महत्त्वपूर्ण अंशों की व्याख्या पढ़-समझ लेते हैं –

अंश – 1

साधारणत: परीक्षा में भी ऐसे बालकों को कोई लेखक देने का प्रावधान है पर डॉ. रघुवंश ने अपनी सूझबूझ से ऐसी पद्धति विकसित कर ली थी जो प्राय: देखने को नहीं मिलती है। इस पद्धति से उन्होंने सारी परीक्षाएँ उत्तीर्ण कीं।

प्रसंग : लेखक भारतीय हिंदी परिषद् के जयपुर अधिवेशन में गए थे, जहाँ उनकी भेंट डॉ. रघुवंश से पहली बार हुई और वे डॉ. रघुवंश को पैर से निरंतर तेज़ी से लिखते देख कर दंग रह गए। इन पंक्तियों में अपंग होते हुए भी डॉ. रघुवंश की तीव्र कार्यक्षमता को प्रकट किया गया है।

व्याख्या : भारतीय हिंदी परिषद् के जयपुर अधिवेशन में रिपोर्टिंग का कार्य डॉ. रघुवंश कर रहे थे। डॉ. रघुवंश दोनों हाथों से अपंग थे, किसी भी हाथ में कलम नहीं पकड़ सकते थे। उनके कार्य में कहीं भी अक्षमता का बोध नहीं हो रहा था, वे बड़ी तीव्रता से पैर की उँगलियों में कलम फँसाकर रिपोर्टिंग का कार्य कर रहे थे। लेखक को बहुत ही आश्चर्य हो रहा था कि अपंग होने के बावजूद भी एक व्यक्ति इतनी अधिक सक्रियता से कार्य कर सकता है। प्राय: ऐसा होता है कि यदि कोई बालक अपंग हो तो परीक्षा में लेखन कार्य करने के लिए लेखक नियुक्त किया जाता है, ताकि परीक्षा में उसे कोई व्यवधान न हो। परंतु डॉ. रघुवंश ने अपने हाथों के न होने को अपनी कमजोरी या अक्षमता नहीं माना था। उन्होंने अपनी व्यावहारिक योग्यता से पैरों से ही लिखने का अभ्यास किया और इसी प्रक्रिया के माध्यम से सभी परीक्षाओं में उत्तीर्ण हुए। उन्होंने मन में जो निश्चय किया उसे अपनी बुद्धि के धरातल पर स्थापित कर पूर्ण किया।

अंश – 2

मन को विद्वानों ने तीन मंजिला भवन-नववल्कल, वत्सल, सर्पिल माना। लगता है, अतींद्रिय अनुभवों के केंद्र मन (सर्पिल) में ही उन्होंने पक्का विचार बना लिया होगा।

प्रसंग : लेखक की डॉ. रघुवंश से सर्वप्रथम हुई भेंट में उनकी अपंगता का ज्ञान हुआ और साथ ही उनके ज़िंदादिल, कर्मठ व्यक्तित्व का साक्षात्कार भी हुआ। तब से वह निरंतर यह सोचा करते थे कि आखिर वह कौन-सा तत्त्व है जो डॉ. रघुवंश को विपरीत परिस्थितियों में भी आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। काफी सोच-विचार कर उन्होंने यह मत बनाया कि निश्चित रूप से डॉ. रघुवंश के मन के कुछ बनने का दृढ़ निश्चयी भाव था। प्रस्तुत

पंक्तियों में लेखक मन के स्वरूप को व्याख्यायित करते हुए डॉ. रघुवंश के दृढ़ व्यक्तित्व को उजागर कर रहे हैं।

व्याख्या : इस अनुच्छेद में लेखक ने 'मन क्या है' विषय पर हुई अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी के आधार पर यह स्पष्ट किया है कि मन और मस्तिष्क में अंतर है। मस्तिष्क में अनगिनत चेतना की तरंग उठती रहती हैं और मन उन तरंगों का समुच्चय (संगठन) है। विद्वान मन को तीन मंजिल भवन की भाँति मानते हैं जिनमें भाव तरंगें उठती हैं और संवेगात्मक प्रक्रिया में विकसित होती हैं, फिर क्रियात्मक रूप धारण करती हैं। डॉ. रघुवंश ने अपनी अपंगता को संवेगात्मक सशक्तता प्रदान की और मन में सुदृढ़ता से यह निश्चय किया कि यह अपंगता उनके जीवन के किसी कार्य में बाधक नहीं होगी और जीवन भर, उनके मन की सुदृढ़ता कायम रही और वे हर क्षेत्र में आगे बढ़े। उन्होंने निश्चित रूप से मन की गहराई में दृढ़ संकल्प कर लिया था कि जीवन में सफल होना ही है चाहे जैसी भी परिस्थितियाँ आएँ। जिसका मन मज़बूत होता है, उसका कोई कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता।

अंश - 3

अर्थ की शुचिता के वे ज्वलंत उदाहरण हैं। हर प्रकार की स्वच्छता की भावना उनके स्वभाव का अभिन्न अंग रही है।

प्रसंग : लेखक डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व की सुदृढ़ता के साथ-साथ उनके स्वभाव की निश्छलता, आत्मसम्मान का भाव और पवित्रता को प्रस्तुत पंक्ति में अभिव्यक्त कर रहे हैं।

व्याख्या : डॉ. रघुवंश के मन में निरंतर आगे बढ़ने की इच्छा थी। जीवन के लिए लक्ष्य निर्धारित था। उनका मन सदैव नई प्रेरणा और उत्साह के साथ कार्य करने की ओर अग्रसर रहता था। लेखन के प्रति उनकी समर्पित भावना थी। उनका स्वभाव बहुत ही पवित्र और निर्मल था। उनकी यह पवित्रता उनके रहन-सहन, व्यक्तित्व तथा हर कार्य-व्यापार में दृष्टिगत होती थी। जिसका प्रभाव उनके साहित्य में स्पष्ट दिखाई देता है। उक्त पंक्तियों को विशेष रूप से अर्थ की पवित्रता के संदर्भ में लेखक ने कहा है। डॉ. रघुवंश अर्थ के मामले में कभी भी किसी की दया या एहसान लेने को राज़ी नहीं थे। वे रिक्शे में भी जाते तो रिक्शे वाले को देने वाली रकम न जाने किस ढंग से पहले ही निकाल कर रख लेते थे। इसीलिए लेखक ने डॉ. रघुवंश को अर्थ की शुचिता का ज्वलंत उदाहरण माना है।

अंश - 4

संकल्प ही तो चेतना का वह गुण है जिसमें मन की दृढ़ता, इच्छा, विचार, चिंतन, विमर्श विद्यमान रहते हैं।

प्रसंग : इस गद्यांश में लेखक डॉ. रघुवंश के जीवन की हर कार्य प्रवृत्ति के मूल में उनके मन की संकल्पमय सक्रियता को उजागर कर रहे हैं।

व्याख्या : संकल्प शक्ति जीवन का सुदृढ़ आधार है जो मनुष्य के मन की इच्छाओं व विचारों को सुनिश्चित गतिशीलता व सशक्तता प्रदान करती है। संकल्पशक्ति मनुष्य की प्रतिष्ठा का मूल मंत्र है। डॉ. रघुवंश के संदर्भ में कहा जा सकता है कि उन्होंने अपने जीवन में जो सर्जनात्मक कार्य किए उनका आधार सुदृढ़ संकल्प चेतना है। इसी वैचारिक चिंतनशील संकल्पपूर्ण इच्छाशक्ति ने उन्हें निरंतर लेखन कार्य की ओर प्रेरित किया और वे एक सच्चे 'कर्मयोगी' के रूप में कार्यरत रहे।

अंश - 5

जो आत्मविश्वासपूर्वक कार्य करता है, उसकी योग्यता तो उनके कार्यों से प्रकट होती है। यही कारण है कि डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के निर्देशन में जब 'हिंदी साहित्य कोश' का निर्माण प्रारंभ हुआ तो डॉ. रघुवंश न केवल संपादक मंडल में रहे वरन् उस परियोजना का संयोजकत्व भी किया। उन्होंने कोश के लिए लेखन-कार्य भी किया। 'हिंदी साहित्य कोश' के प्रकाशन में उनका बड़ा योगदान रहा। किसी भी परियोजना का विकास कर, उसको ऊँचाई तक ले जाना और उसके लिए अपने को न्योछावर करते रहना उनका स्वभाव बन गया। योजकता, आत्मविश्वास, आत्मबल, कर्त्तव्यनिष्ठा आदि गुणों का संबल लेकर वह निरंतर आगे बढ़ते ही गए।

प्रसंग : इस गद्यांश में लेखक डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व की अन्य विशेषताओं को उजागर करने के साथ-साथ उनके कृतित्व को भी स्पष्ट किया गया है -

व्याख्या : डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व की यह विशेषता थी कि वह हर कार्य आत्मविश्वासपूर्ण ढंग से करते थे, जिससे उनकी योग्यता और कार्यकुशलता दोनों का ही परिचय मिलता था। ''हिंदी साहित्य कोश'' का निर्माण कार्य आरंभ हुआ तब डॉ. धीरेन्द्र वर्मा इस कार्य का निर्देशन कर रहे थे। डॉ. रघुवंश ने इस कार्य के लिए न केवल संपादक का कार्य किया अपितु कार्य संयोजन में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, साथ ही कोश के लिए लेखन कार्य भी किया। ये तीनों कार्य साधारण नहीं थे। उनके असाधारण सहयोग से 'साहित्य कोश' का प्रकाशन कार्य संभव हुआ। उनके भीतर कार्य करने की लगन थी, अपने ऊपर पूरा विश्वास था। पूरी कर्त्तव्य निष्ठा से कार्य करना, उस कार्य को ऊँचाई तक ले जाना, काम के लिए मर मिटना, खुद को न्योछावर कर देना, आत्मविश्वास पूर्वक कार्य करना उनके व्यक्तित्व की विशेषता थी। वास्तव में कहा जाए तो कार्य के प्रति उनमें आत्मसमर्पण का भाव था। इन्हीं अनेक गुणों के कारण उन्होंने जीवन में सफलता पाई और आगे ही आगे बढ़ते चले गए।

आपने यह पढ़ लिया है। समझ भी लिया है। यह भी जाना कि दिव्यांग भी अपनी दृढ़ता के बल पर अपने कौशल को विकसित करते हैं। जिस प्रकार हर व्यक्ति में विशेष प्रकार का हुनर छिपा रहता है, वैसे ही दिव्यांग भी इससे युक्त होते हैं। यह जरूरी है कि दिव्यांगों के अधिकारों एवं उनकी सुविधाओं के प्रति हमें सचेत रहना चाहिए। सरकार ने अनेक प्रकार से दिव्यांगों का ध्यान रखा है, जैसे-मेट्रो में, रेलों-बसों में, ईमारतों में तरह-तरह से उनका ध्यान

रखा जाता है। यदि आप कहीं इस संदर्भ में कोई कमी देखें तो संबंधित व्यक्तियों से इन्हें दूर करने के लिए कहें। इसीलिए कहा जाता है कि हमें दिव्यांगों के प्रति दया, सहानुभूति नहीं दिखाना है बल्कि उनके अधिकारों के प्रति जागरूक होना है।

12.5 आपने क्या सीखा

1. जिजीविषा अथवा मन में समाहित 'जीवन की लालसा' मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति है।
2. शारीरिक अक्षमता जीवन की गतिशीलता में बाधक नहीं हो सकती, डॉ. रघुवंश इसके साक्षात उदाहरण हैं।
3. डॉ. रघुवंश के जीवन जीने का ढंग यह सिद्ध करता है कि दिव्यांगों को दया व सहानुभूति के स्थान पर अपनत्व और सहयोग चाहिए।
4. मन की सुदृढ़ता और संकल्प शक्ति ही व्यक्ति की प्रतिष्ठा का आधार है।
5. डॉ. रघुवंश के व्यक्तित्व में जिजीविषा, कार्यक्षमता, अर्थ की शुचिता, आत्मबल, कर्त्तव्य निष्ठा आदि गुण समाहित हैं।
6. गद्य साहित्य की नवीन विधाओं में संस्मरण एक जीवंत और रोचक विधा है।
7. संस्मरण की विशेषताएँ हैं – आत्मीयता, स्मरणभाव, सत्यता, लेखक की निजी दृष्टि की प्रधानता, तटस्थ दृष्टि, परिचित व्यक्ति का अपने दृष्टिकोण से विश्लेषण। संस्मरण की प्रमुख विशेषताओं के आधार पर यह रचना खरी उतरती है। संस्मरण की भाषा-शैली सरल, रोचक, भावात्मक, प्रवाहमान तथा आत्मीयतापूर्ण है।

12.6 सीखने के प्रतिफल

- संस्मरण को अपनी समझ के आधार पर नए रूप में प्रस्तुत करते हैं।
- विविध साहित्यिक विधाओं के अंतर को समझते हुए उनके स्वरूप का विश्लेषण करते हैं।
- भाषा-कौशलों के माध्यम से जीवन-कौशलों को आत्मसात करते हैं और अभिव्यक्त करते हैं।
- सामाजिक, शारीरिक एवं मानसिक रूप से चुनौती प्राप्त समूहों के प्रति संवेदनशीलता एवं समानुभूति लिखकर अभिव्यक्त करते हैं।

12.7 योग्यता विस्तार

लेखक परिचय

चित्र 12.2: प्रो. कैलाशचंद्र भाटिया

प्रो. कैलाशचंद्र भाटिया लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी से सेवानिवृत्त हुए। वे अनेक संस्थाओं तथा भारत सरकार की विविध समितियों में भाषा विशेषज्ञ के रूप में कार्यरत रहे। भाषा विज्ञान तथा हिंदी भाषा के विविध पक्षों पर अनुसंधान के साथ गद्य साहित्य की नवीन विधाओं पर उन्होंने कार्य किया। आगरा तथा अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से भी संबद्ध रहे। वृंदावन शोध संस्थान, वृंदावन के निदेशक के रूप में कार्य किया।

प्रमुख रचनाएँ:- अखिल भारतीय प्रशासनिक कोश, अंग्रेज़ी-हिंदी अभिव्यक्ति कोश, अंग्रेज़ी-हिंदी शब्दों का ठीक प्रयोग, हिंदी भाषा शिक्षण, भारतीय भाषाएँ, विधा-विविध, प्रयोजनमूलक-कामकाजी हिंदी, व्यावहारिक हिंदी, अनुवाद कला: सिद्धांत और प्रयोग, भाषा-भूगोल, संक्षेपण और पल्लवन आदि 35 से अधिक प्रकाशित पुस्तकें।

लिंग्विस्टिक सोसाइटी ऑफ इंडिया के 'सील ऑफ आनर', साहित्य वाचस्पति, नातालि पुरस्कार से सम्मानित, महामना मदन मोहन मालवीय सम्मान से अलंकृत।

(क) संस्मरण गद्य-साहित्य की एक सशक्त विधा है। इस विधा का आरंभ भारतेंदु युग से हुआ। हिंदी में अनेक संस्मरण लिखे जा चुके हैं। आपकी जानकारी के लिए कुछ नाम दिए जा रहे हैं –

दीप जले शंख बजे	–	कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर
गांधी : कुछ स्मृतियाँ	–	जैनेन्द्र कुमार
जिन्हें भूल न सका	–	रामनारायण उपाधयाय
उजाले अपनी यादों के	–	भगवानसिंह
बच्चन : निकट से	–	अजित कुमार
मेरे हमदम मेरा दोस्त	–	कमलेश्वर

यादों की तीर्थयात्रा	-	विष्णु प्रभाकर
युगपुरुष	-	रामेश्वर शुक्ल अंचल
याद हो कि न याद हो	-	काशीनाथ सिंह

(ख) भारत के राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने देश के हज़ार दिव्यांग बच्चों से ख़ास मुलाकात की और अपने अनुभवों को 'अदम्य साहस' नामक कृति में सँजोया। इस कृति में एक स्थान पर लिखा है, *''विकलांगता का भाव तो इंसान के दिमाग़ में होता है। निर्मल और तेजस्वी दिमाग वाला व्यक्ति एक मूल्यवान नागरिक होता है भले ही वह शारीरिक रूप से विकलांग हो।''*

(ग) हिंदी साहित्य के क्षेत्र में कार्य करने वाले डॉ. गोपाल राय ने दिव्यांग होते हुए भी सफलता की बुंलदियों को चूमा है। हिंदी-उर्दू के सुप्रसिद्ध लेखक तथा 'महाभारत' धारावाहिक के संवाद-लेखन के लिए प्रसिद्ध डॉ. राही मासूम रज़ा ने दिव्यांग होते हुए भी तीन सौ से ज़्यादा फिल्मों की पटकथा लिखी और 'आधा गाँव' जैसा उपन्यास साहित्य जगत को दिया।

12.8 पाठांत प्रश्न

1. संस्मरण की किन्हीं चार विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
2. पाठ में से उन दो अंशों का चयन कीजिए, जब लेखक की डॉ. रघुवंश से भेंट हुई।
3. डॉ. रघुवंश को देखकर लेखक के दंग रह जाने का कारण स्पष्ट कीजिए।
4. डॉ. रघुवंश दोनों हाथों से अक्षम थे फिर भी वह कैसे लिखते थे ?
5. मन क्या है ? पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
6. लेखक ने डॉ. रघुवंश को 'कर्मयोगी' क्यों कहा है ? प्रस्तुत कीजिए।
7. डॉ. रघुवंश में समझौतावादी प्रवृत्ति कभी नहीं रही। इसकी पुष्टि हेतु उदाहरण दीजिए।
8. डॉ. रघुवंश का विचारक रूप सबसे अधिक मुखर कब हुआ ?
9. डॉ. रघुवंश के लेखन-कार्य पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।
10. डॉ. रघुवंश की विद्रोही और जुझारू प्रकृति को अपने शब्दों में लिखिए।

12.9 उत्तरमाला

बोध-प्रश्न 12.1

1. (ख) 2. (ग) 3. (क) 4. (घ) 5. (ग) 6. (ग)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

12.1 1. (ख) 2. (ग) 3. (घ)

12.2 1. (क) √ (ख) √ (ग) X (घ) √ (ङ) √

2. (क)

3. (क)

13

सुभद्रा कुमारी चौहान

(महादेवी वर्मा)

प्रथमः सुनो, क्या तुमने कोई कहानी पढ़ी है?

द्वितीयः हां, पढ़ी है।

प्रथमः अच्छा किसी दीवार पर बने चित्र को देखा है?

द्वितीयः वह भी देखा है।

प्रथमः क्या रेखाचित्र पढ़ा भी है?

द्वितीयः नहीं!

प्रथमः शब्दों के माध्यम से जब किसी चित्र का आभास होता है या आँखों के सामने चित्र उभरने लगते हैं, उसे रेखाचित्र कहते हैं। और इसी तरह किसी व्यक्ति अथवा जीव-जंतु के बारे में जब कोई आत्मीय प्रस्तुति की जाती है तो वह संस्मरणात्मक रेखाचित्र कहलाता है।

द्वितीयः अच्छा, तो इसके बारे में विस्तार से बताइए।

प्रथमः जरूर!

इस संवाद से स्पष्ट होता है कि इस पाठ में हम एक नई विद्या संस्मरणात्मक रेखाचित्र के बारे में पढेंगे।

चित्र रंग और ब्रश से बनाए जाते हैं किंतु जब वही चित्र शब्दों के माध्यम से बनाए जाते हैं और उससे जुड़ी जानकारी लोगों तक पहुंचाई जाती है, तो उस विधा को शब्दचित्र या रेखाचित्र कहते हैं। रेखाचित्र साहित्य की महत्त्वपूर्ण विधा है। महादेवी वर्मा द्वारा लिखित 'सुभद्रा कुमारी चौहान' में सुभद्रा कुमारी चौहान के जीवन, कर्म और उनके सामाजिक जीवन के संघर्षों का वर्णन किया गया है इसलिए यह संस्मरणात्मक रेखाचित्र की श्रेणी में आएगा। आइए इस पाठ को पढ़ते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप –

- सुभद्रा कुमारी चौहान के व्यक्तित्व की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे;
- इस संस्मरणात्मक रेखाचित्र की भावगत और शिल्पगत विशेषताओं पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- राष्ट्र और समाज के विकास के लिए कर्त्तव्य–भाव, राष्ट्र चेतना जैसे अनेक मूल्यों को आत्मसात कर उन्हें प्रस्तुत कर सकेंगे;
- आत्मबोध, विश्लेषण, निर्णय क्षमता और आलोचनात्मक चिंतन का अपने जीवन में उपयोग कर उनका उल्लेख कर सकेंगे;
- अपने संपर्क में आये व्यक्तियों की विशिष्टताओं का मूल्यांकन कर उन पर रेखाचित्र लिख सकेंगे।

इस पाठ में आप प्रखर रचनाकार सुभद्रा कुमारी चौहान के बारे में पढ़ेंगे और उनके जीवन के विविध पहलुओं से परिचित होंगे। आपकी सहायता के लिए कठिन शब्दों के अर्थ मूल पाठ के साथ दिए जा रहे हैं। आइए, इस पाठ को एक बार पढ़ लेते हैं।

13.1 मूल पाठ

सुभद्रा कुमारी चौहान

चित्र 13.1: सुभद्राकुमारी चौहान

हमारे शैशवकालीन अतीत और प्रत्यक्ष वर्तमान के बीच में समय–प्रवाह का पाट ज्यों–ज्यों चौड़ा होता जाता है त्यों–त्यों हमारी स्मृति में अनजाने ही एक परिवर्तन लक्षित होने लगता है, शैशव की चित्रशाला के जिन चित्रों से हमारा रागात्मक संबंध गहरा होता है, उनकी रेखाएँ और रंग इतने स्पष्ट और चटकीले होते चलते हैं कि हम वार्धक्य की धुँधली आँखों से भी उन्हें प्रत्यक्ष देखते रह सकते हैं। पर जिनसे ऐसा संबंध नहीं होता वे फीके होते–होते इस प्रकार स्मृति से धुल जाते हैं कि दूसरों के स्मरण दिलाने पर भी उनका स्मरण कठिन हो जाता है।

मेरे अतीत की चित्रशाला में बहिन सुभद्रा से मेरे सख्य का चित्र, पहली कोटि में रखा जा सकता है, क्योंकि इतने वर्षों के उपरांत भी उसकी सब रंग–रेखाएँ अपनी सजीवता में स्पष्ट हैं।

एक सातवीं कक्षा की विद्यार्थिनी, एक पाँचवी कक्षा की विद्यार्थिनी से प्रश्न करती है, 'क्या तुम कविता लिखती हो?' दूसरी ने सिर हिलाकर ऐसी अस्वीकृति दी जिसमें हाँ और नहीं तरल हो कर एक हो गए थे। प्रश्न करने वाली ने इस स्वीकृति–अस्वीकृति की संधि से खीझ कर कहा,

'तुम्हारी क्लास की लड़कियाँ तो कहती हैं कि तुम गणित की कापी तक में कविता लिखती हो। दिखाओ अपनी कापी' और उत्तर की प्रतीक्षा में समय नष्ट न कर वह कविता लिखने की अपराधिनी को हाथ पकड़ कर खींचती हुई उसके कमरे में डेस्क के पास ले गई। नित्य व्यवहार में आने वाली गणित की कापी को छिपाना संभव नहीं था। अत: उसके साथ अंकों के बीच में अनधिकार सिकुड़ कर बैठी हुई तुकबंदियाँ अनायास पकड़ में आ गईं। इतना दण्ड ही पर्याप्त था। पर इससे संतुष्ट न होकर अपराध की अन्वेषिका ने एक हाथ में चित्र-विचित्र कापी थामी और दूसरे में अभियुक्ता की उँगलियाँ कस कर पकड़ी और वह हर कमरे में जा-जा कर इस अपराध की सार्वजनिक घोषणा करने लगी।

उस युग में कविता-रचना अपराधों की सूची में थी। कोई तुक जोड़ता है, यह सुनकर ही सुनने वालों की मुख की रेखाएँ इस प्रकार वक्रकुंचित हो जाती थीं, मानों उन्हें कोई कटु-तिक्त पेय पीना पड़ा हो।

ऐसी स्थिति में गणित जैसे गंभीर महत्त्वपूर्ण विषय के लिए निश्चित पृष्ठों पर तुक जोड़ना अक्षम्य अपराध था। इससे बढ़कर कागज का दुरुपयोग और विषय का निरादर और हो ही क्या सकता था। फिर जिस विद्यार्थी की बुद्धि अंकों के बीहड़ वन में पग-पग उलझती है उससे तो गुरु यही आशा रखता है कि वह हर साँस को अंक जोड़ने-घटाने की क्रिया बना रहा होगा। यदि वह सारी धरती को कागज बनाकर प्रश्नों को हल करने के प्रयास से नहीं भर सकता तो उसे कम से कम सौ-पचास पृष्ठ, सही न सही तो गलत प्रश्न-उत्तरों से भर लेना चाहिए। तब उसकी भ्रांत बुद्धि को प्रकृतिदत्त मान कर उसे क्षमादान का पात्र समझा जा सकता है, पर जो तुकबंदी जैसे कार्य से बुद्धि की धार गोंठिल कर रहा है वह तो पूरी शक्ति से दुर्बल होने की मूर्खता करता है, अत: उसके लिए न सहानुभूति का प्रश्न उठता है न क्षमा का।

मैंने होंठ भींच कर न रोने का जो निश्चय किया वह न टूटा तो न टूटा। अंत में मुझे शक्ति-परीक्षा में उत्तीर्ण देख सुभद्रा जी ने उत्फुल्ल भाव से कहा, 'अच्छा तो लिखती हो। भला सवाल हल करने में एक दो तीन जोड़ लेना कोई बड़ा काम है!' मेरी चोट अभी दु:ख रही थी, परंतु उनकी सहानुभूति और आत्मीय भाव का परिचय पाकर आँखे सजल हो आईं।' तुमने सबसे क्यों बताया? का सहास उत्तर मिला 'हमें भी तो यह सहना पड़ता है। अच्छा हुआ अब दो साथी हो गए।'

बहिन सुभद्रा का चित्र बनाना कुछ सहज नहीं है क्योंकि चित्र की साधारण जान पड़ने वाली प्रत्येक रेखा के लिए उनकी भावना की दीप्ति 'संचारिणी दीपशिखेव 'बनकर उसे असाधारण कर देती है। एक-एक कर के देखने से कुछ भी विशेष नहीं कहा जाएगा, परंतु सबकी समग्रता में जो उद्भासित होता था, उसे दृष्टि से अधिक हृदय ग्रहण करता था।

मझोले कद तथा उस समय की कृश देहयष्टि में ऐसा कुछ उग्र या रौद्र नहीं था जिसकी हम वीरगीतों की कवयित्री में कल्पना करते हैं। कुछ गोल मुख, चौड़ा माथा, सरल भृकुटियाँ, बड़ी और भावस्नात आँखे, छोटी सुडौल नासिका, हँसी को जमा कर गढ़े हुए से ओठ और दृढ़ता सूचक ठुड्डी... सब कुछ मिलाकर एक अत्यंत निश्छल, कोमल, उदार व्यक्तित्व वाली भारतीय नारी का ही पता देते थे। पर उस व्यक्तित्व के भीतर जो बिजली का छंद था उसका पता तो

शब्दार्थ

कठिन शब्दों के अर्थ:

शैशवकालीन-बचपन का समय
अतीत-बीता हुआ समय
प्रत्यक्ष-समक्ष
सख्य- मित्र
धुँधली-अस्पष्ट
विद्यार्थिनी-शिक्षा ग्रहण करने वाली
स्वीकृति-सहमति
कटु-तिक्त- कड़वा-तीखा
अन्वेषिका- खोज करने वाली
कृश- कमजोर
भावस्नात- भावपूर्ण
तृप्ति-संतुष्टि
संक्रामक-छूत फैलाने वाला
अडिग-पथ से न डिगने वाला
सन्नद्ध- तैयार
प्राप्य-मिलने योग्य
कारागार-जेल
विस्मय-आश्चर्य
अनुकूल- माफिक
हीनता- हीन भावना
ग्रंथि- गांठ

टिप्पणी

तब मिलता था, जब उनके और उनके निश्चित लक्ष्य के बीच में कोई बाधा आ उपस्थित होती थी। 'मैंने हँसना सीखा है मैं नहीं जानती रोना' कहने वाली की हँसी निश्चय ही असाधारण थी। माता की गोद में दूध पीता बालक जब अचानक हँस पड़ता है, तब उसकी दूध से धुली हँसी में जैसी निश्चिंत तृप्ति और सरल विश्वास रहता है, बहुत कुछ वैसा ही भाव सुभद्रा जी की हँसी में मिलता था। वह संक्रामक भी कम नहीं थी क्योंकि दूसरे भी उनके सामने बात करने से अधिक हंसने को महत्त्व देने लगते थे।

वे अपने बचपन की एक घटना सुनाती थीं। कृष्ण और गोपियों की कथा सुनकर एक दिन बालिका सुभद्रा ने निश्चय किया कि वह गोपी बनकर ग्वालों के साथ कृष्ण को ढूँढ़ने जायेगी।

दूसरे दिन वह लकुटी लेकर गायों और ग्वालों के झुंड के साथ कीकर और बबूल से भरे जंगल में पहुँच गई। गोधूली वेला में चरवाहे और गाएँ तो घर की ओर लौट गए,पर गोपी बनने की साधवाली बालिका कृष्ण को खोजती ही रह गई। उसके पैरों में काँटे चुभ गए, कँटीली झाड़ियों में कपड़े उलझकर फट गए, प्यास से कंठ सूख गया और पसीने पर धूल की पर्त जम गई, पर वह धुनवाली बालिका लौटने को प्रस्तुत नहीं हुई। रात होते देख घरवालों ने उन्हें खोजना आरंभ किया और ग्वालों से पूछते-पूछते अँधेरे करील-वन में उन्हें पाया।

अपने निश्चित लक्ष्य-पथ पर अडिग रहना और सब कुछ हँसते-हँसते सहना उनका स्वभावजात गुण था। क्रास्थवेट गर्ल्स कालेज में जब वे आठवीं कक्षा की विद्यार्थिनी थीं, तभी उनका विवाह हुआ और उन्होंने पतिगृह के लिए प्रस्थान किया। स्वतंत्रता के युद्ध के लिए सन्नद्ध सेनानी पति को वे विवाह से पहले देख भी चुकी थीं और उनके विचारों से भी परिचित थीं। उनसे यह छिपा नहीं था कि नव-वधू के रूप में उनका जो प्राप्य है उसे देने का न पति को अवकाश है न लेने का उन्हें। वस्तुत: जिस विवाह में मंगल-कंकण ही रण-कंकण बन गया, उसकी गृहस्थी भी कारागार में ही बसाई जा सकती थी। और उन्होंने बसाई भी वहीं पर इस साधना की मर्मव्यथा को वही नारी जान सकती है जिसने अपनी देहली पर खड़े होकर भीतर के मंगल चौक पर रखे मंगल कलश तुलसी चौरे पर जलते हुए घी के दीपक और हर कोने से स्नेहभरी बाँहें फैलाए हुए अपने घर पर दृष्टि डाली हो और फिर बाहर के अंधकार, आँधी और तूफान को तौला हो और तब घर की सुरक्षित सीमा पार कर, उसके सुंदर मधुर आह्वान की ओर से पीठ फेर कर अँधेरे रास्ते पर काँटो से उलझती चल पड़ी हो। उन्होंने हँसते-हँसते ही बताया था कि जेल जाते समय उन्हें इतनी अधिक फूल-मालाएँ मिल जाती थीं कि वे उन्हीं का तकिया बना लेती थीं और लेटकर पुष्प-शैय्या के सुख का अनुभव करती थीं।

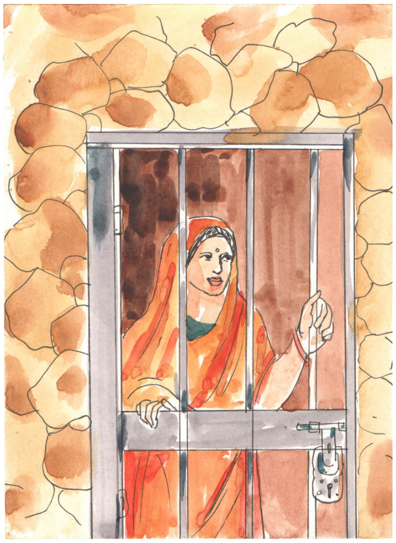

चित्र 13.2: जेल का दृश्य

एक बार भाई लक्ष्मणसिंह जी ने मुझसे सुभद्राजी की स्नेहभरी शिकायत की। 'इन्होंने मुझसे कभी कुछ नही माँगा।' सुभद्रा जी ने अर्थ भरी हँसी में उत्तर दिया था इन्होंने पहले ही दिन मुझसे

शब्दार्थ

मानसिक-बौद्धिक
तन्मयता- तल्लीनता
विशेषज्ञ- जानकार, माहिर
मध्यस्थ-बिचौलिया
एकांत- अकेले में
अनाहूत- बिन बुलाए, अनिमंत्रित
अनुदार- कठोर, संकीर्ण
सृजनशीला-रचनात्मक
क्षत-विक्षत- नष्ट, घायल
ममतामयी- माता का बच्चे के प्रति स्नेह
वात्सल्य- प्रेम, स्नेह (संतान के प्रति)
क्षणिक-क्षण भर स्थिर रहने वाला, अस्थायी
उत्तेजना- भावावेश
अंतरव्यापिनी- अंदर फैला हुआ
तारतम्य- क्रम या सिलसिला
देशकालानुसार- स्थान और समय के अनुरूप
नियत-तय
अकरणीय- न करने योग्य
संकीर्ण- संकरा या तंग
अभाव- कमी

कुछ माँगने का अधिकार मांग लिया था महादेवी यह ऐसे ही होशियार हैं, माँगती तो वचन-भंग का दोष मेरे सर पड़ता, नहीं माँगा तो इनके अहंकार को ठेस लगती है।''

घर और कारागार के बीच में जीवन का जो क्रम विवाह के साथ आरंभ हुआ था वह अंत तक चलता ही रहा। छोटे बच्चों को जेल के भीतर और बड़ों को बाहर रखकर वे अपने मन को कैसे संयत रख पाती थीं यह सोचकर विस्मय होता है। कारागार में जो संपन्न परिवारों की सत्याग्रही माताएँ थीं, उनके बच्चों के लिए बाहर से न जाने कितना मेवा-मिष्ठान आता रहता था। सुभद्रा जी की आर्थिक परिस्थितियों में जेल-जीवन का ए और सी क्लास समान ही था। एक बार जब भूख से रोती बालिका को बहलाने के लिए कुछ नहीं मिल सका तब उन्होंने अरहर दलनेवाली महिला-कैदियों से थोड़ी-सी अरहर की दाल ली और उसे तवे पर भून कर बालिका को खिलाया। घर आने पर भी उनकी दशा द्रोणाचार्य जैसी हो जाती थी, जिन्हें दूध के लिए मचलते हुए बालक अश्वत्थामा को चावल के घोल से सफेद पानी दे कर बहलाना पड़ा था। पर इन परीक्षाओं से उनका मन न कभी हारा न उसने परिस्थितियों को अनुकूल बनाने के लिए कोई समझौता स्वीकार किया।

उनके मानसिक जगत में हीनता की किसी ग्रंथि के लिए कभी अवकाश नहीं रहा, घर से बाहर बैठ कर वे कोमल और ओज भरे छंद लिखने वाले हाथों से गोबर के कंडे पाथती थीं। घर के भीतर तन्मयता से आँगन लीपती थीं, बर्तन माँजती थीं। आँगन लीपने की कला में मेरा भी कुछ प्रवेश था, अतः हम दोनों प्रतियोगिता के लिए आँगन के भिन्न-भिन्न छोरों से लीपना आरंभ करते थे। लीपने में हमें अपने से बड़ा कोई विशेषज्ञ मध्यस्थ नहीं प्राप्त हो सका, अतः प्रतियोगिता का परिणाम सदा अघोषित ही रह गया पर आज मैं स्वीकार करती हूँ कि ऐसे कार्य में एकांत तन्मयता केवल उसी गृहणी में संभव है जो अपने घर की धरती को समस्त हृदय से चाहती हो और सुभद्रा ऐसी ही गृहणी थीं। उस छोटे से अधबने घर की छोटी सी सीमा में उन्होंने क्या नहीं संगृहीत किया। छोटे-बड़े पेड़, रंग-बिरंगे फूलों के पौधों की क्यारियाँ, ऋतु के अनुसार तरकारियाँ, गाय, बच्छे आदि-आदि बड़ी गृहस्थी की सब सज्जा वहाँ विराट दृश्य के छोटे चित्र के समान उपस्थित थी। अपने इस आकार में छोटे साम्राज्य को उन्होंने अपनी ममता के जादू से इतना विशाल बना रखा था कि उसके द्वार पर न कोई अनाहूत रहा और न निराश लौटा। जिन संघर्षों के बीच से उन्हें मार्ग वे किसी व्यक्ति को अनुदार और कटु बनाने में समर्थ थे, पर सुभद्रा के भीतर बैठी सृजनशीला नारी जानती थी कि काँटों का स्थान जब चरणों के नीचे रहता है तभी वे टूट कर दूसरों को बेधने की शक्ति खोते हैं। परीक्षाएँ जब मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य को क्षत-विक्षत कर डालती हैं तब उनमें उत्तीर्ण होने-न-होने का कोई मूल्य नहीं रह जाता।

नारी के हृदय में जो गंभीरता ममता-सजल वीर-भाव उत्पन्न होता है वह पुरुष के उग्र शौर्य से अधिक उदात्त और दिव्य रहता है। पुरुष अपने व्यक्तिगत या समूहगत रागद्वेष के लिए भी वीर धर्म अपना सकता है और अहंकार की तृप्ति-मात्र के लिए भी। पर नारी अपने सृजन की बाधाएँ दूर करने के लिए या अपनी कल्याणी सृष्टि की रक्षा के लिए ही रूद्र बनती है। अतः उसकी वीरता के समकक्ष रखने योग्य प्रेरणाएँ संसार के कोश में कम हैं। मातृशक्ति का दिव्य रक्षक उद्धारक रूप होने के कारण ही भीमाकृति चंडी, वत्सला अम्बा भी है। जो हिंसात्मक पाशविक शक्तियों को चरणों के नीचे दबाकर अपनी सृष्टि के मंगल की साधना करती है।

शब्दार्थ

उग्रता- भीषण या भयानक होने का भाव
विश्ववंद्य- संसार में वंदनीय
क्षुब्ध-नाराज
औचित्य- उचित होने का भाव
त्रुटियां- गलतियाँ -
पार्थिव- काया, देह या पृथ्वी से उत्पन्न
नीलम-फलक-
चित्रशाला-चित्र बनाने या लगाने का स्थान
उत्फुल्ल-खिला हुआ
उद्भासित-प्रकाशित या चमकता हुआ
तृप्ति-संतुष्ट होने का भाव
संक्रामक-छूत फैलाने वाला
अनुगामिनी- पीछे चलने वाली
उल्लंघन-अवज्ञा करना
अवशेष-बचा हुआ या शेष भाग
अर्धांगिनी-पत्नी
पाशविक- पशुवत आचरण करने वाला
मर्मव्यथा- मनस्ताप
उद्धारक- उद्धार या सहायता करने वाला

शब्दार्थ

वार्धक्य - वृद्धावस्था
स्मृति - यादें
अन्वेषिका - शोध करने वाली
अभियुक्त - मुलज़िम, जिस पर आरोप लगा हो
वक्र-टेढ़ा, कुटिल
प्रकृतिदत्त- सहज स्वाभाविक गुण, कुदरत द्वारा प्राप्त

सुभद्रा में जो ममतामयी माँ थी, उसकी वीरता का उत्स भी वात्सल्य ही कहा जा सकता है। न उनका जीवन किसी क्षणिक उत्तेजना से संचालित हुआ न उनकी ओज भरी कविता वीर-रस की घिसी-पिटी लीक पर चली। उनके जीवन में जो एक निरंतर निखरता हुआ कर्म का तारतम्य है वह ऐसी अंतरव्यापिनी निष्ठा से जुड़ा हुआ है जो क्षणिक उत्तेजना का दान नहीं मानी जा सकती। इसी से जहाँ दूसरों को यात्रा का अंत दिखाई दिया वहीं उन्हें नई मंजिल का बोध हुआ। थक कर बैठने वाला अपने न चलने की सफाई खोजते-खोजते लक्ष्य पा लेने की कल्पना कर सकता है, पर चलने वाले को इसका अवकाश कहाँ!

जीवन के प्रति ममता भरा विश्वास ही उनके काव्य का प्राण है:

> सुख भरे सुनहले बादल
> रहते हैं मुझको घेरे।
> विश्वास प्रेम साहस हैं
> जीवन के साथी मेरे।

मधुमक्षिका जैसे कमल से लेकर भटकटैया तक के रसाल से लेकर आक तक सब मधुर-तिक्त एकत्र करके उसे अपनी शक्ति से एक मधु बनाकर लौटाती है, बहुत कुछ वैसा ही आदान-प्रदान सुभद्रा जी का था। सभी कोमल-कठिन, सह्य-असह्य अनुभवों का परिपाक दूसरों के लिए एक ही होता था। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उनमें विवेचन की तीक्ष्ण दृष्टि का अभाव था। उनकी कहानियाँ प्रमाणित करती हैं कि उन्होंने जीवन और समाज की अनेक समस्याओं पर विचार किया और कभी अपने निष्कर्ष के साथ और कभी दूसरों के निष्कर्ष के लिए उन्हें बड़े चमत्कारिक ढंग से उपस्थित किया।

जब स्त्री का व्यक्तित्व उसके पति से स्वतंत्र नहीं माना जाता था तब वे कहती हैं, 'मनुष्य की आत्मा स्वतंत्र है। फिर चाहे वह स्त्री-शरीर के अंदर निवास करती हो चाहे पुरुष-शरीर के अंदर। इसी से पुरुष और स्त्री का अपना अपना व्यक्तित्व अलग रहता है।' जब समाज और परिवार की सत्ता के विरुद्ध कुछ कहना अधर्म माना जाता था, तब वे कहती हैं, 'समाज और परिवार व्यक्ति को बंधन में बाँधकर रखते हैं। ये बंधन देशकालानुसार बदलते रहते हैं और उन्हें बदलते रहना चाहिए वरना वे व्यक्तित्व के विकास में सहायता करने के बदले बाधा पहुँचाने लगते हैं। बंधन कितने ही अच्छे उद्देश्य से क्यों न नियत किए गए हों, हैं बंधन ही, और जहाँ बंधन है वहां असंतोष है तथा क्रांति है।

परंपरा का पालन ही जब स्त्री का परम कर्तव्य समझा जाता था तब वे उसे तोड़ने की भूमिका बाँधती हैं। 'चिर-परिचित रूढ़ियों और चिर-संचित विश्वासों को आघात पहुंचाने वाली हलचलों को हम देखना-सुनना नहीं चाहते। हम ऐसी हलचलों को अधर्म समझकर उनके प्रति आँख मींच लेना उचित समझते हैं, किंतु ऐसा करने से काम नहीं चलता। वह हलचल और क्रांति हमें बरबस झकझोरती है और बिना होश में लाए नहीं छोड़ती।'

अनेक समस्याओं की ओर उनकी दृष्टि इतनी पैनी है कि सहज भाव से कही सरल कहानी का अंत भी हमें झकझोर डालता है।

टिप्पणी

शब्दार्थ

गोंठिल - कुंठित करना
उत्फुल्ल - आनंदयुक्त
सजल - आंसू युक्त
उद्भासित - प्रकाशित
कृश देहयष्टि - कमजोर शारीरिक बनाव या कमजोर कद-काठी
संक्रामक- तेजी से फैलने वाला
तृप्ति- संतुष्टि
लकुटी- छड़ी, छोटा डंडा
मंगल-कंकण- शुभ, कल्याणकारी आभूषण
रण-कंकण - युद्ध का आभूषण
मर्मव्यथा- हृदय का भाव
पुष्प-शैय्या - फूलों की सेज
तन्मयता - लीन होना
मध्यस्थ - बीच का
अनाहूत - अनिमंत्रित
अनुदार - संकीर्ण
सृजनशीला - रचने वाली, बनाने वाली
क्षत-विक्षत - लहूलुहान, घायल
उदात्त - श्रेष्ठ, महान
उत्स - स्रोत
मधुमक्षिका - शहद की मक्खी
परिपाक - पूर्णविकास,
यथार्थवादिनी - सत्यानुयायी, सत्य बोलने वाली
अनुगामिनी - आज्ञाकारिणी, पीछे चलने वाली
अर्धांगिनी - पत्नी, सहधर्मिणी
महीयसी - उदार मन वाली, धरती के सामान सहन शक्ति वाली
क्षुब्ध - उद्विग्न, अशांत, क्षोभ युक्त
सहिष्णु - सहनशील, क्षमाशील
मूल्यांकन - समीक्षा, गुण-दोष विवेचन
श्यामल - साँवला, श्याम रंग वाला
उज्जवल - स्वच्छ, निर्मल, सफ़ेद

वे राजनीतिक जीवन में ही विद्रोहिणी नहीं रहीं, अपने पारिवारिक जीवन में भी उन्होंने अपने विद्रोह को सफलतापूर्वक उतार कर उसे सृजन का रूप दिया।

सुभद्रा जी के अध्ययन का क्रम असमय ही भंग हो जाने के कारण उन्हें विश्वविद्यालय की शिक्षा तो नहीं मिल सकी, पर अनुभव की पुस्तक से उन्होंने जो सीखा उसे उनकी प्रतिभा ने सर्वथा निजी विशेषता दे दी है।

भाषा, भाव, छंद की दृष्टि से नये 'झाँसी की रानी' जैसे वीरगीत तथा सरल स्पष्टता में मधुर प्रगीत युक्त यथार्थवादिनी मार्मिक कहानियां आदि उनकी मौलिक प्रतिभा के ही सृजन हैं।

ऐसी प्रतिभा व्यावहारिक जीवन को अछूता छोड़ देती तो आश्चर्य की बात होती।

पत्नी की अनुगामिनी, अर्धांगिनी आदि विशेषताओं को अस्वीकार कर उन्होंने भाई लक्ष्मण सिंह जी की पत्नी के रूप में ऐसा अभिन्न मित्र दिया जिसकी बुद्धि और शक्ति पर निर्भर रह कर अनुगमन किया जा सके।

अजगर की कुंडली के समान, स्त्री के व्यक्तित्त्व को कस कर चर-चर कर देने वाले अनेक सामाजिक बंधनों को तोड़ फेंकने में उनका जो प्रयास लगा होगा, उसका मूल्यांकन आज संभव नहीं है।

उस समय बच्चों के लालन-पालन में मनोविज्ञान को इतना महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं मिला था और प्राय: सभी माता-पिता बच्चों को शिष्टता सिखाने में स्वयं शिष्टता की सीमा तक पहुँच जाते थे। सुभद्रा जी का कवि-हृदय यह विधान कैसे स्वीकार कर सकता था! अत: उनके बच्चों को विकास का जो मुक्त वातावरण मिला उसे देखकर सब समझदार निराशा से सिर हिलाने लगे, पर जिस प्रकार यह सत्य है कि सुभद्रा जी ने अपने किसी बच्चे को उसकी इच्छा के विरुद्ध कुछ करने के लिए बाध्य नहीं किया। उसी प्रकार यह भी सत्य है कि किसी बच्चे ने ऐसा कोई कार्य नहीं किया जिससे उसकी महीयसी माँ को किंचित भी क्षुब्ध होने का कारण मिला हो। उनके वात्सल्य का विधान ही अलिखित और अटूट था। अपनी संतान के भविष्य को सुखमय बनाने के लिए उनके निकट कोई भी त्याग अकरणीय नहीं रहा। पुत्री के विवाह के विषय में तो उन्हें अपने परिवार से भी संघर्ष करना पड़ा।

उन्होंने एक क्षण के लिए भी इस असत्य को स्वीकार नहीं किया कि जातिवाद की संकीर्ण तुला पर ही वर की योग्यता तोली जा सकती है। इतना ही नहीं, जिस कन्यादान की प्रथा का सब मूक भाव से पालन करते आ रहे थे उसी के विरुद्ध उन्होंने घोषणा की, 'मैं कन्यादान नहीं करूंगी। क्या मनुष्य मनुष्य को दान करने का अधिकारी है? क्या विवाह के उपरांत मेरी बेटी मेरी नहीं रहेगी ?' उस समय तक किसी ने, और विशेषत: किसी स्त्री ने ऐसी विचित्र और परंपरा-विरुद्ध बात नही कही थी।

देश की जिस स्वतंत्रता के लिए उन्होंने जीवन के वासंती सपने अंगारों पर रख दिए थे, उसकी प्राप्ति के उपरांत भी जब उन्हें सब ओर अभाव और पीड़ा दिखायी दी तब उन्होंने अपने संघर्षकालीन साथियों से भी विद्रोह किया। उनकी उग्रता का अंतिम परिचय तो विश्ववंद्य बापू के अस्थिविसर्जन के दिन प्राप्त हुआ। वे कई सौ हरिजन महिलाओं के जुलूस के साथ-साथ सात मील पैदल चलकर नर्मदा किनारे पहुंची पर अन्य संपन्न परिवारों की सदस्याएं मोटरों पर

ही जा सकीं। जब अस्थिप्रवाह के उपरांत संयोजित सभा के घेरे में इन पैदल आने वालों को स्थान नहीं दिया गया तब सुभद्रा जी का क्षुब्ध हो जाना स्वाभाविक ही था। उनका क्षात्रधर्म तो किसी प्रकार की अन्याय के प्रति क्षमाशील हो नहीं सकता था। जब उन हरिजनों को उनका प्राप्य दिला सकीं तभी वे स्वयं सभा में सम्मिलित हुईं।

चित्र 13.3: स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेते हुए

सातवीं-और पाँचवी कक्षा की विद्यार्थिनियों के सख्य को सुभद्रा जी के सरल स्नेह ने ऐसी अमिट लक्ष्मण-रेखा से घेर कर सुरक्षित रखा कि समय उस पर कोई रेखा नहीं खींच सका। अपने भाई-बहनों में सबसे बड़ी होने के कारण मैं अनायास ही सब की देखरेख और चिंता की अधिकारिणी बन गई थी। परिवार में जो मुझसे बड़े थे उन्होंने भी मुझे ब्रह्मसूत्र की मोटी पोथी में आँख गड़ाये देखकर अपनी चिंता की परिधि से बाहर समझ लिया था। पर केवल सुभद्रा पर न मेरी मोटी पोथियों का प्रभाव पड़ा, न मेरी समझदारी का। अपने व्यक्तिगत संबंधों में हम कभी कुतूहली बाल-भाव से मुक्त नहीं हो सके। सुभद्रा के मेरे घर आने पर भक्तिन तक मुझपर रौब जमाने लगती थी। क्लास में पहुंचकर वह उनके आगमन की सूचना इतने ऊँचे स्वर में इस प्रकार देती कि मेरी स्थिति विचित्र हो जाती, ''ऊ सहोदरा विचरिअउ तो इनका देखे बरे आइ के अकेली सूने घर माँ बैठी हैं। अउर इनका किताबिन से फुरसत नाहिन बा.'' एम.ए. बी.ए. के विद्यार्थियों के सामने जब एक देहातिन बुढ़िया गुरु पर कर्त्तव्य-उल्लंघन का ऐसा आरोप लगाने लगे तो बेचारे गुरु की सारी प्रतिष्ठा किरकिरी हो सकती थी। पर इस अनाचार को रोकने का कोई उपाय नहीं था। सुभद्रा जी के सामने न भक्तिन को डांटना संभव था न उसके कथन की उपेक्षा करना। बंगले में आकर देखती कि सुभद्रा जी रसोई-घर में या बरामदे में भानमती का पिटारा खोले बैठी हैं और उनमें से अद्भुत वस्तुएं निकल रही हैं। छोटी-छोटी पत्थर या शीशे की प्यालियाँ, मिर्च का अचार, बासी पूरी, पेडे, रंगीन चकला-बेलन, चुटीली, नीली-सुनहली चूड़ियाँ आदि-आदि सब कुछ मेरे लिए आया है, इस पर कौन विश्वास करेगा! पर वह आत्मीय उपहार मेरे निमित्त ही आता था।

ऐसे भी अवसर आ जाते थे जब वे किसी कवि-सम्मलेन में आते-जाते प्रयाग उतर नहीं पाती थीं और मुझे स्टेशन जाकर ही उनसे मिलना पड़ता था। ऐसी कुछ क्षणों की भेट में भी एक दृश्य की अनेक आवृत्तियाँ होती ही रहती थीं। वे अपने थैले से दो चमकीली चूड़ियाँ निकालकर हँसती हुई पूंछती, ''पसंद हैं? मैंने दो तुम्हारे लिए खरीदी थीं। तुम पहनने में तोड़ डालोगी। लाओ अपना हाथ, मैं पहना देती हूँ।'' पहन लेने पर वे बच्चों के समान प्रसन्न हो उठतीं।

हम दोनों जब साथ रहती थीं तब बात एक मिनिट और हँसी पाँच मिनिट का अनुपात रहता था।

उसी से प्राय: किसी सभा-समिति में जाने से पहले न हँसने का निर्णय करना पड़ता था। एक दूसरे की ओर बिना देखे गंभीर भाव से बैठे रहने की प्रतिज्ञा करके भी वहाँ पहुंचते ही एक न एक वस्तु या दृश्य सुभद्रा के कुतूहली मन को आकर्षित कर लेता और मुझे दिखाने के लिए वे चिकोटी तक काटने से नहीं चूकतीं। तब हमारी शोभा-सदस्यता की जो स्थिति हो जाती थी, उसका अनुमान सहज है।

अनेक कवि सम्मेलनों में हमने साथ भाग लिया, पर जिस दिन मैंने अपने न जाने का निर्णय और उसका औचित्य उन्हें बता दिया उस दिन से अंत तक कभी उन्होंने मेरे निश्चय के विरुद्ध कोई आग्रह नहीं किया। आर्थिक स्थितियां उन्हें ऐसे आमंतरण स्वीकार करने के लिए विवश कर देती थीं, परंतु मेरा प्रश्न उठते ही वे रख देतीं थीं, 'मैं तो विवशता से जाती हूँ, पर महादेवी नहीं जाएगी, नहीं जाएगी।'

साहित्य-जगत में आज जिस सीमा तक व्यक्तिगत स्पर्धा इर्ष्या-द्वेष है, उस सीमा तक तब नहीं था, यह सत्य है।

पर एक दूसरे के साहित्य-चरित्र-स्वाभाव संबंधी निंदा-पुराण तो सब युगों में नानी की कथा के समान लोकप्रियता पा लेता है। अपने किसी भी परिचित-अपरिचित साहित्य-साथी की त्रुटियों के प्रति सहिष्णु रहना और उसके गुणों के मूल्यांकन में उदारता से काम लेना सुभद्रा जी की निजी विशेषता थी। अपने को बड़ा बनाने के लिए दूसरों को छोटा प्रमाणित करने की दुर्बलता उनमें असंभव थी।

वसंत पंचमी को पुष्पाभरण, आलोकवसना धरती की छवि आँखों में भरकर सुभद्रा ने विदा ली। उनके लिए किसी अन्य विदा की कल्पना ही कठिन थी।

एक बार बात करते-करते मृत्यु की चर्चा चल पड़ी थी। मैंने कहा, ''मुझे तो उस लहर की सी मृत्यु चाहिए जो तट पर दूर तक आकर चुपचाप समुद्र में लौट कर समुद्र बन जाती है।''

सुभद्रा बोली, ''मेरे मन में तो मरने के बाद भी धरती छोड़ने की कल्पना नहीं है, मैं चाहती हूँ मेरी एक समाधि हो, जिसके चारो ओर नित्य मेला लगता रहे, बच्चे खेलते रहें, स्त्रियां गाती रहें और कोलाहल होता रहे। अब बताओ तुम्हारी नामधाम रहित लहर से यह आनंद अच्छा है या नहीं।''

उस दिन जब उनके पार्थिव अवशेष को त्रिवेणी ने अपने श्यामल-उज्जवल अंचल में समेट लिया तब नीलम-फलक पर श्वेत चंदन से बने उस चित्र की रेखाओं में बहुत वर्षो पहले देखा एक किशोर-मुख मुस्कराता जान पड़ा.

'यहीं कहीं पर बिखर गई वह

छिन्न विजय माला सी !

13.2 आइए समझें

अंश-1

'हमारे शैशवकालीन ....महत्त्व देने लगते थे'

आइए, इस पाठ के पहले अंश को ध्यानपूर्वक पढ़ लें। इस अंश में मुख्य रूप से तीन बातें महत्त्वपूर्ण हैं।

प्रसंग: इस गद्यांश में लेखिका और सुभद्रा कुमारी चौहान के स्नेह-संबंध का वर्णन किया गया है। हमें जीवन में अनेक लोग मिलते हैं, उनमें से किसी का व्यक्तित्त्व, उनका जीवन-संघर्ष, स्नेह संबंध हमें बहुत प्रभावित और आकर्षित करता है और वे हमें हमेशा के लिए याद रह जाते हैं। उस संबंध की रंग-रेखाएँ बहुत समय बीतने के बाद भी यादों के रूप में स्पष्ट रहती हैं। महादेवी वर्मा और सुभद्रा कुमारी चौहान का आत्मीय संबंध इसी श्रेणी का है।

व्याख्या: हमारा समाज आर्थिक रूप से उपयोगी और सफल व्यक्ति को जीवन का एकमात्र आदर्श मानकर चलता है अर्थात वह विषय अच्छा है जो रोजगार दिलाये, जीवन को आर्थिक रूप से सफल बनाये। उसी में विद्यार्थी और माता-पिता अपने कर्त्तव्य की सार्थकता मानते हैं। इस चलन में अनेक बार विद्यार्थी की प्रतिभा को अनदेखा कर दिया जाता है। महादेवी ने स्पष्ट लिखा है कि उस समय गणित जैसे विषय में मन लगाने की अपेक्षा कविता लिखने को कितना मूर्खतापूर्ण काम समझा जाता था। उन्होंने लिखा है- "...जो तुकबंदी जैसे कार्य से बुद्धि की धार गोंठिल कर रहा है वह तो पूरी शक्ति से दुर्बल होने की मूर्खता करता है। अत: उसके लिए न सहानुभूति का प्रश्न उठता है न क्षमा का।" किन्तु इसके लिए महादेवी को सुभद्रा कुमारी से न सिर्फ प्रोत्साहन मिलता है अपितु आगे चलकर दोनों पथ के साथी भी बनते हैं और कविता के क्षेत्र में अपने युग का प्रतिनिधित्त्व भी करते हैं।

रूप और गुण का शब्द-चित्र - रेखाचित्र विधा में शब्दों के माध्यम से सम्बंधित व्यक्ति के बाह्य रूप और उसके गुण का वर्णन किया जाता है। यादें उस शब्द-चित्र को जीवंतता प्रदान करती हैं। प्रस्तुत संस्मरणात्मक रेखाचित्र में भी इसी शैली का अनुसरण किया गया है। लेखिका ने सुभद्रा कुमारी को असाधारण निश्चय वाला व्यक्तित्त्व बताते हुए उनके बाह्य रूप और आंतरिक गुण का वर्णन करते हुए लिखा है-" मझोले कद तथा उस समय की देहयष्टि में ऐसा कुछ उग्र या रौद्र नहीं था जिसकी हम वीरगीतों की कवयित्री में कल्पना करते हैं. कुछ गोल मुख, चौड़ा माथा, सरल भृकुटियाँ, बड़ी और भावस्नात आँखे, छोटी सुडौल नासिका, हंसी को जमा कर गढ़े हुए से ओठ और दृढ़ता सूचक ठुड्डी ... सब कुल मिलाकर एक अत्यंत निश्छल, कोमल, उदार व्यक्तित्त्व वाली भारतीय नारी का ही पता देते थे। पर उस व्यक्तित्त्व के भीतर जो बिजली का छंद था उसका पता तो तब मिलता था, जब उनके और उनके निश्चित लक्ष्य के भीतर में कोई बाधा आ उपस्थित होती थी।"

रेखाचित्र क्या है?

- रेखाचित्र में कम से कम शब्दों में किसी वस्तु, व्यक्ति का एक शब्दचित्र बनाया जाता है, जिससे आँखों के सामने उस वस्तु, व्यक्ति का पूरा स्वरूप उपस्थित हो जाता है।
- इसमें शब्दों के माध्यम से चित्र प्रस्तुत किया जाता है।
- यह अतीत से जुड़ा हो सकता है और वर्तमान से भी। लेखक द्वारा जिस पर रेखाचित्र लिखा जा रहा हो, उसकी बारीकी से जाँच-परख की जाती है।
- लेखक का व्यक्तित्त्व प्राय: अनुपस्थित रहता है। जबकि संस्मरण में लेखक की अनिवार्य उपस्थिति रहती है। क्योंकि संस्मरण स्मृति पर आधारित होता है।

टिप्पणी :

1. पाठ को पढ़ते समय आपके मन में यह जरूर आया होगा कि सुभद्रा कुमारी चौहान कविता लिखने को इतना महत्त्व क्यों देती हैं? दरअसल कविता लिखना एक रचनात्मक कर्म है, जो एक संवेदनशील प्राणी ही कर सकता है। समाज की कोई समस्या, कोई जरूरी बात, जो समाज द्वारा प्राय: नजरअंदाज कर दी जाती है, उसे एक रचनाकार की लेखनी से स्वर मिलता है। किसी रचना का सृजन कोई सामान्य बात नहीं है। सृजनात्मक क्षमता के बिना अनुभव को अभिव्यक्ति में बदलना मुश्किल काम है, जो बहुत अध्ययन और चिन्तन की मांग करता है। इसलिए कविता लिखना महत्त्वपूर्ण और विशिष्ट काम है। अनेक रचनाएँ अपने युग का चित्र प्रस्तुत करती हैं।

2. लेखिका ने 'शैशवकालीन अतीत और प्रत्यक्ष वर्तमान' वाक्यांश का प्रयोग किया है। यादों के माध्यम से अतीत और वर्तमान प्राय: जुड़े होते हैं। अतीत के माध्यम से वर्तमान अधिक उपयोगी हो जाता है. पुरानी घटी घटनाएं, विचार, वर्तमान को नए संदर्भ प्रदान करते हैं और भविष्य के लिए नए मूल्यों और आदर्शों को गढ़ते हैं। इसलिए लेखिका ने अतीत और वर्तमान को साथ-साथ देखा है।

3. कोई व्यक्ति किसी को व्यक्तिगत रुचि के आधार पर याद कर सकता है, किंतु रचनाकार की व्यक्तिगत रूचि प्राय: उद्देश्यपरक होती है। इसीलिए वह दूसरों के लिए भी महत्त्वपूर्ण होता है। महादेवी वर्मा ने प्रभावशाली ढंग से सुभद्रा कुमारी के जीवन, व्यक्तित्त्व और संघर्ष का वर्णन किया है। जो हमारे लिए अनुकरणीय है।

4. 'अनधिकार सिकुड़ कर बैठी हुई' वाक्यांश में मानवीकरण अलंकार का प्रयोग किया है। 'चित्र-विचित्र कॉपी' और 'क्या तुम कविता लिखती हो?' 'दिखाओ अपनी कॉपी' जैसे वाक्यांश के माध्यम से भाषा को आत्मीय बनाने और आम बोलचाल के करीब लाने का काम किया गया है। 'सिर हिलाकर ऐसी अस्वीकृति दी जिसमें हाँ और नहीं तरल होकर एक हो गए थे' जैसे वाक्य-प्रयोग मन के जटिल भाव को अभिव्यक्त करने में सफल रहें हैं।

टिप्पणी

क्रियाकलाप 13.1

प्रत्येक मनुष्य के जीवन में प्राय: ऐसे व्यक्ति होते हैं, जो अपने स्वभाव और काम के माध्यम से अपना अमिट प्रभाव छोड़ते हैं। आपके जीवन में भी कोई न कोई ऐसा व्यक्ति अवश्य होगा। वह माँ, पिता, भाई, बहन, मित्र, अध्यापक, डाक्टर या अन्य कोई हो सकता है। आप ऐसे व्यक्ति की किन्ही दस विशेषताओं की सूची बनाएँ जिसने आपको अत्यधिक प्रभावित किया हो।

पाठगत प्रश्न 13.1

1. महादेवी वर्मा और सुभद्रा कुमारी के संबंध को किस कोटि में रखा जा सकता है?

   (क) रागात्मक मित्र भाव का संबंध   (ख) फीके संबंध

   (ग) पारिवारिक संबंध   (घ) स्वतंत्रता सेनानी का संबंध

2. महादेवी कविता लिखने की बात क्यों नहीं स्वीकार करना चाहती थीं?

   (क) कविता लिखना अक्षम्य अपराध था

   (ख) सुभद्रा कुमारी से परिचय नहीं था

   (ग) गलत और गैरजरूरी बात मानी जाती थी

   (घ) क्योंकि गणित की कापी में कविता लिखी थी

अंश-2

'वे अपने बचपन की .... चमत्कारिक ढंग से उपस्थित किया'।

आइए, इस अंश की महत्त्वपूर्ण बातों को समझते हैं जिसमें सुभद्रा कुमारी चौहान के व्यक्तित्त्व के अनेक गुणों का वर्णन है।

दृढ़-इच्छाशक्ति - सुभद्रा कुमारी चौहान बचपन से ही दृढ इच्छाशक्ति वाली थीं। अपने लक्ष्य-पथ पर निश्चय के साथ आगे बढ़ना और हंसते-हंसते सब कुछ सहना उनके स्वभाव का प्रमुख गुण था। इसका उदाहरण उनकी बचपन की कहानी से मिलता है। कृष्ण को ढूंढने ग्वालों के साथ जंगल में गई बालिका सुभद्रा रात होने के बावजूद कृष्ण को ढूँढती रही। गोपी बनने की इच्छा लिए उन्हें यह भी याद नहीं रहा कि घर लौटना है। लेखिका ने उसका वर्णन करते हुए लिखा है- ''उसके पैरों में काँटे चुभ गए, कँटीली झाड़ियों में कपड़े उलझकर फट गए, प्यास से कंठ सूख गया और पसीने पर धूल की पर्त जम गई, पर वह धुन वाली बालिका लौटने को प्रस्तुत नहीं हुई।'' बाद में यही दृढ इच्छाशक्ति और लक्ष्य के प्रति निश्चय उन्हें स्वाधीनता आन्दोलन के प्रमुख हस्ताक्षर के रूप में स्थापित करती है।

राष्ट्रीय भावना – सुभद्रा कुमारी ने अपनी व्यक्तिगत आकांक्षाओं के बजाय राष्ट्र की आकांक्षाओं और जरुरत को महत्त्व दिया और नववधू के रूप में पति की भांति स्वतंत्रता आन्दोलन में शामिल हो गईं। अनेक बार जेल भी गईं। उन्होंने घर की सुरक्षित सीमा के बजाय अधिक मुश्किल और कठिन मार्ग अपनाया। अपने लक्ष्य पर विश्वास और दृढ निश्चय के कारण छोटे बच्चों के साथ जेल के अंदर होने पर भी उनका मन संयत और धैर्यवान बना रहा। राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन जिस बलिदान की मांग कर रहा था, सुभद्रा कुमारी उसके लिए सदैव तत्पर रहीं। कठिन से कठिन परिस्थिति में भी उनका मन न हारा न ही उसे अनुकूल बनाने के लिए उन्होंने कोई समझौता किया।

सरल और सहज जीवन – सुभद्रा कुमारी के मन में अपनी आर्थिक स्थिति को लेकर कोई दुख और हीन भावना नहीं थी। उन्हें जो मिला वह उससे संतुष्ट थीं। वह जिन हाथों से कोमल और ओज भरे छंद लिखती थीं, उन्हीं हाथों से गोबर के कंडे पाथती थीं, आँगन लीपती थीं। उनके छोटे से अधबने घर में पेड़, सब्जियां, गाय-बछड़े सब मौजूद थे, जिसे उन्होंने अपनी ममता के जादू से बाँध रखा था। अनेक अभावों और कष्ट में वह मुस्कुराती हुई पारिवारिक और राष्ट्रीय जिम्मेदारियों को निभाती रहीं।

जीवन के प्रति आस्थावान – जीवन के प्रति ममता भरा विश्वास ही उनके जीवन और रचनाओं का प्राण है, जिसे वह अपनी रचनाओं में और जीवन में बार-बार पाने का प्रयास करती रही हैं। अपने मीठे-कड़वे अनुभवों के माध्यम से दूसरों के जीवन में मधु घोलने का कार्य करती रहीं।

टिप्पणी :

इन विशेषताओं के साथ-साथ कुछ और पक्ष इस प्रकार हैं:-

1. अभाव और कष्ट व्यक्ति को तोड़ देते हैं। अनेक बार व्यक्ति अपनी परिस्थिति से हार कर समझौता कर लेता है और समझौते के माध्यम से परिस्थिति को अपने अनुकूल बनाने का प्रयास करता है। किन्तु विपरीत स्थिति में जो अपने लक्ष्य के लिए सर्वस्य त्याग की भावना से आगे बढ़ता है, वही लोगों के लिए उदाहरण बनता है। सुभद्रा कुमारी ने राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए अपने सुख और सुविधा का त्याग कर आन्दोलन का रास्ता चुना।

2. हीनता की भावना हमें मानसिक रूप से कमजोर बनाती है। हमें अनुदार और कटु बनाती है। हमारी रचनात्मकता को नष्ट करती है। इसके मूल में भी अभाव का ही भाव है। किन्तु जो मिला है, उसे पर्याप्त समझकर उसका सार्थक उपयोग करते हुए जो लोग आगे बढ़ने का प्रयास करते हैं, वह सदैव सार्थक जीवन जीते हैं।

3. सरल और प्रवाहमयी साहित्यिक भाषा का प्रयोग किया गया है। लकुटी, खटिया, तुलसी-चौरा जैसे देशज शब्द। अनाहूत, क्षणिक, रण-कंकण, उदात्त, वत्सला जैसे तत्सम शब्दों का प्रयोग किया गया है, तो गर्ल्स, कॉलेज, जेल-जीवन, ए और सी क्लास जैसे अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। तत्कालीन आम बोलचाल की भाषा की छाप सर्वत्र है।

क्रियाकलाप 13.2

स्त्री-पुरुष के संदर्भ में क्या व्यक्ति प्रदत्त है और क्या समाज द्वारा निर्मित है? 100 शब्दों में उत्तर दीजिए।

पाठगत प्रश्न 13.2

1. लेखिका ने नारी के वीर भाव को उदात्त इसलिए माना है, क्योंकि?

   (क) वह ममता सजल कल्याणी वीर भाव है

   (ख) व्यक्तिगत या समूहगत राग-द्वेष से युक्त होता है।

   (ग) अहंकार की तृप्ति मात्र होती है।

   (घ) वह चंडी और अम्बा का रूप मानी जाती है।

2. सुभद्रा कुमारी घर और कारागार के बीच संतुलन स्थापित करने में कैसे सफल हुई?

   (क) मानसिक हीन-भावना के कारण

   (ख) परिस्थितियों से समझौता करके

   (ग) अपनी आर्थिक स्थिति के कारण

   (घ) मानसिक धैर्य और दृढ़-निश्चय के द्वारा

3. सुभद्रा कुमारी ने अपने घर की छोटी सी सीमा में क्या-क्या संगृहीत किया था?

   (क) गोबर-कंडे

   (ख) रंग-बिरंगे फूल और तरकारियाँ

   (ग) गाय-बछड़े

   (घ) उपर्युक्त सभी

अंश - 3

जब स्त्री का व्यक्तित्त्व...स्वयं सभा में सम्मिलित हुई।

इस अंश में मुख्य रूप से उनके व्यक्तित्त्व के तीन पक्ष उल्लेखनीय हैं। आइए, समझते हैं।

उदार चेतना वाली - सुभद्रा कुमारी चौहान स्वतंत्र चेतना से युक्त थीं। उस समय जब स्त्री का व्यक्तित्त्व उसके पति से अलग नहीं माना जाता था, पति को केंद्र में रखकर ही उसका अस्तित्त्व परिभाषित किया जाता था, तब वे 'मनुष्य की आत्मा की स्वतंत्रता' की बात करती

थीं। उन्होंने कहा है– ''मनुष्य की आत्मा स्वतंत्र है। फिर चाहे वह स्त्री शरीर के अंदर निवास करती हो चाहे पुरुष शरीर के अंदर'' अर्थात स्त्री–पुरुष के बजाय उन्होंने मनुष्य और उसकी स्वतंत्रता को अपनी रचनाओं का केन्द्रीय विषय बनाया है। बंधन को उन्होंने असंतोष और क्रांति का कारण माना है, फिर चाहे वे कितने अच्छे उद्देश्य से क्यों न तय किए गए हों।

विचारों से आधुनिक – सुभद्रा कुमारी की कथनी और करनी में विशेष अंतर नहीं है। उनका विद्रोह महज सामाजिक–राजनीतिक गतिविधियों तक ही सीमित नहीं था, बल्कि पारिवारिक जीवन में भी उसका पालन किया। पुत्री के विवाह के अवसर पर परिवार के विरुद्ध जाकर अपनी जाति से अलग 'वर' को स्वीकार किया। जाति प्रथा की संकीर्ण परंपरा को अस्वीकार करते हुए उन्होंने मनुष्यता को महत्त्व दिया। यहाँ तक की कन्यादान की प्रथा का भी विरोध इस आधार पर किया कि मनुष्य मनुष्य के दान का अधिकारी कैसे हो सकता है– ''मैं कन्यादान नहीं करूंगी। क्या मनुष्य मनुष्य को दान करने का अधिकारी है? क्या विवाह के उपरांत मेरी बेटी मेरी नहीं रहेगी?'' उस समय इस तरह की विचित्र लगने वाली बात कोई नहीं करता था। स्त्रियों के लिए तो यह और भी मुश्किल काम था। किन्तु मनुष्यता के पक्ष में सुभद्रा कुमारी न सिर्फ ऐसा कहती हैं अपितु उसका अपने जीवन में अनुसरण भी करती हैं।

स्वाधीनता के प्रति नवीन दृष्टि – उन्होंने खुली आँखों से देश की स्वतंत्रता के सपने देखे थे। उसके लिए संघर्ष किया था। उनके लिए देश की स्वतंत्रता का अर्थ केवल अंग्रेजों की गुलामी से ही मुक्ति नहीं थी, अपितु देश के अंदर प्रचलित अनेक बुराइयों जैसे जातिवाद, ऊँच–नीच का भेदभाव, धार्मिक वैमनस्यता इत्यादि से भी मुक्ति थी। तभी सही मायनों में व्यक्ति और देश स्वतंत्र कहा जा सकता है। गाँधी जी के अस्थिविसर्जन के बाद संयोजित सभा में जब कई सौ हरिजन महिलाओं को शामिल होने के लिए मौका नहीं दिया गया तो उन्होंने इस अन्याय के विरोध में अपने साथियों के विरुद्ध ही संघर्ष छेड़ दिया और स्वयं तब उस सभा में सम्मिलित हुईं जब उन महिलाओं को उनका हक दिला सकीं। लेखिका ने सुभद्रा कुमारी के बारे में ठीक ही लिखा है कि उनके व्यक्तित्त्व और रचना में द्वैत नहीं था न ही उनकी रचना और जीवन में मनुष्यता, विश्वास, साहस, स्वतंत्रता आजीवन उनके मूल्य बने रहे।

टिप्पणी :

सुभद्रा कुमारी चौहान की ये अद्‌भुत विशेषताएं हमें आज भी महत्त्वपूर्ण संदेश देती हैं। आइए उनके जीवन के पक्षों को और विस्तार से पढ़ते हैं।

1. स्त्री–पुरुष में शारीरिक अलगाव व्यक्ति द्वारा निर्धारित है। किन्तु उनसे सम्बंधित नियम–कानून समाज द्वारा बनाये जाते हैं। अतः उन नियमों–कानूनों की समय–समय पर जाँच आवश्यक है। अगर कोई नियम स्त्रियों की स्वतंत्रता और उनके व्यक्तित्त्व के विकास में बाधक हो तो उस पर बात होनी चाहिए। सवाल उठाया जाना चाहिए और उसे परिवर्तित भी किया जाना चाहिए। मनुष्य के सारे हक पुरुषों की तरह स्त्रियों को भी मिलने चाहिए।

2. सुभद्रा कुमारी कहती हैं कि बंधन कितने अच्छे उद्देश्य से क्यों न लगाये गए हों, हैं बंधन ही और जहाँ बंधन है वहां असंतोष है तथा क्रांति है। किन्तु यह समझना जरूरी है कि व्यवस्था को बनाये रखने के लिए अनेक बार बंधन जरूरी भी होते हैं। किन्तु वे

तार्किक और मानवीय होने चाहिए। जो अमानवीय हैं, शोषण का यंत्र हैं, उनके विरुद्ध संघर्ष करना चाहिए। सुभद्रा कुमारी का संघर्ष ऐसे ही अमानवीय नियमों से है।

3. परंपरा का अर्थ है सौंपना। वह जरुरी बात जो एक पीढ़ी आने वाली पीढ़ी को सौंपती है। किन्तु अनेक बार कुछ रूढ़ियाँ परंपरा के नाम पर प्रचलित हो जाती हैं और समाज उनके अनुसार ही व्यवहार करने लगता है। किन्तु ऐसी रूढ़ियों को अधर्म समझना और उससे संघर्ष करना आवश्यक है। वर की जाति देखना, ऊँच-नीच का भेद-भाव इत्यादि ऐसी ही सामाजिक कमजोरियां हैं।

4. महादेवी वर्मा अनेक बार दो विपरीत बातों को आमने-सामने रखकर संदर्भ को और रोचक बनाती हैं। जैसे पत्नी की अनुगामिनी, अर्धांगिनी आदि विशेषताओं को अस्वीकार कर अपने पति लक्ष्मण सिंह जी को अभिन्न मित्र के रूप में श्रेष्ठ स्थान दिया। इसी प्रकार गद्य में लय का प्रयोग भी अनेक स्थानों पर दिखाई पड़ता है, जैसे स्त्री के व्यक्तित्त्व को कस कर चर-चर इत्यादि। अजगर की कुंडली के समान जैसे वाक्यांशों के माध्यम से भाषा को मुहावरेदार भी बनाती चलती हैं। इस पाठ में ऐसे अनेक प्रयोग मिलते हैं जो शुद्ध साहित्यिक भाषा होने के बावजूद कथ्य को रोचक, प्रवाहपूर्ण और समझने योग्य बनाते हैं।

5. रचना हो या जीवन, उबाल और क्षणिक उत्तेजना उसे सही दिशा नहीं दे सकते हैं. इसलिए जीवन में धैर्य और शांतचित्त होना आवश्यक है। ये विशेषताएं हमारे जीवन के लिए भी श्रेयस्कर और उपयोगी हैं। आप विद्यार्थी जीवन में हैं। आपके समक्ष अनेक चुनौतियाँ आती होंगी, उनका सामना करने के लिए श्रेष्ठ विचार होने चाहिए. यह संस्मरणात्मक रेखाचित्र हमें नयी दिशा देता है।

क्रियाकलाप 13.3

आसपास के पाँच पुरुष और पाँच महिलाओं से बातचीत करें और उनके जीवन के चुनौतियों की सूची बनाएं:

पाठगत प्रश्न 13.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. सुभद्रा कुमारी चौहान के जीवन में पत्नी के कौन से स्वरूप को उभारा गया है?

   (क) अनुगामिनी के रूप में   (ख) अर्धांगिनी के प्रचलित रूप में

   (ग) सहयोगी मित्र के रूप में   (घ) आंदोलनकारी के रूप में

2. 'मनुष्य की आत्मा स्वतंत्र है', इस पंक्ति से क्या अभिप्राय है?

   (क) मनुष्य परंपरा पालन से मुक्त है।

(ख) स्त्री-पुरुष अलग-अलग सत्ताएं हैं।

(ग) बंधन व्यक्ति का विकास रोकते हैं।

(घ) परिवार और सामाजिक संस्थाएं बंधन हैं।

3. इस पाठ के अनुसार बंधन से मुक्ति का स्वरूप कैसा होना चाहिए?

(क) सामाजिक पारिवारिक मान्यताओं और रूढ़ियों से मुक्ति

(ख) अंग्रेजी शासन से मुक्ति

(ग) तार्किक और मानवीय

(घ) उपर्युक्त सभी

अंश - 4

सातवीं और पाँचवी कक्षा की..छिन्न विजय माला सी!

इस अंश के महत्त्वपूर्ण विंदुओं को विस्तार से समझते हैं।

पहली बात यह दिखाई देती है कि सुभद्रा कुमारी और महादेवी वर्मा के रिश्ते का आधार स्नेह और विश्वास है। सुभद्रा जिस अधिकार के साथ लेखिका का ख्याल रखती हैं उसमें स्नेह है, विश्वास है, अधिकार का भाव है और साथीपन है। उम्र में बहुत बड़ी न होने के बावजूद सुभद्रा महादेवी के लिए कुछ न कुछ खाने का सामान, वस्त्र आदि ले जाना अपना दायित्व समझती हैं। लेखिका का ध्यान रखना उनकी आदत का हिस्सा बन गया था। मित्रता और बहिनापा की सीमाएं मिलकर एक हो गई हैं।

दूसरी विशेषता यह प्रकट होती है कि सुभद्रा कुमारी चौहान न गैरजरूरी बंधन स्वीकार करती थीं न ही अन्य किसी पर अपना निर्णय थोपती थीं। आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण उन्हें काव्य-सम्मेलनों में जाना पड़ता था। लेकिन जब महादेवी ने काव्य-गोष्ठियों में शामिल न होने का निर्णय लिया तो उन्होंने उनके उस निर्णय का हमेशा सम्मान किया। इस बारे में किसी को लेखिका पर दबाव बनाने भी नहीं दिया।

यह भी गौरतलब है कि साहित्यकारों के प्रति सुभद्रा हमेशा सहिष्णु रहीं। जहाँ अवसर मिला, उन लोगों की विशेषताओं को उदारता के साथ रेखांकित किया। अपने को बड़ा बनाने के लिए दूसरों को छोटा प्रमाणित करने का कार्य उन्होंने कभी नहीं किया।

साथ ही, जब तक वे जीवित रहीं, उनका जीवन समाज को समर्पित था और मृत्यु के बाद भी वह इसी का हिस्सा बने रहने को तत्पर थीं। उनकी इच्छा थी कि मैं मरने के बाद भी धरती से जुड़ी रहना चाहती हूँ। मेरी समाधि पर रोज मेला लगता रहे, बच्चे खेलते रहें, स्त्रियां गाती रहें, शोर-गुल होता रहे। इस प्रकार मृत्यु के उपरांत भी जीवन का उल्लास और उत्सव चलता रहे। समाज उनकी सार्थकता की कसौटी है, जिसे अपने विचारों और कार्यों के द्वारा वे बार-बार प्रमाणित करती हैं।

टिप्पणी :

इन विशेषताओं को देखकर आप समझ गए होंगे कि महादेवी वर्मा ने बड़ी बारीकी से सुभद्रा कुमारी के जीवन के छोटे-छोटे पक्षों को यहाँ उद्घाटित किया है। इनके माध्यम से निम्नलिखित तथ्य भी उभरकर सामने आते हैं।

1. हमें अपना निर्णय किसी पर थोपने के बजाय उसके निर्णय के कारण को समझना और सम्मान करना चाहिए और उसे स्वतंत्रता देनी चाहिए. काव्य-सम्मेलनों में न जाने के महादेवी के निर्णय का सुभद्रा न केवल सम्मान करती हैं अपितु उनके इस निर्णय के साथ खड़ी भी रहती हैं।

2. स्वयं को बड़ा साबित करने के लिए किसी को छोटा नहीं दिखाना चाहिए। बल्कि अपने व्यक्तित्त्व को बड़ा बनाने का प्रयास करना चाहिए. बाकी काम जन-सामान्य करता है। सुभद्रा कुमारी ने इसी तरह का उदार और गरिमामय जीवन जिया।

3. व्यक्ति की सार्थकता अकेले में नहीं, अपितु समाज में ही सिद्ध होती है. समाज में किये गए आपके काम आपके योगदान को समाज ही सराहता और उसका अनुकरण करता है। सुभद्रा मृत्यु के बाद भी जीवन का हिस्सा बने रहने में अपनी सार्थकता देखती हैं।

13.3 शिल्प-सौंदर्य

1. इस संस्मरणात्मक रेखाचित्र में आम बोलचाल की साहित्यिक भाषा का प्रयोग किया गया है। यह सरल साहित्यिक हिंदी भाषा है, जिसमें बाल चाल में प्रचलित अनेक भाषाओं के शब्दों का प्रयोग किया गया है। महादेवी वर्मा का दौर सांस्कृतिक पुनरुत्थान का है, इसलिए उस दौर के अधिकतम साहित्यकारों ने तत्सम भाषा का बहुत रचनात्मक प्रयोग किया है। महादेवी वर्मा ने भी तत्सम भाषा का प्रयोग किया है। तत्सम प्रधान भाषा का अर्थ है, ऐसे शब्द जो संस्कृत से हिंदी में आ गए हों।

   तत्सम- शैशवकालीन, स्मृति, वार्धक्य, अन्वेषिका, कृश, नासिका, संगृहीत, क्षणिक, व्यापिनी, विश्ववंद्य, विसर्जन, पुष्पाभरण, आलोकवसन, श्यामल, उज्ज्वल इत्यादि

   तद्भव- बहिन, लीपना, तरकारी, भींचना इत्यादि

   अंग्रेजी- डेस्क, कॉपी, क्लास, गर्ल्स, कॉलेज इत्यादि

   अरबी-फारसी- फलक

2. प्रवाहमयता इस संस्मरणात्मक रेखाचित्र की एक अन्य विशेषता है। प्रवाहमयता भाषा का वह गुण है जो किसी रचना को पठनीय देता है। किसी पाठ में यह गुण लोगों से जुड़ने वाले भाव और शब्दों के उपयुक्त चयन, तथा उनके सटीक प्रयोग पर निर्भर होता है। इस पाठ में तत्सम, तद्भव के साथ विदेशी भाषा के अनेक शब्दों का प्रयोग किया गया है। किंतु महादेवी वर्मा ने सुभद्रा कुमारी की कथा के साथ उनका इस प्रकार से प्रयोग किया है कि पाठ सहज रूप में संप्रेषणीय हो गया है। पाठक भाव और भाषा दोनों से सहज ही जुड़ जाता है। इस प्रयोग वैशिष्ट्य के कारण प्रस्तुत रेखाचित्र की भाषा में प्रवाह आ गया

है।

3. चित्रात्मकता भाषा का ऐसा गुण है, जिसमें कही गयी बात दृश्य रूप में पाठक के सामने उपस्थित हो जाती है और पाठक उस कथा या जीवन को अपने सामने घटते हुए महसूस करता है। इस पाठ में भी ऐसे अनेक स्थल हैं। जैसे 'वह लकुटी लेकर गायों और ग्वालों के झुंड के साथ कीकर और बबूल से भरे जंगल में पहुँच गई' अरहर की दाल को तवे पर भूनकर बालिका को खिलाना इत्यादि।

4. मानवीकरण अलंकार का प्रयोग भी इस पाठ में है। हालांकि मात्रा की दृष्टि से इस अलंकार का प्रयोग सीमित है। उदाहरण के लिए- 'अनधिकार सिकुड़कर बैठी हुई तुकबंदिया'।

5. शैली आत्मीय है, जो स्मृति बिंबों को उभारने में समर्थ है। साथ ही अत्यंत आत्मीय ढंग से हम तक पहुंचती है और हम से जुड़ती है। अपने और सुभद्रा कुमारी के संबंध को जिस असीम स्नेह के साथ लेखिका ने व्यक्त किया है वह हमें गहरी आत्मीयता का अनुभव कराता है।

6. लेखिका ने सुभद्रा कुमारी को याद करने के क्रम में साहित्य और कलाओं की प्रचलित पूर्वदीप्त शैली का प्रयोग किया है। इसे अंग्रेजी में "फ्लैशबैक टेक्नीक भी कहा जाता है। पूरे पाठ में महादेवी वर्मा स्वयं मौजूद रही हैं, इससे जहाँ पाठ अधिक प्रमाणिक बना है वहीं रेखाचित्र और संस्मरण की सीमाएं आपस में घुल-मिल गयी हैं।

13.4 आपने क्या सीखा (चित्रात्मक प्रस्तुति)

सुभद्रा कुमारी चौहान

बाह्य पक्ष

1. मझोला कद
2. कृश देहयष्टि
3. गोल मुख
4. चौड़ा माथा
5. सरल भृकुटियाँ
6. बड़ी और भावस्नात आँखे
7. छोटी सुडौल नासिका
8. दृढ़ता सूचक ठुड्डी

आंतरिक विशेषताएँ

1. निश्चल
2. कोमल और उदार व्यक्तित्त्व
3. लक्ष्य के प्रति दृढ़-निश्चयी और अडिग
4. स्वतंत्रता सेनानी
5. मन को संयत रखने वाली
6. ममतामयी और स्नेहिल
7. विद्रोही और कर्त्तव्यशील
8. हीन ग्रंथि से मुक्त
9. स्वतंत्र व्यक्तित्त्व

13.5 सीखने के प्रतिफल

- अपनी रचनात्मक क्षमता का इस्तेमाल करते हुए संस्मरण और रेखाचित्र विधा का प्रयोग अपनी लेखनी में करते हैं।
- सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक मुद्‌दों व घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया बोलकर/लिखकर व्यक्त करते हैं।
- सरल भाषा और शब्दावली के प्रयोग से अपनी अभिव्यक्ति क्षमता को बढ़ाते हैं।

13.6 योग्यता विस्तार

लेखिका परिचय : महादेवी वर्मा

चित्र 13.4: महादेवी वर्मा

'सुभद्रा कुमारी चौहान' महादेवी वर्मा का संस्मरणात्मक रेखाचित्र है। इसमें साहित्य की दोनों विधाएं रेखाचित्र और संस्मरण के तत्त्व शामिल हैं। इसमें सुभद्रा कुमारी के वाह्य आकार, चरित्र की खास-खास बातों का चित्रण किया गया है। इन बातों का शब्द-चित्र स्मृति के आधार पर उकेरा गया है और इसमें संस्मरण लिखने वाली और जिस पर संस्मरण लिखा गया, दोनों का व्यक्तित्त्व प्रकाशित हुआ है।

संस्करण और रेखाचित्र साहित्य की अलग-अलग विधाएं हैं, किन्तु महादेवी वर्मा ने अपनी रचनाओं में दोनों को इस प्रकार पिरोया है कि दोनों एक अलग विधा प्रतीत होती हैं. उन्होंने अपनी बात में स्वीकार भी किया है कि मेरे संस्मरणों में रेखाचित्र भी सम्मिलित हो जाते हैं, जिसका स्पष्ट कारण मेरा रेखांकन प्रेम ही कहा जायेगा। अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएं, पथ के साथी, मेरा परिवार जैसी कृतियों में उनके प्रमुख संस्मरणात्मक रेखाचित्र संकलित हैं। महादेवी वर्मा के रेखाचित्र यथार्थ जीवन की समझ प्रस्तुत करते हैं। उनके अधिकतर पात्र समाज के ऐसे तबके से आते हैं, जिनके लिए अशिक्षा और गरीबी के कारण जीवन की मूलभूत सुविधाएं प्राप्त करना बड़ी चुनौती होती है, किन्तु दैन्यता के साथ उसकी अदम्य जिजीविषा, संघर्ष और जीवन के प्रति उसका अनुराग उसे पाठकों की संवेदना का भागीदार बनाता है।

महादेवी वर्मा ने जितने मनोयोग से सामान्य जन पर लिखा है उतने ही मनोयोग से पशु-पक्षियों पर भी लिखा है, जो 'मेरा परिवार' नामक पुस्तक में संगृहीत हैं। 'पथ के साथी' संग्रह में उन साहित्यकारों का परिचय है, जिनसे महादेवी वर्मा की घनिष्ठता थी। इन संस्मरणों में संबंधित व्यक्तित्त्व से महादेवी के घनिष्ठ संबंधों की जानकारी तो मिलती है, साथ ही उनका राष्ट्रीय और सामाजिक जीवन में महत्त्व भी परिलक्षित होता है। 'सुभद्रा कुमारी चौहान' उनका ऐसा ही संस्मरणात्मक रेखाचित्र है, जो उन दोनों के आत्मीय संबंधो के साथ सुभद्रा कुमारी चौहान के पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय जीवन से संबंधित विचारों और संघर्षों को हमारे सामने प्रस्तुत करता है।

सुभद्रा कुमारी चौहान

सुभद्रा कुमारी चौहान हिंदी की सुप्रसिद्ध कवयित्री और लेखिका थीं। उनका जन्म इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश) के निकट निहालपुर गाँव में एक संपन्न परिवार में हुआ था। उनका विवाह खंडवा (मध्य प्रदेश) निवासी ठाकुर लक्ष्मण सिंह के साथ हुआ था। पति के साथ वे भी स्वाधीनता आन्दोलन से जुड़ी और अनेक बार जेल गईं और यातनाएं सहीं। झाँसी की रानी इनकी प्रसिद्ध कविता है। 15 फरवरी 1948 को एक सड़क दुर्घटना में उनका निधन हो गया। इनकी जीवनी इनकी पुत्री सुधा चौहान ने 'मिला तेज से तेज' नाम से लिखी है। इनकी कृतियाँ निम्नलिखित हैं–

कविता संग्रह :

1. मुकुल (1930)
2. त्रिधारा (चुनी हुई कविताएँ)

कथा संग्रह:

1. बिखरे मोती (1932)
2. उन्मादिनी (1934)
3. सीधे-साधे चित्र (1947)

13.7 पाठांत प्रश्न

अति लघुत्तरीय प्रश्न

क. इस पाठ को साहित्य की किस विधा के अंतर्गत रखा जाना चाहिए? स्पष्ट कीजिए।

ख. सुभद्रा कुमारी को महादेवी वर्मा की कविताएं किस विषय की कॉपी में मिलीं?

ग. सुभद्रा कुमारी चौहान के पति का नाम क्या था?

घ. लेखिका सुभद्रा कुमारी का वर्णन वीरगीतों की कवयित्री के रूप में क्यों नहीं करना चाहती?

ङ. सुभद्रा कुमारी और लेखिका के आत्मीय संबंध को आप किस शब्द से परिभाषित करना चाहेंगे?

लघुउत्तरीय प्रश्न

क. सुभद्रा कुमारी चौहान के व्यक्तित्व की किन विशेषताओं की तरफ लेखिका ने ध्यान आकर्षित किया है?

ख. सुभद्रा कुमारी मरने के बाद भी समाज का अंग क्यों बने रहना चाहती हैं?

ग. जेल-जीवन और गृहस्थी के बीच सुभद्रा कुमारी को क्यों संतुलन साधना पड़ा?

घ. गणित की कॉपी में कविता लिखने को लेखिका ने अक्षम्य अपराध क्यों माना है?

ङ. स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सुभद्रा को दुख और पीड़ा का अनुभव क्यों हुआ?

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. लेखिका क्यों नहीं चाहती हैं कि उनके द्वारा कविता लिखने की बात सबको पता चले?
2. सुभद्रा कुमारी के वाह्य रूप और आंतरिक गुणों की चर्चा कीजिए।
3. 'स्वतंत्रता आन्दोलन में सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपनी व्यक्तिगत आकांक्षाओं के स्थान पर जनसामान्य की भावनाओं का सम्मान किया।' इस कथन के परिप्रेक्ष्य में विचार प्रस्तुत कीजिए।
4. सुभद्रा कुमारी के मन में अपनी आर्थिक स्थिति को लेकर कोई हीन भावना क्यों नहीं थी?
5. 'सुभद्रा कुमारी चौहान ने सार्वजनिक जीवन के बंधनों का सदैव विरोध किया।' इस तथ्य का मूल्यांकन कीजिए।
6. इस पाठ की भाषागत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

13.8 उत्तरमाला

पाठगत प्रश्नों के उत्तर 13.1

1. (क)   2. (ग)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर 13.2

1. (क)   2. (घ)   3. (ग)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर 13.3

1. (ग)   2. (ग)   3. (घ)

14

कुटज

(आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी)

क्या आपके साथ कभी ऐसा हुआ कि आपको ज़रा-सा कष्ट हुआ और आप घबरा गए, अपने जीवन को, अपनी इस अमूल्य मानव देह को कोसने लगे और कल्पना करने लगे उस 'सुखी' ज़िंदगी की, जहाँ न रोज़-रोज़ का झंझट हो, न दैनिक जीवन के कार्य करने पड़ें, न किसी गलत कार्य करने पर बड़ों से डाँट पड़े न मार का डर हो, न ही किसी और प्रकार की चिंता। जहाँ बस सुख ही सुख हो। ऐसी कल्पना करते-करते कभी आपको पक्षियों से भी ईर्ष्या हुई होगी कि वाह! क्या! मजे हैं! जहाँ चाहे जब चाहे झट से उड़ कर पहुँच जाते हैं। ऐसा हुआ है न कभी-कभी?

अब ज़रा सोचिए कि इसका कारण क्या है? इसका कारण है-'सही प्रकार से जीने की कला न आना।' जिस दिन आप यह कला सीख जाएँगे, उस दिन आपका जीवन सुखमय हो जाएगा। कितनी ही मुश्किलें क्यों न आएँ, आप हिम्मत नहीं हारेंगे, परेशान नहीं होंगे।

तो आइए, यह कला सीखें, किसी स्कूल से नहीं, किसी बड़े ज्ञानी, विद्वान महापुरुष से भी नहीं, महज एक छोटे से ठिगने से पेड़ 'कुटज' से।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप:

- 'कुटज' शब्द की उत्पत्ति और अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे;
- 'कुटज' से प्रेरणा लेकर कठिन परिस्थितियों में भी प्रसन्नतापूर्वक और दृढ़ता से जीने की कला के विषय में लिख सकेंगे;
- 'कुटज' के नि:स्वार्थ गुणों का वर्णन करते हुए प्रकृति के संदेशों की व्याख्या कर सकेंगे;
- ललित निबंध की विशेषताएँ स्पष्ट करते हुए 'कुटज' का विश्लेषण कर सकेंगे;
- पाठ में प्रयुक्त सूक्तिपरक वाक्यों की व्याख्या कर सकेंगे;
- निबंध की आलंकारिक और वर्णनात्मक शैली पर टिप्पणी कर सकेंगे।

क्रियाकलाप 14.1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

(क) अपने आस-पास आपने ऐसे पेड़-पौधे लगे देखें होंगे जिन्हें, बहुत देखभाल की आवश्यकता होती है। माली खाद, पानी, गुड़ाई आदि समय-समय पर आवश्यकता के अनुसार करता है। ऐसे किन्हीं पाँच पेड़-पौधों के नाम यहाँ लिखिए :

....

....

(ख) आपने अपने आस-पास ऐसे पेड़-पौधे ज़रूर देखे होंगे जो साल भर सिर्फ़ बरसात के पानी पर जीवित रहते हैं। उन्हें कोई नहीं सींचता। ऐसे किन्हीं पाँच पेड़-पौधों के नाम यहाँ पर लिखिए :

....

....

14.1 मूल पाठ

आइए, 'कुटज' नामक निबंध को एक बार ध्यान से पढ़ लेते हैं। साथ ही सहायता के लिए दिए गए कठिन शब्दों के अर्थ भी समझते चलते हैं।

कुटज

कहते हैं, पर्वत शोभा-निकेतन होते हैं। फिर हिमालय का तो कहना ही क्या! पूर्व और अपर समुद्र-महोदधि और रत्नाकर-दोनों को दोनों भुजाओं से थामता हुआ हिमालय पृथ्वी का 'मानदंड' कहा जाय तो गलत क्या है? कालिदास ने ऐसा ही कहा था। इसी के पाद-देश में यह श्रृंखला दूर तक लोटी हुई है, लोग इसे 'शिवालिक' श्रृंखला कहते हैं। 'शिवालिक' का क्या अर्थ है? 'शिवालिक' या शिव के जटाजूट का निचला हिस्सा तो नहीं है? लगता तो ऐसा ही है। 'सपादलक्ष' या सवा लाख की मालगुजारी वाला इलाका तो वह लगता नहीं! शिव की लटियाई जटा ही इतनी सूखी, नीरस और कठोर हो सकती है। वैसे, अलकनंदा का स्रोत यहाँ से काफ़ी दूरी पर है, लेकिन शिव का अलक तो दूर-दूर तक छितराया ही रहता होगा। संपूर्ण हिमालय को देखकर ही किसी के मन में समाधिस्थ महादेव की मूर्ति स्पष्ट हुई होगी। उसी समाधिस्थ महादेव के अलक-जाल के निचले हिस्से का प्रतिनिधित्व यह गिरिश्रृंखला कर रही होगी। कहीं-कहीं अज्ञात-नाम-गोत्र झाड़-झंखाड़ और बेहया-से पेड़ खड़े दिख अवश्य जाते हैं, पर कोई हरियाली नहीं। दूब तक सूख गई है। काली-काली चट्टानें और बीच-बीच में शुष्कता की अंतर्निरुद्ध सत्ता का इजहार करने वाली रक्ताभ रेती है! रस कहाँ है? ये जो ठिंगने-से लेकिन शानदार दरख्त गर्मी की भयंकर मार खा-खाकर और भूख-प्यास की निरंतर

शब्दार्थ

महोदधि	-	समुद्र
अपर	-	अन्य, दूरवर्ती
पाद-देश	-	हिमालय के दक्षिण में स्थित प्रदेश
लटियाई जटा	-	जटा, उलझे हुई बालों का समूह

चोट सह-सहकर भी जी रहे हैं, इन्हें क्या कहूँ? सिर्फ जी ही नहीं रहे हैं, हँस भी रहे हैं। बेहया हैं क्या? या मस्तमौला हैं? कभी-कभी जो लोग ऊपर से बेहया दिखते हैं, उनकी जड़ें काफ़ी गहरे पैठी रहती हैं। ये भी पाषाण की छाती फाड़कर न जाने किस अतल गह्वर से अपना भोग्य खींच लाते हैं।

शिवालिक की सूखी नीरस पहाड़ियों पर मुस्कराते हुए ये वृक्ष द्वंद्वातीत हैं, अलमस्त हैं। मैं किसी का नाम नहीं जानता, कुल नहीं जानता, शील नहीं जानता, पर लगता है, ये जैसे मुझे अनादि काल से जानते हैं। इन्हीं में एक छोटा-सा-बहुत ही ठिंगना-पेड़ है, पत्ते चौड़े भी हैं, बड़े भी हैं। फूलों से तो ऐसा लदा है कि कुछ पूछिए नहीं। अजीब-सी अदा है, मुस्कराता जान पड़ता है। लगता है, पूछ रहा है कि क्या तुम मुझे नहीं पहचानते? पहचानता तो हूँ, अवश्य पहचानता हूँ। लगता है, बहुत बार देख चुका हूँ, पहचानता हूँ उजाड़ के साथी, तुम्हें अच्छी तरह पहचानता हूँ। नाम भूल रहा हूँ। प्रायः भूल जाता हूँ। रूप देखकर प्रायः पहचान जाता हूँ, नाम नहीं याद आता। पर नाम ऐसा है कि जब तक रूप के पहले ही हाज़िर न हो जाए, तब तक रूप की पहचान अधूरी रह जाती है। भारतीय पंडितों का सैकड़ों बार का कचारा-निचोड़ा प्रश्न सामने आ गया-रूप मुख्य है या नाम? नाम बड़ा है या रूप? पद पहले है या पदार्थ? पदार्थ सामने है, पद नहीं सूझ रहा है। मन व्याकुल हो गया, स्मृतियों के पंख फैलाकर सुदूर अतीत के कोनों में झाँकता रहा। सोचता हूँ, इसमें व्याकुल होने की क्या बात है? नाम में क्या रखा है-व्हाट्स देअर इन ए नेम! नाम की जरूरत ही हो तो सौ दिए जा सकते हैं- सुस्मिता, गिरिकांता, वनप्रभा, शुभ्रकिरीटिनी, मदोद्धता, विजितातपा, अलकावतंसा, बहुत-से नाम हैं। या फिर पौरुष - व्यंजक नाम भी दिए जा सकते हैं - अकुतोभय, गिरिगौरव, कूटोल्लास, अपराजित, धरती धकेल, पहाड़फोड़, पातालभेद! पर मन नहीं मानता। नाम इसलिए बड़ा नहीं है कि वह नाम है। वह इसलिए बड़ा होता है कि उसे सामाजिक स्वीकृति मिली होती है। रूप व्यक्ति-सत्य है, नाम समाज-सत्य है। नाम उस पद को कहते हैं, जिस पर समाज की मुहर लगी होती है, आधुनिक शिक्षित लोग जिसे 'सोशल सैंक्शन' कहा करते हैं। मेरा मन नाम के लिए व्याकुल है, समाज द्वारा स्वीकृत, इतिहास द्वारा प्रमाणित, समष्टि-मानव की चित्त-गंगा में स्नात!

चित्र 14.1: कुटज वृक्ष

इस गिरिकूट-बिहारी का नाम क्या है? मन दूर-दूर तक उड़ रहा है-देश में और काल में-मनोरथानामगतिर्नविद्यते! अचानक याद आया-अरे, यह तो कुटज है! संस्कृत साहित्य का बहुत परिचित, किंतु कवियों द्वारा अवमानित, यह छोटा-सा शानदार वृक्ष 'कूटज' है। 'कुटज' कहा गया होता तो कदाचित् ज़्यादा अच्छा होता। पर नाम इसका चाहे कुटज ही हो, विरुद तो निस्संदेह 'कुटज' होगा। गिरिकूट पर उत्पन्न होने वाले इस वृक्ष को 'कूटज' कहने में विशेष आनंद मिलता है। बहरहाल, यह कूटज-कुटज है, मनोहर कुसुम-स्तबकों से झबराया, उल्लास-लोल चारुस्मित कुटज! जी भर आया। कालिदास ने 'आषाढ़स्य प्रथम-दिवसे'

शब्दार्थ

अंतर्निरुद्ध	-	भीतर रोका हुआ
इजहार	-	प्रकट करना
रक्ताभ	-	लाल, रक्तिम
द्वंद्वातीत	-	किसी प्रकार के द्वंद्व से परे
कचारा-निचोड़ा	-	जिस पर बार-बार तर्क और विचार किया जा चुका हो
पद	-	नाम
वनप्रभा	-	जंगल की शोभा
शुभ्रकिरीटिनी	-	श्वेत (उज्जवल) मुकुट धारण करने वाली
मदोद्धता	-	अभिमानी
विजितातपा	-	जिसने धूप को जीत लिया
अपराजित	-	अजेय, जो जीता न गया हो
सोशल सैक्शन	-	समाज द्वारा मान्यता प्राप्त
समष्टि	-	सामूहिकता, समूह
स्नात	-	स्नान किया हुआ, पवित्र

रामगिरि पर यक्ष को जब मेघ की अभ्यर्थना के लिए नियोजित किया तो कम्बख्त को ताज़े कुटज पुष्पों की अंजलि देकर ही संतोष करना पड़ा-चंपक नहीं, बकुल नहीं, नीलोत्पल नहीं, मल्लिका नहीं, अरविंद नहीं-फकत कुटज के फूल! यह और बात है कि आज आषाढ़ का नहीं, जुलाई का पहला दिन है। मगर फर्क भी कितना है! बार-बार मन विश्वास करने को उतारू हो जाता है कि यक्ष बहाना मात्र है, कालिदास ही कभी 'शापेनास्तंगमितमहिमा' (शाप से जिनकी महिमा अंत हो गई हो) होकर रामगिरि पहुँचे थे, अपने ही हाथों इस कुटज पुष्प का अर्घ्य देकर उन्होंने मेघ की अभ्यर्थना की थी। शिवालिक की इस अनत्युच्च पर्वतश्रृंखला की भाँति रामगिरि पर भी उस समय और कोई फूल नहीं मिला होगा। कुटज ने उनके संतप्त चित्त को सहारा दिया था-बड़भागी फूल है यह! धन्य हो कुटज, तुम 'गाढ़े के साथी' हो। उत्तर की ओर सिर उठाकर देखता हूँ, सुदूर तक ऊँची काली पर्वतश्रृंखला छाई हुई है और एकाध सफेद बादल के बच्चे उससे लिपटे खेल रहे हैं। मैं भी उन पुष्पों का अर्घ्य उन्हें चढ़ा दूँ? पर काहे वास्ते? लेकिन बुरा भी क्या है?

कुटज के ये सुंदर फूल बहुत बुरे तो नहीं हैं। जो कालिदास के काम आया हो, उसे ज़्यादा इज़्जत मिलनी चाहिए। मिली कम है। पर इज़्जत तो नसीब की बात है। रहीम को मैं बड़े आदर के साथ स्मरण करता हूँ। दरियादिल आदमी थे, पाया सो लुटाया। लेकिन दुनिया है कि मतलब से मतलब है, रस चूस लेती है, छिलका और गुठली फेंक देती है। सुना है, रस चूस लेने के बाद रहीम को भी फेंक दिया गया था। एक बादशाह ने आदर के साथ बुलाया, दूसरे ने फेंक दिया! हुआ ही करता है। इससे रहीम का मोल घट नहीं जाता। उनकी फक्कड़ाना मस्ती कहीं गई नहीं। अच्छे-भले कद्रदान थे। लेकिन बड़े लोगों पर भी कभी-कभी ऐसी वितृष्णा सवार होती है कि गलती कर बैठते हैं। मन खराब रहा होगा, लोगों की बेरुखी और बेकद्रदानी से मुरझा गए होंगे-ऐसी ही मन:स्थिति में उन्होंने बिचारे कुटज को भी एक चपत लगा दी। झुँझलाए थे, कह दिया-

> वे रहीम अब बिरछ कहँ, जिनकर छाँह गँभीर।
> बागन बिच-बिच देखियत, सेंहुड़, कुटज, करीर।।

गोया कुटज अदना-सा 'बिरछ' हो। 'छाँह' ही क्या बड़ी बात है, फूल क्या कुछ भी नहीं? छाया के लिए न सही, फूल के लिए तो कुछ सम्मान होना चाहिए। मगर कभी-कभी कवियों का भी 'मूड' खराब हो जाया करता है, वे भी गलत-बयानी के शिकार हो जाया करते हैं। फिर बागों से गिरिकूट-बिहारी कुटज का क्या तुक है।

कुटज अर्थात् जो कुट से पैदा हुआ हो। 'कुट' घड़े को भी कहते हैं, घर को भी कहते हैं। कुट अर्थात् घड़े से उत्पन्न होने के कारण प्रतापी अगस्त्य मुनि भी 'कुटज' कहे जाते हैं। घड़े से तो क्या उत्पन्न हुए होंगे। कोई और बात होगी। संस्कृत में 'कुटहारिका' और 'कुटकारिका' दासी को कहते हैं। क्यों कहते हैं? 'कुटिया' या 'कुटीर' शब्द भी कदाचित इसी शब्द से सम्बद्ध हैं। क्या इस शब्द का अर्थ घर ही है? घर में काम-काज करने वाली दासी 'कुटकारिका' और 'कुटहारिका' कही ही जा सकती है। एक जरा गलत ढंग की दासी 'कुटनी' भी कही जा सकती है। संस्कृत में उसकी गलतियों को थोड़ा अधिक मुखर बनाने के लिए उसे कुट्टनी कह दिया गया है। अगस्त्य मुनि भी नारद जी की तरह दासी के पुत्र

शब्दार्थ

विरुद	-	कीर्ति, गाथा, प्रशंसा सूचक पदवी
नीलोत्पल	-	नीलकमल
चंपक	-	चंपा
बकुल	-	मौलसिरी
अरविन्द	-	कमल
मल्लिका	-	मोतिया, बेला
अर्घ्य	-	पूजन के लिए चढ़ावा
संतप्त	-	दुखी, उदास, खिन्न
सुदूर	-	बहुत दूर
फक्कड़ाना	-	फकीरों जैसी
कद्रदान	-	सम्मान, आदर देने वाला
वितृष्णा	-	तृष्णा (अभिलाषा) का अभाव
अदना	-	तुच्छ
गलतबयानी	-	कोई बात गलत ढंग से बताना

टिप्पणी

थे क्या? घड़े से पैदा होने की तो कोई तुक नहीं है, न मुनि कुटज के सिलसिले में, न फूल कुटज के। फूल गमले में होते अवश्य हैं, पर कुटज तो जंगल का सैलानी है। उसे घड़े या गमले से क्या लेना-देना। शब्द विचारोत्तेजक अवश्य है। कहाँ से आया? मुझे तो इसी में संदेह है कि यह आर्य भाषाओं का शब्द है भी या नहीं। एक भाषाशास्त्री किसी संस्कृत शब्द को एक से अधिक रूप में प्रचलित पाते थे, तो तुरंत उसकी कुलीनता पर शक कर बैठते थे। संस्कृत में 'कुटज' रूप भी मिलता है और 'कुटच' भी। मिलने को तो 'कूटज' भी मिल जाता है। तो यह शब्द किस जाति का है? आर्य जाति का तो नहीं जान पड़ता। सिलवाँ लेवी कह गए हैं कि संस्कृत भाषा में फूलों, वृक्षों और खेती-बागवानी के अधिकांश शब्द आग्नेय भाषा परिवार के हैं। यह भी वहीं का तो नहीं है? एक जमाना था जब आस्ट्रेलिया और एशिया के महाद्वीप मिले हुए थे, फिर कोई भयंकर प्राकृतिक विस्फोट हुआ और ये दोनों अलग हो गए। उन्नीसवीं शताब्दी के भाषा-विज्ञानी पण्डितों को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि आस्ट्रेलिया के सुदूर जंगलों में बसी जातियों की भाषा एशिया में बसी हुई कुछ जातियों की भाषा से संबद्ध है। भारत की अनेक जातियाँ वह भाषा बोलती हैं जिनमें संथाल, मुंडा आदि भी शामिल हैं। शुरु-शुरु में इस भाषा का नाम आस्ट्रो-एशियाटिक दिया गया था। दक्षिण-पूर्व या अग्निकोण की भाषा होने के कारण इसे आग्नेय-परिवार भी कहा जाने लगा है। अब हम लोग भारतीय जनता के वर्ग-विशेष को ध्यान में रखकर और पुराने साहित्य का स्मरण करके इसे कोल-परिवार की भाषा कहने लगे हैं। पंडितों ने बताया है कि संस्कृत भाषा के अनेक शब्द, जो अब भारतीय संस्कृति के अविच्छेद्य अंग बन गए हैं, इसी श्रेणी की भाषा के है। कमल, कुड्मल, कंबु, कंबल, तांबूल आदि शब्द ऐसे ही बताए जाते हैं। पेड़-पौधों, खेती के उपकरणों और औज़ारों के नाम भी ऐसे ही हैं। 'कुटज' भी हो तो क्या आश्चर्य? संस्कृत भाषा ने शब्दों के संग्रह में कभी छूत नहीं मानी। न जाने किस-किस नस्ल के कितने शब्द उसमें आकर अपने बन गए हैं। पंडित लोग उसकी छान-बीन करके हैरान होते हैं। संस्कृत सर्वग्रासी भाषा है।

यह जो मेरे सामने कुटज का लहराता पौधा खड़ा है, वह नाम और रूप दोनों में अपनी अपराजेय जीवनी शक्ति की घोषणा कर रहा है। इसीलिए यह इतना आकर्षक है। नाम है कि हज़ारों वर्ष से जीता चला जा रहा है। कितने नाम आए और गए। दुनिया उनको भूल गई, वे दुनिया को भूल गए। मगर कुटज है कि संस्कृत की निरंतर स्फीयमान शब्दराशि में जो जम के बैठा सो बैठा ही है। और रूप की तो बात ही क्या है! बलिहारी है इस मादक शोभा की। चारों ओर कुपित यमराज के दारुण निःश्वास के समान धधकती लू में यह हरा भी है और भरा भी है, दुर्जन के चित्त से भी अधिक कठोर पाषाण की कारा में रुद्ध अज्ञात जलस्रोत से बरबस रस खींचकर सरस बना हुआ है। और मूर्ख के मस्तिष्क से भी अधिक सूने गिरि-कांतार में भी ऐसा मस्त बना है कि ईर्ष्या होती है। कितनी कठिन जीवनी-शक्ति है! प्राण ही प्राण को पुलकित करता है, जीवनी-शक्ति ही जीवनी-शक्ति को

चित्र 14.2

शब्दार्थ

विचारोत्तेजक	-	विचारों को उभारने वाला उत्तेजित करने वाला
कुलीनता	-	उच्च कुल वाला
नस्ल	-	वंश, संतति
अपराजेय	-	अजेय
पर्वतनंदिनी	-	पर्वत की पुत्री
कुपित	-	क्रुद्ध, रुष्ट
दारुण	-	कठोर, कष्टकारी
दुर्जन	-	अत्याचारी, पापी, दुष्कर्म करने वाला
पाषाण	-	पत्थर
कारा		काल कोठरी
रुद्ध	-	रुका हुआ, दबा हुआ, अप्रकट
गिरि-कांतार	-	पहाड़ और घने जंगल
जीवनी शक्ति	-	जीने की इच्छा, संघर्ष करने की शक्ति
हिमाच्छादित	-	बर्फ से ढकी

प्रेरणा देती है। दूर पर्वतराज हिमालय की हिमाच्छादित चोटियाँ हैं, वहीं कहीं भगवान् महादेव समाधि लगा कर बैठे होंगे; नीचे सपाट पथरीली जमीन का मैदान है, कहीं-कहीं पर्वतनंदिनी सरिताएँ, आगे बढ़ने का रास्ता खोज रही होंगी- बीच में यह चट्टानों की ऊबड़-खाबड़ जटाभूमि है-सूखी, नीरस, कठोर! यहीं आसन मारकर बैठे हैं मेरे चिरपरिचित दोस्त कुटज। एक बार अपने झबरीले मूर्धा को हिलाकर समाधिनिष्ठ महादेव को पुष्पस्तबक का उपहार चढ़ा देते हैं और एक बार नीचे की ओर अपनी पाताल-भेदी जड़ों को दबाकर गिरिनंदिनी सरिताओं को संकेत से बता देते हैं कि रस का स्रोत कहाँ है। जीना चाहते हो? कठोर पाषाण को भेदकर, पाताल की छाती चीरकर अपना भोग्य संग्रह करो, वायुमंडल को चूसकर, झंझा-तूफान को रगड़कर, अपना प्राप्य वसूल लो, आकाश को चूमकर अवकाश की लहरी में झूमकर उल्लास खींच लो। कुटज का यही उपदेश है-

> भित्त्वा पाषाणपिठरं छित्त्वा प्राभंजनीं व्यथाम्
> पीत्वा पातालपानीयं कुटजश्चुम्बते नभः !

दुरंत जीवन-शक्ति है! कठिन उपदेश है। जीना भी एक कला है। लेकिन कला ही नहीं, तपस्या है। जियो तो प्राण ढाल दो ज़िंदगी में, मन ढाल दो जीवनरस के उपकरणों में! ठीक है। लेकिन क्यों? क्या जीने के लिए जीना ही बड़ी बात है? सारा संसार अपने मतलब के लिए ही तो जी रहा है। याज्ञवल्क्य बहुत बड़े ब्रह्मवादी ऋषि थे। उन्होंने अपनी पत्नी को विचित्र भाव से समझाने की कोशिश की कि सब कुछ स्वार्थ के लिए है। पुत्र के लिए पुत्र प्रिय नहीं होता, पत्नी के लिए पत्नी प्रिया नहीं होती-सब अपने मतलब के लिए प्रिय होते हैं- 'आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति!' विचित्र नहीं है यह तर्क? संसार में जहाँ कहीं प्रेम है, सब मतलब के लिए। सुना है, पश्चिम के हॉब्स और हेल्वेशियस जैसे विचारकों ने भी ऐसी ही बात कही है। सुनकर हैरानी होती है। दुनिया में त्याग नहीं है, प्रेम नहीं है, परार्थ नहीं है, परमार्थ नहीं है-है केवल प्रचंड स्वार्थ। भीतर की जिजीविषा-जीते रहने की प्रचंड इच्छा-ही अगर बड़ी बात हो तो फिर यह सारी बड़ी-बड़ी बोलियाँ, जिनके बल पर दल बनाए जाते हैं, शत्रुमर्दन का अभिनय किया जाता है, देशोद्धार का नारा लगाया जाता है, साहित्य और कला की महिमा गाई जाती है, झूठ हैं। इसके द्वारा कोई-न-कोई अपना बड़ा स्वार्थ सिद्ध करता है। लेकिन अंतरतर से कोई कह रहा है, ऐसा सोचना गलत ढंग से सोचना है। स्वार्थ से भी बड़ी कोई-न-कोई बात अवश्य है, जिजीविषा से भी प्रचंड कोई-न-कोई शक्ति अवश्य है। क्या है?

याज्ञवल्क्य ने जो बात धक्कामार ढंग से कह दी थी, वह अंतिम नहीं थी। वे 'आत्मनः' का अर्थ कुछ और बड़ा करना चाहते थे। व्यक्ति का 'आत्मा' केवल व्यक्ति तक सीमित नहीं है, वह व्यापक है। अपने में सब और सब में आप-इस प्रकार की एक समष्टि-बुद्धि जब तक नहीं आती, तब तक पूर्ण सुख का आनंद भी नहीं मिलता। अपने-आपको दलित द्राक्षा की भाँति निचोड़कर जब तक 'सर्व' के लिए निछावर नहीं कर दिया जाता, तब तक 'स्वार्थ' खंड-सत्य है, वह मोह को बढ़ावा देता है, तृष्णा को उत्पन्न करता है और मनुष्य को दयनीय-कृपण-बना देता है। कार्पण्य दोष से जिसका स्वभाव उपहत हो गया है, उसकी दृष्टि म्लान हो जाती है, वह स्पष्ट नहीं देख पाता। वह स्वार्थ भी नहीं समझ पाता, परमार्थ तो दूर की बात है।

कुटज क्या केवल जी रहा है? वह दूसरे के द्वार पर भीख माँगने नहीं जाता, कोई निकट आ गया तो भय के मारे अधमरा नहीं हो जाता, नीति और धर्म का उपदेश नहीं देता फिरता, अपनी

टिप्पणी

शब्दार्थ

- मूर्धा - सिर, चोटी
- समाधिनिष्ठ - समाधि लगाए, ध्यानमग्न
- पुष्पस्तबक - फूलों का गुलदस्ता, गुच्छा
- गिरिनंदिनी - गिरि (पर्वत) की बेटी
- झंझा - तेज आँधी
- अवकाश - शून्य स्थान, शून्य वायुमंडल
- परार्थ - उपकार की दृष्टि से दूसरों के लिए किया गया कार्य
- परमार्थ - उत्कृष्ट वस्तु, परोपकार, मोक्ष
- जिजीविषा - जीने की तीव्र इच्छा
- प्रचंड - तीव्र
- शत्रुमर्दन - शत्रु पर विजय पाना
- अंतरतर - अंतरात्मा, मन
- आत्मनः - अपने लिए
- समष्टि बुद्धि - सबका कल्याण करने वाला विवेक
- दलित द्राक्षा - कुचले हुए अंगूर
- तृष्णा - प्यास, पाने की इच्छा
- दंडनीय - दंड दिए जाने योग्य
- कृपण - कंजूस
- म्लान - मैली, मलिन
- उपहत - विकृत, बिगड़ा हुआ
- आत्मोन्नति - अपनी भौतिक उन्नति

उन्नति के लिए अफ़सरों का जूता नहीं चाटता फिरता, दूसरों को अवमानित करने के लिए ग्रहों की खुशामद नहीं करता। आत्मोन्नति के हेतु नीलम नहीं धारण करता, अँगूठियों की लड़ी नहीं पहनता, दाँत नहीं निपोरता, बगलें नहीं झाँकता। जीता है और शान से जीता है–काहे वास्ते, किस उद्देश्य से? कोई नहीं जानता। मगर कुछ बड़ी बात है। स्वार्थ के दायरे से बाहर की बात है। भीष्म पितामह की भाँति अवधूत की भाषा में कह रहा है– 'चाहे सुख हो या दुख, प्रिय हो या अप्रिय, जो मिल जाय उसे शान के साथ, हृदय से बिलकुल अपराजित होकर, सोल्लास ग्रहण करो। हार मत मानो!'

सुखं वा यदि वा दु:खं प्रियं वा यदि वाऽप्रियम्।
प्राप्तं प्राप्तमुपासीत हृदयेनापराजित:।

–शांतिपर्व, 26.1.26

हृदयेनपराजित:! कितना विशाल वह हृदय होगा, जो सुख से, दु:ख से, प्रिय से, अप्रिय से विचलित न होता होगा! कुटज को देखकर रोमांच हो आता है। कहाँ से मिली है यह अकुतोभया वृत्ति, अपराजित स्वभाव, अविचल जीवन दृष्टि!

जो समझता है कि वह दूसरों का उपकार कर रहा है, वह अबोध है, जो समझता है कि दूसरे उसका अपकार कर रहे हैं, वह बुद्धिहीन है। कौन किसका उपकार करता है, कौन किसका अपकार कर रहा है? मनुष्य जी रहा है, केवल जी रहा है, अपनी इच्छा से नहीं, इतिहास-विधाता की योजना के अनुसार। किसी को उससे सुख मिल जाये, बहुत अच्छी बात है, नहीं मिल सका, कोई बात नहीं, परंतु उसे अभिमान नहीं होना चाहिए। सुख पहुँचाने का अभिमान नहीं होना चाहिए। सुख पहुँचाने का अभिमान यदि गलत है तो दु:ख पहुँचाने का अभिमान तो नितांत गलत है।

दु:ख और सुख तो मन के विकल्प हैं। सुखी वह है जिसका मन वश में है, दु:खी वह है जिसका मन परवश है। परवश होने का अर्थ है खुशामद करना, दाँत निपोरना, चाटुकारिता, हाँ-हजूरी। जिसका मन अपने वश में नहीं है, वही दूसरे के मन का छंदावर्त्तन करता है, अपने को छिपाने के लिए मिथ्या आडंबर रचता है, दूसरों को फँसाने के लिए जाल बिछाता है। कुटज इन सब मिथ्याचारों से मुक्त है। वह वशी है। वह वैरागी है। राजा जनक की तरह संसार में रहकर, संपूर्ण भोगों को भोगकर भी उनसे मुक्त है। जनक की ही भाँति वह घोषणा करता है कि 'मैं स्वार्थ के लिए अपने मन को सदा दूसरे के मन में घुसाता नहीं फिरता, इसलिए मैं मन को जीत सका हूँ, उसे वश में कर सका हूँ'–

नाहमात्मार्थमिच्छामि मनो नित्यं मनोन्तरे।
मनो मे निर्जितं तस्मात् वशे तिष्ठति सर्वदा।।

कुटज अपने मन पर सवारी करता है, मन को अपने पर सवार नहीं होने देता। मनस्वी मित्र, तुम धन्य हो!

शब्दार्थ

अवधूत	-	जिसे दीन-दुनिया से कोई मतलब नहीं
दाँत नहीं निपोरता	-	गिड़गिड़ाता नहीं
अबोध	-	अज्ञानी
अपकार	-	अहित, अत्याचार
उपकार	-	भलाई
नितरांत	-	अवश्य, लगातार
आडंबर	-	दिखावा

बोध प्रश्न 14.1

दिए गए विकल्पों में से सही विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. लेखक को शिवालिक की पहाड़ियों में क्या दिखाई देता है?

   (क) शिव की जटाएँ (ख) महादेव की मूर्ति

   (ग) ठिगना शानदार वृक्ष (घ) अलकनंदा का स्रोत

2. लेखक ने कुटज के पेड़ को कहा है:

   (क) बेहया (ख) अलमस्त

   (ग) द्वंद्वयुक्त (घ) अजीब

3. निम्नलिखित में से लेखक के विचारानुसार सबसे सही वाक्य चुनिए:

   (क) नाम में कुछ नहीं रखा, रूप ही सब कुछ है।

   (ख) नाम रूप से अधिक महत्वपूर्ण है।

   (ग) पदार्थ सामने हो तो उसका नाम याद रखना जरूरी नहीं।

   (घ) रूप व्यक्ति-सत्य है, नाम समाज सत्य।

4. लेखक के अनुसार कुटज का कौन-सा नाम पौरुष व्यंजक नहीं है?

   (क) गिरिगौरव (ख) अकुतोभय

   (ग) मदोद्धता (घ) अपराजित

5. 'कुटज' शब्द का अर्थ बताते हुए लेखक किस शब्द को इससे जुड़ा हुआ नहीं मानता?

   (क) कूटना (ख) कुटिया

   (ग) घड़ा (घ) कुटकारिका

14.2 आइए समझें

आप जानते हैं कि निबंध मुख्य रूप से विचार-प्रधान होते हैं। किसी भी घटना, तत्त्व या विचार को लेकर लेखक विस्तार से उस पर अपने विचार रखता है। आप यह भी जानते हैं कि लेख में विषय से बँधकर लिखने की बाध्यता होती है, वह निबंध में नहीं होती। कुटज निबंध को पढ़ते हुए भी आपने इस बात को महसूस किया होगा। किसी भी निबंध के तीन तत्त्व होते हैं। इसे भी हम मुख्यत: तीन अंशों में ही पढ़ेंगे-प्रस्तावना, विषय-वस्तु और उपसंहार। आपने अनुभव किया होगा कि पूरे निबंध का एक-एक वाक्य बहुत महत्वपूर्ण है। आइए, इसके महत्वपूर्ण अंशों को समझने की कोशिश करते हैं।

अंश-1

प्रस्तावना

निबंध का पहला तत्त्व प्रस्तावना या भूमिका है। इसमें लेखक यह स्पष्ट करता है कि आगे पाठ में वह किस विषय पर चर्चा करेगा। प्रस्तुत पाठ आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी प्रकृति वंदना से प्रारंभ करते हैं। वे कहते हैं कि वैसे तो सभी पर्वतों की सुंदरता निराली होती है पर हिमालय का तो कहना ही क्या? ऐसा प्रतीत होता है मानो हिमालय ने अपनी दोनों भुजाएँ फैला रखी हों एक ओर पर्वतशृंखलाओं से निकलता अरब सागर और दूसरी ओर बंगाल की खाड़ी का लहलहाता समुद्र। इसके एक ओर रत्नों की खान, और दूसरी ओर लंबी 'शिवालिक' शृंखला है। शिवालिक अर्थात् शिव की अलकें या केशराशि। अलकनंदा नामक नदी, जिसे शिव की अलकों से निकलने के कारण ही अलकनंदा नाम मिला, शिवालिक पर्वत-माला से बहुत दूर बहती है। पर शिव तो महान तपस्वी हैं। उनकी सामान्य ऋषि-मुनियों जैसी जटाएँ तो हैं नहीं। उनकी तो बहुत लंबी और घनी जटाएँ हैं। यही कारण है कि वह दूर-दूर तक फैल गई हैं।

अभिप्राय यह है कि शिवालिक पर्वत-माला हिमालय का ही एक अंश है।

ऐसा माना जाता है कि हिमालय पर शंकर-पार्वती सदा निवास करते हैं और शिवशंकर सदैव समाधि लगाए तपस्या में लीन रहते हैं। उन्हें स्वयं की भी सुध नहीं इसीलिए उनकी जटाएँ बढ़ गई हैं, सूखी, नीरस और कठोर हो गई हैं। बिल्कुल इस शिवालिक शृंखला की भाँति। हिमालय का पाद देश भी ऐसा ही है। कहीं कोई हरियाली नहीं। दूब तक सूख गई है। चारों ओर फैली हैं-काली-काली चट्टानें और शुष्क रक्ताभ रेती। बस कहीं-कहीं बहुत दूर-दूर दिख जाते हैं तो कुछ सूखे झाड़-झंझाड़। यहाँ की इन्हीं विशेषताओं के कारण इनको शिव के जटाजूट के निचले हिस्से का पर्याय नाम 'शिवालिक' दे दिया गया है। लगता है कि यहाँ बस शिव जैसे अद्वितीय, कठिन, विषम परिस्थितियों को सह सकने वाले देवता ही रह सकते हैं।

पर आश्चर्य की बात तो यह है कि एक ठिगना-सा वृक्ष भी यहाँ इन्हीं जटिल परिस्थितियों में जी रहा है। सिर्फ़ जी ही नहीं रहा वरन् हँस-हँस कर, साहस से चट्टानों को भेद कर अपने लिए जीवन-जल तलाश रहा है तथा हरा-भरा बना रहकर दूसरों को किसी भी परिस्थिति में हार न मानने की प्रेरणा दे रहा है।

जीवन सदा एक जैसा नहीं रहता। कभी-सुख के दिन होते हैं कभी परिस्थितियाँ विपरीत होती हैं और विपत्तियाँ आती हैं। विपत्तियों से घबराना स्वाभाविक है पर मनुष्य वह है जो इनका सामना करे और इस पर विजय पा ले। मनुष्य का गुण ही है हर परिस्थिति में जीने के लिए संघर्ष करना केवल जीने के लिए ही संघर्ष न करना, विषम परिस्थितियों में भी समाज-विरोधी न होना, मनुष्यता से न गिरना। पर बहुत से लोग ऐसे भी होते हैं जो जल्दी ही थक-हार जाते हैं और समाज को भला-बुरा कहने लगते हैं– ऐसे लोगों को सही तरह से जीने की कला नहीं आती।

सही तरह से जीने की कला क्या है– आइए इसे सीखते हैं। वैसे तो सीखने के अनेक माध्यम हैं, पर दिलचस्प बात यह है कि यहाँ माध्यम है एक ठिगना-सा पेड़–'कुटज'।

अलकनंदा नामक नदी, जिसे शिव की अलकों से निकलने के कारण ही अलकनंदा नाम मिला, शिवालिक पर्वत-माला से बहुत दूर बहती है। पर शिव तो महान तपस्वी हैं। उनकी सामान्य ऋषि-मुनियों जैसी जटाएँ तो हैं नहीं। उनकी तो बहुत लंबी और घनी जटाएँ हैं। यही कारण है कि वह दूर-दूर तक फैल गई हैं।

अभिप्राय यह है कि शिवालिक पर्वत-माला हिमालय का ही एक अंश है। अलकनंदा नामक नदी, जिसे शिव की अलकों से निकलने के कारण ही अलकनंदा नाम मिला, शिवालिक पर्वत-माला से बहुत दूर बहती है। पर शिव तो महान तपस्वी हैं। उनकी सामान्य ऋषि-मुनियों जैसी जटाएँ तो हैं नहीं। उनकी तो बहुत लंबी और घनी जटाएँ हैं। यही कारण है कि वह दूर-दूर तक फैल गई हैं।

शिवालिक की पहाड़ियों में कहीं छाया नहीं, मिट्टी नहीं, खाद नहीं, पानी तक नहीं। पर इस भयंकर गर्मी को सहकर, भूखे-प्यासे रहकर भी जो वृक्ष शान से हरा-भरा बना हुआ जी रहा है। उसकी जिजीविषा (जीने की इच्छा) की प्रशंसा कैसे करें? क्या कहें? इतनी कठिन परिस्थितियों में भी वह रो-रोकर नहीं जी रहा, बल्कि हँसते-हँसते जी रहा है। लेखक सोचता है क्या ये इसकी बेशर्मी नहीं? यह मस्तमौला है क्या? जैसे फकीर होते हैं? तब वह विश्लेषण करता है कि अक्सर जिन लोगों के व्यवहार से बेहयाई झलकती है, वह कभी तत्त्वज्ञानी होते हैं। उन्हें कुछ भी कहिए वे हँसते रहते हैं। इन पर विरोधी बातों का, झूठे आरोपों का, अपशब्दों का कोई असर नहीं होता। इसलिए नहीं कि वे बेशर्म होते हैं वरन् इसलिए कि उन्होंने यह जान लिया है कि विरोधी परिस्थितियों में भी जीवन कैसे हँस-हँस कर जिया जाता है। वे मान-अपमान, ईर्ष्या-द्वेष से काफी ऊपर उठ चुके होते हैं। उनकी ज्ञान की जड़ें बहुत गहरी होती हैं। संभवत: कुटज भी ऐसा ही है। तभी तो वह चारों ओर फैली चट्टानों और रेती से भी, जहाँ जल का नामो-निशान नहीं होता, अपना भोजन कहीं गहरे से खींच लाता है और जीवित बना रहता है। यह तो आप जानते ही हैं कि पानी के बिना पौधों का हरा-भरा बने रहना तो बहुत ही कठिन है।

अंश-2

विषय-वस्तु

इस पाठ में वर्णित निबंध का दूसरा तत्त्व है - विषय-वस्तु। इसके अंतर्गत प्रस्तावना में कही गई बात को आगे बढ़ाया जाता है। लेखक यहाँ मूल विषय के तथ्यों की व्याख्या करता है।

प्रस्तुत पाठ की भूमिका को पढ़कर ही हमें यह आभास होने लगता है कि इसमें अपराजेय जीवनी शक्ति के परिचायक कुटज के माधयम से लेखक हमें कई संदेश देना चाहता है।

विषय-वस्तु में कुटज की इसी चर्चा को आगे बढ़ाते हुए लेखक कहता है कि शिवालिक की पहाड़ियों में उगे छोटे-छोटे वृक्षों के नाम, कुल, वंश, प्रकृति, स्वभाव आदि के बारे में मैं कुछ भी नहीं जानता, पर लगता है कि वे मुझे बरसों से जानते हैं। उनमें से एक वृक्ष ऐसा भी है जो बहुत ठिगना-सा, छोटा-सा है तथा जिसके पत्ते चौड़े और बड़े हैं। फूलों से खूब लदा यह

पेड़ सदा मुस्कराता-सा जान पड़ता है। मानो पूछ रहा हो, ''क्या तुम मुझे नहीं पहचानते?'' लेखक को लगता है कि वह उसे भली-भाँति जानता है। पर उसे उस वृक्ष का नाम याद नहीं आता। तब वह सोच में पड़ जाता है कि क्या किसी का नाम याद रखना ज़रूरी है? किसी पदार्थ का रूप मुख्य है अथवा नाम? नाम तो कुछ भी रखा जा सकता है, नाम याद आए चाहे न आए, पर विश्लेषण करने के बाद लेखक को लगता है कि यह उचित नहीं, क्योंकि नाम समाज के एक व्यक्ति के मानने से नहीं वरन् सबके स्वीकार करने से निर्धारित होता है। वरना एक ही व्यक्ति के सैंकड़ों, हजारों नाम हो जाएँ तब तो एक और बड़ी समस्या खड़ी हो जाएगी। किसी का कोई निश्चित नाम ही नहीं रहेगा। तब लेखक वृक्ष के उस नाम को याद करने का प्रयत्न करता है जिसे समाज ने अपनी स्वीकृति से दिया है। वह व्यक्ति के साथ-साथ तथा बाद में भी हज़ारों वर्षों तक उसे विशेष व्यक्ति का परिचय देता रहता है। इतिहास उसे प्रमाणित करता है। पर रूप पर समाज की मुहर नहीं लगी होती। वह तो किसी भी व्यक्ति का अपना ही होता है।

वास्तव में समाज ही किसी वस्तु अथवा व्यक्ति के उस नाम को स्वीकृति देता है, जो सदियों तक संबंधित पदार्थ का परिचय देता रहता है। रूप तो ईश्वर की देन है तथा वह व्यक्ति का अपना होता है, पर नाम समाज की देन है। आजकल के अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग इसी सामाजिक स्वीकृति को 'सोशल-सैंक्शन' का नाम देते हैं, जिसका अभिप्राय है- समाज द्वारा प्राप्त स्वीकृति। लेखक भी इस ठिगने से वृक्ष का वह नाम याद करने का प्रयत्न करता है जिसे समाज ने उस वृक्ष विशेष के लिए निर्धारित किया है, जिस नाम से वह सदियों से पुकारा जाता रहा है तथा आज भी जिस नाम से लोग उसे संबोधित करते हैं। अनेक पीढ़ियों से प्रयोग में आने वाले उस नाम को लेखक बार-बार याद करने का प्रयत्न करता है।

चित्र 14.3 : कुटज वृक्ष

ऐसा चिंतन करते-करते अचानक उसे याद आता है कि अरे! इस वृक्ष का नाम तो कुटज है। कुटज जिसकी संस्कृत साहित्य में बार-बार चर्चा होती रही है। निबंधकार मानता है कि इस वृक्ष को कुटज नाम इसीलिए मिला क्योंकि यह गिरिकूट पर उत्पन्न होता है। कालिदास ने इस वृक्ष की चर्चा अपनी काव्य-रचना 'मेघदूत' में भी की है जिसका मुख्य पात्र विरह-पीड़ित यक्ष, अपनी प्रेयसी को संदेश भेजने के लिए रामगिरि पर्वत पर मेघ को चुनता है और उन्हें यही कुटज के फूल भेंट स्वरूप देता है। हो सकता है जब कालिदास यक्ष के माध्यम से उसकी विरह-व्यथा वर्णित कर रहे थे तब उन्हें कुटज के वृक्ष भी अपने समान व्यथित, पीड़ित नज़र आए हों। इसी कारण उन्होंने सुगंधित, सुंदर चंपा, चमेली, कमल आदि फूलों को छोड़कर 'कुटज' के फूलों को ही मेघ की अर्चना- वंदना के लिए चुना हो। सचमुच कुटज

सौभाग्यशाली है। द्विवेदी जी की भी यही इच्छा है कि वह भी शिवालिक पर्वतश्रृंखला पर घिरे हुए मेघों की वंदना इन्हीं फूलों से करें।

क्रियाकलाप 14.1

आप कभी-कभी यह कल्पना अवश्य करते होंगे कि समुद्र, नदी, पर्वत, पक्षी या आकाश जीने की कला के विषय में कोई-न-कोई संदेश अवश्य देते हैं। इनमें से किसी एक के द्वारा दिए गए उस संदेश को संक्षेप में लिखिए।

पाठगत प्रश्न 14.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. 'शिवालिक' का अर्थ किया गया है-

   (क) शिव का त्रिनेत्र (ख) शिव की केशराशि

   (ग) शिव की दृढ़ता (घ) शिव की साधना

2. विपरीत परिस्थितियों में भी कुटज हरा-भरा बना रहता है, क्योंकि-

   (क) वह सदैव हँसता रहता है। (ख) उसके भीतर जिजीविषा है।

   (ग) उस पर किसी बात का प्रभाव नहीं पड़ता। (घ) उसकी जड़ें बहुत गहरी हैं।

3. कुटज सौभाग्यशाली है, क्योंकि-

   (क) कालिदास ने इसे अपनाया (ख) संस्कृत साहित्य में इसका उल्लेख है

   (ग) यह गिरिकूट पर उत्पन्न होता है (घ) फूलों से खूब लदा हुआ है

4. नाम को किसकी स्वीकृति प्राप्त होती है-

   (क) लेखक की (ख) व्यक्ति की

   (ग) ईश्वर की (घ) समाज की

अंश-3

अब आइए 'कुटज' के बारे में कुछ और जानें:

लेखक मानता है कि कालिदास के काम आने वाले कुटज का जितना सम्मान होना चाहिए था, उतना हुआ नहीं, इसलिए नहीं कि वह इज्जत के काबिल नहीं था, बल्कि इसलिए कि

इज्जत मिलना, न मिलना अपने-अपने भाग्य की बात है। कविवर रहीम को याद करते हुए लेखक कहता है कि रहीम भी अपने समय में बहुत आदरणीय व्यक्ति थे। सम्राट अकबर ने उन्हें नौरत्नों में स्थान दिया था पर इस स्वार्थी दुनिया ने उनका मोल नहीं जाना। बाद में जहाँगीर ने उनसे अपना काम निकलवा कर उनकी इतनी उपेक्षा कर दी जैसे कोई आम का रस चूसकर उसकी गुठली और छिलका फेंक देता है। पर सच्चाई यह है कि इससे उनका मूल्य कम नहीं हो जाता। यह गुठली ही कभी-कभी पेड़ का रूप धारण करके हमें हजारों वैसे ही रसदार फल लौटा देती है। पर दुनिया को उनके अथवा किसी के भी मूल्य की परख कहाँ? इसी कारण तो वह कुटज का मोल भी नहीं आँक सकी।

दुनिया से इस प्रकार का स्वार्थी और निर्मम व्यवहार पाकर रहीम की मन:स्थिति भी बिगड़ गई। तभी शायद उन्होंने कुटज की उपेक्षा करते हुए यह दोहा लिख डाला-

वे रहीम अब बिरछ कहँ, जिनकर छाँह गंभीर।
बागन बिच-बिच देखियत, सेंहुड़, कुटज, करीर।।

रहीम का यह कहना सत्य है कि कुटज छाँह नहीं दे सकता। पर क्या उसमें अन्य कोई गुण नहीं? उसके वे सुंदर मनोहारी फूल, क्या उनका मूल्य कुछ भी नहीं? लेखक तर्क करके यह निष्कर्ष निकालते हैं कि ऐसा नहीं है कि रहीम कुटज के गुण न जानते हों। वह जानते थे पर फिर भी उन्होंने कुटज के प्रति ऐसा उपेक्षित व्यवहार किया। उसका मुख्य कारण यही था कि वह स्वयं उपेक्षा के शिकार थे इसीलिए खराब 'मूड' में वह ऐसी गलतबयानी कर बैठे।

आगे 'कुटज' शब्द की व्युत्पत्ति की चर्चा करते हुए द्विवेदी जी कहते हैं कि कुटज का अभिप्राय है-जो कुट से उपजा, उत्पन्न हुआ हो। कुट 'घर' को भी कहते हैं तथा घड़े को भी। पर कुटज न तो घर में उगता है, न ही घड़े अथवा गमले में। प्रतापी अगस्त्य मुनि को भी 'कुटज' कहा जाता है। सोचो तो भला, क्यों? क्या वह घड़े से उत्पन्न हुए थे? लेखक को लगता है कि हम 'कुटज' को बहुत ही सीमित अर्थों में देख रहे हैं। बात कुछ और है। संस्कृत में 'कुटहारिका' तथा 'कुटकारिका' दासी को कहा जाता है। अत: मुनि अगस्त्य, शायद दासी से उत्पन्न हुए होंगे, दासी पुत्र होंगे। वह बार-बार सोचते हैं कि आखिर यह शब्द आया कहाँ से? आर्य भाषा से या किसी और से। उन्हें संदेह होता है कि ये आर्य भाषा का शब्द है। तब पाश्चात्य फ्रांसीसी विद्वान सिलवाँ लेवी का कथन उन्हें याद आता है कि "संस्कृत भाषा में फूलों, वृक्षों और खेती-बागवानी के अधिकांश शब्द आग्नेय भाषा-परिवार के हैं।" इसलिए संभवत: कुटज भी इसी भाषा-परिवार का है।

एक समय आस्ट्रेलिया तथा एशिया महाद्वीप मिले हुए थे, पर बाद में कोई भयंकर प्राकृतिक विस्फोट हुआ तथा दोनों महाद्वीप अलग-अलग हो गए। बहुत बाद में, लगभग उन्नीसवीं शताब्दी के आस-पास भाषा वैज्ञानिकों का ध्यान इस ओर गया कि एशिया में बसी कुछ जातियों की भाषा, आस्ट्रेलिया में बसी जातियों की भाषा से काफी मिलती-जुलती है। भारत की संथाल, मुंडा आदि जातियों की भाषा भी कुछ-कुछ वैसी ही है। इस कारण यह कहा जाता

है कि यह आग्नेय भाषा-परिवार का ही एक शब्द है। अब हम इसे कोल-परिवार की भाषा भी कह सकते हैं। संस्कृत में अनेक शब्द यहीं से लिए गए हैं।

पाठगत प्रश्न 14.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर दिए निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. रहीम कुटज की कद्र नहीं कर पाए, क्योंकि
   (क) उन्हें कुटज पसंद नहीं था।
   (ख) कुटज के फूल सुंदर नहीं थे।
   (ग) वह स्वयं समाज के उपेक्षित व्यवहार से दुखी थे।
   (घ) उनके विचार से कुटज तो मात्र एक बौना-सा पेड़ है।

2. ''लेकिन दुनिया है कि मतलब से मतलब है, रस चूस लेती है, छिलका और गुठली फेंक देती है'' वाक्य में दुनिया की कैसी मनोवृत्ति अभिव्यक्त हुई है-
   (क) मूल्य पहचानने वाली
   (ख) उपेक्षा करने वाली
   (ग) सम्मान देने वाली
   (घ) स्वार्थ पूरा करने वाली

3. 'कुट' कहते हैं-
   (क) घड़े और गमले को
   (ख) घड़े और पुत्र को
   (ग) घड़े और दासी को
   (घ) घड़े और घर को

अंश-4

आइए, आगे देखें कि लेखक को कुटज में आखिर ऐसा क्या विशेष दिखा, जो उन्होंने उसके ऊपर पूरा एक निबंध ही लिख डाला!

निबंधकार कहता है कि वह कुटज पर इसलिए बलिहारी है, क्योंकि कुटज नाम और रूप दोनों ही दृष्टियों से अपराजेय है, कभी हार नहीं मानने वाला है। यह गुण उसके सौंदर्य में चार चाँद लगा देता है। उसका नाम हज़ारों वर्षों से कुटज ही है, बदला नहीं। जबकि इस बीच अनेक पेड़-पौधों, वस्तुओं के नाम बदल गए। कितने नाम लुप्त हो गए। उनको दुनिया भूल भी गई। पर कुटज का नाम ज्यों-का-त्यों है। वह संस्कृत की विशाल शब्दराशि में आज भी अपना अधिकार जमाकर बैठा है। अन्य अनेक हिंदी शब्दों की तरह उसने हिंदी भाषा में आकर अपना मूल रूप नहीं बदला। उसका रूप-सौंदर्य भी अद्वितीय, आकर्षक और मनोहारी है। परंतु सर्वाधिक सराहनीय तो उसकी जिजीविषा (जीने की प्रचंड इच्छा) है। चारों ओर तीव्र झुलसाती धूप तथा धधकती लू के तेज़ झोंके, दूर-दूर तक फैला निःशब्द सन्नाटा और नीचे न प्राणदायी मिट्टी, न खाद, न पानी। बस गर्मी से जलती, तपती चट्टानें हैं, जहाँ प्राणों को पुलकित करने वाली, जीवन को रसमय बनाने वाली कोई परिस्थितियाँ नहीं है। पर कुटज है कि फिर भी जिए

जा रहा है। मजबूरी में नहीं जी रहा है, और न ही जीवन को बोझ मानकर जी रहा है। वरन् वह तो प्रसन्नतापूर्वक, हँस-हँस कर जी रहा है। विषम परिस्थितियों से घबराकर वह निरुत्साहित नहीं हुआ, उदास, अकर्मण्य नहीं हुआ। वरन् उसने तो निरंतर संघर्ष किया तथा अंतत: जीवन के कुरुक्षेत्र से विजयी होकर निकला। उसने सदैव यह संदेश दिया कि कैसी भी कठिन परिस्थितियाँ क्यों न आ जाएँ। कभी भी हार मत मानिए। जीवन को सही प्रकार से जीना न छोड़िए। सहिष्णु, दृढ़ और साहसी बनिए तो सफलता और विजय आपके कदम चूमेगी।

कुटज सूखी, नीरस और कठोर धरती से, बहुत संघर्षों के बाद अपने लिए जीवन-रस तलाश कर पाता है। परंतु फिर भी वह कंजूस और स्वार्थी नहीं, सहिष्णु है। सब कुछ वह स्वयं ही नहीं ले लेना चाहता। वह तो औरों को भी संकेत देता है कि रस का स्रोत कहाँ है। वह महादेव को भी उनके समाधि स्थल में अपने जीने, पनपने के लिए स्थान देने पर फूलों की भेंट चढ़ा-चढ़ाकर अपनी कृतज्ञता प्रकट करता है। वह कहता है कि यदि आप जीना चाहते हैं तो चाहे आपके सामने विपदाओं के पहाड़ आ पड़ें या दुख के सागर लहराने लगें अथवा भयंकर आँधी-तूफ़ान आपको चारों ओर से घेर लें पर सबसे जूझकर भी आप अपना वह 'प्राप्य' प्राप्त कीजिए जो सिर्फ़ आपके लिए है, जिसे विधाता ने सिर्फ आपके भाग्य में लिखा है। आप कर्मशील और परिश्रमी बनकर उसे प्राप्त कीजिए तथा दुख की राहों से भी हर्षोल्लास का क्षण चुन लीजिए, संघर्ष का सामना कीजिए तथा देखिए कि विजय किस तरह आपकी हो जाती है।

कुटज का यही संदेश है कि जीना भी एक कला है। सिर्फ कला ही नहीं, तपस्या है जिसमें अनेक विघ्न-बाधाएँ आती ही रहती हैं, पर फिर भी हमें हार नहीं माननी है, अपना अस्तित्व बचाए रखना है। जीना है और आत्मनिर्भर बनकर जीना है और आत्मविश्वास के साथ जीना है। पर मन में एक प्रश्न उठता है कि इतने कष्ट सहकर, विपदाओं से लड़-लड़कर भी आखिर जीना है तो क्यों?

क्या मात्र जीने के लिए जीना चाहिए? मौत हमारे हाथ में नहीं है, क्या यही तथ्य सिर्फ़ हमारे जीने का कारण है? क्या महज अपने लिए स्वार्थी बनकर जीते रहना उचित है? हम सोचते हैं तो लगता है कि इस स्वार्थी दुनिया में सब अपने लिए ही जी रहे हैं। शायद इसीलिए ब्रह्मवादी महान तत्त्ववेता ऋषि याज्ञवल्क्य ने अपनी पत्नी को समझाने की कोशिश की थी कि दुनिया में जो भी होता है और हो रहा है, यह सब व्यक्ति के अपने स्वार्थ के लिए है। किसी को अपनी पत्नी, पुत्र, बहन, भाई, या अन्य संबंधी इसलिए प्रिय नहीं होते कि उनका उनसे एक रिश्ता जुड़ा हुआ होता है, बल्कि वे सब तो उसे इसलिए प्रिय होते हैं कि वह कभी-न-कभी, किसी-न-किसी प्रकार से उसकी सहायता करते हैं, उसे लाभ पहुँचाते हैं।

क्या यह सोचकर दुख नहीं होता? यानी कि संसार में जो कुछ भी है सब महज अपने स्वार्थ के लिए है? यदि ऐसा ही है तो क्या करना है इस स्वार्थी दुनिया में जीकर? जीवन से भला ऐसा क्या मोह? पश्चिम के हॉब्स और हेल्वेशियस जैसे कुछ विचारक भी ऐसा ही मानते हैं। पर आश्चर्य होता है, ऐसे विचार जानकर! क्या दुनिया में त्याग, प्रेम, ममता, परार्थ, परमार्थ कुछ नहीं है? क्या संसार सिर्फ़ प्रचंड स्वार्थ के बल-बूते पर जी रहा है? यदि सिर्फ़ जीना उसके

कर्म करने का कारण है तो फिर परहित, लोकमंगल, मानव-कल्याण आदि बड़ी-बड़ी बातें झूठ हैं। सब बकवास हैं।

लेखक का मानना है कि यदि ऐसा होता तो प्रजाहित अथवा जनता के कल्याण की बातें कहकर कुछ व्यक्ति अलग-अलग राजनीतिक दल नहीं बना लेते। रावण और कंस पर राम तथा कृष्ण की विजय का प्रतिवर्ष अभिनय नहीं किया जाता। देशोद्धार के नारे नहीं लगाए जाते तथा साहित्य की अमर कृतियों, धर्मग्रंथों और विभिन्न कलाओं द्वारा परोपकार, आत्मोत्सर्ग, बलिदान, त्याग की महिमा नहीं गाई जाती। पाप पर पुण्य की, असत्य पर सत्य की, अनीति पर नीति की विजय बार-बार दिखाने का आखिर क्या कारण है?

याज्ञवल्क्य ऋषि की बात पूर्णत: असत्य तो नहीं है पर हाँ, वेद अर्धसत्य अवश्य है। उसे अंतिम सत्य मान लेना गलत है। वास्तव में उनके द्वारा प्रयुक्त 'आत्मन:' शब्द का अर्थ 'केवल अपने लिए' मान लेना, इस शब्द का अर्थ संकुचित करना है। 'आत्मन:' का अर्थ बहुत व्यापक है जिसमें संपूर्ण समाज का, पूरी मानव-जाति का हित समाया हुआ है क्योंकि आत्मा, परमात्मा का एक अंश है तथा वह सभी में विद्यमान है। अत: ब्रह्मवादी याज्ञवल्क्य के 'आत्मन:' शब्द का सही अर्थ जानकर, सबके हित और कल्याण के लिए कार्य करना चाहिए।

अपने में सबको और सबमें अपने आपको देखकर व्यक्ति जब कोई कार्य करता है, तभी उसे पूर्ण सुख और संपूर्ण आनंद की प्राप्ति होती है, क्योंकि तब वह सबके हित में ही अपना हित देखने लगता है तथा स्वार्थ और संकीर्णताओं से ऊपर उठ कर परहित, परोपकार की ओर अग्रसर होता है। उस समय सबके कल्याण के लिए वह स्वयं का बलिदान करने से भी पीछे नहीं हटता। अपने को वह उसी प्रकार गलाकर, नष्ट कर दूसरों की प्रसन्नता का साधन बनाता है जिस प्रकार अंगूर स्वयं को मिटाकर आनंद कराते हैं जो कुछ क्षणों के लिए ही सही, मानव को सारे दुखों से दूर कर देता है।

अंश-5

आइए, पिछले पृष्ठ पर कही गई बात को आगे बढ़ाते हैं-

क्या आपको कभी किसी ऐसे स्वार्थ ने घेरा है कि आपने दूसरे की भावनाओं की परवाह ही न की हो? क्या आप अपनी उस गलती के लिए बाद में पछताए नहीं? तब आपने क्या किया, पश्चाताप? उस गलती को दोबारा न दोहराने की प्रतिज्ञा? बहुत अच्छे। ऐसा ही होना चाहिए।

आगे देखें कुटज की और कौन-कौन-सी विशेषता लेखक बता रहा है? क्या हमारे में इनमें से कोई विशेषता है या नहीं? अपने गुणों पर भी ध्यान दीजिए और अपने में कम से कम पाँच गुणों की सूची बनाकर देखिए।

लेखक के मन में प्रश्न उठता है कि कुटज क्या केवल जी रहा है? उसे जीना है मात्र इसीलिए जी रहा है अथवा वह दूसरों को कुछ संदेश भी दे रहा है, परमार्थ भी सोच रहा है? लगता

है कि कुटज का संपूर्ण जीवन सोद्देश्य है। वह पग-पग पर हमें जीवन का आदर्श सिखाता चलता है। वह अपने जीवन का उदाहरण हमारे सामने रखकर हमें सिखाता है कि आत्मनिर्भर बनिए, भीख मत माँगिए, किसी पर आश्रित मत रहिए। ईश्वर के अतिरिक्त किसी से मत डरिए। नीति और धर्म के उपदेश मात्र मत दीजिए। उन्हें अपने व्यवहार से दर्शा इस उन्नति के लिए कर्म कीजिए, कर्मशील बनिए, किसी की चापलूसी मत कीजिए। दूसरों को अपमानित करने, दुख पहुँचाने के लिए ही सिर्फ ग्रहों की पूजा-अर्चना कर उनकी खुशामद मत कीजिए। अपना भाग्य बदलने के लिए विभिन्न रत्न धारण करने पर श्रद्धा मत रखिए, कर्मठ और धैर्यवान बनिए। लेखक का कहना है कि छल-कपट छोड़ दो, हीन भावना से ग्रसित न हो, चाटुकार मत बनो। संयमी, विवेकवान, उदात्त, संघर्षशील और स्वाभिमानी बनो।

यहाँ द्विवेदी जी ने कुटज की जीवन-शैली के माध्यम से वर्तमान जीवन की कुत्सा, स्वार्थपरता, चाटुकारिता, भ्रष्टाचार, लोभ, लिप्सा, मोह, आसक्ति, प्रपंचों से भरी राजनीति, अंधविश्वासों, लोक-कल्याण के नाम पर हो रहे छल-कपट, असत्य, आडंबर आदि पर करारी चोट की है तथा व्यंग्यात्मक तरीके से मानव-मूल्यों के ह्रास पर चिंता व्यक्त की है। आपको भी ऐसा लगता है न!

पाठगत प्रश्न 14.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. 'जिजीविषा' शब्द में है-

   (क) अद्वितीय होने की इच्छा　　(ख) जीने की दुर्दम इच्छा

   (ग) विवशता का भाव　　(घ) पराजित होने का भाव

2. कुटज है-

   (क) सहिष्णु　　(ख) नीरस

   (ग) कोयल　　(घ) उदास

3. लेखक किस बात का खंडन करता है-

   (क) जीना एक कला और तपस्या है।　　(ख) याज्ञवल्क्य की बात को गलत मानने का।

   (ग) अबोध, बुद्धिहीन　　(घ) त्याग, ममता, परमार्थ जैसे भावों को सत्य मानने का।

4. भाषा-विचार के संदर्भ में किसका उल्लेख है-

   (क) सिलवाँ लेवी　　(ख) हेल्वेशियस

   (ग) हॉब्स　　(घ) याज्ञवल्क्य

अंश-6

उपसंहार

निबंध का तीसरा मुख्य तत्त्व है-उपसंहार। इसमें लेखक निबंध की विषयवस्तु को उदाहरणों के साथ स्पष्ट करने के उपरांत वह तथ्य अथवा निष्कर्ष पाठकों के समक्ष रखते हैं, जो उनकी दृष्टि में सारे निबंध का निचोड़ है।

जरा देखें तो प्रस्तुत निबंध का उपसंहार लेखक ने किस प्रकार किया है।

लेखक का विचार है कि सच्चा जीवन-दर्शन यही है कि व्यक्ति कर्म करता रहे तथा यथासंभव अच्छे कर्म करने का प्रयास करे। यदि ऐसा करने से किसी अन्य व्यक्ति अथवा व्यक्तियों का भला होता है तो उसे स्वयं पर अहंकार नहीं होना चाहिए कि वह भाग्यविधाता, पुण्यात्मा है। इसके विपरीत यदि वह सत्कर्म नहीं कर पाता तथा दूसरों को कष्ट अथवा दुख पहुँचा कर सोचता है कि वह सर्वशक्तिशाली, सर्वशक्तिमान है तो वह भी उसकी अल्पबुद्धि का प्रमाण है, क्योंकि संसार में कोई भी प्राणी किसी का अपकार अथवा उपकार तब तक नहीं कर सकता जब तक ईश्वर न चाहे। हमारे अच्छे-बुरे कर्मों का संचालक, भाग्यविधाता, कर्ता तो वस्तुतः वही एक ईश्वर है। हम तो मात्र उसकी इच्छानुसार कर्म कर रहे हैं। हमारे कर्मों से किसी का भला हो जाए तो बहुत अच्छी बात है पर यदि ऐसा न हो पाए तब भी कोई दुख नहीं। हमें कर्म तो करते ही रहना चाहिए। पर विचारणीय तथ्य है कि हमें कभी भी गर्व नहीं करना चाहिए। सुख पहुँचाने का गर्व यदि गलत है तो दुख पहुँचाने का गर्व तो बिल्कुल ही हमारी विकृत भाव-वृत्ति का बोधक है।

द्विवेदी जी हमें जीवन-दर्शन समझाते हुए बताते हैं कि वस्तुतः सुख और दुख तो व्यक्ति के मन के अनुरूप होते हैं। कोई भी सुख सबके लिए सुख का कारण नहीं हो सकता तथा कोई भी दुख सबको दुखी नहीं कर सकता। जो एक व्यक्ति के लिए ''सुखदायक'' परिस्थिति है वही दूसरे के लिए ''दुख'' का कारण भी हो सकती है। यदि किसी का मन कमजोर, अस्थिर या चंचल है, अपने वश में नहीं है तो बाह्य जीवन की परिस्थितियों से वह बहुत जल्दी प्रभावित हो जाता है, सुखी अथवा दुखी हो जाता है। उसकी इंद्रियाँ उसके नियंत्रण में नहीं रहतीं और वह सदैव असंतुष्ट रहता है। निष्कर्ष रूप में वह अपनी क्षुद्र स्वार्थ भावना को लेकर कभी किसी की खुशामद करता है तो कभी दाँत निपोर कर किसी की जी हजूरी करता है। उसका आत्म-सम्मान, आत्म-गौरव, आत्म-विश्वास सब समाप्त हो जाता है तथा वह अपनी कमजोरियों को छिपाने के लिए झूठी शान दिखाता है, दूसरों को अपने समान स्तर पर लाने, हानि पहुँचाने के लिए कुटिल चालों के जाल बिछाता है तथा दूसरों के इशारों पर नाचता है। इस प्रकार वह निरंतर पतन के मार्ग की ओर अग्रसर होता चला जाता है।

कुटज ऐसा नहीं करता। वह छल-कपट, राग-द्वेष, मिथ्याचार, षड्यंत्र, असत्य सबसे दूर है, स्वाधीन है। उसका मन अपने वश में है इसलिए वह कामनाओं से मुक्त आनंदमयी वैरागी है-बिल्कुल राजा जनक की भाँति। राजा जनक भी संपूर्ण भोगों का भोग करते हुए सदैव उनसे दूर रहे, इस तथ्य से अवगत रहे कि ये सब मिथ्या मोह है। कुटज भी इसी तरह जीते हुए मानो घोषणा करता है कि वह अपने संकीर्ण स्वार्थ के लिए कभी पथ-भ्रष्ट नहीं होता, दूसरे

के मन को टटोलता नहीं फिरता। अपनी इच्छाओं में भटक नहीं जाता। वह तो इनसे परे निरासक्त, निर्लिप्त है। उसने अपने मन को वश में कर लिया है, उसे जीत लिया है और अब कभी उसका मन, उस पर हावी हो उसे पराभूत नहीं कर सकेगा।

पाठगत प्रश्न 14.4

लेखक के अनुसार निम्नलिखित में से **गलत विकल्प** का चुनाव कीजिए-

1. निम्नलिखित में से मुहावरा नहीं है–

   (क) जूते चाटना (ख) दाँत निपोरना

   (ग) बगलें झाँकना (घ) नीलम धारण करना

2. कुटज

   (क) मिथ्याचारों से युक्त है। (ख) भोगों में लिप्त है।

   (ग) अपने दिल पर सवारी करता है। (घ) घड़े से पैदा हुआ है।

3. लेखक कुटज को देखकर रोमांचित होता है, क्योंकि वह–

   (क) अवधूत है (ख) केवल जी रहा है

   (ग) विचलित नहीं होता (घ) विशाल हृदय है

4. 'कुटज अपने मन पर सवारी करता है, मन को अपने पर सवार नहीं होने देता' कथन का संदेश है-

   (क) आप भी अपने मन के अनुसार कार्य करें।

   (ख) स्वार्थ सिद्धि के लिए जीवन में किसी भी प्रकार की चुनौती स्वीकार करें।

   (ग) मन तो चंचल है पर उसका कहना कभी नहीं टालें।

   (घ) स्वयं पर नियंत्रण रखें, मन को वश में करके उस पर जीत हासिल करें।

14.4 भाषा-शैली

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी आधुनिक युग के गद्यकार हैं अत: उनकी भाषा सहज स्वाभाविक रूप में प्रयुक्त होती है। उनकी भाषा में बोलचाल के शब्दों की प्रधानता रही है और इसी के माध्यम से वे गंभीर तथ्यों को सरलता से प्रस्तुती करते चलते हैं। *'कुटज' में स्थान-स्थान पर इस प्रकार की भाषा मिलती है, जैसे- ''कुटज क्या केवल जी रहा है? वह दूसरे के द्वार पर भीख माँगने नहीं जाता, कोई निकट आ गया तो भय के मारे अधमरा नहीं हो जाता, नीति और धर्म का उपदेश नहीं देता फिरता।''*

द्विवेदी जी प्रचलित भाषा की शब्दावली के प्रयोग के पक्षधर हैं, परंतु संस्कृत के तत्सम् शब्दों को भी स्वीकार करते हैं। उनका कहना है, *''प्रचलित शब्दों को विदेशी कह कर त्याग देना*

मूर्खता है पर किसी भाषा के शब्दों का प्रचलन देखकर अपनी हजारों वर्ष की परंपरा की उपेक्षा करना आत्मघात है। संस्कृत ने भिन्न-भिन्न भाषाओं के हजारों शब्द लिए हैं, पर उन्हें संस्कृत बनाकर।''

उन्हें अंग्रेज़ी के प्रचलित शब्दों और वाक्यों का प्रयोग करने में भी कोई झिझक नहीं है। यदि प्रवाह बनता हो तो सरलता से किसी भी भाषा को अपना लेते हैं।

''नाम में क्या रखा है-ह्वाटस देयर इन ए नेम्'' (''जिसे सोशल-सैक्शन कहा जाता है।'', ''मगर कभी-कभी कवियों का 'मूड' खराब हो जाया करता है।'' उन्होंने 'कुटज' में भी कहा है, *''संस्कृत भाषा ने शब्दों के संग्रह में कभी छूत नहीं मानी। न जाने किस-किस नस्ल के कितने शब्द उसमें आकर अपने बन गए।''*

द्विवेदी जी ने कई जगह संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है तो कहीं अरबी-फ़ारसी की शब्दावली भी अपनाई है, जैसे– उल्लास-लोल, चारुस्मित कुटज, नीलोत्पल, अर्घ्य, अनत्युच्च पर्वतशृंखला (संस्कृत की तत्सम शब्दावली) तथा इज्जत, कद्रदान, गलतबयानी, अदना-सा, (अरबी-फारसी शब्दावली)।

द्विवेदी जी ने निबंध में सूक्तियों, मुहावरों, लोकोक्तियों और सूत्र वाक्यों का भी खुलकर प्रयोग किया है। इसके कारण उनकी अभिव्यक्ति में गहनता, लोकप्रियता, सरसता और मनोरंजकता आ जाती है और वे अपने विचारों को समर्थन देते हुए पुष्ट करते चलते हैं।

सूक्ति

''आत्मनस्तु कामाय सर्वप्रियं भवति'', ''दुरंत जीवनी शक्ति है'', ''कठिन उपदेश है।'', ''जीना भी एक कला है।'' ''दुख और सुख तो मन के विकल्प हैं।'' *''सुखी वह है जिसका मन वश में है। दुखी वह है जिसका मन परवश में है।'', ''रूप व्यक्ति-सत्य है, नाम समाज-सत्य है''* आदि।

मुहावरे

दाँत निपोरना, जी हजूरी, खुशामद करना, जाल बिछाना आदि का आवश्यकतानुसार प्रयोग किया गया है। आचार्य जी मुख्यत: तत्सम शब्द प्रधान, परिमार्जित भाषा का प्रयोग करते हैं और सूत्र वाक्यों का अभिव्यंजनात्मक प्रयोग कर भाषा को सुंदर रूप प्रदान करते हैं। लेखक ने विभिन्न विषयों पर निबंध रचना की है और आवश्यकतानुसार अनेक शैलियों में निबंध लिखे हैं।

'कुटज' नामक निबंध में आचार्य जी ने **गवेषणात्मक शैली** का प्रयोग किया है, जैसे – *''संस्कृत में 'कुटज' रूप भी मिलता है और कुटच भी। मिलने को तो कुटज भी मिल जाता है। तो यह शब्द किस जाति का है।'', ''संस्कृत में कुटिया या कुटीर शब्द भी कदाचित् इसी*

शब्द से संबंधित हैं। क्या इस शब्द का अर्थ घर ही है, 'घर में काम-काज करने वाली' दासी 'कुटकारिका' और 'कुटहारिका' कही ही जा सकती है।''

परंतु इसके अतिरिक्त कुटज में अन्य शैलियों का भी प्रयोग किया गया है-

लालित्यमय विवेचनात्मक भाषा शैली

'नाम इसलिए बड़ा नहीं... चित्त गंगा में स्नात!'

विश्लेषणात्मक भावनापूर्ण शैली

''रूप मुख्य है या नाम? नाम बड़ा है या रूप? पद पहले है या पदार्थ? पदार्थ सामने है पद नहीं सूझ रहा है। मन व्याकुल हो गया।''

भावनात्मक और विवेचनात्मक

''दुरंत जीवनी शक्ति... विचित्र नहीं है यह तर्क?''

इसी प्रकार कहीं प्रतीकात्मक तो कहीं आलंकारिक शैली के भी दर्शन होते हैं। द्विवेदी जी की कृतियों में चिंतन-मनन और अनुशीलन के बिंब स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं।

पाठ में आए शब्दों के अर्थ समझ कर उसी आधार पर आप अन्य शब्दों का भी निर्माण कर सकते हैं आपको इससे कई लाभ होंगे। जहाँ उस शब्द का ठीक-ठीक अर्थ समझने में सहायता मिलेगी, वहीं उसी नमूने के आधार पर आप नए शब्दों को स्वयं बना सकते हैं, जैसे–

पहाड़फोड़ - पहाड़ (को) फोड़कर आने वाला

पातालभेद - पाताल (को) भेदकर

इसी नमूने पर आप अन्य शब्द बना सकते हैं, जैसे-

'आकाशभेद' - उससे ही बनेगा **'आकाशभेदी'**

'ध्वनि भेद - उससे ही विशेषण रूप प्रयोग 'ध्वनिभेदी बाण'

इसी प्रकार अन्य नमूनों के शब्द ले सकते हैं:

नमूना	अन्य शब्द निर्माण
समाधिस्थ - समाधि (में) लगे हुए	**समीपस्थ** - समीप में
	निकटस्थ - निकट में
	दूरस्थ - दूर में (दूर रहने वाला)
कद्रदान - कद्र देने वाला	**पानदान** - पान रखने का पात्र
	कलमदान - कलम रखने का पात्र

टिप्पणी : **'दान'** का अर्थ कुछ बदल गया है। यह भी याद रखें कि यह 'दान' फ़ारसी से ले लिया गया है। जबकि संस्कृत का 'दान' शब्द बिल्कुल अलग है, जिससे कई शब्द बनते हैं:

दानी	– दान देने वाला	**दानवीर**	– वह व्यक्ति जिसने दान देने में प्रसिद्धि पाई है।
प्रतिनिधित्व	– किसी के स्थान पर अथवा किसी के लिए काम करने वाले व्यक्ति का भाव	**देवत्व**	– देवता का भाव
		स्वत्व	– स्व (अपनेपन) का भाव
शब्दराशि	– शब्दों का ढेर, अनेक प्रकार के शब्दों का ठीक-ठीक प्रयोग शब्दावली	**धनराशि**	– धन का ढेर, अधिक धन
		जमाराशि	– जमा किया हुआ धन

इसी प्रकार अन्य शब्द छाँटिए और उनका ठीक-ठीक अर्थ समझिए, साथ ही उसी नमूने के शब्द भी बनाइए। अगर अर्थ समझ में न आए तो कोश में देखकर समझिए। कोश कैसे देखें यह भी आपको बताया जा रहा है।

पाठगत प्रश्न 14.5

1. 'कुटज' के अंतिम गद्यांश ''दुख और सुख ....उनसे मुक्त है'' में जिस शैली का प्रयोग हुआ है, वह है–

   (क) विश्लेषणात्मक   (ख) विवेचनात्मक

   (ग) भावात्मक   (घ) प्रतीकात्मक

2. भाषा के प्रति लेखक का दृष्टिकोण है–

   (क) समावेशी   (ख) मनोरंजक

   (ग) शुद्धतावादी   (घ) तत्समाग्रही

14.5 आपने क्या सीखा

1. ''कुटज'' शिवालिक की नीरस और कठोर चट्टानों में उगने वाले एक ठिगने से वृक्ष का नाम है।
2. 'शिवालिक' का अर्थ शिवा की अलकें अथवा शिव के जटाजूट का निचला हिस्सा है।

3. पद अथवा पदार्थ में पद का महत्त्व पदार्थ से कम नहीं होता, क्योंकि वह सामाजिक स्वीकृति से निर्धारित होता है।

4. कुटज को उसकी अनेकानेक विशेषताओं के आधार पर अनेक नाम दिए जा सकते हैं, जैसे–वनप्रभा, गिरिकांता, गिरिकूट बिहारी।

5. संस्कृत साहित्य में, विशेषकर कालिदास के साहित्य में कुटज को विशेष सम्मान दिया गया है।

6. कभी-कभी रहीम जैसे साहित्यकार भी गलत बयानी के शिकार होकर, कुटज सरीखे वृक्ष का मूल्य आँकने में असफल हो सकते हैं।

7. कुटज 'घर' अथवा 'घड़े' से उत्पन्न व्यक्ति को, 'कुटिया' में उत्पन्न 'कुटकारिका' या 'कुटहारिका' (दासी) से उत्पन्न किसी व्यक्ति को कहा जाता है। इसी प्रकार कुटज के अनेक अर्थ हैं।

8. कुटज 'आग्नेय' अथवा 'कोल' भाषा-परिवार का एक शब्द है।

9. अपराजेय जीवनी-शक्ति का स्वामी कुटज नाम और रूप दोनों में अद्वितीय है। सूखी, नीरस और कठोर चट्टानों के मध्य प्रतिकूल परिस्थितियों में जीते हुए भी वह पुष्पों से लदा रहता है तथा अपने मूल नाम की हजारों वर्षों से रक्षा करता हुआ हमें भी जीवन का उद्देश्य सिखाता रहता है।

10. कुटज के समान हमें अपने संकीर्ण स्वार्थ के लिए नहीं, वरन् परमार्थ के लिए स्वाभिमानी, आत्मनिर्भर, कर्मठ, त्यागी और दूसरों की भलाई के लिए भी कुछ सोचना चाहिए।

11. उपकार, अपकार की बातें छोड़कर हमें 'कर्म' में आस्था रखनी चाहिए तथा यथासंभव अच्छे कर्म करते रहने का प्रयत्न करना चाहिए।

12. सुख और दुख की भावना हमारी मानसिक भावना से ही उपजती है, अत: हमें मन को जीतने का प्रयत्न करना चाहिए।

13. निबंधकार की भाषा-शैली अद्भुत तथा शब्द-संपदा अद्वितीय है। लेखक ने प्रस्तुत निबंध में सभी-भावों, शैलियों, शब्दों, भाषा-रूपों का समुचित सामंजस्य किया है।

14.6 चित्रात्मक प्रस्तुति

कुटज

- प्रमुख संदर्भ
  - हिमालय
  - कालिदास
  - शिव-पार्वती
  - याज्ञवल्क्य
  - शांतिपर्व (महाभारत)
  - राजा जनक
- परिवेश और संस्कृति
  - हिमालय प्रदेश का वर्णन
- मानव मूल्य
  - संघर्षशीलता
  - आत्मनिर्भरता
  - स्वाभिमान
  - त्याग
- निबंध: तत्व
  - भूमिका
  - विषयवस्तु
  - उपसंहार
- निबंध: शैलियाँ
  - भावात्मक
  - विवेचनात्मक
  - गवेषणात्मक
- भाषा
  - सूक्तियाँ
  - मुहावरे
  - अपरिचित शब्द
- रचनाकार
  - आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अनेक निबंध संग्रह:- अशोक के फूल, शिरीष के फूल आम फिर बौरा गए आदि

14.7 सीखने के प्रतिफल

- अपने परिवेशगत अनुभवों पर अपनी स्वतंत्र और स्पष्ट राय व्यक्त करते हैं।
- प्रमुख जीवन-मूल्यों पर अपने साथी से चर्चा करते हैं।
- अपने अनुभवों एवं कल्पनाओं को सृजनात्मक ढंग से लिखते हैं, जैसे- कोई यात्रा-वर्णन, संस्मरण, डायरी आदि लिखना।
- साहित्य की विविध विधाओं में प्रयुक्त भाषा की बारीकियों पर चर्चा करते हैं (जैसे - विशिष्ट शब्द-वाक्य-शैली-संरचना)।
- विभिन्न साहित्यिक विधाओं को पढ़ते हुए उनके सौंदर्य पक्ष एवं व्याकरणिक संरचनाओं पर चर्चा करते हैं।
- प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों, घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को बोलकर/लिखकर व्यक्त करते हैं।
- भाषा-कौशलों के माध्यम से जीवन-कौशलों को आत्मसात करते हैं और अभिव्यक्त करते हैं।

14.8 योग्यता विस्तार

(क) लेखक परिचय

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिंदी जगत के श्रेष्ठ निबंधकार, उपन्यासकार, आलोचक के

चित्र 14.4 : आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

अतिरिक्त कुशल वक्ता और सफल अध्यापक रहे हैं। इनका जन्म सन् 1907 में बलिया जिले के एक गाँव में हुआ था। इनका नाम हजारीप्रसाद कैसे पड़ा, यह भी एक रोचक घटना है। जिस दिन इनका जन्म हुआ, उस दिन इनके पिता को हजार रुपए की आमदनी हुई थी।

आप बहुत ही हँसमुख स्वभाव के व्यक्ति थे। उनके मुक्त भाव की हँसी के ठहाकों को लोग आज भी याद करते हैं।

द्विवेदी जी का अध्ययन-क्षेत्र बहुत व्यापक था। संस्कृत, हिंदी, प्राकृत, अपभ्रंश बांग्ला आदि भाषाओं पर आपका पूर्ण अधिकार था, इसके अतिरिक्त इतिहास, दर्शन, धर्मशास्त्र, संस्कृत आदि विषयों का गहरा ज्ञान था। इसका अंदाज़ा आपने यह निबंध पढ़कर लगा ही लिया होगा।

द्विवेदी जी कई विश्वविद्यालयों के हिंदी विभाग के अध्यक्ष रहे। सन् 1957 में भारत सरकार ने उन्हें पद्‌मभूषण से सम्मानित किया। 19 मई, 1979 में इनका देहांत हो गया।

(ख) परोपकार, कार्पण्य दोष की निंदा, जीना-मरना ईश्वर के हाथ में होना अथवा मन की चंचलता पर काबू पाने के प्रयास का उपदेश 'गीता' में भी है, जैसे–

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।

तुलसीदास ने भी कहा है – *परहित सरिस धर्म नहीं भाई।*
परपीड़ा सम नहि अधमाई।

तथा रहीम भी लिखते हैं कि –

गोधन, गजधन, बाजि धन और रतन धनि खान।
जब आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान।

इन्हें पाठ में आए प्रसंगों से जोड़कर देखिए कि ये कहाँ, किस प्रसंग के भाव से जुड़ते हैं? आप सोचिए कि कबीरदास ने भी तो इन्हीं भावों को लेकर कहीं कुछ नहीं कहा था? यदि हाँ, तो लिखिए।

(ग) आचार्य द्विवेदी के 'अशोक के फूल', 'शिरीष के फूल', 'आम फिर बौरा गए', 'कल्पलता' आदि निबंध पढ़िए।

14.9 पाठांत प्रश्न

1. कुटज वृक्ष की किन्हीं सात विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. प्रस्तुत निबंध द्वारा लेखक क्या संदेश देना चाहते हैं? लिखिए।
3. विषम परिस्थितियों में पड़े व्यक्ति को कुटज किस प्रकार सहारा देता है?
4. निम्नलिखित गद्यांशों की अपने शब्दों में सप्रसंग व्याख्या कीजिए:

   (क) याज्ञवल्क्य ने जो बात ....कृपण बना देता है।

   (ख) जो समझता है कि वह ....अभिमान नहीं होना चाहिए।

   (ग) जीना चाहते हो ....उल्लास खींच लो।

   (घ) दुनिया में त्याग नहीं है............गलत ढंग से सोचना है।

   (ङ) दुख और सुख तो मन के विकल्प हैं..........जाल बिछाता है।

5. नाम के निर्धारण में समाज की क्या भूमिका है?
6. प्रस्तुत निबंध से पाँच अंग्रेजी के, दस संस्कृत के तथा दस अरबी-फारसी के शब्द छाँटकर लिखिए।
7. हजारीप्रसाद द्विवेदी के भाषा-संबंधी दृष्टिकोण पर टिप्पणी लिखिए।

14.10 उत्तरमाला

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (ग) 2. (ख) 3. (घ) 4. (ख) 5. (क)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

14.1	1. (ख)	2. (ख)	3. (क)	4. (घ)
14.2	1. (ग)	2. (ग)	3. (घ)	
14.3	1. (ख)	2. (क)	3. (ग)	4. (क)
14.4	1. (घ)	2. (घ)	3. (ग)	4. (घ)
14.5	1. (ग)	2. (क)		

15

ठेस

(फणीश्वरनाथ 'रेणु')

आपने अपने आसपास ऐसे कलाकारों और कारीगरों को देखा होगा या उनके बारे में सुना होगा जो किसी समय बहुत मशहूर थे, लेकिन आज समय के बदलने के साथ उनकी कला और कारीगरी के प्रशंसक कम हो गए हैं। ऐसी स्थिति में इन कलाकारों और कारीगरों की पूछ समाज में धीरे–धीरे कम हो गई है। अपने हुनर को छोड़ चुके ये लोग आज जीवन–यापन की खोज में दर–दर भटकने के लिए मज़बूर हैं। ऐसे कारीगरों को लोग कामचोर समझते हैं और उनकी उपेक्षा करते हैं। लोगों की इस उपेक्षा से कई बार कारीगरों के दिल पर गहरी ठेस लगती है और वे इसे सह नहीं पाते।

यह कहानी सिरचन नाम के एक ऐसे ही कारीगर की है जिसे एक परिवार के दुत्कार से गहरी ठेस लगती है। इसके बावजूद वह इतना मानवीय है कि बिना दाम लिए अपनी कारीगरी से सारी चीज़ें बनाकर इसी परिवार की ससुराल जाती मानू को स्टेशन पर दे आता है। यह सिरचन कैसा कारीगर है, आइए जानें।

कहानीकार कारीगर के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हैं और यह भी चिंता व्यक्त करते हैं कि ऐसे कारीगरों की उपेक्षा हो रही है। दूसरी बात है कि ग्रामीण समाज के भेदभाव को प्रस्तुत करते हैं। गरीब वर्ग की उदात्त भावना को भी बखूबी प्रस्तुत किया गया है। उसमें संवेदनशीलता और करुणा का भाव विद्यमान है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- सिरचन के काम छोड़कर चले जाने के मनोवैज्ञानिक कारणों को स्पष्ट कर सकेंगे;
- कलाकारों और कारीगरों के स्वभाव की मानवीय भावनाओं को समझ कर अभिव्यक्त कर सकेंगे;
- उपेक्षित समाज के प्रति सामान्य लोगों के व्यवहार पर अपना दृष्टिकोण व्यक्त कर सकेंगे;

- कहानी के मुख्य पात्रों का चरित्र-चित्रण कर सकेंगे;
- कहानी के विशेष शिल्प के महत्व को प्रतिपादित कर सकेंगे;
- कहानी की भाषा-शैली पर टिप्पणी कर सकेंगे।

15.1 मूल पाठ

आइए, इस कहानी को एक बार ध्यान से पढ़ लेते हैं। आपकी सहायता के लिए कहानी आए कठिन शब्दों के अर्थ हाशिए पर दिए जा रहे हैं।

खेती-बारी के समय, गाँव के किसान सिरचन की गिनती नहीं करते। लोग उसको बेकार ही नहीं, 'बेगार' समझते हैं। इसलिए, खेत-खलिहान की मजदूरी के लिए कोई नहीं बुलाने जाता है सिरचन को। क्या होगा, उसको बुला कर? दूसरे मजदूर खेत पहुँच कर एक-तिहाई काम कर चुकेंगे, तब कहीं सिरचन राय हाथ में खुरपी डुलाता दिखाई पड़ेगा- पगडंडी पर तौल-तौल कर पाँव रखता हुआ, धीरे-धीरे। मुफ्त में मजदूरी देनी हो तो और बात है।

....आज सिरचन को मुफ़्तखोर, कामचोर या चटोर कह ले कोई। एक समय था, जबकि उसकी मड़ैया के पास बड़े-बड़े बाबू लोगों की सवारियाँ बँधी रहती थीं। उसे लोग पूछते ही नहीं थे, उसकी खुशामद भी करते थे। '...अरे, सिरचन भाई! अब तो तुम्हारे ही हाथ में यह कारीगरी रह गई है सारे इलाके में। एक दिन भी समय निकाल कर चलो। कल बड़े भैया की चिट्ठी आई है शहर से- सिरचन से एक जोड़ा चिक बनवा कर भेज दो।'

मुझे याद है.... मेरी माँ जब कभी सिरचन को बुलाने के लिए कहती, मैं पहले ही पूछ लेता, 'भोग क्या-क्या लगेगा?'

माँ हँस कर कहती, 'जा-जा, बेचारा मेरे काम में पूजा-भोग की बात नहीं उठता कभी।'

ब्राह्मणटोली के पंचानंद चौधरी के छोटे लड़के को एक बार मेरे सामने ही बेपानी कर दिया था सिरचन ने- ''तुम्हारी भाभी नाखून से खाँटकर तरकारी परोसती है। और इमली का रस साल कर कढ़ी तो हम कहार-कुम्हारों की घरवाली बनाती हैं। तुम्हारी भाभी ने कहाँ से बनाई!''

इसलिए सिरचन को बुलाने से पहले मैं माँ को पूछ लेता....

सिरचन को देखते ही माँ हुलस कर कहती, ''आओ सिरचन! आज नेनू मथ रही थी, तो तुम्हारी याद आई। घी की डाड़ी (खखोरन) के साथ चूड़ा तुमको बहुत पसंद है न...! और बड़ी बेटी ने ससुराल से संवाद भेजा है, उसकी ननद रूठी हुई है, मोथी के शीतलपाटी के लिए।''

सिरचन अपनी पनियायी जीभ को सँभाल कर हँसता- ''घी की सौंधी सुगंध सूँघ कर आ रहा हूँ, काकी! नहीं तो इस शादीब्याह के मौसम में दम मारने की भी छुट्टी कहाँ मिलती है?''

सिरचन जाति का कारीगर है। मैंने घंटों बैठकर उसके काम करने के ढंग को देखा है।

शब्दार्थ

- बेगार - बिना मजदूरी के बलपूर्वक कराया जाने वाला काम
- बेकार - निठल्ला, बेरोजगार
- चटोर - खाने का लोभी
- बेपानी - बेइज्जत
- नेनू - मक्खन
- मोथी की शीतलपाटी- खास तरह के घास की चटाई

शब्दार्थ

सुतली - रस्सी
मुंहजोर - मुँहफट, उदंड
बघारना - तड़का देना, छौंक लगाना
अधकपारी दर्द - आधे सिर का दर्द,
मूंज की रस्सी - एक खास तरह की घास की रस्सी
मुंगिया लड्डू - मूँग के लड्डू
गुड़ का सूखा ढेला - गुड की डली
कलेवा - नाश्ता, जलपान
चिउरा - धन को कूटकर तैयार किया गया एक खाद्य पदार्थ
नैहर - मायका
बतकुटी - बेवजह बात करना
गमकौआ - सुगंधित,
यतपरो नास्ति - अब और नहीं
हनहनाता - तेजी से
बेजा - अनुचित, जतन

चित्र 15.1 : सिरचन

एक-एक मोथी और पटेर को हाथ में लेकर बड़े जतन से उसकी कुच्ची बनाता। कुच्चियों को रँगने से लेकर सुतली सुलझाने में फिर पूरा दिन समाप्त. ... काम करते समय उसकी तन्मयता में जरा भी बाधा पड़ी कि गेंहुअन साँप की तरह फुफकार उठता- ''फिर किसी दूसरे से करवा लीजिए काम! सिरचन मुँहजोर है, कामचोर नहीं।''

बिना मजदूरी के पेट-भर भात पर काम करने वाला कारीगर। दूध में कोई मिठाई न मिले, तो कोई बात नहीं, किंतु बात में जरा भी झाल वह नहीं बर्दाश्त कर सकता।

सिरचन को लोग चटोर भी समझते हैं.... तली-बघारी हुई तरकारी, दही की कढ़ी, मलाई वाला दूध, इन सबका प्रबंध पहले कर लो, तब सिरचन को बुलाओ; दुम हिलाता हुआ हाजिर हो जाएगा। खाने-पीने में चिकनाई की कमी हुई कि काम की सारी चिकनाई खत्म! काम अधूरा रख कर उठ खड़ा होगा- ''आज तो अब अधकपाली दर्द से माथा टनटना रहा है। थोड़ा-सा रह गया है, किसी दिन आकर पूरा कर दूँगा।''... 'किसी दिन'- माने कभी नहीं!

मोथी घास और पटरे की रंगीन शीतलपाटी, बाँस की तीलियों की झिलमिलाती चिक, सतरंगे डोर के मोढ़े, भूसी-चुन्नी रखने के लिए मूँज की रस्सी के बड़े-बड़े जाले, हलवाहों के लिए ताल के सूखे पत्तों की छतरी-टोपी तथा इसी तरह के बहुत-से काम हैं, जिन्हें सिरचन के सिवा गाँव में और कोई नहीं जानता। यह दूसरी बात है कि अब गाँव में ऐसे कामों को बेकाम का काम समझते हैं लोग- बेकाम का काम, जिसकी मजदूरी में अनाज या पैसे देने की कोई जरूरत नहीं। पेट-भर खिला दो, काम पूरा होने पर एकाध पुराना-धुराना कपड़ा देकर विदा करो। वह कुछ भी नहीं बोलेगा।...

कुछ भी नहीं बोलेगा, ऐसी बात नहीं। सिरचन को बुलाने वाले जानते हैं, सिरचन बात करने में भी कारगर है।... महाजन टोले के भज्जू महाजन की बेटी सिरचन की बात सुनकर तिलमिला उठी थी- ''ठहरो! मैं माँ से जा कर कहती हूँ। इतनी बड़ी बात!''

''बड़ी बात ही है बिटिया! बड़े लोगों की बस बात ही बड़ी होती है। नहीं तो दो-दो पटेर की पाटियों का काम सिर्फ खेसारी का सत्तू खिलाकर कोई करवाए भला? यह तुम्हारी माँ ही कर सकती है बबुनी!'' सिरचन ने मुस्कुराकर जवाब दिया था।

उस बार मेरी सबसे छोटी बहन की विदाई होने वाली थी। पहली बार ससुराल जा रही थी मानू। मानू के दूल्हे ने पहले ही बड़ी भाभी को खत लिखकर चेतावनी दे दी है- ''मानू के साथ मिठाई की पतीली न आए, कोई बात नहीं। तीन जोड़ी फैशनेबल चिक और पटेर की दो

शीतलपाटियों के बिना आएगी मानू तो...।'' भाभी ने हँसकर कहा, ''बैरंग वापस!'' इसलिए, एक सप्ताह पहले से ही सिरचन को बुलाकर काम पर तैनात करवा दिया था माँ ने- 'देख सिरचन! इस बार नई धोती दूँगी; असली मोहर छाप वाली धोती। मन लगाकर ऐसा काम करो कि देखनेवाले देखकर देखते ही रह जाएँ।''

चित्र 15.2 : सिरचन और मँझली भाभी

पान-जैसी पतली छुरी से बाँस की तीलियों और कमानियों को चिकनाता हुआ सिरचन अपने काम में लग गया। रंगीन सुतलियों से झब्बे डालकर वह चिक बुनने बैठा। डेढ़ हाथ की बिनाई देखकर ही लोग समझ गए कि इस बार एकदम नए फैशन की चीज बन रही है, जो पहले कभी नहीं बनी।

मँझली भाभी से नहीं रहा गया, परदे के आड़ से बोली, ''पहले ऐसा जानती कि मोहर छाप वाली धोती देने से ही अच्छी चीज बनती है तो भैया को खबर भेज देती।''

काम में व्यस्त सिरचन के कानों में बात पड़ गई। बोला, ''मोहर छापवाली धोती के साथ रेशमी कुरता देने पर भी ऐसी चीज नहीं बनती बहुरिया। मानू दीदी काकी की सबसे छोटी बेटी है. ... मानू दीदी का दूल्हा अफसर आदमी है।''

मँझली भाभी का मुँह लटक गया। मेरे चाची ने फुसफुसाकर कहा, 'किससे बात करती है बहू? मोहर छापवाली धोती नहीं, मुँगिया-लड्डू। बेटी की विदाई के समय रोज़ मिठाई जो खाने को मिलेगी। देखती है न।''

दूसरे दिन चिक की पहली पाँति में सात तारे जगमगा उठे, सात रंग के। सतभैया तारा! सिरचन जब काम में मगन होता है तो उसकी जीभ ज़रा बाहर निकल आती है, होंठ पर। अपने काम में मगन सिरचन को खाने-पीने की सुध नहीं रहती। चिक में सुतली के फंदे डालकर उसने अपने पास पड़े सूप पर निगाह डाली- चिउरा और गुड़ का एक सूखा ढेला। मैंने लक्ष्य किया, सिरचन की नाक के पास दो रेखाएँ उभर आईं। मैं दौड़कर माँ के पास गया। ''माँ, आज सिरचन को कलेवा किसने दिया है, सिर्फ चिउरा और गुड़?''

माँ रसोईघर में अंदर पकवान आदि बनाने में व्यस्त थी। बोली, ''मैं अकेली कहाँ-कहाँ क्या-क्या देखूँ!.... अरी मँझली, सिरचन को बुँदिया क्यों नहीं देती?''

''बुँदिया मैं नहीं खाता, काकी!'' सिरचन के मुँह में चिउरा भरा हुआ था। गुड़ का ढेला सूप के किनारे पर पड़ा रहा, अछूता।

माँ की बोली सुनते ही मँझली भाभी की भौहें तन गईं। मुट्ठी भर बुँदिया सूप में फेंक कर चली गई।

सिरचन ने पानी पीकर कहा, ''मँझली बहूरानी अपने मैके से आई हुई मिठाई भी इसी तरह हाथ खोलकर बाँटती है क्या?''

बस, मँझली भाभी अपने कमरे में बैठकर रोने लगी। चाची ने माँ के पास जाकर लगाया– ''छोटी जाति के आदमी का मुँह भी छोटा होता है। मुँह लगाने से सिर पर चढ़ेगा ही।.... किसी के नैहर-ससुराल की बात क्यों करेगा वह?''

मँझली भाभी माँ की दुलारी बहू है। माँ तमककर बाहर आई– ''सिरचन, तुम काम करने आए हो, अपना काम करो। बहुओं से बतकुट्टी करने की क्या जरूरत? जिस चीज की जरूरत हो, मुझसे कहो।''

सिरचन का मुँह लाल हो गया। उसने कोई जवाब नहीं दिया। बाँस में टँगे हुए अधूरे चिक में फंदे डालने लगा।

मानू पान सजाकर बाहर बैठकखाने में भेज रही थी। चुपके से पान का एक बीड़ा सिरचन को देती हुई बोली, इधर-उधर देख कर– 'सिरचन दादा, काम-काज का घर! पाँच तरह के लोग पाँच किस्म की बात करेंगे। तुम किसी की बात पर कान मत दो।''

सिरचन ने मुस्कुराकर पान का बीड़ा मुँह में ले लिया। चाची अपने कमरे से निकल रही थी। सिरचन को पान खाते देखकर अवाक् हो गई। सिरचन ने चाची को अपनी ओर अचरज से घूरते देखकर कहा, ''छोटी चाची, जरा अपनी डिबिया का गमकौआ जर्दा तो खिलाना। बहुत दिन हुए...।''

चाची कई कारणों से जली-भुनी रहती थी, सिरचन से। गुस्सा उतारने का ऐसा मौका फिर नहीं मिल सकता। झनकती हुई बोली, ''मसखरी करता है? तुम्हारी बढ़ी हुई जीभ में आग लगे। घर में भी पान और गमकौआ जर्दा खाते हो?.... चटोर कहीं के!'' मेरा कलेजा धड़क उठा... यत्परो नास्ति!

बस, सिरचन की उँगलियों में सुतली के फंदे पड़ गए। मानो, कुछ देर तक वह चुपचाप बैठा पान को मुँह में घुलाता रहा। फिर, अचानक उठकर पिछवाड़े पीक थूक आया। अपनी छुरी, हँसिया वगैरह समेट-सँभालकर झोले में रखे। टँगी हुई अधूरी चिक पर एक निगाह डाली और हनहनाता हुआ आँगन के बाहर निकल गया।

चाची बड़बड़ाई– ''अरे बाप रे बाप! इतनी तेजी! कोई मुफ्त में तो काम नहीं करता। आठ रुपए में मोहर छापवाली धोती आती है''... इस मुँहझौंसे के न मुँह में लगाम है, न आँख में शील। पैसा खर्च करने पर सैकड़ों चिक मिलेंगी। बांतर टोली की औरतें सिर पर गट्ठर लेकर गली-गली मारी फिरती हैं।'

मानू कुछ नहीं बोली। चुपचाप अधूरी चिक को देखती रही... सातों तारे मंद पड़ गए।

माँ बोली, ''जाने दे बेटी! जी छोटा मत कर, मानू! मेले से खरीदकर भेज दूँगी।''

मानू को याद आया, विवाह में सिरचन के हाथ की शीतलपाटी दी थी माँ ने। ससुरालवालों

ने न जाने कितनी बार खोलकर दिखलाया था पटना और कलकत्ता के मेहमानों को। वह उठकर बड़ी भाभी के कमरे में चली गई।

मैं सिरचन को मनाने गया। देखा, एक फटी शीतलपाटी पर लेटकर वह कुछ सोच रहा है।

मुझे देखते ही बोला, 'बबुआ जी! अब नहीं! कान पकड़ता हूँ, अब नहीं। ....मोहर छापवाली धोती लेकर क्या करूँगा? कौन पहनेगा? ....ससुरी खुद मरी, बेटे-बेटियों को ले गई अपने साथ। बबुआजी, मेरी घरवाली जिंदा रहती तो मैं ऐसी दुर्दशा भोगता? यह शीतलपाटी उसी की बुनी हुई है। इस शीतलपाटी को छूकर कहता हूँ, अब यह काम नहीं करूँगा।... गाँव-भर में तुम्हारी हवेली में मेरी कदर होती थी।.... अब क्या?' मैं चुपचाप वापस लौट आया। समझ गया, कलाकार के दिल में ठेस लगी है। वह अब नहीं आ सकता।

बड़ी भाभी अधूरी चिक में रंगीन छींट की झालर लगाने लगी- ''यह भी बेजा नहीं दिखलाई पड़ता, क्यों मानू?'

मानू कुछ नहीं बोली।... बेचारी! किंतु, मैं चुप नहीं रह सका- ''चाची और मँझली भाभी की नजर न लग जाए इसमें भी!''

मानू को ससुराल पहुँचाने मैं ही जा रहा था।

स्टेशन पर सामान मिलाते समय देखा, मानू बड़े जतन से अधूरे चिक की मोड़ कर लिए जा रही है अपने साथ। मन-ही-मन सिरचन पर गुस्सा हो आया। चाची के सुर-में-सुर मिलाकर कोसने को जी हुआ!... कामचोर, चटोर!....

चित्र 15.3 : सिरचन उपहार देते हुए

गाड़ी आई। सामान चढ़ाकर मैं दरवाजा बंद कर रहा था कि प्लेटफॉर्म पर दौड़ते हुए सिरचन पर नजर पड़ी- ''बबुआजी!'' उसने दरवाजे के पास आकर पुकारा।

'क्या है?' मैंने खिड़की से गर्दन निकालकर झिड़की के स्वर में कहा। सिरचन ने पीठ पर लदे हुए बोझ को उतारकर मेरी ओर देखा- ''दौड़ता आया हूँ।.... दरवाजा खोलिए! मानू दीदी कहाँ हैं? एक बार देखूँ!''

मैंने दरवाजा खोल दिया।

''सिरचन दादा!'' मानू इतना ही बोल सकी।

खिड़की के पास खड़े होकर सिरचन ने हकलाते हुए कहा, ''यह मेरी ओर से है। सब चीज है दीदी! शीतलपाटी, चिक और एक जोड़ी आसनी, कुश की।''

गाड़ी चल पड़ी।

मानू मोहर छापवाली धोती का दाम निकाल कर देने लगी। सिरचन ने जीभ को दाँत से काट कर, दोनों हाथ जोड़ दिए।

मानू फूट-फूट रो रही थी। मैं बंडल को खोल कर देखने लगा- ऐसी कारीगरी, ऐसी बारीकी, रंगीन सुतलियों के फंदों का ऐसा काम, पहली बार देख रहा था।

बोध प्रश्न 15.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. ''मोहर छापवाली धोती के साथ रेशमी कुर्ता देने पर भी ऐसी चीज नहीं बनती बहुरिया'' - यह कथन किसका है–

   (क) मँझली भाभी का　　(ख) मानू का

   (ग) सिरचन का　　(घ) चाची का

2. सिरचन की बात सुनकर कौन तिलमिला उठा–

   (क) भज्जू महाजन की बेटी　　(ख) पंचानन चौधरी का छोटा लड़का

   (ग) बड़ी भाभी　　(घ) मानू के ससुराल वाले

3. सिरचन स्वयं को मानता है -

   (क) कामचोर　　(ख) मुँहजोर

   (ग) चटोर　　(घ) मुफ्तखोर

15.2 आइए समझें

आइए, अब हम इस कहानी को समझने की कोशिश करते हैं। कहानी के मुख्यत: छह तत्त्व होते हैं - कथावस्तु, पात्र, संवाद, देशकाल और वातावरण एवं उद्देश्य और भाषा-शैली। हम इन तत्त्वों का ध्यान में रखते हुए इस कहानी का विवेचन करेंगे। कथावस्तु में मुख्य कथा या कहानी के विषय क्षेत्र की बात की जाती है। समय-समय पर उपस्थित होने वाले पात्रों को समझने का काम चरित्र-चित्रण के अंतर्गत किया जाता है। कहानी में पात्र केवल उपस्थित ही नहीं होते, बल्कि वे अपना व्यक्तित्व साथ लेकर आते हैं। संवाद कहानी के मुख्य अंग होते हैं। कहानी की भाषा-शैली के अंतर्गत भाषा एवं प्रस्तुति की शैली का अध्ययन किया जाता है अर्थात् कहानी की भाषा कैसी है? शब्द-चयन कैसा है? कहानी कहने का तरीका कैसा है? देशकाल एवं वातावरण में हम यह समझने का प्रयास करते हैं कि कहानी में किन परिस्थितियों अर्थात किस समय और परिवेश की बात की गई है। उद्देश्य के अंतर्गत रचनाकार का लक्ष्य, उसकी दृष्टि और उसके संदेश का पता चलता है।

(क) कथावस्तु

कहानी पढ़कर आप जान चुके हैं कि यह कहानी किसी गाँव-देहात में कारीगरी का काम करने वाले सिरचन की है। सिरचन के हाथ की कारीगरी का उस पूरे इलाके में कोई जोड़ नहीं था। मोथी घास और पटेर की रंगीन शीतलपाटी हो या बाँस की तीलियों की झिलमिलाती चिक, सतरंगी डोर के मोढ़े हो या भूसी चुन्नी रखने के लिए मुँज की रस्सी के बड़े-बड़े जाले या हलवाहों के लिए ताल के सूखे पत्तों की छतरी टोपी तथा इसी तरह के और बहुत से काम, इन्हें तैयार करने का काम सिरचन के सिवा गाँव में और कोई नहीं जानता था। लेखक का कथन है कि एक समय था जब सिरचन के घर पर लोगों की भीड़ लगी रहती थी। लोग इन चीज़ों के लिए सिरचन की खुशामद करते फिरते थे। लेकिन समय बदलने के साथ धीरे-धीरे इन चीज़ों की कद्र करने वालों की संख्या कम होती गई। सिरचन की कारीगरी को पहचानने वाले कम होते गए। कारीगरी के इन कामों को लोग बेकाम का काम समझने लगे। लोग पैसे देने की भी ज़रूरत नहीं समझते थे, बल्कि भरपेट खाना खिलाकर और एकाध पुराने कपड़े देकर ही इन चीज़ों को बनवाने लगे।

सिरचन कारीगर था। उसका मन कारीगरी के अलावा किसी दूसरी चीज़ में नहीं रमता था। खेतों में मज़दूरी करना तो उसे बिल्कुल नहीं भाता था। इसलिए लोग खेतों में मज़दूरी के लिए उसे नहीं बुलाते थे। उसके स्वभाव और हुनर को न समझ पाने के कारण लोग उसे कामचोर, मुफ़्तखोर और चटोर समझते थे, लेकिन वह ऐसा बिल्कुल नहीं था। वह अपनी कारीगरी का काम हमेशा ही मेहनत और मन लगाकर करता था। काम करते हुए उसका मन काम में ऐसे रम जाता था कि उसमें जरा कोई भी बाधा पड़ने पर वह तुरंत गुस्से से तुरंत लाल हो जाता था। वह साफ़ कहता था - "सिरचन मुँहजोर है, कामचोर नहीं"। अर्थात् मुँह से कड़वा भले ही बोल दे लेकिन काम से जी चुराना वह नहीं जानता। उसकी यह बात बहुत से लोगों को अच्छी नहीं लगती थी। यह बात गाँव में हर कोई जानता था कि सिरचन स्वादिष्ट खाना खाने का जितना शौकीन था उतना ही स्वाभिमानी भी। अपनी उपेक्षा और अनादर वह सह नहीं पाता था। कहानी में ऐसे कई प्रसंग आए हैं, जहाँ सिरचन खाने को लेकर तीखा व्यंग्य करता है।

कहानी के शुरू में ही सिरचन ब्राह्मण टोला के पंचानन चौधरी के छोटे लड़के को इस बात के लिए खूब खरी-खोटी सुनाता है कि, "तुम्हारी भाभी कढ़ी में इमली का रस डालती हैं और सब्जी नाखून से खूँटकर बहुत कम परोसती हैं।" कहानी में सिरचन आगे एक जगह और महाजन टोली के भज्जू महाजन की बेटी से भी व्यंग्य में कहता है कि, "सिर्फ खेसारी का सत्तू खिलाकर दो-दो पटेर की पाटियों का काम तुम्हारी माँ ही करा सकती है बबुनी।" कथावाचक और उसकी माँ सिरचन के इस स्वभाव और व्यवहार को अच्छी तरह जानते हैं कि वह खाने-पीने का शौकीन है। इसलिए सिरचन को देखकर कथावाचक की माँ कहती है, "आओ सिरचन! आज नैनू मथ रही थी, तो तुम्हारी याद आई। घी की डाड़ी के साथ चूड़ा तुमको बहुत पसंद है न!" और सिरचन पनियायी जीभ को संभाल कर कहता, "घी की सौंधी सूँघकर ही आ रहा हूँ काकी!"

कथावाचक की माँ अपनी छोटी बेटी मानू के ससुराल वालों के लिए तीन जोड़ी फैशनेबल चिक और पटेर की दो शीतल पाटियाँ बनवाना चाहती थी इसलिए सिरचन को एक सप्ताह पहले ही बुलाकर काम पर लगा दिया। साथ ही लालच भी दिया कि इस बार नई धोती दूँगी, असल मोहर छाप वाली। सिरचन अपने काम में खूब मन लगाकर जुट जाता है। उसे किसी दूसरी चीज़ की सुध नहीं रहती। लेकिन जैसे ही उसकी निगाह पास पड़े सूप पर पड़ती है तो उसमें रखे चिउरा और गुड़ के एक सूखे ढेले को देखकर वह मुँह बना लेता है। सिरचन को दिए गए इस कलेवे को देखकर कथावाचक बेचैन और परेशान होकर जब माँ से पूछता है तो माँ अपने को इस घटना से अनजान बताती हुई मँझली बहू को थोड़ी बूँदिया सिरचन को देने के लिए कह कर दूसरे काम में व्यस्त हो जाती है। सिरचन पर पहले से चिढ़ी हुई मँझली बहू जब एक मुट्ठी बुनिया सिरचन के सामने रखें सूप में फेंक कर जैसे ही जाती है, सिरचन व्यंग्य करते हुए कहता है – ''मँझली बहूरानी अपने मायके से आई हुई मिठाई भी इसी तरह हाथ खोलकर बाँटती हैं क्या।''

इस व्यंग्य से आहत मँझली बहू अपने कमरे में जाकर रोने लगती है। इस घटना से भड़की चाची सिरचन की शिकायत जब कथावाचक की माँ से करती है तो बात और बढ़ जाती है। काम में व्यस्त कथावाचक की माँ गुस्से में तमतमाए बाहर आकर सिरचन को बहुत बुरा-भला सुना जाती है। सिरचन को बिल्कुल उम्मीद नहीं थी कि उसके साथ ऐसा व्यवहार होगा। वह अवाक रह जाता है यहाँ दो बातें स्पष्ट होती हैं। पहली बात यह है कि मँझली बहूरानी का सिरचन के प्रति व्यवहार उचित नहीं है। और दूसरी बात यह है कि सिरचन ऐसे व्यवहार से आहत होता है। क्या आपको भी ऐसा व्यवहार बुरा नहीं लगेगा? उसका चेहरा लाल हो जाता है। इसी बीच मानू पान सजाकर बैठकखाने में भेज रही होती है, कि उसकी नज़र सिरचन पर पड़ती है और पान का एक बीड़ा वह चुपके से सिरचन की ओर बढ़ा देती है। सिरचन पान का बीड़ा मुँह में ले, सामने से आती हुई छोटी चाची को देखकर जब कहता – ''छोटी चाची जरा अपनी डिबिया का गमकौआ जर्दा तो खिलाना। बहुत दिन हुए....।'' तो सिरचन पर पहले से ही चिढ़ी हुई चाची उसे जलील करते हुए कठोर बातें कहती हैं ''तुम्हारी बढ़ी हुई जीभ में आग लगे। घर में भी पान और गमकौआ जर्दा खाते हो ? चटोर कहीं के।'' चाची की इस बात से सिरचन को बहुत गहरा ठेस लगता है और वह काम छोड़कर चला जाता है- कथावाचक सिरचन को उसके घर जाकर मनाने का बहुत प्रयास करता है, लेकिन सिरचन फिर से आकर काम पूरा करने के लिए किसी शर्त पर तैयार नहीं होता है।

इसी बीच मानू की विदाई का दिन आ जाता है- मानू दुखी मन से आधा-अधूरा बना चिक अपने साथ ले लेती है। इस अधूरे बने चिक को देखकर कथावाचक का मन सिरचन के प्रति कड़वाहट से भर जाता है। कथावाचक मानू के साथ ससुराल जाने के लिए जब गाड़ी पर चढ़ जाता है तो उसकी नजर प्लेटफॉर्म पर दौड़ते सिरचन पर पड़ती है। वह देखता है कि सिरचन पीठ पर शीतलपाटी, चिक, एक जोड़ी असनी लादे दौड़ा चला आ रहा है। सभी सामान गाड़ी के अंदर चढ़ाकर सिरचन रेल की खिड़की के पास खड़े होकर मानू से कहता है कि यह मेरी ओर से है- और मानू जब मोहर छाप वाली धोती का दाम निकाल कर सिरचन को देने लगती है तो सिरचन जीभ को दाँत से काटकर हाथ जोड़ लेता है जैसे कह रहा हो यह तो मैं अपने मन से दे रहा हूँ, इसकी कोई कीमत नहीं।

पाठगत प्रश्न 15.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. सिरचन इनमें से क्या नहीं बनाता था–

   (क) चिक (ख) असनी (ग) दरी (घ) शीतलपाटी

2. सिरचन को किस बात पर ठेस लगती है–

   (क) इमली से बनी कढ़ी देने से (ख) खेसारी का सत्तू खिलाने से

   (ग) पूरा मेहनताना नहीं (घ) चटोर कहने से

3. सिरचन उपहार में क्या लेकर आता है–

   (क) शीतलपाटी (ख) मोहरदाय वाली धोती

   (ग) अधूरा बना चिक (घ) गमकौआ जर्दा

क्रियाकलाप 15.1

चाची की कड़वी बातें सुनकर सिरचन अपना काम अधूरा छोड़कर चला जाता है और कथावाचक के मनाने पर भी वापस लौटकर नहीं आता। सिरचन का यह व्यवहार आपको कैसा लगा? सिरचन की जगह आप होते तो क्या करते? अपने शब्दों में अपने विचार स्पष्ट कीजिए।

(ख) पात्र और चरित्र-चित्रण

आइए, अब इस कहानी के प्रमुख पात्रों के व्यक्तित्व की विशेषताओं को समझने का प्रयास करते हैं।

सिरचन

कहानी का मुख्य पात्र सिरचन है जिसमें अनेक गुण हैं। आइए, उन पर विचार करते हैं।

कुशल कारीगर

सिरचन कुशल कारीगर है। कारीगरी में ही उसका मन अधिक रमता है इसलिए कारीगरी के काम से अलग खेतों में श्रम करने के लिए जब कोई उसे बुलाता है तो सिरचन लापरवाही दिखाता है और काम पर देर से पहुँचता है। इसलिए लोग सिरचन को खेत पर मज़दूरी के लिए नहीं बुलाते हैं। और लोग उसे कामचोर, मुफ़्तखोर और चटोर समझते हैं। आज सिरचन को कोई जो चाहे कह ले, लेकिन एक समय था जब सिरचन इलाके का सबसे कुशल कारीगर था। उसके हाथों में कारीगरी का ऐसा गुण था कि बड़े-बड़े बाबू लोगों की सवारियाँ उसके मड़ैया

के पास बँधी रहती थी। लोग उसकी खुशामद करते थे। शहर में रहनेवाले लोग भी उसके हाथ की बनी चीज़ें पाने के लिए चिट्ठियाँ लिखते थे- ''सिरचन से एक जोड़ा चिक बनवा कर भेज दो।''

खाने-पीने का शौकीन

सिरचन को स्वादिष्ट चीज़ें खाने-पीने में रुचि थी। कथावाचक को भी जब सिरचन को बुलाना होता तो पहले ही माँ से पूछ लेता कि भोग क्या-क्या लगेगा? लोग इसी कारण सिरचन को चटोर समझते थे। सिरचन के बारे में लोगों की यह धारणा थी कि ''बघारी हुई तरकारी, दही की कढ़ी, मलाईवाला दूध, इन सबका प्रबंध पहले कर लो, तब सिरचन को बुलाओ, वह दुम हिलाता हुआ हाज़िर हो जाएगा। खाने-पीने में चिकनाई की कमी हुई कि काम की सारी चिकनाई खत्म।''

खाने-पीने में कमी होने पर सिरचन नाराज हो जाता था और शिकायत भी करता था। एक बार खाने में सब्जी बहुत कम देने और इमली के रसवाली कढ़ी परोसने पर, ब्राह्मण टोली के पंचानन चौधरी के लड़के को सिरचन ने बेइज़्ज़त कर दिया था। इसी तरह एक बार खेसारी का सत्तू खिलाकर काम कराने पर सिरचन ने महाजन टोले के भज्जू महाजन की बेटी से भी हँसते-हँसते उसके माँ की शिकायत की थी।

कथावाचक की माँ सिरचन की इस कमज़ोरी को जानती थी। इसीलिए सिरचन को देखकर वह कहती है, ''आओ सिरचन, आज नेनु मथ रही थी तो तुम्हारी याद आई। घी की डाड़ी के साथ चूड़ा तुमको बहुत पसंद है न!'' और तब सिरचन अपनी पनियायी जीभ को संभाल कर कहता - ''घी की सोंधी सुगंध सूँघकर ही आ रहा हूँ काकी।''

काम के प्रति ईमानदार

सिरचन काम के प्रति बहुत ईमानदार था। वह अपना काम बहुत मेहनत और ईमानदारी से करता था। मोथी और पटेर को हाथ में लेकर वह बड़े जतन से उसकी कूची बनाता। फिर कूचियों को रंगने से लेकर सुतली सजाने तक की पूरी प्रक्रिया में वह पूरे मन से लगा रहता। सिरचन अपना मन काम में ऐसे लगाता कि उसमें जरा-सी भी बाधा आने पर गुस्से से तमतमा जाता। वह कहता था कि 'सिरचन मुँहजोर है, कामचोर नहीं।'

स्वाभिमानी

सिरचन में स्वाभिमान कूट-कूट कर भरा था। किसी की कठोर बातें उसे बिल्कुल सहन नहीं होती थीं। उसे आत्मसम्मान से अधिक मूल्यवान कुछ भी नहीं लगता था। इसीलिए लेखक का कथन है- ''दूध में कोई मिठाई न मिले, तो कोई बात नहीं, किंतु बात में जरा-भी झाल वह नहीं बर्दाश्त कर सकता।''

कहानी के अंतिम हिस्से में सिरचन को कई बार कठोर बातें सुनने को मिलती हैं और उसका

आत्मसम्मान आहत होता है। सिरचन के स्वाभिमान को पहली बार ठेस तब लगती है जब मँझली बहू मुट्ठी भर बुनिया सूप में फेंककर चली जाती है। दूसरी बार ठेस तब लगती है जब कथावाचक की माँ गुस्से में सिरचन से कहती है, ''अपना काम करो, बहुओं से बत-कुट्टी करने की क्या जरूरत?'' यह सुनकर सिरचन का मुँह लाल हो जाता है। लेकिन सिरचन के आत्मसम्मान को सबसे बड़ा धक्का तब लगता है जब वह चाची से अपनी डिबिया का गमकौआ जर्दा खिलाने के लिए कहता है और जवाब में चाची यह कहती है कि, ''तुम्हारी बढ़ी हुई जीभ में आग लगे, घर में भी पान और गमकौआ जर्दा खाते हो ? चटोर कहीं के।'' सिरचन दिल पर लगी इस ठेस को नहीं सह पाता है और अपने सामान को समेटकर काम छोड़कर उठ जाता है।

संवेदनशील

सिरचन में संवेदनशीलता का स्तर बहुत ऊँचा है। वह जानता है कि कब बोलना चाहिए और कब चुप रह जाना चाहिए। चाची की चुभने वाली तीखी बातों को सुनकर उसे गहरी ठेस तो पहुँचती है लेकिन वह अपमान का घूँट पीकर चुप रह जाता है। वह अपनी जुबान नहीं खोलता। वह अच्छी तरह जानता है कि जिस विषम सामाजिक और आर्थिक स्थिति में है, उसमें चुप रहने में ही भलाई है। भरपेट खाने पर काम करने वाला सिरचन जानता था कि वह किसी का कुछ नहीं बिगाड़ सकता, इसलिए वह चुपचाप काम छोड़कर चला जाता है और यही उसका प्रतिरोध था।

मानू के परिवार से गहरी ठेस लगने के बावजूद सिरचन के मन में मानू के प्रति मार्मिक संवेदना और प्रेम है। इसीलिए अंत में बिना किसी को खबर किए सिरचन ससुराल जाती मानू के लिए उसकी पसंद की चीज़ें बनाकर उसे देने स्टेशन पर जाता है। मानू सिरचन की लाई चीज़ों और सिरचन को देख फूट-फूटकर रोने लगती है। यही नहीं मानू जब सिरचन को इन चीज़ों के बदले मोहर छाप धोती की कीमत देने लगती है तो सिरचन दाँत से जीभ काट हाथ जोड़ लेता है। दरअसल संकेत से वह कहना चाहता है कि ये चीज़ें मेरी तरफ से तुम्हारे लिए भेंट हैं, इन्हें मैंने तुम्हारे प्रति स्नेह से बनाया है। इसकी कीमत लेकर मैं अपने स्नेह को कम नहीं कर सकता। यहाँ हम सिरचन की संवेदनशीलता, आत्मीयता, स्नेह और स्वाभिमान का उदत्त रूप देखते हैं।

वाचक

कहानी में दूसरा महत्वपूर्ण पात्र वाचक है। वाचक सिरचन के स्वभाव, व्यवहार और कारीगरी में उसकी कुशलता को अच्छी तरह पहचानता है। वह यह भी जानता है कि सिरचन खाने-पीने का शौकीन है, इसीलिए जब सिरचन को कलेवे में दिया गया चिउरा और गुड़ का सूखा ढेला देखता है तो वह घबराकर माँ से जाकर पूछता है कि आज सिरचन को कलेवे में सिर्फ़ चिउरा और गुड़ किसने दिया है? कथावाचक सिरचन के प्रति संवेदनशील है और वह जानता है कि कौन-सी बात सिरचन को बुरी लग सकती है? इसलिए वह कोई ऐसी बात नहीं होने देना चाहता है जिससे बात बिगड़ जाए। लेकिन चाहने से क्या होता है? चाची से गमकौआ जर्दा माँगने पर चाची सिरचन को अपमानित करते हुए जिस कठोरता से जवाब देती है उससे

कथावाचक का कलेजा धड़क उठता है। वह जान जाता है इससे बड़ी बात और कुछ नहीं हो सकती है। कथावाचक सिरचन के दिल पर लगी ठेस को भली-भाँति जानता था। इसलिए उसे मनाने के लिए उसके घर पहुँच जाता है। लेकिन सिरचन की करुणा से भरी बातें सुनकर उसे लगता है कलाकार के दिल में ठेस लगी है, वह नहीं आ सकता। कथावाचक लौट आता है।

कथावाचक अपनी बहन मानू के प्रति भी बहुत संवेदनशील है। मानू के प्रति स्नेह के कारण ही वह सिरचन को मनाने के लिए उसके घर जाता है। वह अपने परिवार के सदस्यों के स्वभाव को भी पहचानता है। वह जानता है कि चाची और मँझली भाभी का व्यवहार श्रम करने वालों के प्रति कठोर, भावशून्य और घृणा से भरा हुआ है। इसीलिए जब बड़ी भाभी अधूरी चिक में रंगीन छींट का झालर लगाने लगती हैं तो इसे देखकर वह यह कहना नहीं भूलता कि कहीं चाची और मँझली भाभी की नज़र इसमें भी न लग जाए।

इसके साथ ही उसके चरित्र में कुछ मानवीय कमज़ोरियाँ भी हमें दिखाई देती हैं। वह जब अपनी बहन मानू को ससुराल छोड़ने जाता है तो आधी अधूरी चिक को देखकर उसे मन-ही-मन सिरचन पर गुस्सा आ जाता है। उसे चाची की तरह ही कोसने का मन करता है। इससे पता चलता है कि कहानी में रेणु ने जिन चरित्रों का निर्माण किया है वे यथार्थ हैं। उनके मन में उठने वाली भावनाएँ स्वाभाविक हैं।

सिरचन इस कहानी का मुख्य पात्र है। पूरी कहानी उसी के इर्द-गिर्द घूमती है। इस कहानी में छोटी चाची, मँझली भाभी, बड़ी भाभी, मानू और कथावाचक की माँ कहानी को आगे बढ़ाने में सहायक हैं। ऐसे पात्रों को गौण पात्र कहते हैं। इन गौण पात्रों में मँझली बहू और छोटी चाची के बारे में आपने ज़रूर विचार किया होगा। ये दोनों स्त्री पात्र हैं। दोनों में एक समानता यह है कि दोनों आत्मकेंद्रित और संवेदनहीन हैं। इसका प्रमाण मँझली बहू द्वारा माँ के कहने पर एक मुट्‌टी बुंदिया सूप में फेंककर देने के व्यवहार में देख सकते हैं। इसी प्रकार छोटी चाची की संवेदनहीनता वहाँ दिखाई देती है जब गमकौआ जर्दा माँगने पर सिरचन को कठोर शब्दों में कहती है, "तुम्हारी बढ़ी हुई जीभ में आग लगे, घर में भी पान और गमकौआ जर्दा खाते हो?" इन दोनों के अतिरिक्त मानू और कथावाचक की माँ सिरचन के प्रति सम्मान और आदर का भाव रखते हैं। मानू तो सिरचन को आदर देते हुए पान भी खिलाती है। और कथावाचक की माँ तो सिरचन के प्रति आरंभ से ही बहुत आदर और स्नेह का भाव प्रदर्शित करती दिखाई देती है।

पाठगत प्रश्न 15.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. सिरचन नहीं है-

   (क) संवेदनशील (ख) स्वाभिमानी

   (ग) कुशल कारीगर (घ) कामचोर

2. सिरचन के प्रति कौन संवेदनशील नहीं था–

(क) छोटी चाची | (ख) कथावाचक

(ग) मानू | (घ) कथावाचिक की माँ

3. किस बात पर वाचक को सिरचन पर गुस्सा आता है–

(क) अधूरा काम करने पर | (ख) सुंदर चिक माँगने पर

(ग) अधूरी चिक को देखकर | (घ) गमकौआ जर्दा माँगने पर

संवाद-योजना

पात्रों की बातचीत को संवाद कहा जाता है। संवाद कहानी के घटनाक्रम को आगे बढ़ाने का काम करते हैं। संवाद से ही हम कहानी में आए चरित्रों के व्यक्तित्व की विशेषताएँ जान पाते हैं। संवादों से ही कहानी में नई-नई घटनाएँ घटती हैं और कहानी में नाटकीयता उत्पन्न होती है।

'ठेस' कहानी में हम आरंभ से ही संवादों को देख सकते हैं। कथावाचक ने कहानी सुनाते हुए, जहाँ आवश्यक है, वहाँ संवाद की शैली में अपनी बात स्पष्ट की है। कहानी में आए आरंभिक संवाद इस बात का संकेत करते हैं कि सिरचन खाने-पीने का शौकीन है। अच्छा स्वाद उसकी कमज़ोरी है। इसीलिए सिरचन को काम पर बुलाने से पहले कथावाचक माँ से पूछता है, "भोग क्या-क्या लगेगा?" माँ हँसकर कहती है "जा-जा, बेचारा मेरे काम में पूजा भोग की बात नहीं उठाता कभी।" साथ ही यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि कथावाचक के घर काम करने के लिए सिरचन उत्साह से आता है।

वैसे कहानी में ज़्यादातर तीखे और व्यंग्यपूर्ण संवाद आरंभ से अंत तक या सिरचन के हैं। कहानी के आरंभ में ही खाने के स्वाद का शौकीन सिरचन खाने की शिकायत करता है, "तुम्हारी भाभी नाखून से खोंटकर तरकारी परोसती है। और इमली का रस डालकर कढ़ी तो हम कहार-कुम्हारों की घरवाली बनाती हैं; तुम्हारी भाभी ने कहाँ से बनाई!" खाने की शिकायत वह एक जगह और करता है, "बड़ी बात ही है बिटिया! बड़े लोगों की बस बात ही बड़ी होती है। नहीं तो दो-दो पटेर की पाटियों का काम खेसारी का सत्तू खिलाकर तुम्हारी माँ ही करा सकती है बबुनी।" खाने-पीने में कमी सिरचन के लिए असहनीय हो जाती है। कथावाचक के घर भी खाने के लिए आए चिउरा और गुड़ का सूखा ढेला देखकर अनिच्छा से उसके नाक के पास दो रेखाएँ उभर आती हैं। और कथावाचक की माँ के बुंदिया देने पर स्पष्ट कह देता है, "बुंदिया मैं नहीं खाता काकी।" और जब मँझली बहू एक मुट्ठी बुनिया सूप में फेंक जाती है तो सिरचन व्यंग्य करते हुए कहता है "मँझली बहुरानी अपने मायके से आई हुई मिठाई भी इसी तरह हाथ खोलकर बाँटती है क्या?" कहानी में आगे पान खाते हुए छोटी चाची से कहता है, "छोटी चाची, जरा अपनी डिबिया का जर्दा तो खिलाना, बहुत दिन हुए।"

टिप्पणी

सिरचन के इन संवादों से साफ पता चलता है कि वह गरीब है और अच्छा भोजन ही उसके लिए सबकुछ है। कथावाचक की माँ जब सिरचन से कहती है,'' आओ सिरचन! आज नेनू मथ रही थी तो तुम्हारी याद आई तो सिरचन प्रसन्न हो जाता है और कहता है, ''घी की सोंधी सुगंध सूँघकर कर ही आ रहा हूँ काकी।'' और कहानी के अंत में उसका संवाद उल्लेखनीय है। वह कहता है, ''दौड़ता आया हूँ। दरवाजा खोलिए। मानू दीदी कहां है ? एक बार देखूँ!'' और इसके बाद वह कहता है, ''यह मेरी ओर से है। सब चीज है दीदी। शीतलपाटी, चिक और एक जोड़ी आसनी कुश की।'' उसके इन संवादों से हम उसके व्यक्तित्व और चरित्र की कई विशेषताओं को जान पाते हैं। कहानी में आए उसके इस अंतिम संवाद से पाठक का हृदय उसके प्रति आदर और श्रद्धा से भर उठता है।

कहानी में चाची के संवाद बहुत तीखे हैं। सिरचन की शिकायत करते हुए वह कहती हैं, ''छोटी जात के आदमी का मुँह भी छोटा होता है, मुँह लगाने से सिर पर चढ़ेगा ही।'' सिरचन जब काम छोड़ कर जाने लगता है तो चाची कहती है,'' अरे बाप रे बाप! इतनी तेजी! कोई मुफ़्त में तो काम नहीं करता। 8 रुपये में मोहर छाप वाली धोती आती है। इस मुँहझौसे के न मुँह में लगाम है न आँख में शील। पैसा खर्च करने पर सैकड़ों चीकें मिलेंगी।'' चाची के इन संवादों से चाची के चरित्र की विशेषताएँ उभर कर सामने आ जाती हैं। हमें यह पता चलता है कि चाची श्रम करने वालों के प्रति समानुभूति का भाव नहीं रखती हैं। वह उन्हें छोटा और हीनतर समझती हैं। उनके प्रति चाची के मन में कोई आदर और संवेदना का भाव नहीं है।

सिरचन को चाची की बातों से जो ठेस लगती है उससे वह टूट जाता है, ''बबुआ जी! अब नहीं। कान पकड़ता हूँ अब नहीं। मोहर छाप वाली धोती लेकर क्या करूँगा? कौन पहनेगा? ससुरी खुद मरी, बेटे-बेटियों को ले गई अपने साथ। बाबू जी मेरी घरवाली जिंदा रहती तो मैं ऐसी दुर्दशा भोगता? यह शीतलपाटी उसी की है। इस शीतलपाटी को छूकर कहता हूँ, अब यह काम नहीं करूँगा। गाँव भर में तुम्हारी हवेली में मेरी कदर होती थी, अब क्या?'' सिरचन के इसी संवाद में पूरी कहानी का मर्म छुपा हुआ है। इस संवाद से पता चलता है कि पूरे गाँव में अगर कहीं सिरचन का सम्मान था तो कथावाचक की हवेली में। लेकिन जब वहाँ भी उसे दुत्कार मिलती है, उसका अपमान होता है तो उसे गहरी ठेस लगती है और वह अपने कारीगरी को ही हमेशा के लिए छोड़ देने का निर्णय ले लेता है। लेकिन कहानी का अंत एकदम नाटकीय ढंग से होता है। अंत के संवादों में गहरी मार्मिकता दिखाई देती है।

(घ) देशकाल और वातावरण

देशकाल और वातावरण के अंतर्गत इस बात पर विचार किया जाता है कि कहानी में कैसा समाज आया है और उस समाज का कैसा परिवेश है? 'ठेस' कहानी के देशकाल में ग्रामीण समाज है जिसमें रहने वाले किसान हैं, मज़दूर हैं, कारीगर हैं और ऐसे उच्चवर्गीय समृद्ध लोग भी हैं जो तथाकथित ऊँची जाति के हैं। कथावाचक का परिवार समृद्ध और संभ्रांत है। परिवार में बहुत से सदस्य हैं जिससे पता चलता है कि यह संयुक्त परिवार है। कथा का मुख्य चरित्र सिरचन निम्नवर्ग का कारीगर है जिसका संबंध किसी दलित समाज से है। कथावाचक ने कहानी में गाँव के परिवेश को स्पष्ट रूप से चित्रित किया है। कहानी में आए ब्राह्मण टोला

और महाजन टोला के प्रसंग से यह भी स्पष्ट होता है कि गाँव छोटे-छोटे कई टोलों में विभाजित है। इससे गाँव का परिवेश और स्पष्टता के साथ उभरता है।

कहानी के आरंभ में ही गाँव और किसानों के साथ सिरचन के नाम का उल्लेख करके कहानीकार ने कहानी के परिवेश और उसकी स्थानिकता का परिचय दिया है। गाँव के समाज में एक कारीगर की जिस तरह उपेक्षा की जाती है और उसके प्रति अपमानजनक व्यवहार किया जाता है उससे भी कहानी के सामाजिक परिवेश का पता चलता है। कहानी के अंत में हम देखते हैं कि जब कथावाचक सिरचन को मनाने के लिए उसके घर पहुँचता है तो वह एक फटी हुई शीतलपाटी पर चुपचाप लेटा हुआ मिलता है। इससे हम गाँव में रहने वाले एक कारीगर के घर की दशा और दरिद्रता का अनुमान लगा सकते हैं। कहानी के सामाजिक परिवेश को हम इस बात से भी समझ सकते हैं कि पूरे गाँव में लोग सिरचन से चीज़ें तो बनवाना चाहते हैं लेकिन उसे खाना देते वक्त उसमें कमी कर देते हैं। सिरचन के साथ यह व्यवहार लोग संभवतः इसलिए करते हैं कि वह गरीब है और दलित समाज का है। इसकी पुष्टि चाची के संवाद से भी होती है जब वह कहती है, "छोटी जात के आदमी का मुँह भी छोटा होता है" – इस वाक्य से हम निम्नवर्ग के प्रति उच्चवर्ग की मानसिकता को भी जान सकते हैं।

(ङ) कहानी का उद्देश्य

आप यह तो समझ ही गए होंगे कि इस कहानी का उद्देश्य क्या है, अर्थात् लेखक कहना क्या चाहता है। इस कहानी में हमें सिरचन के व्यक्तित्व ने सबसे अधिक प्रभावित किया। उसके बाद वाचक ने। वही तो सिरचन की कथा बता रहा है। वाचक हमें यह अनुभव कराता है कि गावों में ऊँच-नीच का भेद-भाव कितना गहरा है। सिरचन दलित जाति का एक गरीब कारीगर है। वाचक के परिवर की मझली बहू की व्यंग्यपूर्ण बातें और उपेक्षापूर्ण व्यवहार सिरन को उसके छोटे होने का कड़वा एहसास कराती हैं। इससे सिरचन के मन पर गहरी चोट लगती है। लेखक ने इसी को 'ठेस लगना' कहा है। समाज में समृद्ध लोग का व्यवहार गरीब और मामूली लोगों के प्रति अक्सर भेद-भावपूर्ण और उपेक्षा से भरा होता है। हमें ऐसा व्यवहार बुरा लगता है। सिरचन के साथ मँझली बहू के उपेक्षापूर्ण व्यवहार का हमें बुरा लगना- यही तो इस कहानी का उद्देश्य है। इस कहानी में सिरचन का बीच में ही काम छोड़कर अपने घर लौट जाना और वाचक के बुलाने पर लौटकर न आना महत्वपूर्ण है। यह हमें इस बात का अनुभव कराता है कि मामूली और गरीब दिखने वाले कलाकारों-कारीगरों के प्रति हमें हमेशा उचित आदर के साथ सम्मानपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। उन्हें अपने जैसा मनुष्य समझना चाहिए। तभी हम उनकी कला का भी सम्मान कर सकेंगे और एक समतामूलक और सौहार्दपूर्ण समाज बनाने की दिशा में आगे बढ़ सकेंगे।

भाषा और शैली

आइए, अब इस कहानी की भाषा की विशेषताओं को समझने का प्रयास करें। कहानी की भाषा खड़ी बोली हिंदी है। कहानी की पृष्ठभूमि में बिहार का कोई गाँव होने के कारण भाषा

में कहीं-कहीं देशज शब्दों का प्रयोग हुआ है जो कहानी की विषयवस्तु के अनुकूल है; ऐसे शब्दों में– खुरपी, खूँटकर, परोसती, नेनू, तरकारी, अधकपाली, टनटनाटी, बबुनी, बबुआ जी, पतीली, सूप, चिउरा, ढेला, गमकौवा, बतकुट्टी, दुलारी, शीतलपाटी, सुतली, कूची, झाल, मोथी, पटेर आदि हैं। ये शब्द गाँव में बोलचाल की भाषा के सामान्य शब्द हैं जिनका प्रयोग उस क्षेत्र के लोग सहज ढंग से करते हैं। इन देशज शब्दों के अतिरिक्त कहानी में ऐसे शब्द भी आए हैं जिन्हें तत्सम और तद्भव शब्द कहते हैं।

कहानी की भाषा कहानी के चरित्रों के व्यक्तित्व और स्वभाव के अनुकूल है। कहानी की भाषा में कई जगह बहुत तीखा व्यंग्य है। यह व्यंग्य सिरचन और चाची के संवादों में सबसे अधिक है। सिरचन के संवादों में व्यंग्य के कई उदाहरण देखे जा सकते हैं; जैसे– "तुम्हारी भाभी नाखून से खाँटकर तरकारी परोसती है", "बुंदिया मैं नहीं खाता काकी। अपने मायके से आई हुई मिठाई भी इसी तरह हाथ खोलकर बाँटती है।" इसी तरह चाची के संवादों में भी तीखा व्यंग्य है; उदाहरण– "घर में भी पान और गम कौवा जर्दा खाते हो।" अथवा "इस मुँहझौसे के न मुँह में लगाम है न आँख में सील।"

कहानी की भाषा में मुहावरों का भी बहुत सटीक प्रयोग किया गया है; जैसे– तौल-तौल कर पाँव रखना, पूजा भोग की बात, बेपानी कर देना, पनियायी जीभ, साँप की तरह फुँफकारना, बतकुट्टी करना, हनहनाता हुआ, बढ़ी हुई जीभ, मुँह में लगाम, आँखों में सील आदि अनेक मुहावरों का प्रयोग हुआ है।

पाठगत प्रश्न 15.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. 'ठेस' कहानी की भाषा में शामिल नहीं है–

   (क) व्यंग्य   (ख) देशजता

   (ग) मुहावरों का प्रयोग   (घ) अलंकारों का प्रयोग

2. इसमें किस टोले का उल्लेख किया गया है–

   (क) कुम्हार टोला   (ख) महाजन टोला

   (ग) समृद्ध टोला   (घ) संयुक्त टोला

3. सिरचन किस वर्ग से जुड़ा है–

   (क) मज़दूर   (ख) कारीगर

   (ग) किसान   (घ) शिक्षक

क्रियाकलाप 15.2

1. अपने आसपास के किसी हस्तशिल्प के बारे में जानकारी प्राप्त कर उसके संबंध में 100 शब्दों में विवरण प्रस्तुत कीजिए।
2. किसी कारीगर से बातचीत करते समय आप कौन-कौन से सवाल पूछे सकते हैं। किन्हीं दस प्रश्नों को लिखिए।

15.3 आपने क्या सीखा : चित्र प्रस्तुति

कहानी के तत्त्व

कथावस्तु
- गाँव का परिवेश
- कथावाचक के परिवार का दृश्य
- रेलवे-स्टेशन

चरित्र-चित्रण

सिरचन
- कुशल कारीगर
- स्वाभिमानी
- काम के प्रति ईमानदार
- खाने-पीने का शौकीन
- संवेदनशील

वाचक
- व्यवहार-कुशल
- संवेदनशील
- श्रम के प्रति सम्मान
- बहन से स्नेह

उद्देश्य
- कारीगरों के प्रति आदर
- काम के प्रति ईमानदार
- आत्मसम्मान
- संवेदनशीलता और स्नेह

देशकाल तथा वातावरण
- ग्रामीण जीवन
- सामंती समाज
- गरीबी-समृद्धि
- जातीय भेद-भाव

कथोपकथन संवाद
- संवाद-शैली
- व्यंग्यात्मकता
- भावानुकूलता
- मार्मिकता

भाषा-शैली
- खड़ी बोली हिंदी
- देशज शब्दों का प्रयोग
- मुहावरों का प्रयोग
- व्यंग्यात्मकता
- भावानुकूल भाषा
- सरल-सहज भाषा

मानव मूल्य
- प्रेम
- आदर और सम्मान
- सहिष्णुता
- संवेदनशीलता
- करुणा

रचनाकार
- फणीश्वरनाथ रेणु
- कथाकार, उपन्यासकार
- ग्रामीण समाज का चित्रण
- सामाजिक-राजनीतिक विषय वस्तु
- प्रमुख कहानी संग्रह : एक आदिम रात्रि की महक, ठुमरी, अग्निखोर, अच्छे आदमी
  उपन्यास : मैला आँचल, जुलूस परती परिकथा
- रिपोर्ताज और संस्मरण

15.4 सीखने के प्रतिफल

- अपने परिवेशगत अनुभवों पर अपनी स्वतंत्र और स्पष्ट राय व्यक्त करते हैं।
- नई रचनाएँ पढ़कर उन पर साथियों से बातचीत करते हैं।

- साहित्य की विविध गद्य विधाओं में प्रयुक्त भाषा की बारीकियों पर चर्चा करते हैं; जैसे - विशिष्ट शब्द-वाक्य-शैली-संरचना।
- प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों, घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को बोलकर/लिखकर व्यक्त करते हैं।
- हस्तकला, वास्तुकला, खेतीबाड़ी एवं अन्य व्यवसायों के प्रति अपना रुझान व्यक्त करते हैं तथा इनमें प्रयुक्त होने वाली भाषा का प्रयोग करते हैं।
- भाषा-कौशलों के माध्यम से जीवन-कौशलों को आत्मसात करते हैं और अभिव्यक्त करते हैं।
- सामाजिक, शारीरिक एवं मानसिक रूप से चुनौती प्राप्त समूहों के प्रति संवेदनशीलता एवं समानुभूति लिखकर अभिव्यक्त करते हैं।

15.5 योग्यता विस्तार

लेखक परिचय : फणीश्वरनाथ 'रेणु'

जन्म : 4 मार्च 1921, औराही हिंगना, अररिया, बिहार में हुआ था। उन्होंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय से पढ़ाई की। एक स्वतंत्रता-सेनानी के रूप में भी भूमिका निभाई।

उन्होंने अनेक विधाओं में रचनाएँ कीं; जैसे–कहानी, उपन्यास, रिपोर्ताज, संस्मरण

कुछ प्रमुख कृतियाँ हैं : उपन्यास – मैला आँचल, परती परिकथा, जुलूस, दीर्घतपा, कितने चौराहे, पलटू बाबू रोड इत्यादि।

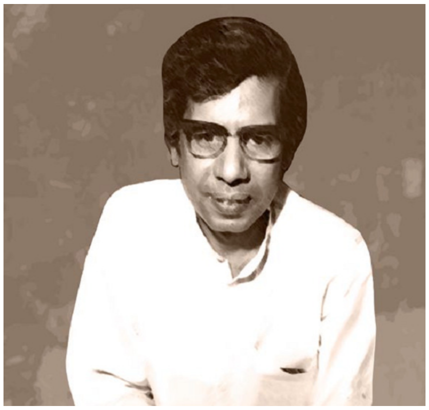

चित्र 15.3: फणीश्वरनाथ 'रेणु'

कहानी-संग्रह – एक आदिम रात्रि की महक, ठुमरी, अगिनखोर, अच्छे आदमी

संस्मरण – ऋणजल-धनजल, श्रुत अश्रुत पूर्वे, आत्म परिचय, वनतुलसी की गंध, समय की शिला पर।

रिपोर्ताज – नेपाली क्रांतिकथा

इनकी ग्रंथावली 'फणीश्वरनाथ रेणु ग्रंथावली' नाम से उपलब्ध है।

निधन : 11 अप्रैल, 1977

15.6 पाठांत प्रश्न

1. कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'ठेस' कहानी की समीक्षा कीजिए।
2. 'ठेस' कहानी के मूल उद्देश्य को अपने शब्दों में व्यक्त कीजिए।
3. 'सिरचन' के व्यक्तित्व की किन्हीं दो विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. 'तुम्हारी भाभी नाखून से खाँटकर तरकारी परोसती है।' इस कथन में छिपा व्यंग्य स्पष्ट कीजिए।
5. 'ठेस' कहानी की भाषा विषय के अनुरूप है– सिद्ध कीजिए।
6. 'ठेस' कहानी की संवाद-योजना की किन्हीं तीन विशेषताएँ सोदाहरण प्रस्तुत कीजिए।

15.7 उत्तरमाला

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (ग) 2. (क) 3. (ख)

पाठगत प्रश्न के उत्तर

15.1 1. (ग) 2. (घ) 3. (क)

15.2 1. (घ) 2. (क) 3. (क)

15.3 1. (घ) 2. (ख) 3. (ख)

पाठ्यक्रम

हिंदी (301)

भूमिका

हिंदी भाषा देश के सांस्कृतिक वैभव की वाहिका रही है। जन-जन में इसकी महत्ता का कारण इसमें मिट्टी की सुगंध है, मौलिकता और वैज्ञानिकता है तथा रोज़गार की अनंत संभावनाएँ हैं। आज हिंदी के प्रति एक सुखद वातावरण का निर्माण हुआ है जिसमें व्यापकता और भारतीयता स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही है। अतएव भारतीय परिप्रेक्ष्य में मनुष्यता के निर्माण के लिए हिंदी पाठ्यक्रम एक नए कलेवर में प्रस्तुत है।

भूमंडलीकरण और आर्थिक उदारीकरण ने देशों, राष्ट्रों की सीमाओं को तोड़कर समूचे विश्व को एक मंच बना दिया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत न सिर्फ़ विश्व का एक बड़ा बाज़ार है, बल्कि विश्व-व्यापार में अहम भूमिका निभा रहा है। इसके कारण मुख्य भारतीय भाषा होने के नाते हिंदी विश्व-मंच की महत्वपूर्ण भाषा बनी है, बन रही है। अमेरिका, चीन आदि विकसित तथा आर्थिक रूप से समृद्ध देशों में भी हिंदी जानने वालों की माँग निरंतर बढ़ रही है। आज हिंदी मातृभाषा, भारत की राजभाषा या साहित्यिक भाषा मात्र न रहकर बाज़ार की अनेकानेक ज़रूरतों की भी भाषा बन गई है। स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय के साथ-साथ संचार-माध्यमों, कॉर्पोरेट जगत, प्रौद्योगिकी के क्षेत्र आदि में भी हिंदी माध्यम से कार्य करने वाले प्रशिक्षित व्यक्तियों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है। अतः वर्तमान संदर्भों के अनुसार भाषा-कौशल विकसित करनेवाले तथा कामकाजी क्षेत्रों में हिंदी प्रयोग की क्षमता प्रदान करने वाले मूल्यपरक व प्रासंगिक पाठ्यक्रम की आवश्यकता है।

औचित्य

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति के आलोक में उच्चतर माध्यमिक स्तर की हिंदी विषय की स्व-अध्ययन सामग्री का निर्माण किया गया है और सभी भाषायी पक्षों के समावेशन के साथ-साथ अन्य विशेषताओं को समाहित किया गया है।
- हिंदी की विशाल काव्य-परंपरा से विद्यार्थियों को परिचित कराने के लिए प्रमुख काव्य-धाराओं के प्रतिनिधि कवियों को शामिल किया गया है और कविताओं की सरल और प्रभावी व्याख्या की गई है। इसका लक्ष्य एक ओर साहित्यिक समझ को विकसित करते हुए संवेदना का विस्तार करना है, दूसरी ओर भाषा में प्रवीण बनाना है।
- पाठ्यक्रम शिक्षार्थियों के लिये रोचक है और उनकी मनोवृत्तियों को प्रोत्साहित करने वाला तथा ज्ञान का विकास करनेवाला है। गद्य रचनाओं में अंतर्वस्तु के स्तर पर भारतीयता, मानवीय-मूल्य तथा सामाजिक समरसता बढ़ानेवाले और प्रेरणास्पद विषयों को लिया गया है जिसका लक्ष्य विद्यार्थियों में सृजनात्मकता, कल्पनाशीलता, चिंतन-क्षमता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देना है।

- आज की आवश्यकताओं के अनुरूप हिंदी के विविध प्रयुक्ति-क्षेत्रों और जनसंचार माध्यमों; जैसे- अखबार, टी.वी., इंटरनेट, सोशलमीडिया तथा हिंदी और प्रौद्योगिकी आदि के बारे में भी विस्तार से विश्लेषण किया गया है।
- लेखन-कौशल का विकास आधुनिक समय की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए किया गया है। इसमें कार्यालयी पत्राचार फीचर-लेखन, ई-मेल, ब्लॉग, फेसबुक, ट्विटर आदि को भी सम्मिलित किया गया है। इनके अतिरिक्त वक्तृत्व कला के विकास के लिए भी पाठ रखे गए हैं; जैसे- सभा/मंच संचालन, उद्घोषणाएँ आदि।
- इन सभी के साथ-साथ, मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा की विशेषताओं को समाहित करते हुए सरल, सहज भाषा का प्रयोग हुआ है और शैली भी बातचीत की रखी गई है।

पूर्व अपेक्षाएँ

इस पाठ्यक्रम में प्रवेश से पहले विद्यार्थी से अपेक्षा की जाती है कि वह सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना कौशलों से संबंधित निम्नलिखित योग्यताएँ प्राप्त कर चुके होंगे-

1. भाषा के व्यावहारिक और साहित्यिक रूपों का अर्थग्रहण।
2. कथन और वर्णन की क्षमता।
3. जीवन-मूल्यों की पहचान।
4. बोलने और लिखने में व्याकरण-सम्मत भाषा का प्रयोग।
5. दसवीं स्तर की भाषायी कुशलता।
6. दसवीं स्तर की लेखन व अभिव्यक्ति क्षमता।

उद्देश्य

सामान्य उद्देश्य

इस पाठ्यक्रम को पूरा करने के बाद शिक्षार्थी-

1. भाषिक और साहित्यिक योग्यता का विकास कर उनका प्रयोग कर सकेंगे;
2. हिंदी की व्याकरण-सम्मत, समाज-संदर्भित और व्यावहारिक अभिव्यक्ति का विकास कर सकेंगे;
3. हिंदी की साहित्यिक-सामाजिक संवेदना को समझ सकेंगे और उसे परंपरा से जोड़कर प्रस्तुत कर सकेंगे;
4. शिक्षा के लक्ष्यों की रचनात्मक अभिव्यक्ति कर सकेंगे;
5. साहित्यिक, प्रयोजनमूलक और व्यावहारिक भाषा के विविध रूपों की तुलना कर सकेंगे;
6. मीडिया, इंटरनेट आदि अनेक नवीन आयामों में भाषा के बढ़ते प्रभाव को समझकर उनका प्रयोग कर सकेंगे;

7. सभी प्रकार की विविधताओं (धर्म, जाति, लिंग, क्षेत्र एवं भाषा) के प्रति सकारात्मक और विवेकपूर्ण चिंतन-कर उचित निर्णय ले सकेंगे;
8. अन्य अनेक मुद्दों; जैसे– संस्कृति का प्रश्न, दिव्यागों की सक्षमता, भारतीयता आदि को समझकर उनके प्रति अन्य लोगों को उन्मुख कर सकेंगे;
9. राष्ट्रीय भावधारा को आत्मसात कर राष्ट्रीय समस्याओं को पहचानकर उनका समाधान कर सकेंगे।

विशिष्ट उद्देश्य

इस पाठ्यक्रम को पूरा करने के बाद शिक्षार्थी -

1. हिंदी भाषा के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे;
2. रोज़मर्रा की ज़िंदगी में मौखिक भाषा का उपयुक्त प्रयोग कर सकेंगे;
3. किसी पठित या अपठित उक्ति/गद्यांश/काव्यांश की तर्क सहित व्याख्या करके उसकी सराहना कर सकेंगे;
4. निर्धारित रचनाओं के कथ्य और भाषा-शैली की विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे;
5. नवीन गद्य साहित्य की विभिन्न विधाओं के स्वरूप की पहचान कर उनका वर्णन कर सकेंगे;
6. व्याकरणिक तथा सामाजिक संदर्भों के अनुरूप संप्रेषण करके के भाषा का प्रयोग कर सकेंगे;
7. विभिन्न व्यवहार-क्षेत्रों (बाज़ार, व्यवसाय आदि) में प्रयुक्त विशिष्ट भाषा (प्रयुक्ति) का प्रयोग कर सकेंगे और विभिन्न संदर्भों में भाषा-कौशल का प्रयोग कर सकेंगे;
8. नए संदर्भों में रचनात्मक लेखन कर सकेंगे।

क्षेत्र तथा रोज़गार के अवसर

इस विषय में रोज़गार के अनेक अवसर उपलब्ध हैं, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं -

1. विद्यालयी शिक्षण
2. महाविद्यालयी शिक्षण
3. विश्वविद्यालयी शिक्षण
4. जनसंचार
5. अनुवाद
6. मीडिया इत्यादि।

शैक्षणिक योग्यता -दसवीं उत्तीर्ण

अध्ययन का माध्यम -हिंदी

पाठ्यक्रम का प्रारूप, अंक-विभाजन और अवधि

	पाठ्यक्रम के भाग	अंक	समय (घंटे में)
1.	कविता-पठन	30	75
2.	गद्य-पठन	35	85
3.	व्याकरण	10	25
4.	लेखन-कौशल	25	55
	कुल अंक	100	240

पाठ्यक्रम का विवरण

सुनना और बोलना

लक्ष्य, विज्ञापन: इस इकाई का लक्ष्य शिक्षार्थियों में सुनने के कौशल को विकसित करना है जिससे वे रेडियो, दूरदर्शन पर समाचार, संवाद, वार्ता, विज्ञापन आदि सुनकर अर्थ ग्रहण कर सकें और शोर में भी घोषणाओं से अर्थ निकाल सकें और उनका प्रयोग कर सकें। वाद-विवाद, समूह में बातचीत, औपचारिक-अनौपचारिक चर्चा आदि में भाग ले सकें और दैनिक जीवन में प्रयुक्त भाषा के मौखिक रूप से परिचित होकर उसका प्रयोग करने की क्षमता विकसित कर सकें। इन सबके साथ ही शिक्षार्थी प्रौद्योगिकी के नए रूपों; जैसे– इंटरनेट, ई-बैंकिंग, ऑनलाइन कामकाज, ट्विटर, ब्लॉक आदि को समझकर उनका उपयोग कर सकें।

पूर्वज्ञान : भाषा सुनकर अर्थ निकालने के साथ ही बोलने का सामान्य व्यावहारिक ज्ञान।

शिक्षणबिंदु :

1. हिंदी ध्वनियों का शुद्ध उच्चारण
2. उच्चारण-संबंधी प्रमुख नियमों का ज्ञान
3. कविता का भावानुकूल (करुण, हास्य, वीर आदि) सस्वर पठन
4. स्वरों के उतार-चढ़ाव से युक्त वक्तव्य, भाषण, वाद-विवाद, साक्षात्कार, समूह में चर्चा-परिचर्चा, कार्यक्रम संचालन, अभिनय, वाचन आदि का अभ्यास।

पढ़ना

कविता-पठन

लक्ष्य : इस इकाई का लक्ष्य विद्यार्थी को हिंदी कविता का महत्व बताना है। इस इकाई को पढ़कर विद्यार्थी कविता के विभिन्न रूपों, प्रमुख कवियों आदि का परिचय प्राप्त करेंगे और हिंदी के प्रतिनिधि कवियों की रचनाओं का अध्ययन करेंगे। इससे शिक्षार्थियों की संवेदनशीलता बढ़ेगी और भाषा-शैली समृद्ध होगी।

पूर्व ज्ञान : हिंदी के कुछ प्रतिनिधि कवियों और उनकी मुख्य रचनाओं का सामान्य परिचय।

शिक्षण-बिंदु : हिंदी कविता की निम्नलिखित इकाइयों का अध्ययन अपेक्षित-

हिंदी कविता का विकास

कविता कैसे पढ़ें- पठित-अपठित

1. निर्गुण काव्य -कबीर और जायसी
2. सगुण काव्य-तुलसीदास, सूरदास और मीराँबाई
3. रीति काव्य -बिहारी और पद्माकर
4. छायावादी काव्य -निराला और जयशंकर प्रसाद
5. उत्तर छायावादी एवं प्रगतिवादी काव्य -दिनकर और हरिवंश राय 'बच्चन'
6. नयी कविता-अज्ञेय और भवानी प्रसाद मिश्र
7. साठोत्तरी कविता- सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और दुष्यंत कुमार
8. समकालीन कविता- राजेश जोशी तथा नरेश सक्सेना

रस, छंद, अलंकार

रस -श्रृंगार, वीर, शांत आदि

छंद -दोहा, चौपाई, सवैया, बरवै, कवित्त, पद, मुक्त छंद

अलंकार -उपमा, रूपक, दृष्टांत, अनुप्रास, अतिशयोक्ति, संदेह, उत्प्रेक्षा, भ्रांतिमान, यमक, श्लेष, विशेषण विपर्यय, वक्रोक्ति।

अन्य: प्रतीक-विधान, बिंब-विधान।

योग्यता-विस्तार

1. कवि-परिचय में रुचि के चलते उनके विषय में जानकारी एकत्रित करना।
2. पाठ्यक्रम में निर्धारित कवियों की अन्य कविताओं का अध्ययन।
3. पाठ्यक्रम के अतिरिक्त अन्य कविताओं का अध्ययन।
4. समसामयिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कविताओं का बोधपूर्वक पठन

गद्य-पठन

लक्ष्य : इस इकाई का लक्ष्य विद्यार्थी को गद्य की विविध विधाओं, रूपों और शैलियों का परिचय देना है। विद्यार्थी गद्य की विविध विधाओं का परिचय प्राप्त करके अपने भाषा-ज्ञान को समृद्ध बना सकेंगे और व्यावहारिक जीवन में उनका प्रयोग-कर सकेंगे।

पूर्वज्ञान : गद्य-साहित्य के प्रतिनिधि रचनाकारों की रचनाओं (कहानी, निबंध आदि) का सामान्य ज्ञान।

शिक्षण बिंदु: हिंदी गद्य की निम्नलिखित इकाइयों का अध्ययन अपेक्षित-

गद्य कैसे पढ़ें- पठित-अपठित

हिंदी गद्य के प्रतिनिधि रचनाकार

1. चीफ़ की दावत (कहानी)-भीष्म साहनी
2. पीढियाँ और गिट्टियाँ (निबंध)-हरिशंकर परसाई
3. दो कलाकार (कहानी)- मन्नू भण्डारी
4. जिजीविषा की विजय (संस्मरण) कैलाश चंद्र भाटिया
5. सुभद्रा कुमारी चौहान (रेखाचित्र) महादेवी वर्मा
6. कुटज (निबंध)- हजारीप्रसाद द्विवेदी
7. ठेस (कहानी)- फणीश्वरनाथ 'रेणु'
8. रीढ़ की हड्डी (एकांकी)-जगदीशचंद्र माथुर
9. अंडमान डायरी (डायरी) श्रीकांत वर्मा
10. यक्ष-प्रश्न (संवाद) राजगोपालाचारी

भाषा-प्रयोग और व्यावहारिक व्याकरण

लक्ष्य : इस इकाई का लक्ष्य विद्यार्थी को व्याकरण के नियमों और भाषा के स्वरूप से परिचित कराना है जिससे शिक्षार्थी भाषा के स्वरूप से भली-भाँति परिचित होकर दैनिक जीवन में उसका आत्मविश्वासपूर्वक प्रयोग कर सकें।

पूर्वज्ञान : व्याकरण के आधारभूत नियमों का ज्ञान।

इकाई

1. मानक भाषा और प्रचलित शैलीगत प्रयोग
2. लिखित और उच्चरित भाषा-प्रयोग
3. उच्चारण (बलाघात, अनुतान आदि)
4. शब्द-परंपरा (शब्द-निर्माण, शब्दशक्ति आदि)
5. शब्द-भेद (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया आदि)
6. क्रिया पदबंध

7. वाक्य-संरचना

8. मुहावरे, लोकोक्तियाँ

9. तकनीकी शब्दावली

10. हिंदी की विभिन्न शैलियाँ (प्रयोजनमूलक, क्षेत्रीय आदि)

लेखन-कौशल

इसके अंतर्गत निम्नलिखित इकाइयाँ शामिल की गई हैं :

1. अनुच्छेद लेखन, फीचर, रिपोर्टिंग
2. कार्यालयी पत्राचार
3. टिप्पण एवं प्रारूपण
4. सभा-मंच-संचालन तथा उद्घोषणा
5. हिंदी के विविध प्रयुक्ति-क्षेत्र-प्रशासन, विधि, वाणिज्य आदि
6. हिंदी और जनसंचार-माध्यम
7. हिंदी और प्रौद्योगिकी

(i) रचनात्मक लेखन

आज के परिवेश में शिक्षार्थियों को लेखन की विभिन्न शैलियों का अभ्यास करना चाहिए ताकि वे आगे चलकर विभिन्न कार्य-क्षेत्रों में दक्षता हासिल कर सकें। यहाँ कुछ कौशलों का परिचय दिया गया है; जैसे – अनुच्छेद, फीचर, रिपोर्टिंग आदि। साथ ही शिक्षार्थियों द्वारा जनसंचार के क्षेत्र में प्रयुक्त भाषा की विविधता के बारे में ज्ञान प्राप्त करना और उसकी नई शब्द-संपदा, नए-नए प्रयोगों और संकल्पनाओं के बारे में जानना आवश्यक है।

(ii) प्रयोजनमूलक भाषा

देश के सरकारी कार्यालयों में हिंदी भाषा में काम होता है। सरकारी कामकाज में प्रयुक्त हिंदी सामान्य बोलचाल की हिंदी से कुछ भिन्न होती है। सरकार की नीति के अनुसार कार्यालयी हिंदी सरकारी कार्यालयों, बैंकों और व्यावसायिक संस्थाओं में प्रयोग में लाई जाती है। इस पाठ्यक्रम को पढ़ने के बाद शिक्षार्थी सरकारी कार्यालयों में प्रयुक्त हिंदी का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त भाषा की जानकारी भी प्राप्त करेंगे।

लक्ष्य : इस इकाई का लक्ष्य शिक्षार्थी में विविध लेखन-कौशलों का विकास करना है जिससे वे जीवन में विभिन्न अवसरों पर अपेक्षित लेखन-कार्य प्रभावी ढंग से कर सकें तथा प्रयोजनमूलक लेखन का उपयोग कर सकें; जैसे – कार्यालयी पत्राचार या टिप्पण व प्रारूपण, जनसंचार और हिंदी, प्रौद्योगिकी और हिंदी आदि।

पूर्वज्ञान : सही वाक्य-लेखन का ज्ञान और विचारों को लिखित रूप में अभिव्यक्त करने की क्षमता तथा हिंदी भाषा का सामान्य ज्ञान।

परीक्षा-योजना

सिद्धांत : 100 अंक (वस्तुनिष्ठ - 50 और विषयनिष्ठ - 50)

तथा अनुशिक्षक अंकित मूल्यांकनपत्र : सिद्धांत का 20%

अंक-विभाजन

मूल्यांकन के लिए कुल 100 अंकों का विभाजन इस प्रकार होगा-

पाठ्यक्रम के भाग	अंक
1. कविता-पठन	30
2. गद्य-पठन	35
3. व्याकरण	10
4. लेखन-कौशल	25
कुल अंक	100

उत्तीर्ण होने का मानदंड : 33% अंक